पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ : एक समीक्षात्मक अध्ययन

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला के
संस्कृत विभाग के अधीन

'पी-एच0 डी0' उपाधि

के लिए प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

अप्रैल 1998

शोधनिर्देशक
डॉ0 नरदेव शास्त्री
वरिष्ठ प्राध्यापक, संस्कृत विभाग,
हि0 प्र0 विश्वविद्यालय शिमला।

शोधकर्ता
प्रवीण कुमार विमल
व्याकरणाचार्य, एम0 ए0, एम0 फिल0
डरवाड़, सरकाघाट (हि0 प्र0)

संस्कृत विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
शिमला - 171 005

डॉ0 नरदेव शास्त्री
संस्कृत विभाग
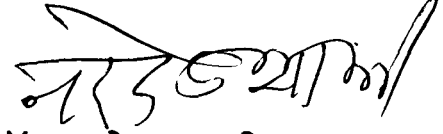
Dr. Nardev Shastri
Department of Sanskrit

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री प्रवीण कुमार विमल द्वारा पी-एच0 डी0 (संस्कृत) की उपाधि हेतु प्रस्तुत **"पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ : एक समीक्षात्मक अध्ययन"** नामक शोध प्रबन्ध इनकी अपनी मौलिक प्रस्तुति है और मेरे निर्देशन में पूर्ण की गयी है। इसे अभी तक किसी भी विश्वविद्यालय में किसी भी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है। मैं अनुमोदन करता हूँ कि यह शोध प्रबन्ध उपर्युक्त उपाधि हेतु प्रस्तुत के योग्य है।

दिनांक : 20/4/98

नरदेव शास्त्री
डॉ0 नरदेव शास्त्री
वरिष्ठ प्राध्यापक, संस्कृत विभाग,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय,
शिमला ।

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ : एक समीक्षात्मक अध्ययन

भूमिका

भाषा जानकारी के लिए वाक्यार्थ जानकारी आवश्यक है। संरचना की दृष्टि से पद जानकारी के लिए वाक्यों का ज्ञान असम्भव होता है। पाणिनीयव्याकरणपरम्परा में विभिन्न पदों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी का सूत्रमूलकपद्धति और प्रक्रियामूलकपद्धति से द्विविध वर्णन प्राप्त होता है। दोनों प्रकार की पद्धतियाँ अपने-अपने वर्णन क्रम से विभिन्न पदों का बोध करवाती हैं। पाणिनीयव्याकरण में जितनी सूत्रमूलकपद्धति के अष्टाध्यायी, महाभाष्य, काशिका आदि ग्रन्थों तथा इन सब के व्याख्या ग्रन्थों की महत्ता है, प्रक्रियामूलकपद्धति में रूपावतार, रूपमाला, प्रक्रियाकौमुदी, वैयाकरणसिद्धानतकौमुदी, प्रक्रियासर्वस्व, मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी, सारसिद्धान्तकौमुदी, वेदाङ्ग.प्रकाश, प्रारम्भिक पाणिनीयम् (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी) तथा पाणिनीयप्रबोध आदि प्रक्रियाग्रन्थों की भी उतनी ही महत्ता है। परन्तु अनेक विशेषताओं के कारण व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियाग्रन्थों का महत्त्व सूत्रमलकग्रन्थों से अधिक है।

प्रक्रियाग्रन्थों के उद्‌भव से पूर्व समाज में संस्कृतभाषा की विद्यमानता के कारण अष्टाध्यायी का अध्ययन सूत्रक्रम से सुगमता और लघुता से होता था परन्तु धीरे-धीरे संस्कृतभाषा का प्रयोग कम होने लगा जिस कारण इस सरल क्रम से दुरूहता प्रतीत होने लगी। इस कारण तत्काल पाणिनीयेत्तर प्रक्रियामूलक व्याकरणों का प्रादुर्भाव हुआ। व्याकरणपरम्परा में जब कातन्त्र आदि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से पाठक इन व्याकरणों में रूचि लेने लगे तो पाणिनीयपरम्परा के सूत्रमूलक व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। जब पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में विकास का क्रम लगातार बढ़ता गया तो कुछ समय पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन लगभग लुप्त प्राय: ही हो गया। पाणिनीयव्याकरण की इस दुर्दशा को अनेक पाणिनीयपरम्परा के आचार्य सहन नहीं कर सकें। अत: इन्होने सूत्रमूलक पाणिनीय व्याकरण को प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पादित करने का निर्णय लिया। इन आचार्यों में आचार्य धर्मकीति (1140 वि० यु० मी०) का स्थान प्रथम है। यद्यपि वे जानते थे कि प्रक्रियामूलकपद्धति व्याकरण अध्ययन का सर्वोत्तम उपाय नहीं है परन्तु वे पाठकों की भलाई के लिए तत्काल किसी प्रकार सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन जारी रखना चाहते थे। यदि धर्मकीर्ति तत्काल पाणिनीयव्याकरण को प्रक्रियाक्रम से सम्पादित न करते तो सम्भवत: पाणिनीयव्याकरण का आज नामशेष भी नहीं रहता। इन्होने पाणिनीयपरम्परा में प्रक्रियाक्रम से ''रूपावतार'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाक्रम की परम्परा में भी रूपावतार के बाद प्रक्रियारत्न, रूपमाला, प्रक्रियाकौमुदी, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, प्रक्रियासर्वस्व, मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी, सारसिद्धान्तकौमुदी, वेदाङ्ग.प्रकाश, प्रारम्भिक पाणिनीयम् (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी), पाणिनीय प्रबोध आदि अनेक प्रक्रियाग्रन्थ रचे गये। इनमें क्रमश:

पाणिनीयव्याकरण के अध्ययन और अध्यापन में इस प्रक्रियापद्धति का विकास ही होता गया तथा ये पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का विकल्प सिद्ध होते रहे। अत: सिद्ध होता है कि व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियाग्रन्थों का महत्त्व कोई कम नहीं है क्योंकि इनके उद्‌भव से ही अष्टाध्यायी आदि सूत्रमूलकग्रन्थों की सत्ता विद्यमान रही है नहीं तो ये लुप्त हो जाते।

जब प्रक्रियामूलकपद्धति के प्रक्रियाग्रन्थों का महत्त्व व्याकरणपरम्परा में कम नहीं है तो इन ग्रन्थों के पूर्ण वैशिष्ट्य का अध्ययन भी जरूरी है। प्रशङ्ग.वश विद्वानों ने प्रक्रियामूलकपद्धति की इतस्तत: स्वल्प चर्चा की है जो अपर्याप्त है। इस से प्रक्रियाग्रन्थों के सम्पूर्ण वैशिष्ट्य का परिचय नहीं मिलता है। इस से प्रक्रियाग्रन्थों के सम्पूर्ण वैशिष्ट्य का परिचय नहीं मिलता है। ''पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ: एक समीक्षात्मक अध्ययन'' शोध प्रबन्ध में प्रक्रियाग्रन्थों के प्रस्तावित विषय पर पूर्ण विचार किया जायेगा। शोध प्रबन्ध के ''पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा एवम् पाणिनीयव्याकरण का परिचय'' नामक प्रथम अध्याय में पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा का विवेचन, पाणिनि की अष्टाध्यायी, कात्यायन के वार्तिक एवम् पतञ्जलि के महाभाष्य पर विचार किया जायेगा।

शोध प्रबन्ध के ''पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति का विवेचन तथा प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव" नामक द्वितीय अध्याय में पाणिनीयव्याकरण स्वरूपपरिचय, पाणिनीयव्याकरण की अध्ययन अध्यापन पद्धति, सूत्रमूलकपद्धति एवम् प्रक्रियामूलकपद्धति पर विस्तृत विचार, सूत्रमूलकपद्धति द्वारा प्राप्त समस्याओं का विवेचन, प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव एवम् उसका विवेचन, पाणिनीयव्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव एवम् उसका विवेचन, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण एवम् वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी परवर्ती प्रक्रिया विवरण आदि विषयों का वर्णन किया जायेगा।

शोध प्रबन्ध के ''पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार'' नामक तृतीय अध्याय में पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थों पर क्रमपूर्वक विस्तृत वर्णन किया जायेगा। शोध प्रबन्ध के ''सूत्रमूलकपद्धति के पारिप्रेक्षय में प्रक्रियामूलकपद्धति का समीक्षात्मक अध्ययन'' नामक चतुर्थ अध्याय में सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियामूलकपद्धति की पूर्ण जानकारी के लिए इनका तुलनात्मक विवेचन किया जायेगा।. अन्त में उपसंहार दिया जायेगा।

अध्ययन काल से ही व्याकरण मेरा प्रिय विषय रहा है। महापुरूषों एवम् गुरूजनों के आशीर्वाद से मैं इस अवस्था तक पहुंच गया कि मुझे परम पूज्य गुरूवर्य डॉ0 नरदेव शास्त्री, वरिष्ठ प्राध्यापक संस्कृत विभाग हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के चरणों में प्रक्रियाग्रन्थों पर शोध कार्य करने का अवसर मिला। यह डॉ0 नरदेव शास्त्री के आशीर्वाद का परिणाम है कि मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका हूँ अन्यथा यह अकिंचन क्या कुछ कर पाता। समय-समय पर इन से प्राप्त दिशानिर्देश और परामर्श के लिए मैं इनका हृदय से चिर आभारी हूँ। वर्तमान संस्कृत विभागाध्यक्ष एवम् अन्य समस्त पूज्य गुरूजनों का भी मैं उनसे प्राप्त सहयोग के लिए कृतज्ञ हूँ।

माता-पिता इस संसार में जन्म देकर अध्ययन कार्य से जोड़ते हैं। मैं अपने पिता श्री चमारु राम विमल, मुख्याध्यापक एवम् माता श्रीमती राजकुमारी का हृदय से आभारी हूँ क्योंकि इन्होंने अपना सर्वस्व समर्पण करके मुझे अध्ययन का समय दिया है। इनके अनुग्रह से मैं इस विषय में लेखनी उठाने में समर्थ हो सका हूँ। मेरे पिता मेरे अध्यापक भी रहे हैं अत: इनका मैं दुगुना आभारी हूँ।

डॉ0 घनश्याम उनियाल, डॉ0 इन्द्र दत्त उनियाल एवम् श्री पृथु राम शास्त्री, वैदिक शोध संस्थान साधु आश्रम होशियारपुर के सौजन्य से संस्थान के समृद्ध पुस्तकालय में अनेक दुर्लभ पुस्तकों का अध्ययन सम्भव हो सका है, मैं इन के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

मुझे डॉ0 विक्रम कुमार प्राध्यापक संस्कृत विभाग एवम् डॉ0 धर्मानन्द रीडर दर्शन विभाग पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ के सौजन्य से पंजाब विश्वविद्यालय के समृद्ध पुस्तकालय में अध्ययन का अवसर मिला है, मैं इन का बहुत आभारी हूँ।

मुझे डॉ0 प्रेम लाल गौतम एवम् डॉ0 सुधाकर दत्त शर्मा, साहित्याचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सोलन के सौजन्य से महाविद्यालय के समृद्ध पुस्तकालय में अध्ययनार्थ हर समय सहयोग मिलता रहा है। मैं इनका हृदय से आभारी हूँ।

अन्य स्थानों के समान अध्ययननार्थ डॉ0 नरदेव शास्त्री ने मुझे डी0 ए0 वी0. महाविद्यालय चण्डीगढ़ के समृद्ध पुस्तकालय भेजा। यह पुस्तकालय लाहौर से स्थानान्तरित हुआ है। इस में बहुत प्राचीन इतिहास ग्रन्थ प्राप्त हैं। यहां मुझे प्राचार्य कृष्ण लाल आर्य एवम् पुस्तकालय पदाधिकारियों के सौजन्य से प्राचीन इतिहास ग्रन्थों को देखने और पढ़ने का मौका मिला। मैं इन के प्रति श्रद्धा भाव से कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। इस पुस्तकालय में मुझे उस समय बहुत हर्ष हुआ जब ''रूपावतार'' नामक दो पुस्तकें ताडपत्र प्रारूप में प्राप्त हुई । परन्तु मुझे उस समय ह्रास का सामना करना पड़ा जब इन्हें खोलकर ये पुस्तकें किसी अन्य लिपिबद्ध भाषा में पायीं गयीं।

अनेक कारणों से मैं गुरुवर्य डॉ0 नरदेव शास्त्री की प्रेरणा पर दुर्लभ पुस्तकों के अध्ययनार्थ वाराणसी नहीं जा सका। इन्होंने यहां तक कहा कि अन्य स्थानों के समान वहां भी बहुत मूल्यवान शोध सामग्री प्राप्त करोगे तथा आप की तीर्थ यात्रा भी हो जोयगी। परन्तु मैं विवश था। मैंने इन पुस्तकों की फोटो कॉपी श्री रोशन लाल निरंकारी, प्रमुख सन्त निरंकारी मण्डल ब्रांच लोअर वरोट, तहसील सरकाघाट के माध्यम से मंगवायीं हैं। मैं इन का आभार व्यक्त करना अनिवार्य समझता हूँ। इन्होंने सन्त निरंकारी मण्डल ब्रांच मालदहिया वाराणसी, के प्रमुख श्री लक्षमण सिंह को पत्र लिखकर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी, के समृद्ध सरस्वती भवन पुस्तकालय, से अनेक दुर्लभ पुस्तकों की फोटो कॉपी सुलभ करायी है। मैं श्री लक्षमण सिंह का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपने सुपुत्र श्री गुरुवचन सिंह को इस कार्य हेतु नियुक्त किया। श्री गुरुवचन सिंह और सरस्वती भवन पुस्तकालय के पदाधि

कारियों के सहयोग से मैं ''रूपावतार'' जैसी दुर्लभ पुस्तकें प्राप्त कर सका हूँ। मैं इन सब का बहुत आभारी हूँ।

जिन-जिन संस्थाओं तथा आचार्यो से मैंने अध्ययन प्राप्त किया हैं मैं उनका आयु पर्यन्त आभारी हूँ। विशेषत: मैं डॉ० कुमार सिंह, प्राचार्य राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सोलन, आचार्य रामानन्द प्राचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय शिमला, डॉ० हरिदत्त शर्मा, विशेषाधिकारी संस्कृत, शिक्षा निदेशालय शिमला, आचार्य प्रेम सिंह प्राचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दरनगर, आचार्य पीताम्बर दत्त एवम् डॉ० ईश्वरी दत्त सेवानिवृत्त उप आचार्य राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सोलन, आचार्य हरि दत्त शर्मा सेवानिवृत्त साहित्यचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दर नगर, आचार्य लेख राम उप आचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दर नगर, डॉ० लीलाधर वात्स्यायन दर्शनाचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दर नगर, आचार्य हृदय राम पुरोहित सेवानिवृत्त व्याकरणाचार्य राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दर नगर, आचार्य बदरी दत्त शर्मा व्याकरणचार्य, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सुन्दरनगर, का आभार व्यक्त करना उचित समझता हूँ, क्योंकि मैं इनसे व्याकरण अध्ययन प्राप्त करने पर ही इस अवस्था को प्राप्त हो सका हूँ।

मैं अपने तथा श्री हरि सिंह पूर्व विधायक तथा धर्मपत्नी के माता श्री नथु राम पाठक पूर्व शिक्षा निदेशक हिमाचल प्रदेश का आभार चुकाना आवश्यक समझता हूँ क्योंकि शोध कार्य हेतु ये मुझे हर समय प्रेरणा एवम् प्रोत्साहन देते रहे हैं। मेरे चाचा श्री मिलखी राम, श्री दलेर सिंह एवम् मौसी श्रीमती जय कुमारी भी आभार के पात्र हैं क्योंकि अध्ययनार्थ इन का सहयोग मुझे हर समय सुलभ रहा है। मैं इनका पूर्णश्रद्धा भाव से आभार व्यक्त करता हूँ।

बहन प्रौमिल, प्रतीमा, शकुन्तला एवम् परिवार तथा भाई श्रवण ने अध्ययनार्थ जो सहयोग दिया है उसे कैसे भुलाया जा सकता है। अत: मैं इन का चिर आभारी हूँ। इस कार्य काल में चेतना विमल का सहयोग कोई कम नहीं रहा है। इन से प्राप्त सहयोग के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। समयानुकूल जो सहयोग मुझे मेरे ससुर श्री महिपाल सिंह मुख्याध्यापक एवम् परिवार से प्राप्त हुआ है वह चिर स्मरणीय है मैं इनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। मैं अपने मामा श्री खेम चन्द आजाद का किन शब्दों से आभार व्यक्त करूं, ये सऊदी अरब से हर समय आर्थिक सहायता के लिए तैयार रहे हैं और इन्होंने सहायता दी है। श्री अमर सिंह पाठक एस० डी० ओ० विद्युत विभाग भी हर समय आर्थिक सहायता के लिए तैयार रहे हैं मैं इन के प्रति प्रकृज्ञता व्यक्त करता हूँ।

शोध कार्य के समय अनेक प्रकार के विचार विमर्श और अनेक सम्बन्धित सहयोग की आवश्यकता होती है। एतदर्थ मेरी धर्मपत्नी श्रीमती लता कुमारी शास्त्री, बी० एड०, अध्यापिका पूर्ण प्रोत्साहन के साथ सहयोग के लिए हर समय अपना सर्वस्व अर्पण करने में तैयार रहीं हैं। मैं इनका आभार प्रकट करना अनिवार्य समझता हूँ।
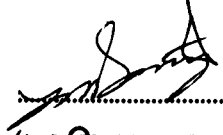
मैंने जिन मौलिक ग्रन्थों, व्याख्या ग्रन्थों, इतिहासकारों तथा अन्य विद्वानों के ग्रन्थों से उपयोग किया है मैं उन के प्रति सम्पूर्ण श्रद्धा भावना से आभार व्यक्त करता हूँ। इस कार्य हेतु हर किसी सम्बन्धी और मित्र का सहयोग पग-पग पर होता है मैं उनका बहुत आभारी हूँ।

हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सोलन, पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़, वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर, डी० ए० वी० महाविद्यालय चण्डीगढ़, सरस्वती भवन पुस्तकालय सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी, (पूर्व वारायसेय संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी) के पुस्तकालयों के पदाधिकारियों का मुझे हर समय सहयोग मिला है मैं इनका हृदय से आभारी हूँ।

बच्चों में बौद्धिक थकान को हरने की शक्ति होती है जो अपरोक्ष रूप में अपना यह उत्तदायित्व पूर्ण करते हैं। मैं विनीत कुमार विमल, विजीत कुमार विमल एवम् एकता विमल को इस सम्बन्ध में कैसे भुला सकता हूँ। ये भी आभार के अधिकारी हैं।

अन्त में मैं सर्व श्री मनसा राम, देस राज बंसल और दिनेश सूरि *दिक्षांत डैस्क टांप प्रिंटर्ज सरकुलर रोड़, सोलन, (हि० प्र०)* का अभारी हूँ जिन्होंनें इस शोध प्रबन्ध को टंकण कार्य करके सही रूप दिया है।

मेरा यह शोध कार्य कुछ समय पूर्व सम्पन्न होने वाला था परन्तु मेरे छोटे भाई प्रदीप कुमार विमल जो झारवड़ी पन बिजली परियोजना में सिविल इंजिनियर थे आकस्मिक दुर्घटना से 2 अक्तूबर 1997 को शरीर छोड़ गये। ये शान्ति स्वभाव व्यक्तित्व वाले सेवादार थे। बड़े प्रिय थे। भाई बल बाहुबल होता है इनके बिना मैं एकाकी हो गया हूँ। इस कार्य में मुझे हर समय उनका सहयोग, प्रेरणा एवम् प्रोत्साहन मिलता रहा है। अब इस समय उनका आभार व्यक्त करना तो एक विडम्बना है परन्तु मैं उन्हें तह दिल से श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

(प्रवीण कुमार विमल)

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन"

सङ्के.त सूची

1.	अ0	अध्याय
2.	अथर्ववेदसं0	अथर्ववेद्संहिता
3.	अष्टा0	अष्टाध्यायी
4.	ई0	ईश्वी
5.	ऋक्प्रा0	ऋक्प्रातिशाख्य
6.	ऋक्सं0	ऋग्वेदसंहिता
7.	ऐत0 ब्रा0	ऐतरेय ब्राह्मण
8.	का0	काशिका
9.	का0 तृ0 भा0	काशिका तृतीय भाग
10.	कातं.0 व्या0	कातन्त्रव्याकरण
11.	कातं0 व्या0 का0 प्र0	कातन्त्रव्याकरण कारक प्रकरण
12.	कातं0 व्या0 सं0वृ0च0पा0	कातन्त्रव्याकरणसन्धि वृत्ति चतुर्थ पाद
13.	कातं0 व्या0 सं0 वृ0 द्वि0 पा0	कातन्त्रव्याकरण सन्धिवृत्ति द्वितीय पाद
14.	कातं0 व्या0 सं0वृ0प0पा0	कातन्त्रव्याकरण सन्धिवृत्ति पंचम पाद
15.	गो0 ब्रा0 पू0	गोपथ ब्राह्मण पूर्वगोपथ
16.	चरक सं0	चरक संहिता
17.	चा0 व्या0	चान्द्रव्याकरण
18.	तै0 प्रा0	तैत्तिरीयप्रतिशारण्य
19.	तै0 सं0	तैत्तिरीय संहिता
20.	दश0 उणा0	दशपादी उणादि सूत्र
21.	द्वि0 सं0	द्वितीय संस्करण
22.	नि0	निरूक्त
23.	पञ्च0 उणा0	पञ्चपादी उणादि सूत्र
24.	पं0 सं0	पञ्चम संस्करण

25.	पदम0 प्र0 भा0	पदमञ्जरी प्रथम भाग
26.	पा0 धा0 पा0	पाणिनीय धातुपाठ
27.	पा0 लि0	पाणिनीय लिङ्गानुशासनम्
28.	पा0श0सं0सि0	पाणिनीय शब्दार्थ सम्बन्ध सिद्धान्त:
29.	पा0 श0 सं0सि0 / ग्र0प्र0	पाणिनीयशब्दार्थ सम्बन्ध सिद्धान्त: / ग्रन्थकृत्प्रवृति:
30.	पा0 शि0	पाणिनीय शिक्षा
31.	प्रक्रि0	प्रक्रियाकौमुदी
32.	प्र0स0	प्रक्रियासर्वस्व
33.	प्र0स0टीका भा0 पृ0	प्रक्रियासर्वस्व टीका भाग पृष्ठ
34.	प्र0 स0 प्रा0 श्लो0	प्रक्रियासर्वस्व प्रारम्भिक श्लोक
35.	प्र0सं0	प्रथम संस्करण
36.	प्रा0पा0	प्रारम्भिक पाणिनीयम्
37.	प्रा0 पा0 ति0 भ्वा0 प्र0	प्रारम्भिक पाणिनीयम् तिङन्ते भ्वादि प्रकरणम्
38.	म0सि0कौ0	मध्यसिद्धान्तकौमुदी
39.	म0सि0कौ0 पाञ्च0 भव0	मध्यसिद्धान्तकौमुदी पाञ्चमिकेषु भवनाद्यर्थका:
40.	महा0	महाभाष्य
41.	महा0 दीपि0	महाभाष्य दीपिका
42.	महा0 पस्प0	महाभाष्य पस्पशह्निकम्
43.	महा0 का0	महाभाष्य वार्तिक
44.	महाभा0 उद्योग0	महाभारत उद्योगपर्व
45.	मै0 प्रा0	मैत्रायणी प्रातिशाख्य
46.	यजु0 सं0	यजुर्वेद संहिता
47.	रामा0 किष्कि0	रामायण किष्किन्धा काण्ड
48.	रूप मा0	रूपमाला
49.	रूपा0	रूपावतार
50.	ल0 सि0 कौ0	लघुसिद्धान्तकौमुदी
51.	वाक्य0	वाक्यपदीयम्

52.	वा0 प्रा0	वाजसनेयी प्रातिशाख्य
53.	वि0 पूर्व	विक्रम पूर्व
54.	वि0 यु0 मी0	विक्रम युधिष्ठर मीमांसक
55.	वै0 सि0 कौ0	वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी
56.	सं0	संस्करण
57.	सं0 व्या0 शा0 का इति0	संस्कृत व्याकरण - शास्त्र का इतिहास
58.	सामसं0 उत्त0	सामवेदसंहिता उत्तरार्चिक
59.	सा0 सिं0 कौ0	सारसिद्धान्तकौमुदी
60.	शब्दकौ0	शब्दकौस्तुभ
61.	शब्दशक्ति0	शब्दशक्ति प्रकाशिका

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा एवम् पाणिनीयव्याकरण का परिचय

विषय प्रवेश

द्वितीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति का विवेचन तथा प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव

विषय प्रवेश

तृतीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार

विषय प्रवेश

चतुर्थ अध्याय

सूत्रमूलकपद्धति के पारिप्रेक्ष्य में प्रक्रियामूलकपद्धति का समीक्षात्मक अध्ययन

विषय प्रवेश

प्रथम अध्याय

पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा एवम् पाणिनीयव्याकरण का परिचय

विषय प्रवेश

1. पाणिनि पूर्व व्याकरणपम्रम्परा का विवेचन
2. पाणिनि की अष्टाध्यायी
3. कात्यायन के वार्तिक
4. पतञ्जलि का महाभाष्य

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन

प्रथम अध्याय

पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा एवम् पाणिनीयव्याकरण का परिचय

विषय प्रवेश

1. पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा का विवेचन :-

संस्कृत व्याकरण की परम्परा कब प्रारम्भ हुई ? इस प्रश्न का निश्चित उत्तर अत्यन्त दुष्कर है, फिर भी व्याकरण ज्ञान के लिए व्याकरण की पूर्व पृष्ठभूमि का जानना जरूरी है, क्योंकि सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण के बनने तक संस्कृत व्याकरण की क्या रूपरेखा है ? यह तथ्य व्याकरण की पूर्व पृष्ठभूमि पर आश्रित है।

संसार में समस्त ज्ञान का आदि मूल वेद माना जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार व्याकरण का मूल स्त्रोत भी वैदिकमन्त्रों की अनेक व्युत्पत्तियों से ज्ञापित होता है। वैदिकमन्त्रों में अनेक पदों की व्युत्पत्तियाँ दी गयीं हैं जो सिद्ध करती है कि व्याकरणपरम्परा का आदि मूल भी वेद है। जैसे :- ''यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा:''[1] ''धान्यमसि धिनुहि देवान्''[2] ''येन देवा: पवित्रेणात्मानं पुनते सदा''[3] ''तीर्थैस्तरन्ति''[4] आदि उदाहरणों में यज्ञ, धान्यम्, पवित्र, तथा तीर्थ पदों की व्युत्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं। वैदिकमन्त्रों के इन पदों की व्युत्पत्तियों से सिद्ध होता है कि इन पदों के स्पष्टीकरण के लिए ही इन पदों की व्युत्पत्तियाँ दी गयीं हैं। इसी तरह वैदिकमन्त्रों में अनेक पदों की व्युत्पत्तियाँ दी गयीं हैं। पद व्युत्पत्ति व्याकरण का कार्य है। अत: सिद्ध होता है कि अन्य ज्ञान की तरह व्याकरण का आदि मूल भी वेद है।

व्याकरणशास्त्र वैदिक पदपाठों की रचना से पूर्व अपनी पूर्णता को प्राप्त हो चुका था। वैदिक पदपाठों में साधारण अर्थ जानने के लिए वैदिकपदों का प्रकृति-प्रत्यय, धातु-उपसर्ग समास घटित पूर्वोत्तरपदों के विभाग द्वारा वास्तविक अर्थ जानने की कोशिश की गई है। यही खोज व्याकरणपरम्परा की शुरूआत है।

व्याकरणपरम्परा ब्राह्मणकाल से पूर्व प्रारम्भ हो गई थी, क्योंकि व्याकरण की अनेक संज्ञाओं का निर्देश अनेक ब्राह्मणग्रन्थों में प्राप्त होता है। जैसे :- ''को धातु:, किं प्रतिपदिकम्, किं नामाख्यातम्, किं लिङ्ग.म्, किं वचनम्, का विभक्ति, क: प्रत्यय, क: स्वर, उपसर्गो निपात:............।[5] तथा

---

1 ऋक्सं0 1-164-50

2 यजु:सं0 1-20

3 सामसं0 उत्त0 5-2-8-5

4 अथर्ववेदसं0 18-4-7

5 गो0 ब्रा0 पू0 1-24

''सप्तधा वै वागवदत्''।[1] आदि उदाहरणों में धातु, प्रातिपदिक, नाम, आख्यात्, लिङ्ग., वचन, विभक्ति, प्रत्यय, स्वर, उपसर्ग, निपात आदि व्याकरणीय संज्ञाओं तथा विभक्ति रूप से सप्तधा विभक्ति का उल्लेख है। ये सभी उदाहरण व्याकरण की अनेक संज्ञाओं का निर्देश देते हैं तथा सिद्ध करते हैं कि यदि व्याकरणपरम्परा ब्राह्मणग्रन्थों से पूर्व शुरू न होती तो ब्राह्मणग्रन्थों में इन संज्ञाओं का निर्देश असम्भव था। अतः सिद्ध होता है कि व्याकरण ब्राह्मणग्रन्थों से काफी समय पूर्व प्रचलित हो गया था।

राम के समय व्याकरणशास्त्र का अध्ययन और अध्यापन सुव्यवस्थित रूप से होता था।[2] हनुमान का इतना वाक्पटु होना युक्त ही था क्योंकि हनुमान का पिता वायु शब्दशास्त्र विशारद था।[3] इन सन्दर्भो से सिद्ध होता है कि राम के समय व्याकरण के अध्ययन और अध्यापन की परम्परा प्रचलित थी, अनेक व्याकरण ग्रन्थ रूप में प्रकट हो गए थे तथा अनेक विद्वान व्याकरण के पारखी थे। महाभारत में शब्दशास्त्र के लिए व्याकरण शब्द का प्रयोग किया गया है[4] जो सिद्ध करता है कि महाभारतकाल में भी व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन सुव्यवस्थिति था।

निरूक्त में तो अनेक व्याकरण प्रवक्ताओं का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे :- ''न सर्वाणीति गार्ग्यो वैयाकरणानाम् चैके''[5] तथा ''तत्र नामाख्यातजानीति शाकटायनो नैरूक्त समयश्च''[6] आदि उदाहरणों से ज्ञात होता है कि भारत युद्ध समकालीन यास्क के सम्मुख अनेक वैयाकरण थे परन्तु यास्क ने निरूक्त में केवल गार्ग्य और शाकटायन वैयाकरणों को छोड़कर किसी अन्य वैयाकरण का नामोल्लेख नहीं किया है। इस कथन से सिद्ध होता है कि शाकटायन व्याकरण की रचना यास्कीय-निरुक्त से पूर्व की है तथा शाकटायन से पूर्व रचित सभी व्याकरण निरुक्तकाल से पूर्व रच चुके थे।

युधिष्ठिर मीमांसक मानते हैं कि व्याकरणशास्त्र ग्रन्थ रूप में त्रेता युग के आरम्भ में सुव्यवस्थित हो चुका था।[7]

उपर्युक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि वैदिकसाहित्य से पूर्व व्याकरण ने विद्वानों के हृदय में अपना स्थान बना लिया था, जो अध्ययन और अध्यापन की प्रक्रिया में भी शुरू हो गया था। निश्चित रूप से यह

---

1 ऐत0 ब्रा0 71-7

2 नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपभाषितम् ।।
रामा0 किष्किधा0 3-29

3 तत्राभिमानि भगवान् वायुश्चातिक्रियात्मकः।
वातावरणिः समाख्यातः शब्दशास्त्र विशारदः।।
वायु पुराण 2-40

4 सर्वार्थानां व्याकरणाद् वैयाकरण उच्यते।
तन्मूलतो व्याकरणं व्याकरोतीति तत्तथा।। महाभा0 उद्यो0 43-61

5 निरूक्त 1-12

6 निरूक्त 1-12

7 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 60

नहीं कहा जा सकता कि व्याकरण का विधिवत अध्ययन कब से प्रारम्भ हुआ और व्याकरणशास्त्र को शास्त्र के सिंहासन पर कब आरूढ़ किया गया। ऐसा होने पर भी इतना स्पष्ट कहा जा सकता है कि व्याकरणपरम्परा वैदिकसाहित्य से पूर्व प्रारम्भ हो गई थी।

इस प्रकार पाणिनीयव्याकरण से पूर्व संस्कृत व्याकरण की लम्बी पृष्ठभूमि है। वैदिकसाहित्य समय से ही व्याकरण ने अपनी सत्ता बना ली थी तथा इस का अध्ययन और अध्यापन भी प्रारम्भ हो गया था। सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीय व्याकरण तक अनेक व्याकरण रचे जा चुके थे परन्तु उन में अनेक त्रुटियों के कारण वे प्रचलित नहीं रह सके। इनके होने के प्रमाण ही यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं। ये व्याकरण पाणिनीयव्याकरण के समान सर्वाङ्ग.पूर्ण नहीं थे। संस्कृत व्याकरणों में केवल पाणिनि ने ही सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण की रचना की है इसलिए ही यह व्याकरण अब तक प्रचलित है। यह पाणिनि और पाणिनीयव्याकरण का ही प्रभाव है कि संस्कृतभाषा सम्प्रति लोक में दृश्यमान है।[1] समस्त वैदिक और लौकिक-वाङ्मय की पाणिनीयव्याकरण ने रक्षा की है इसलिए ही विद्वानों ने पाणिनि को वैदिक और लौकिक- वाङ्मय का परिरक्षक कहा है।[2]

पाणिनि से पूर्व लगभग 85 व्याकरणों या व्याकरण प्रवक्ताओं का उल्लेख यत्र-तत्र प्राप्त होता है तथा ऐन्द्र सम्प्रदाय और माहेश्वरसम्प्रदाय के नाम से व्याकरण सम्प्रदायों में दो सम्प्रदाय प्रसिद्ध थे यह उल्लेख भी प्राप्त होता है परन्तु कहीं भी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं है केवल नामोल्लेख ही प्राप्त है।

तैत्तिरीय संहिता से ज्ञात होता है कि इन्द्र ने वाणी का प्रकृति-प्रत्यय विभाग द्वारा विश्लेषण किया था।[3] इस सम्प्रदाय से सम्बद्ध व्याकरण ऐन्द्रसम्प्रदायक कहलाते हैं। व्याकरण से सम्बद्ध प्रतिशाख्यग्रन्थ इसी सम्प्रदाय से सम्बन्धी ग्रन्थ हैं। आचार्य पाणिनि से पूर्व अनेक सम्मानित व्याकरणसम्प्रदाय प्रचलित थे।[4] इन में ऐन्द्रसम्प्रदाय के समान एक अन्य प्रसिद्ध सम्प्रदाय माहेश्वरसम्प्रदाय था। पाणिनीयव्याकरण माहेश्वरसम्प्रदाय से सम्बन्धित है। इस कथन का प्रमाण हमें वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रत्याहार सूत्रों के उपरान्त प्राप्त होता है। भट्टोजिदीक्षित ने प्रत्याहार सूत्रों को माहेश्वरसूत्र कहा है।[5] पाणिनि ने माहेश्वरसम्प्रदाय से सम्बन्धित इन सूत्रों को अपने व्याकरण की रचनार्थ चुना है। अत: स्पष्ट होता है कि पाणिनीयव्याकरण माहेश्वरसम्प्रदाय से सम्बन्धित हैं।

पाणिनि से पूर्व वैयाकरणों में कौन वैयाकरण किस सम्प्रदाय से सम्बन्धित था यह बतलाना कठिन है। क्योंकि इन वैयाकरणों का यत्र-तत्र केवल नामोल्लेख ही प्राप्त होता है। लेकिन अनेक ग्रन्थों की

---

1 संस्कृता जीविता लोके साम्प्रतं यदि दृश्यते।
श्रेयश्च पाणिनेस्तत्र नात्र सन्देह सम्भव:।। 124 ।। पा0 श0 सं0 सि0 / ग्रं0 प्र0

2 वैदिकस्य समसस्तस्य नूनं लौकिकस्य च।
वाङ्मयस्य च लोकेऽस्मिन्न् पाणिनि: परिरक्षक:।। 123 !! पा0श0सं0सि0 / ग्र0 प्र0

3 ते देवा इन्द्रमबुवन, इमां नो वाचं व्याकुर्तिति तामिन्द्रो मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत्। तै0 सं0 6-4-7

4 आचार्यपणिनित: पूर्वम् अनेके सम्मानिता: व्याकरण सम्प्रदाया: प्रचलिता: आसन् । पा0 श0 सं0 सि0 / प्रस्तावना

5 इति माहेश्वराणि सूत्राणि अणादि संज्ञार्थानि इति । वै0 सि0 कौ0 संज्ञा प्रकरण

जानकारी प्राप्त नहीं है। पाणिनि के उपरान्त इन वैयाकरणों के विषय में केवल इतना ही कहा जा सकता है कि ये वैयाकरण ऐन्द्र आदि सम्प्रदायों से सम्बन्धित हैं।

आचार्य पाणिनि ने अपने व्याकरण में पूर्ववर्ती वैयाकरणों में से अनेक वैयाकरणों का आदर से उल्लेख किया है।[1] पाणिनि से पूर्ववर्ती अनेक वैयाकरणों में से 10 वैयाकरणों का उल्लेख अष्टाध्यायी में स्पष्ट प्राप्त होता है।[2] इसके उपरान्त अष्टाध्यायी में ''उदीचाम्''[3] ''प्राचाम्''[4] ''आचार्याणाम्''[5] ''एकेषाम्''[6] आदि निर्देश से अन्य वैयाकरणों का उल्लेख भी प्राप्त होता है। अत: सिद्ध होता है कि पाणिनि से पूर्व अनेक वैयाकरणों ने व्याकरण रचे थे। इनके मतों में से कुछ मत पाणिनि को भी स्वीकार थे जिनका वर्णन अष्टाध्यायी में स्पष्ट है। अष्टाध्यायी में उल्लिखित आपिशलि आदि वैयाकरणों के उपरान्त भी अनेक वैयाकरणों का उल्लेख अनेक ग्रन्थों में प्राप्त होता है जो सिद्ध करता है कि वैदिककाल से पाणिनि तक व्याकरण की एक लम्बी पृष्ठभमि है। निश्चित रूप से यह बतलाना कठिन है कि कितने वैयाकरणों ने संस्कृतभाषा के व्याकरण रचे थे तथा इनमें कैसा वर्णनक्रम और विशेषता थी। फिर भी यत्र-तत्र प्राप्त वर्णन के अनुसार इन वैयाकरणों का क्रमिक वर्णन व्याकरण ज्ञान के लिए आवश्यक है।

शाकटायन के अनुसार ब्रह्मा ने इन्द्र को व्याकरण का उपदेश दिया, इन्द्र ने भारद्वाज को, भारद्वाज ने ऋषियों को, ऋषियों ने ब्राह्मणों को व्याकरण का उपदेश दिया।[7] इस कथन से सिद्ध होता है कि व्याकरण का आदि प्रवक्ता ब्रह्मा है। वैसे भी सब विद्याओं का आदि प्रवक्ता ब्रह्मा को ही माना गया है। अत: ब्रह्मा का व्याकरण का आदि प्रवक्ता होना सिद्ध होता है। इन द्वारा रचित सब विद्याओं का यह प्रवचन शास्त्र या शासन के नाम से प्रसिद्ध है। इसलिए उत्तरवर्ती प्रवचन अनुशासत्र या अनुतन्त्र के नाम से जाने

---

1 एवम् पाणिनिना आयार्चेण स्वकीये अष्टके अनेके पूर्ववर्तिनोवैयाकरणा: सादरम् स्मृता:।
पा0 श0 सं0 सि0 पृष्ठ 7/प्रस्तावना

2 क-वा सुप्यापिशले:। अष्टा0 6-1-92
ख- तृषि-मृषि-कृषे: काश्यपस्य। अष्टा0 1-2-25
ग-अड् गार्ग्यगालवयो:। अष्टा0 7-3-99
घ-ई3 चाक्रवर्मणस्य। अष्टा0 6-1-130
ङ-ऋतो भारद्वाजस्य। अष्टा0 7-2-63
च-ओतो गार्ग्यस्य। अष्टा0 8-3-20
छ-अवङ् स्फोटायनस्य। अष्टा0 6-1-123
ज-गिरेश्च सेनकस्य। अष्टा0 5-4-112
झ-सम्बद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे। अष्टा0 1-1-16
ञ-तृतीयादिषु भाषितपुस्कं पुंवद्गालवस्य। अष्टा 7-1-74

3 उदीचामिञ्। अष्टा0 4-1-153

4 प्राचां ष्फ तद्धित:। अष्टा0 4-1-17

5 अदाचार्याणाम्। अष्टा0 7-3-49

6 यजुष्येकेषाम्। अष्टा 8-3-104

7 ब्रह्मा बृहस्पतये प्रोवाच, वृहस्पतिरिन्द्राय, इन्द्रो भारद्वाजाय, भारद्वाज ऋषिभ्य:, ऋषयो ब्राह्मणेभ्य:।
ऋक्त0 व्या0 1-4

जाते हैं क्योंकि वे इसकी अपेक्षा संक्षिप्त हैं।[1] उपर्युक्त विवरण के अनुसार व्याकरणशास्त्र के द्वितीय प्रवक्ता बृहस्पति हैं। देवगुरू बृहस्पति ने अनेक शास्त्रों के प्रवचन में व्याकरण का प्रवचन भी किया था। महाभाष्यानुसार बृहस्पति ने इन्द्र को दिव्य सहस्त्र वर्ष तक व्याकरण का प्रतिपदपाठ क्रम से उपदेश किया था।[2] अत: इस कथन से बृहस्पति का व्याकरण प्रवक्तृत्व होना सिद्ध होता है।

बृहस्पति ने व्याकरण का उपदेश इन्द्र को दिया। इन्द्र ने प्रतिपदपाठ क्रम की प्रक्रिया में कठिनाई जानकर सर्वप्रथम प्रकृति-प्रत्यय रूपी विभाग द्वारा शब्दोपदेश की कल्पना की।[3] इसी कारण व्याकरण का आदि संस्कर्ता इन्द्र को माना जाता है क्योंकि इन्होंने सर्वप्रथम प्रकृति-प्रत्यय विभाग द्वारा शब्दोपदेश दिया है।

व्याकरण-वाङ्मय में ऐन्द्र तन्त्र प्राचीन है तदुपरान्त वैयाकरणों ने व्याकरणशास्त्र का प्रवचन किया है। इन वैयाकरणों में अनेक प्रवचन भेद समयानुसार होते रहे। इन प्रवचन भेदों के कारण अनेक व्याकरणों की रचना होती रही। इन्द्र से पाणिनि तक कितने व्याकरण रचे गये यह बतलाना अति कठिन है तो भी अनेक ब्राह्मण, प्रतिशाख्य एवम् व्याकरणग्रन्थों में 85 व्याकरण प्रवक्ताओं के नामोल्लेख प्राप्त होते हैं, जो सिद्ध करते हैं कि इन वैयाकरणों ने जरुर व्याकरणशास्त्रों के प्रवचन किये हैं। इन में से 10 का वर्णन अष्टाध्यायी में स्पष्ट प्राप्त होता है तथा 16 अन्य पाणिनि से पूर्व आचार्यो का वर्णन यत्र-तत्र स्पष्ट प्राप्त होता है। शेष वैयाकरणों के केवल नामोल्लेख ही हैं। पाणिनि से पूर्व अनुलिखित वैयाकरणों का क्रम पूर्वक वर्णन इस प्रकार है :-

1. वैयाकरण महेश्वर :-

महेश्वर ने किसी व्याकरण की रचना की थी। महेश्वर द्वारा व्याकरण रचने का उल्लेख अनेक ग्रन्थों में प्राप्त होता है। महेश्वर का दूसरा नाम शिव था। शिव ने व्याकरणशास्त्र का प्रवचन किया था। व्याकरण में प्रचलित चतुर्दश प्रत्याहारसूत्र महेश्वरसूत्र या शिवसूत्र के नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनीय शिक्षा और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में इन सूत्रों को महेश्वरसूत्र कहा है।[4] अत: सिद्ध होता है कि शिव महेश्वर ने जरुर किसी व्याकरण की रचना की थी।

2. वैयाकरण बृहस्पति :-

महाभाष्य के आधार पर ज्ञात होता है बृहस्पति ने इन्द्र को प्रतिपदपाठ द्वारा शब्दों का उपदेश दिया

---

1 हीन: इति न्यून: इच्यते, स चोत्कृष्टापेक्ष:। का0 1-4-86

2 बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्ष सहस्त्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपरायणं प्रोवाच। महा0 पस्प0 प्र0 आ0

3 ते देवा इन्द्रभबुवन्, इमां नो वाचं व्याकुर्विति।
ताम् इन्द्रो मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत्। तै0 सं0 6-4-7

4 क-येनाक्षरसमाम्नायमधिगम्य महेश्वरात्।
कृत्स्नं व्याकरणं प्रोक्तं तस्मै पाणिनये नम:।। पा0 शिक्षा
ख-इति माहेश्वराणि सूत्राणि अणादि संज्ञार्थानि। वै0 सि0 कौ0

था।[1] इन्होंने जरुर किसी व्याकरण की रचना की थी। भर्तृहरि और कैयट के मतानुसार बृहस्पति ने इन्द्र के लिए जिस शब्दशास्त्र का प्रवचन किया था उस का नाम शब्दपरायण था।[2]

3. वैयाकरण इन्द्र :-

ऐन्द्र व्याकरण से पूर्व भाषा व्याकरण संस्कार रहित थी। उस समय तक प्रकृति-प्रत्यय विभाग नहीं हुआ था। इन्द्र ने ही सर्वप्रथम शब्दोपदेश की प्रतिपदपाठ रूपी प्रक्रिया की दुरूहता को समझा। तैत्तिरीय संहिता के अनुसार इन्द्र ने सर्वप्रथम प्रकृति-प्रत्यय का विचार करके शब्दोपदेश की प्रथा प्रचलित की।[3] व्याकरणशास्त्र की रचना देवराज इन्द्र ने देवताओं की प्रार्थना पर की थी।

व्याकरणशास्त्र में दो सम्प्रदाय प्रचलित हैं एक ऐन्द्रसम्प्रदाय और दूसरा माहेश्वरसम्प्रदाय। ऐन्द्र व्याकरण का अपना सम्प्रदाय था। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत प्रतिशाख्यों एवम् कातन्त्रव्याकरण की रचना की गयी है। ऐन्द्र व्याकरण अत्यन्त विशाल था।[4] इस व्याकरण के सम्प्रति ''अथ वर्णसमूह:'' तथा ''अर्थ: पदम्'' दो सूत्र उपलब्ध होते हैं। अत: उक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि देवराज इन्द्र ने जरुर किसी व्याकरण की रचना की थी जो विशालकाय था।

4. वैयाकरण वायु :-

इन्द्र ने वाणी को व्याकृत करने में वायु से सहायता ली थी।[5] इन्द्र और वायु के सहयोग से देववाणी के व्याकरण की सर्वप्रथम रचना हुई है।[6] अत: सिद्ध होता है कि व्याकरण की रचना समय इन्द्र को सहायता देने वाला वायु एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्ति रहा है। निस्सन्देह वायु श्रेष्ठ व्याकरणज्ञ रहे हैं जिन्होंने जरुर किसी व्याकरण की रचना की थी। वायुपुराण में भी वायु को ''शब्दशास्त्र विशारद'' कहा गया है।[7]

5. वैयाकरण भरद्वाज :-

ऋक्तन्त्र के अनुसार भरद्वाज ने अनेक ऋषियों को व्याकरणशास्त्र पढ़ाया था।[8] ऋक्तन्त्र के इस वचन से स्पष्ट होता है कि भरद्वाज ने ऋषियों को प्रवचन देने के लिए किसी व्याकरणशास्त्र की रचना

---

1 बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्ष सहस्त्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपरायणं प्रोवाच। महा० पस्प० प्र० आ०

2 क- शब्द परायणं रुढिशब्दोऽयं कस्यचित् ग्रन्थस्य वाचक:। महा० दीपि० पृष्ठ 21
ख- शब्द परायणशब्दो योगरुढ: शास्त्र विशेषस्य। महा० प्रदीप पृष्ठ - 51

3 ते देवा इन्द्रमब्रुवन्, इमां नो वाचं व्याकुर्वितति।
ताम् इन्द्रो मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत। तै० सं० 6-4-7

4 वेदाङ्ग. पृष्ठ 248

5 वाग्वे पराच्युव्याकृतावदत् ते देवा इन्द्रमब्रुवन्निमां नो वाचं व्याकुर्विति सोऽब्रवीद्वर वृणै, मह्यं चैव वायवे च सह गृह्यता इति। तै० सं० 6-4-7

6 सं० व्या० शा० का इति० पृष्ठ-97

7 तत्राभिमानि भगवान् वायुश्चातिक्रियात्मक:।
वातारणि: समाख्यात: शब्दशास्त्र विशारद:।। वायु पुराण 2-40

8 इन्द्रौ भरद्वाजाय. भरद्वाज ऋषिभ्य:। ऋक्त० व्या० 1-4

की थी। कात्यायन ने वाजसनेयी प्रातिशरव्य में क्रिया को भरद्वाजदृष्ट कहा है। इस कथन से भी यही सिद्ध होता है कि भरद्वाज ने जरुर काई संस्कृत व्याकरण रचा था जिस में आख्यात की विशेष रूप से व्याख्या की गई थी। यद्यपि भरद्वाज व्याकरण का एक भी सूत्र और वचन किसी भी ग्रन्थ में प्रमाण रूप में उद्धृत नहीं किया गया है परन्तु व्याकरण रचने के प्रमाण प्राप्त हैं।

6. वैयाकरण भागुरि :-

वैयाकरण भागुरि ने भी संस्कृत व्याकरण की रचना की थी। यद्यपि पाणिनीयव्याकरण में भागुरि व्याकरण का उल्लेख प्राप्त नहीं है परन्तु न्यास, धातुवृत्ति, प्रक्रियाकौमुदी, तथा अमरटीकासर्वस्व पर भागुरि के मत सम्बन्धी एक श्लोक उद्धृत किया है।[1] शब्दशक्तिप्रकाशिका में जगदीश तर्कालङ्कार ने भागुरि के कुछ मत उद्धृत किये हैं।[2] उक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि भागुरि ने जरुर किसी संस्कृत व्याकरण की रचना की थी जो परिस्कृत और विस्तृत था। शब्दशक्तिप्रकाशिका में उद्धृत श्लोकों से यह अनुमान भी लगता है कि शायद भागुरि द्वारा रचित व्याकरण श्लोक बद्ध हो।

7. वैयाकरण पौष्करसादि :-

पाणिनीयव्याकरण पर पौष्करसादि वैयाकरण का कोई उल्लेख नहीं है परन्तु वार्तिककार, महाभाष्य एवम् अनेक प्रातिशारव्य ग्रन्थों में पौष्करसादि वैयाकरण के मत का उल्लेख प्राप्त होता है जो सिद्ध करता है कि पौष्करसादि आचार्य ने संस्कृत व्याकरणपरम्परा में एक उपयोगी व्याकरण की रचना की थी।

महाभाष्य में ''नादिन्याक्रोशे पुत्रस्य''[3] सूत्र की वार्तिक ''चयो द्वितीया शरि पौष्करसादेः'' में पौष्करसादि का उल्लेख प्राप्त है। महाभाष्य के अतिरिक्त तैत्तिरीय प्रातिशाख्य और मैत्रायणीय प्रातिशाव्य में भी पौष्करसादि के अनेक मत उद्धृत हैं। पाणिनि ने पुष्करसत् पद का पाठ यस्कादि, बाह्वादि और अनुशतिकादि गण में किया है।[4] इस पदपाठ से सिद्ध होता है कि पाणिनि भी पौष्करसादि से परिचित थे। अतः उक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पौष्करसादि आचार्य पाणिनि से पूर्ववर्ती हैं और निर्विवाद वैयाकरण हैं। इन्होंने जरुर किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की है।

---

1 वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरूपसर्गयोः ।
आपं चैव हलन्तानां यथा निशा दिशा ।।
न्यास - 6 - 2 - 37, धातुवृत्ति इण् धातु पृष्ठ 247,
प्रक्रियाकौमुदी भाग - 1 पृष्ठ 182, अमरटीकासर्वस्व भाग - 1 पृष्ठ 53

2 (क) मुण्डादेस्तत् करोत्यर्थे, गृह्णात्यर्थे कृतादितः।
वक्तीत्यर्थे च सत्यादेर्, अङ्गादेस्तन्निरस्यति।। इति भागुरिस्मृतेः
(ख) तूस्ताद्विघाते, संछादे, वस्त्रात् पुच्छादितस्तथा।
उत्प्रेक्षादौ, कर्मणो णिस्तदव्ययपूर्वतः।। इति0 भागुरिस्मृतेः। शब्दशक्ति0 पृष्ठ 444 तथा 445

3 अष्टा0 8 - 4 - 48

4 का0 तृ0 भा0 गण पा0

8. **वैयाकरण चारायण :–**

अनेक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि चारायण ने जरुर संस्कृत व्याकरण की रचना की थी। देवपाल और पतञ्जलि ने चारायण का नामोल्लेख और इन के मत को अपने ग्रन्थों में उद्धृत किया है। देवपाल ने लौगाक्षि-गृह्यसूत्र की व्याख्या में चारायण के एक सूत्र और उस की व्याख्या उद्धृत की है[1] तथा महाभाष्यकार ने ''वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम्''[2] सूत्र की वार्तिक ''गोत्रोत्तरपदस्य च'' में ''कम्बल चारायणीयाः'', ''ओदनपाणिनीयाः'','' धृतरौढीयाः'', आदि उदाहरणों में चारायण को पाणिनि और रौढि के साथ स्मरण किया है। अतः उक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि सम्भवतः चारायण ने किसी संस्कृत व्याकरण की रचना की है जो अधुना अनुपलब्ध है।

9. **वैयाकरण काशकृत्स्न :–**

वैयाकरण निकाय में काशकृत्स्न का व्याकरण प्रवक्तृत्व अत्यन्त प्रसिद्ध है। महाभाष्यकार ने आपिशल और पाणिनीय के साथ, काशकृत्स्न शब्दानुशासन का उल्लेख किया है।[3] वोपदेव द्वारा उल्लिखित 8 शाब्दिकों में काशकृत्स्न का नाम तीसरे स्थान पर है।[4] क्षीरस्वामी ने क्षीरतरङ्गिणी में काशकृत्स्न के मत का उल्लेख किया है।[5] काशकृत्स्न व्याकरण के अनेक सूत्र भी विभिन्न ग्रन्थें में उपलब्ध होते हैं। काशकृत्स्नीय धातुपाठ भी कन्नड व्याख्या सहित प्रकाश में आ गया है। इस व्याख्या में काशकृत्स्न के लगभग 135 सूत्र भी उपलब्ध हैं।[6] काशिका में जयादित्य ने ''संख्यायाः संज्ञासंघसूत्राध्ययनेषु''[7] सूत्र के उदाहरणों में ''त्रिकं काशकृत्स्नम्'' उदाहरण दिया है। इस से प्रतीत होता है कि काशकृत्स्न द्वारा रचित व्याकरण में तीन अध्याय थे। उपर्युक्त सभी उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि वैयाकरण निकाय में वैयाकरण काशकृत्स्न प्रसिद्ध वैयाकरण रहे हैं इन्होंने जरुर संस्कृत व्याकरण की रचना की थी जो अधुना अनुपलब्ध है।

10. **वैयाकरण शन्तनु :–**

वैयाकरण शन्तनु ने अज्ञात सर्वाङ्गपूर्ण व्याकरण की रचना की थी। सम्प्रति उपलभ्यमान फिट्सूत्र उसी व्याकरण के एकदेश हैं। फिट्सूत्रों के कर्ता शन्तनु या शान्तनवाचार्य पाणिनि से पूर्वकालिक है।[8]

---

1 तथा च चारायणिसूत्र - ''पूरूकृतेच्छछ्रयोः'' इति। ''पुरु शब्दः. कृतशब्दश्च लुप्यते यथा संख्यं छे छ्रे परतः। पुरूच्छदनं पुच्छम्, कृतस्य छूदनम् विनाशनं कृच्छ्रम्'' इति। लौ0 गृ0 सू.-5, पृष्ठ-1

2 अष्टा0 1-1-73

3 पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम्। आपिशलं काशकृत्स्नमिति। महा0 पस्प0 प्र0 आ0

4 इन्द्रश्चान्द्रः काशकृत्स्नापिशली शाकटायनः।
पाणिन्यमर जैनेन्द्र जयन्त्यष्टादि शाब्दिकाः।। कविकल्पद्रम/ग्रन्थारम्भ

5 काशकृत्स्ना अस्य निष्ठायामनिटत्वमाहुः'' क्षीरतरङ्गिणी पृष्ठ 185

6 वेदाङ्ग. पृष्ठ 253

7 अष्टा0 5-1-58

8 सं0 व्या0 शा0 का0 इति0, भाग-2 पृष्ठ-316

वैयाकरणसिद्धान्त कौमुदी में भी शान्तनवाचार्य का उल्लेख प्राप्त होता है। अतः उक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि वैयाकरण शन्तनु ने व्याकरणपरम्परा में जरूर किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की थी परन्तु वह भी अन्य व्याकरणों के समान सम्प्रति उपलब्ध नहीं है।

11. वैयाकरण वैयाघ्रपद्य :–

वैयाकरण वैयाघ्रपद्य का उल्लेख पाणिनीयव्याकरण में प्राप्त नहीं है परन्तु जयादित्य ने काशिका में ''सूत्राच्च कोपधात्''[1] और ''सङ्ख्यायाः सञ्ज्ञासङ्घसूत्राध्ययनेषु''[2] सूत्रों के उदाहरणों में तथा वामन ने ''ऋदुशनसपुरुदं सोऽनेहसां च'' सूत्र में कारिका मे वैयाघ्रपद्य का उल्लेख किया है।[3] भट्टोजिदीक्षित काशिका में ''पूर्वत्रासिद्धम्''[4] सूत्र में उद्धृत ''शुष्किका शुष्कजङ्घा च'' कारिका को वैयाघ्रपद्य रचित वार्तिक मानते हैं।[5] युधिष्ठिर मीमांसक भी इस कारिका को वैयाघ्रपद्यीय स्वीकार करते हैं। ये सभी प्रमाण सिद्ध करते हैं कि वैयाकरण वैयाघ्रपद्य ने जरुर किसी अज्ञात संज्ञक व्याकरण की रचना की थी। ''दशकाः वैयाघ्रपदीयाः'' तथा ''दशकं वैयाघ्रपदीयम्'' काशिका में उक्त उदाहरणों से ज्ञात होता है कि वैयाघ्रपद्यीय व्याकरण में 10 अध्याय थे।

12. वैयाकरण माध्यन्दिनिः –

काशिका में ''ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाम् च''[6] सूत्र में उद्धृत कारिका में वैयाघ्रपद्य के साथ माध्यन्दिनि मत का वर्णन भी है।[7] रूपमाला तथा प्रक्रियाकौमुदी में भी माध्यन्दिनि के मत का वर्णन किया है।[8] उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि माध्यन्दिनि ने जरुर किसी अज्ञात संज्ञक व्याकरण की रचना की थी जो अधुना अनुपलब्ध है।

13. वैयाकरण रौढि :–

रौढि नामक आचार्य पाणिनि से पूर्व कालिक वैयाकरण थे। इस विषय में अनेक प्रमाण अनेक ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं। महाभाष्य में पतञ्जलि ने ''वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद् वृद्धम्''[9] सूत्र में ''घृतरौढीयाः'' उदाहरण दिया है। जयादित्य ने काशिका में ''घृतरौढीयाः'' का भाव इस प्रकार व्यक्त किया है–

---

1 अष्टा० 4-2-65

2 अष्टा० 5-1-58

3 सम्वोधनेतूशनसस्त्रि रुपं सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्।
माध्यन्दिनिर्वष्टि गुणं त्विगन्ते नपंसके व्याघ्रपदां वरिष्ठः।। कारिका का० 7-1-94

4 अष्टा० 8-2-1

5 शब्दकौस्तुभ 1-1-59

6 अष्टा० 7-1-94

7 संवोधने तूशनसस्त्रि रूपं सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्।
मध्यन्दिनिर्वष्टि गुणं त्विगन्ते नपुंसके व्याघ्रपदां वरिष्ठः।। कारिका का० 7-1-94

8 रुपमाला नपुस्कलिङ्ग. प्रकरण। प्रक्रियाकौमुदी भूमिका पृष्ठ-32

9 अष्टा० 1-1-73

''घृत प्रधानो रौढिः घृत रौढिः तस्य छात्राः घृतरौढीयाः''[1]। आदि उदाहरणों से ज्ञात होता है कि आचार्य रौढि अत्यन्त सम्पन्न थे उन्होंने अपने छात्रों के लिए घी की विशेष रूप से व्यवस्था कर रखी थी। काशिका में वामन ने ''आचार्योपसर्जनश्चान्तेवासी''[2] सूत्र में ''आपिशलि पाणिनीयाः, पाणिनीयरौढीयाः, रौढीयकाशकृत्स्नाः'' उदाहरणों में आचार्य रौढि को दो बार स्मरण किया है। उक्त उदाहरणों से प्रतीत होता है कि आपिशलि, पाणिनि, काशकृत्स्न वैयाकरणों के साथ उक्त आचार्य रौढि वैयाकरण था। वैयाकरण रौढि ने किसी अज्ञात संज्ञक व्याकरण की रचना की थी जो पूर्व वैयाकरणों की रचना के समान अनुपलब्ध है।

14. वैयाकरण शौनकि :-

शौनकि आचार्य का उल्लेख पाणिनीय अष्टाध्ययी में प्राप्त नहीं है परन्तु चरक संहिता और वाजसनेय प्रतिशाख्य में शौनकि के मत का उल्लेख प्राप्त होता है।[3] अतः सिद्ध होता है कि वैयाकरण शौनकि ने जरूर किसी व्याकरण की रचना की थी जो इस समय उपलब्ध नहीं है।

15. वैयाकरण गौतम :-

महाभाष्य में ''आचार्योपसर्जनश्चान्तेवासी''[4] सूत्र में ''आपिशलपाणिनीयव्याडीयगौतमीयाः'' प्रयोग प्राप्त होता है। इस प्रयोग में आपिशलि, पाणिनि, तथा व्याड़ि निर्विवाद वैयाकरण है। इन के साथ स्मृत गौतम का वैयाकरण होना सिद्ध होता है। तैत्तिरीय प्रतिशाख्य और मैत्रायणीय प्रतिशाख्य में भी गौतम के मत उद्धृत हैं। अतः सिद्ध होता है कि आचार्य गौतम जरुर पाणिनि से पूर्व वैयाकरण रहे हैं जिन्होंने किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की थी जो अधुना अनुपलब्ध है।

16. वैयाकरण व्याडिः -

आचार्य व्याडि का निर्देश पाणिनीय अष्टक में नहीं है। ऋक्प्रतिशाख्य में इन के मत उद्धृत हैं तथा पुरूषोत्तमदेव ने भाषावृत्ति में गालव के साथ व्याडि का एक मत उद्धृत किया है।[5] पाणिनीय अष्टक में गालव का उल्लेख चार सूत्रों में प्राप्त है।[6] अतः सिद्ध होता है कि गालव के साथ स्मृत व्याडि भी वैयाकरण हैं। महाभाष्य में भी एक प्रयोग में पतञ्जलि ने आपिशलि, पाणिनि, गौतम आदि प्रसिद्ध वैयाकरणों के साथ व्याडि को स्मरण किया है।[7] आचार्य शौनक ने ऋक्प्रतिशाख्य में शाकल्य और गार्ग्य के साथ व्याडि का

---

1 का0 1-1-73

2 अष्टा0 6-2-36

3 कारणशब्दस्तु व्युत्वादितः -
करोतेरपि कर्तृत्वे दीर्घत्वं शास्ति शौनकिः। चरक सं0 2-27

4 अष्टा0 6-2-36

5 इकां यण्भिर्व्यवधानं व्याडिगालवयोरिति वक्तव्यम्। भाषावृत्ति 6-1-77

6 (क) इको ह्रस्वऽङ्यो गालवस्य। अष्टा0 6-3-61
(ख) तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुंवद् गालवस्य। अष्टा0 7-1-74
(ग) अड् गार्ग्यगालवयोः। अष्टा0 7-3-99
(घ) नोदात्तस्वीरतोदयमगार्ग्यकाश्यपगालवानाम्। अष्टा0 8-4-67

7 आपिशलपाणिनीयव्याडीगौतमीयाः। महा0 6-2-36

उल्लेख किया है।[1] शाकल्य और गार्ग्य दोनों पाणिनीय अष्टक में उल्लिखित आचार्य हैं। अतः सिद्ध होता है कि शाकल्य और गार्ग्य के साथ स्मृत व्याडि एक प्रसिद्ध वैयाकरण रहे हैं। वैयाकरण व्याडि ने किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की थी जो अधुना अनुपलब्ध है।

पाणिनि से पूर्व अनेक वैयाकरणों में से 16 वैयाकरणों का उल्लेख पाणिनीय अष्टक के अतिरिक्त अनेक प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त होता है। उपर्युक्त वर्णन इन वैयाकरणें का सप्रमाण वर्णन है। इन के उपरान्त कुछ ऐसे वैयाकरण भी हैं जिन का वर्णन अन्य प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त होने के साथ पाणिनीय अष्टाध्यायी में भी प्राप्त हैं। प्राचीन ग्रन्थों के साथ पाणिनीय अष्टाध्यायी में उल्लिखित होने के कारण ये वैयाकरण अन्य वैयाकरणों से अधिक प्रमाणिक वैयाकरण हैं। पाणिनि से पूर्व इन वैयाकरणों की संख्या 10 है। इन वैयाकरणों के वास्तविक समय के विवाद के कारण वर्णानुक्रम पूर्वक वर्णन करना उचित है जो इस प्रकार है :-

1. वैयाकरण आपिशलिः –

वैयाकरण आपिशलि का उल्लेख पाणिनीयव्याकरण के सूत्र "वा सुप्यापिशलेः"[2] में प्राप्त होता है। पतञ्जलि ने "खण्डिकादिभ्यश्च" सूत्र में आपिशलि का मत प्रमाण रूप में उद्धृत किया है[3] तथा "अनुपसर्जनात्" सूत्र में "अपिशलमधीते ब्राह्मणी अपिशला ब्राह्मणी" उदाहरण दिया है।[4] इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि कात्यायन और पतञ्जलि के समय आपिशल व्याकरण का अत्यधिक प्रचार था तथा कन्यायें भी आपिशल व्याकरण का अध्ययन करती थी। वामन, जिनेन्द्रबुद्धि, कैयट आदि प्राचीन ग्रन्थकारों ने आपिशल व्याकरण के अनेक सूत्र अपने ग्रन्थों में उदधृत किये हैं।[5] अतः सिद्ध होता है कि वैयाकरण आपिशलि ने किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की थी जो सम्प्रति अनुपलब्ध है।

2. वैयाकरण काश्यपः –

पाणिनीयव्याकरण में काश्यप का मत "तृषिमृषिकृषेः काश्यपस्य"[6] "नोदातस्वरितोदयमगार्ग्यकाश्यपगालवानाम्"[7] इन 2 सूत्रों में प्राप्त होता है। वाजसनेय प्रतिशाख्य में काश्यप का शाकटायन के साथ नकार, मकार के लोप प्रसङ्ग में उल्लेख प्राप्त होता है।[8] अष्टाध्यायी और वाजसनेय प्रातिशाख्य में उल्लिखित काश्यप एक ही व्यक्ति है।[9] महाभाष्य में "तदस्मिन्नस्तीति देशे

---

1 व्याडिशाकल्यगार्ग्याः। ऋक्प्रातिशारण्य - 13 - 31

2 अष्टा० 6 - 1 - 92

3 एवं च कृत्वाऽऽपिशलेराचार्यस्य विधिरूपपन्नो भवति धेनुरनञिकमुत्पादयति। महा० 4 - 2 - 45

4 महा० 4 - 1 - 14

5 का० 7 - 3 - 86, न्यास 4 - 2 - 45, महा० प्रदीप 5 - 1 - 21

6 अष्टा० 1 - 2 - 25

7 अष्टा० 8 - 4 - 67

8 लोपं काश्यपशाकटायनौ। वा० प्रा० 4 - 5

9 सं० व्या० शा० का इति० पृष्ठ - 158

तन्नाम्नि''[1] सूत्र में काश्यप तन्त्र का उल्लेख प्राप्त होता है। उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि आचार्य काश्यप पाणिनि से पूर्ववर्ती वैयाकरण है। सम्प्रति काश्यप व्याकरण का एक भी सूत्र प्राप्त नहीं है।

3. **वैयाकरण गार्ग्य : –**

पाणिनीयव्याकरण में गार्ग्य का उल्लेख ''अड्गार्ग्यगालवयो:''[2] ''ओतो गार्ग्यस्य''[3] ''नोदात्तस्वरितोदयमगार्ग्यकाश्यपगालवानाम्''[4] आदि 3 सूत्रों में प्राप्त होता है। ऋक्प्रतिशाख्य और वाजसनेय प्रतिशाख्य में भी गार्ग्य के मत प्राप्त होते हैं।[5] निरुक्त में गार्ग्य का उल्लेख 3 बार किया गया है। युधिष्ठिर मीमांसक भी नैरुक्त गार्ग्य और वैयाकरण गार्ग्य दोनों को एक ही व्यक्ति मानते हैं।[6] अत: सिद्ध होता है कि आचार्य गार्ग्य पाणिनि से पूर्ववर्ती वैयाकरण थे। सम्प्रति इन की रचना अनुपलब्ध है। केवल इन के वैयाकरण होने के प्रमाण ही प्राप्त है।

4. **वैयाकरण गालव : –**

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में आचार्य गालव का उल्लेख ''इको ह्रस्वोऽङ्यो गालवस्य''[7] तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुंवद् गालवस्य''[8] ''अड् गार्ग्य गालवयो:''[9] ''नोदात्तस्वरितोदयमगार्ग्यकाश्यपगालवानाम्''[10] आदि 4 सूत्रों में 4 बार किया है। पुरूषोतम देव ने ''इको यणचि'' सूत्र में गालव व्याकरण सम्बन्धी एक मत उद्धृत किया है।[11] इन प्रमाणों सें स्पष्ट होता है कि आचार्य गालव ने जरुर कोई व्याकरण रचा था जो सम्प्रति उपलब्ध नहीं है न ही इस का कोई सूत्र प्राप्त है केवल आचार्य के मत ही प्राप्त होते हैं।

5. **वैयाकरण चाक्रवर्मण : –**

पाणिनि ने अष्टाध्यायी के सूत्र ''ई३ चाक्रवर्मणस्य''[12] में आचार्य चाक्रवर्मण का वर्णन 1 बार ही किया है। उणादि सूत्रों में भी चाक्रवर्मण आचार्य का उल्लेख प्राप्त होता है।[13] भट्टोजिदीक्षित ने भी

---

1 काश्यपकौशिकग्रहणं च कल्पे नियमार्थम। महा0 4-2-67
2 अष्टा0 7-3-99
3 अष्टा0 8-3-20
4 अष्टा0 8-4-67
5 (क) व्याडिशाकल्यगार्ग्या:। ऋ0 प्रा0 13-31
(ख) ख्याते खयौ कशौगार्ग्य: सक्ख्योक्ख्यमुक्ख्यवर्जम्। वा0 प्रा0 4-167
6 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 162
7 अष्टा0 6-3-61
8 अष्टा0 7-1-74
9 अष्टा0 7-3-99
10 अष्टा0 8-4-67
11 इकां यणभिर्व्यवधानम् व्याडिगालवयोरिति वक्तव्यम्। भाषावृत्ति 6-1-77
12 अष्टा0 6-1-130
13 कपश्याक्रवर्मणस्य। पञ्च0 उणा0 1-144, दश0 उणा0 7-11

चाक्रवर्मण का वर्णन किया है। इन प्रमाणों से ज्ञात होता है कि आचार्य चाक्रवर्मण निर्विवाद पाणिनि से पूर्व वैयाकरण हैं जिन्होने अज्ञात व्याकरण की रचना की थी जो सम्प्रति उपलब्ध नहीं है।

6. वैयाकरण भारद्वाज :-

आचार्य भारद्वाज का उल्लेख पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्र ''ऋतो भारद्वाजस्य''[1] में ही प्राप्त होता है। यद्यपि ''कृकणपर्णाद्भारद्वाजे''[2] सूत्र में भी भारद्वाज शब्द प्राप्त होता है परन्तु उक्त सूत्र में प्राप्त भारद्वाज शब्द देशवाची है आचार्यवाची नहीं है।[3] भारद्वाज का व्याकरण विषयक मत तैत्तिरीय प्रातिशाख्य[4] और मैत्रायणी प्रतिशाख्य में भी प्राप्त होता है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पाणिनि से पूर्व भारद्वाज महान वैयाकरण रहे हैं जिन्होंने जरुर किसी अज्ञात व्याकरण की रचना की थी। इस व्याकरण के सूत्र व वचन प्राप्त नहीं होते हैं केवल नामोल्लेख ही प्राप्त होता है।

7. वैयाकरण शाकटायन :-

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में आचार्य शाकटायन का उल्लेख 3 सूत्रों में किया है वे सूत्र इस प्रकार हैं ''लङः शाकटायनस्यैव''[5] ''व्योर्लघुप्रयत्नतरः शाकटायनस्य''[6] ''त्रिप्रभृतिषु शाकटायनस्य''[7]।

वाजसनेय प्रातिशाख्य तथा ऋक्प्रतिशाख्य में भी शाकटायन को अनेक स्थानों पर स्मरण किया गया है। यास्क ने वैयाकरण शाकटायन का यह मत उद्धृत किया है कि सभी नाम शब्द आख्यातों से उत्पन्न होते हैं।[8] पतञ्जलि ने स्पष्ट शब्दों में शाकटायन को वैयाकरण स्वीकार किया है।[9] शाकटायन वैयाकरण का स्थान वैयाकरणों में ऊँचा था इस कथन का प्रमाण वामन द्वारा दिये गये ''अनुशाकटायनम् वैयाकरणाः'' तथा ''उपशाकटायनम् वैयाकरणाः''[10] उदाहरणों से मिलता है कि सभी वैयाकरण शाकटायन से नीचे थे। अतः सिद्ध होता है कि पाणिनि से पूर्व शाकटायन वैयाकरण एक प्रसिद्ध वैयाकरण हुए हैं, इन की रचना भी अन्य वैयाकरणों के समान अनुपलब्ध है।

8. वैयाकरण शाकल्यः -

आचार्य पाणिनि ने शाकल्य आचार्य के मत का उल्लेख ''सम्बुद्धौशाकल्यस्येतावनार्षे''[11] ''इकोऽसवर्णे

---

1 अष्टा0 7-2-63
2 अष्टा0 4-2-145
3 भारद्वाजशब्दोऽपि देशवचन एव, न गोत्र शब्दः। का0 4-2-145
4 अनुस्वरेऽण्विति भारद्वाजः। तै0 प्रा0 17-3
5 अष्टा0 3-4-111
6 अष्टा0 8-3-18
7 अष्टा 8-4-50
8 तत्र नामाख्यातजानीति शाक्टायनो नैरूक्तसमयश्च। नि0 1-12
9 वैयाकरणानाम् शाकटायनो। महा0 3-2-115
10 हीने। का0 1-4-86
11 अष्टा 1-1-16

शाकल्यस्य ह्रस्वश्च''[1] ''लोपः शाकल्यस्य''[2] ''सर्वत्र शाकल्यस्य''[3] आदि 4 सूत्रों में किया है। ऋक्प्रतिशाख्य और वाजसनेय प्रतिशाख्य में भी शाकल्य के मत का उल्लेख प्राप्त होता है।[4] महाभाष्य में ''इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च'' सूत्र में पतञ्जलि ने शाकल्य के नियम का शाकल नाम से उल्लेख किया है।[5] पाणिनीय अष्टाध्यायी और अन्य गन्थों में उद्धृत शाकल्य के मतों से प्रतीत होता है कि शाकल्य का व्याकरण वैदिक और लौकिक उभयविध शब्दों का प्रतिनिधित्व करता था।

9. **वैयाकरण सेनक :-**

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में सेनक का उल्लेख ''गिरेश्च सेनकस्य''[6] मात्र 1 सूत्र में ही किया है। अष्टाध्यायी के अतिरिक्त प्रतिशाख्य, महाभाष्य, काशिका आदि ग्रन्थों में सेनक का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। पाणिनि द्वारा स्मृत होने से ही ज्ञात हो जाता है कि आचार्य सेनक पाणिनि से पूर्ववर्ती वैयाकरण रहे हैं इन की रचना भी सम्प्रति अनुपलब्ध है।

10. **वैयाकरण स्फोटायन :-**

स्फोटायन आचार्य का उल्लेख पाणिनि ने ''अवङ् स्फोटायनस्य''[7] सूत्र में ही किया है। पाणिनि के अतिरिक्त किसी भी अन्य ग्रन्थकार ने वैयाकरण स्फोटायन का उल्लेख अपने ग्रन्थों में नहीं किया है। पाणिनि द्वारा स्मृत आचार्य से ज्ञात होता है कि इस आचार्य ने भी जरुर कोई व्याकरण रचा था जो सम्प्रति अनुपलब्ध है।

पाणिनि से पूर्व वैयाकरणों के विवरण से ज्ञात होता है कि संस्कृत व्याकरण क्षेत्र में पाणिनि से पूर्ववर्ती वैयाकरणों ने व्याकरणशास्त्र के विकास हेतु अपना-अपना योगदान दिया था। परन्तु इन वैयाकरणों द्वारा रचित ग्रन्थों के अभाव के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक वैयाकरण ने पूर्ववर्ती व्याकरण में यह विकास किया है। फिर भी यह स्पष्ट है कि आचार्य पाणिनि तक व्याकरणपरम्परा को पहुँचाना पूर्व वैयाकरणों का योगदान है। पाणिनि से पूर्व व्याकरण रचने की परम्परा प्रचलित थी इन्होंने आकस्मात ही व्याकरण नहीं रचा है। पाणिनि ने पूर्व आचार्यो की कृत्तियों में अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने के उपरान्त सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण की रचना की है। यही कारण है कि पाणिनि से पूर्ववर्ती आचार्यो द्वारा रचित व्याकरण अधिक देर प्रचलित नहीं रह सके केवल इन का उल्लेख मात्र प्राप्त होता है।

---

1 अष्टा0 6-1-127
2 अष्टा0 8-3-19
3 अष्टा0 8-4-51
4 (क) ऋक्0 प्रा0 3-13, 22 तथा 4-13
(ख) वा0 प्रा0 3-10
5 सिन्नित्यसमासयोः शाकलप्रतिषेधो वक्तव्यः। महा0 6-1-127
6 अष्टा 5-4-112
7 अष्टा0 6-1-123

पाणिनीयव्याकरण इसलिए अब तक प्रचलित है क्योंकि यह पाणिनि से पूर्ववर्ती व्याकरणों की अपेक्षा सर्वाङ्ग. पूर्ण है। पाणिनि द्वारा रचित व्याकरण ''अष्टाध्यायी'' नाम से प्रसिद्ध है।

समयानुसार पाणिनीय अष्टाध्यायी को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा जिन का निवारण कात्यायन और पतञ्जलि ने वातिर्कों और भाष्य वचनों द्वारा किया है। इसी कारण पाणिनीयव्याकरण को त्रिमुनि व्याकरण भी कहा जाता है। इन आचार्यों का पाणिनीयव्याकरण को लोकप्रिय बनाने के लिए अपना-अपना योगदान रहा है। पाणिनीयव्याकरण की पूर्ण जानकारी के लिए पाणिनि की अष्टाध्यायी कात्यायन के वार्तिक और पतञ्जलि के महाभाष्य की जानकारी आवश्यक है।

2. पाणिनि की अष्टाध्यायी :-

वैदिक साहित्यकाल के उपरान्त पाणिनि तक अनेक वैयाकरणों ने व्याकरण रच कर संस्कृतभाषा का उद्धार किया है परन्तु पाणिनि से पूर्ववर्ती वैयाकरणों और व्याकरणग्रन्थों का यत्र-तत्र उल्लेख मात्र प्राप्त होता है। इन के ग्रन्थ रूप में व्याकरणशास्त्र प्राप्त नहीं है। व्याकरणसाहित्य में सम्प्रति उपलब्ध व्याकरण ही पाणिनीयव्याकरण है। यह व्याकरण ''अष्टाध्यायी'' के नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनि ने इस व्याकरण को रचने में पूर्ववर्ती सभी वैयाकरणों की कृत्तियों से सहायता ली है। पाणिनि इस विषय में पूर्ववर्ती सभी आचार्यों के ऋणी हैं।

पाणिनि ने अष्टाध्यायी को रचने से पूर्व सम्पूर्ण भारत की यात्रा करके अनेक क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्दों का अध्ययन किया, फिर इन शब्दों की रचना के लिए लगभग 4000 सूत्रों की रचना की। सूत्ररचना के उपरान्त इन सूत्रों को विज्ञानिक क्रम से वर्गीकृत करने पर आठ अध्यायों में विभक्त किया। इसी कारण पाणिनि की इस रचना को ''अष्टाध्यायी'' के नाम से जाना जाता है क्योंकि इस में आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। पाणिनि की अष्टाध्यायी सूत्रमूलकपद्धति का मूर्धन्य ग्रन्थ है। व्याकरण की पूर्ण जानकारी के लिए सर्वप्रथम पाणिनीय अष्टाध्यायी की जानकारी आवश्यक है जो इस प्रकार है -

अष्टाध्यायी के प्रारम्भ में प्रत्याहार सूत्रों का वर्णन है। इन सूत्रों को शिवसूत्र या महेश्वरसूत्र भी कहा जाता है।[1] इसी प्रमाण के कारण पाणिनीयव्याकरण को माहेश्वर सम्प्रदाय से सम्बद्ध माना जाता है । पाणिनीय अष्टाध्यायी की यह विशेषता है कि इसमें समान कार्य करने वाले सूत्र एक क्रम में प्राप्त है। पाणिनीय अष्टाध्यायी के प्रथम अध्याय में मुख्य रूप से संज्ञाओं और परिभाषाओं का प्रतिपादन किया गया है। प्रथम अध्याय का प्रारम्भ या अष्टाध्यायी का प्रारम्भ पाणिनि ने ''वृद्धिरादैच्''[2] सूत्र से किया है। पाणिनि ने इस सूत्र कों मङ्.लार्थ ग्रन्थ के आदि में दिया है। पाणिनि ने संज्ञा तथा परिभाषा सूत्रों को ग्रन्थ के आदि में इसलिए दिया है कि इन सूत्रों के आधार पर उतरवर्ती प्रकरणों का निर्माण किया गया है। पाणिनि ने लोकप्रसिद्ध लिंङ्ग., वचन, काल आदि पदों की व्याख्या नहीं की है। इनका मत है कि जो संज्ञाएँ

---

1 इति महोश्वराणि सूत्राव्यणादिसंज्ञार्थानि। वै0 सि0 कौ0 पृ0-1

2 अष्टा0 1-1-1

लोक प्रचलित हैं उनकी व्याख्या करना अनावश्यक है।[1] प्रथम अध्याय चतुर्थपाद में कारकों की चर्चा है।

अष्टाध्यायी द्वितीय अध्याय के प्रथम दो पादों में समास विधायक सूत्रों का वर्णन है। तृतीयपाद में विभक्ति विधायक सूत्रों का उल्लेख है तथा चतुर्थपाद में समास कार्य के उपरान्त लिंङ्ग. निर्णयार्थ प्रकरण दिया है।[2]

अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में धातुओं और उनसे लगने वाले प्रत्ययों तथा धातु व प्रत्ययों से निष्पन्न क्रिया वचनों एवम् कृत्य प्रत्ययों और कृदन्तों का वर्णन है।[3]

अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय में पाणिनि ने पुलिंङ्ग. शब्दों से स्त्रीत्व विवक्षा में स्त्रीप्रत्ययों का विधान तथा संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि शब्दों से आवश्यकतानुसार अपत्यादि अर्थ निकालने के लिए विभिन्न तद्धित प्रत्ययों का वर्णन किया है।[4]

अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय में शेष तद्धित प्रत्ययों के वर्णन के उपरान्त समासन्त प्रत्ययों की जानकारी है।[5]

अष्टाध्यायी षष्ठ अध्याय में प्रकृति से सम्बन्धी आदेश, आगम आदि कार्यो का वर्णन है। प्रकृति सम्बन्धी आदेश और आगम में द्वित्व, आत्व, विभिन्न आदेश और आगम तथा सम्प्रसारण आदि विवेचन आता है। इस विवेचन के उपरान्त इस अध्याय में विभिन्न प्रत्ययों से सम्बन्धी कार्यो की चर्चा है। इसी अध्याय में समस्त पदों का विवेचन तथा कुछ सन्धि कार्यो का वर्णन है।[6]

सप्तम अध्याय में अंङ्गधिकार के अन्तर्गत विविध प्रत्यय कार्यो तथा आगमों का उल्लेख है। इसी अध्याय में प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों का वर्णन है तथा सप्तम अध्याय चतुर्थपाद में धातु सम्बन्धी कार्यो और अभ्यास कार्यो की चर्चा है।[7]

अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय में वाक्यविचार, वाक्यगत विविध संश्लेषणात्मक परिवर्तन, पदगत विविध परिवर्तन, पदान्त विधियों तथा हल् सन्धियों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन किया गया है। पाणिनीयव्याकरण की विलक्षणता प्रकट करने वाला असिद्ध प्रकरण भी अष्टाध्यायी के अष्टम अध्याय में प्राप्त है। इस प्रकरण में ''पूर्वत्रासिद्धम्''[8] सूत्र के अधिकार में इस अध्याय की समाप्ति पर्यन्त त्रिपादी सूत्र सपाद सप्ताध्यायी की दृष्टि में असद्धि हैं तथा त्रिपादी में भी पूर्व सूत्र की दृष्टि में पर सूत्र असिद्ध है। यह

---

1 तदशिष्यं संज्ञाप्रमाणत्वात्। अष्टा0 1-2-53
2 अष्टा0 द्वितीय अध्याय।
3 अष्टा0 तृतीय अध्याय।
4 अष्टा0 चतुर्थ अध्याय।
5 अष्टा0 पञ्चम अध्याय।
6 अष्टा0 षष्ठ अध्याय।
7 अष्टा0 सप्तम अध्याय।
8 अष्टा 8-2-1

प्रकरण व्याकरण में एक चमत्कार प्रस्तुत करता है। इस अध्याय के अन्त में चत्व, गत्व, णत्व, नुम आदि अनेक विधियों का विधान किया गया है।

पाणिनीय अष्टाध्यायी की रचना के उपरान्त काफी समय तक इस का अध्ययन और अध्यापन सुचारू रूप से होता रहा परन्तु समयानुसार भाषा में अनेक नवीन शब्दों का प्रयोग होने लगा। इन शब्दों का वर्णन करने में पाणिनीय अष्टाध्यायी असमर्थ होने लगी। इस समस्या के समाधान हेतु कात्यायन ने पाणिनि की अष्टाध्यायी पर अनेक वार्तिक रचे। व्याकरण ज्ञान के लिए कात्यायन के वार्तिकों की जानकारी भी आवश्यक है।

3. कात्यायन के वार्तिक :–

समय परिवर्तन के साथ भाषा भी परिवर्तनशील है इस में नित्य परिवर्तन होता रहता है। पाणिनि ने तात्कालिक शब्दों की रचना के लिए लगभग 4000 सूत्रों की रचना की परन्तु समयानुसार भाषा में नवीन शब्दों का प्रार्दुभाव होता रहा। इन नवीन शब्दों की रचना करने में अष्टाध्यायी असमर्थन होने लगी क्योंकि अष्टाध्यायी तो वही वर्णन कर सकती थी जो उस में वर्णित था, जो वर्णित नहीं था उस का वर्णन इस द्वारा असम्भव था। इसके अतिरिक्त अनेक प्रचलित शब्दों का वर्णन भी छुट सकता है क्योंकि तल्लीनता के कारण सभी वर्णन असंम्भव है। भाव यह है कि चाहे भाषा में नये शब्द आये हों या तल्लीनता के कारण पाणिनि से ही वर्णन करने से छुटे हों या अव्युतपन्नमान कर पाणिनि ने ही इन का वर्णन अनावश्यक समझा हो, इन सभी शब्दों का वर्णन पाणिनीयव्याकरण नहीं कर पा रहा था। इस समस्या को देखकर कात्यायन ने पाणिनीय अष्टाध्यायी पर वार्तिक रचे। इन की संख्या निश्चित नहीं है कि यह वार्तिक संख्या में कितने है क्योंकि महाभाष्य में भी अनेक वार्तिककारों की वार्तिकों का वर्णन है। अतः इन की संख्या निश्चित नहीं है। इन वार्तिकों का महाभाष्य में ही वर्णन प्राप्त होता है स्वतन्त्र वार्तिकग्रन्थ प्राप्त नहीं है।

कात्यायन के समान अन्य आचार्यो ने भी अष्टाध्यायी पर वार्तिक रचे थे। परन्तु उनकी पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं होती है। (1) कात्यायन (2) भारद्वाज (3) सुनाग (4) क्रोष्टा और (5) बाडव इन पांच वार्तिककारों के नाम महाभाष्य में प्राप्त होते हैं तथा (1) व्याघ्रभूति और (2) वैयाघ्रपद्य इन दो वार्तिककारों के नाम महाभाष्य टीकाओं में प्राप्त होते हैं।[1]

महाभाष्य में 28 सूत्रों पर अन्य आचार्यो के वार्तिकों को उद्धृत किया है।[2] इस कथन से स्पष्ट होता है कि कात्यायन से पूर्व अनेक आचार्यो ने भी वार्तिक रचे थे।

कात्यायन ने वार्तिकों द्वारा पाणिनीयव्याकरण को पूर्णता प्रदान की है जोकि पाणिनि के काफी समय बाद अनेक पदों की असिद्धि के अभाव में आयी थी। कात्यायन ने पाणिनि के लगभग 4000 सूत्रों

---

1 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 316

2 वेदाङ्ग. पृष्ठ 349

में से केवल 1228 सूत्रों पर लगभग 4200 वार्तिक दिये हैं जो अष्टाध्यायी के अतिरिक्त लगभग 10000 नवीन पदों की रूपरचना का वर्णन करते हैं।[1]

स्वतन्त्र रूप में कात्यायन के वार्तिकों का ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। केवल महाभाष्य के माध्यम से ही कात्यायन के वार्तिक हम तक पहुंचते हैं।[2] महाभाष्य के अध्ययन से प्रतीत होता है कि कात्यायन एक ऐसे वैयाकरण है जो पाणिनीय अष्टाध्यायी के उक्त, अनुक्त, दुरूक्त सूत्रों पर गहन विचार करके उनमें आवश्यक संशोधन अथवा परिवर्तन-परिवर्धन करके पाणिनीयव्याकरण को समयानुकूल पूर्णता प्रदान करते हैं।

वस्तुत: पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य की रचना कात्यायन के वार्तिकों की ही परीक्षा-समीक्षा करने के लिए की है।[3] महाभाष्य में भी कात्यायन कृत्त वार्तिकों की संख्या निश्चित नहीं की जा सकती क्योंकि इस में अनेक वार्तिककारों की वार्तिकों का वर्णन भी है। अत: कात्यायन द्वारा रचित वार्तिकों की संख्या निश्चित नहीं है। हो सकता है कात्यायन ने अनेक वार्तिक रचे हों उन में से पतञ्जलि ने उपयोगी वार्तिकों का ही वर्णन किया हो। कात्यायन द्वारा रचित वार्तिक गद्यमय और पद्यमय उभयविध हैं।

इन वार्तिकों का पाणिनीय सूत्रों के साथ सीधा सम्बन्ध है। इन वार्तिकों द्वारा सूत्र के साथ कुछ कार्य जोड़े हैं, या अनेक स्थानों पर सूत्र में वर्णित कार्यो में से कुछ का निषेध किया है। यही कात्यायन के वार्तिकों का कार्य क्षेत्र है।

4. पतञ्जलि का महाभाष्य :-

पतञ्जलि का महाभाष्य वार्तिकों का समालोचनात्मक विवेचन, पाणिनि के सूत्रों का औचित्य-अनौचित्य तथा गुण-दोष के विषय में न्याय संगत निर्णयक सम्मत्ति की एक छाप है। समयानुसार व्याकरणपरम्परा में जब कात्यायन के वार्तिकों के होते हुए भी अनेक मार्मिक स्थलों का वर्णन पाणिनि की अष्टाध्यायी और कात्यायन के वार्तिक करने में असमर्थन होने लगे तो पतञ्जलि ने कात्यायन के वार्तिकों पर एक समालोचनात्मक ग्रन्थ रचा जिसमें पाणिनि के सूत्रों का औचित्य-अनौचित्य तथा गुण-दोषों का बड़ी सरल भाषा में वर्णन किया हैं, इस ग्रन्थ को महाभाष्य की संज्ञा दी है।

महाभाष्य में केवल व्याकरण के रहस्यों का ही वर्णन नहीं है जबकि सामाजिक तथा धार्मिक चेतना का भी मार्मिक वर्णन है। पतञ्जलि ने महाभाष्य में अनेक स्थानों पर लौकिक इष्टियों द्वारा रोचक वर्णन किया है।

पतञ्जलि का महाभाष्य 85 आह्निकों में विभक्त है। इन आह्निकों में पाणिनीय सूत्रों के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन, कात्यायन के वार्तिकों की समालोचना के माध्यम द्वारा किया है। इस के साथ सर्वप्रथम

---

1 वेदाङ्ग. पृष्ठ 349

2 वेदाङ्ग. पृष्ठ 348

3 भाष्यम् कात्यानेन प्रणीतानां वाक्यानां विवरणे पतञ्जलि प्रणीतम। न्यास पृष्ठ-1

गुढातिगुढ दार्शनिक विषयों का सरल, सरस और रोचक शैली में वर्णन किया गया है, जिस व्याकरण दर्शन के रूप में भी प्रतिष्ठापित हुआ है। व्याकरण जैसे निरस विषय को महाभाष्य के माध्यम द्वारा सरस और रोचकता प्रदान करने का श्रेय पतञ्जलि को जाता है क्योंकि इन्होंने महाभाष्य में सरल, सरस तथा मुहावरेदार रोचक भाषा का प्रयोग किया है। गहन विषयों को भी प्रश्नोत्तर रूप में प्रस्तुत करके पतञ्जलि ने इन विषयों को सरलता प्रदान की है। लगभग उदाहरण दैनिक जीवन से सम्बन्धी है। यदि कहीं पर तीखे तर्क भी हैं तो उन्हें इस तरह मधुर शिष्टता से प्रस्तुत किया है कि हृत्तल की गहराइयों में चुभते नहीं हैं।

वस्तुत: पाणिनि से जो वर्णन छूटा है वह वार्तिकों में प्राप्त है तथा वार्तिकों से जो छूटा है उस का वर्णन महाभाष्य में प्राप्त है।[1] महाभाष्य पाणिनीय सूत्रों और कात्यायन के वार्तिकों का संयुक्त रूप में मीमासा करने वाला एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। पाणिनि का पूरक ग्रन्थ कात्यायन के वार्तिक हैं, जबकि पतञ्जलि का महाभाष्य दोनों का ही पूरक एवम् पाणिनीयव्याकरण का निकष ग्रन्थ है।

---

1 यद् विस्मृतमदृष्टं वा सूत्रकारेण तत् स्फुटम्।
वाक्यकारं ब्रवीत्येवं तेनादृष्टं च भाष्यकृत। पदम0 प्र0 भा0 पृष्ठ 4

द्वितीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति का विवेचन तथा प्रक्रिमूलकपद्धति का उद्भव

विषय प्रवेश

1. पाणिनीयव्याकरण स्वरूपपरिचय
2. पाणिनीयव्याकरण की अध्ययन अध्यापन पद्धति
   (क) सूत्रमूलकपद्धति
   (ख) प्रक्रियामूलकपद्धति।
3. पद्धति द्वय का विवेचन
   (क) सूत्रमूलक पद्धति द्वारा समस्याओं का विवेचन
      1. सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रपाठानुसार अध्ययन
      2. सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रार्थ समझने में समस्या
      3. सूत्रमूलकपद्धति में समस्त सूत्र जानकारी आवश्यक
      4. सूत्रमूलकपद्धति में कारक ज्ञान क्रम रहित है
      5. केवल समास ज्ञान के लिए छः अध्यायों का पाठ जरूरी
      6. सूत्रमूलकपद्धति में क्रियारूपों का ज्ञान लकार एवम् गणादि क्रम रहित है
      7. सूत्रमूलकपद्धति में क्रिया रूपों का ज्ञान लकार एवम् गणादि क्रम रहित है
      8. सूत्रमूलकपद्धति में सुबन्त रूपों का ज्ञान लिङ्ग. एवम् विभक्ति क्रम रहित है
      9. कृदन्त जानकारी में समस्या
      10. अनेकाधिकारों में वर्णित होने पर भी तद्धिताधिकार संयुक्त रूप में
      11. सूत्रमूलकपद्धति में प्रत्ययान्त आख्यात रूपों का क्रम व्यत्यय।
   (ख) पाणिनीय व्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन
4. पाणिनीयव्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन
   (क) वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण।
   (ख) वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी परवर्ती प्रक्रिया विवरण

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रिया ग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन

द्वितीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति का विवेचन तथा प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव

विषय प्रवेश

1. पाणिनीयव्याकरण स्वरूपपरिचय :–

संस्कृत व्याकरण की एक प्राचीन परम्परा है। वैदिक पदपाठों के समय से व्याकरण प्रवृति का उद्‌भव, उसका प्रचलन और उपयोगिता का ज्ञान शुरू हो गया था। प्रतिशाख्यग्रन्थ भी व्याकरण के निकटवर्ती ग्रन्थ हैं। व्याकरण अध्ययन और अध्यापन की परम्परा पाणिनि से पूर्व शुरू थी। पाणिनि से पूर्व अनेक आचार्यो ने व्याकरण रचे थे परन्तु वे वैयाकरण व्याकरण को सर्वाङ्ग.पूर्ण और शुद्ध रूप नहीं दे पाये थे।

पाणिनि ने सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण की रचना के लिए सम्पूर्ण भारत की यात्रा करके अनेक क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्दों का अध्ययन किया तदुपरान्त सर्वाङ्ग.पूर्ण पंचग्रन्थी व्याकरण की रचना की। पाणिनीयव्याकरण का नाम अष्टाध्यायी है। संसार की सभी भाषाओं में पाणिनीयव्याकरण संस्कृतभाषा की विशेषता बनाये हुये है। आठ अध्यायों में विभक्त होने के कारण ही यह व्याकरण अष्टाध्यायी नाम से प्रसिद्ध है। परन्तु अष्टाध्यायी में दिये मात्र सूत्रपाठ से, पाणिनीयव्याकरण सम्पूर्ण नहीं है। धातुपाठ, गणपाठ, उणादि सूत्र तथा लिङ्ग.नुशासन अष्टाध्यायी के पूरक हैं। इसलिए ही पाणिनीयव्याकरण को पञ्चाङ्गी.व्याकरण कहा जाता है।

अष्टाध्यायी में मात्र सूत्रपाठ दिया है। कालगति के कारण मात्र सूत्रपाठ से पाणिनीयव्याकरण का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। सूत्रपाठ के साथ इस व्याकरण की जानकारी के लिए धातुपाठ, गणपाठ, उणादिसूत्र पाठ, तथा लिङ्ग.नुशासन नामक चार ग्रन्थों का ज्ञान आवश्यक है। इन की सहायता से ही पाणिनीयव्याकरण का वास्तविक ज्ञान होता है तथा इन अङ्गो के साथ ही पाणिनीयव्याकरण सम्पूर्ण माना जाता है।

केवल मात्र सूत्रपाठ पाणिनीयव्याकरण नहीं है। अत: इन ग्रन्थों का ज्ञान भी आवश्यक है। जैसे: – ''आदि प्रभृतिभ्य:शप:''[1] सूत्र जब पाठक पढ़ता है तो उसे समस्या आ जाती है कि ये ''अदि प्रभृति'' अर्थात अदादि क्या है ? इस समस्या के लिए उसे पाणिनीयव्याकरण के द्वितीय अङ्ग. धातुपाठ की जानकारी

1 अष्टा0 2 – 4 – 72

आवश्यक है। पाणिनि ने सूत्रपाठ से पूर्व इन अङ्गो को रच दिया था क्योंकि इन अङ्गो के विना "अदिप्रभृतिभ्य:शप:"[1] "सर्वादीनि सर्वनामानि"[2] आदि सूत्रों को जानना दुर्वोध है। अत: स्पष्ट है कि सूत्रपाठ से पूर्व पाणिनि ने धातुपाठ आदि ग्रन्थों की रचना कर ली थी।

धातु और प्रत्यय के मध्य विकरणों द्वारा तिङन्त पदों की रूपरचना होती है। अत: धातु सम्बन्धी शब्दज्ञान के लिए धातु और प्रत्यय के बीच विकरणों की जानकारी आवश्यक है। पाणिनि ने लगभग 1950 धातुओं को भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रूधादि, तनादि, क्रयादि और चुरादि दस गणों में विभक्त किया है।

रूपरचना को ध्यान में रख कर पाणिनि ने प्रत्येक गण की धातुओं की रूपरचना के लिए धातु और प्रत्यय के बीच विकरण करने वाले सूत्र दिये हैं, जो तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए आवश्यक है। रूपरचना की दृष्टि से प्रत्येक गण में अपने-अपने विकरण और विशिष्ट कार्य हैं। पाणिनि ने दस गणों में रूपरचना की दृष्टि से धातुओं को "धातुपाठ" में स्थान दिया है। धातुपाठ में पाणिनि ने प्रत्येक गण में आत्मनेपदी, परस्मैपदी, तथा उभयपदी धातुओं की पृथक-पृथक गणना की है। प्रत्येक धातु को अर्थ सहित दिया है।

पञ्चाङ्गी व्याकरण से सूत्रपाठ तथा धातुपाठ के बाद तृतीय स्थान पाणिनीयव्याकरण के तृतीय अङ्ग. गणपाठ का है। जिस में किसी विशेष क्रम से मिश्रित शब्दों की गणना की जाए उसे गण कहते हैं तथा जिस ग्रन्थ में अनेक गणों का पाठ हो उसे गणपाठ कहते हैं। पाणिनि ने अपने व्याकरण अष्टाध्यायी की पूर्ति के लिए तृतीय ग्रन्थ के रूप में गणपाठ की रचना की , क्योंकि गणपाठ ज्ञान बिना पाणिनीयव्याकरण के अनेक सूत्र अपना कार्य क्षेत्र निर्धारण करने में असमर्थ हैं। जैसे :- "सर्वादीनि सर्वनामानि"[3] "साक्षात्प्रभृतीनि च"[4] "सप्तमी शौण्डे:"[5] आदि सूत्रों को जब पाठक पढ़ते हैं तो उन्हें उत्सुकता होती है कि ये सर्वादि, साक्षादादि, शौण्डादि क्या हैं ? क्योंकि ये सूत्र अपना कार्य क्षेत्र निर्धारण करने में असमर्थ हैं, परन्तु पाणिनि द्वारा रचित गणपाठ में सर्वादि, साक्षादादि, शौण्डादि गणों को पढ़कर इन सूत्रों का कार्य क्षेत्र स्पष्ट हो जाता है।

पाणिनि ने अपने व्याकरण के पूरक तृतीय अङ्ग. गणपाठ की रचना यह जानकर की है कि इस से एक तो गणपाठ पढ़कर पाठकों को सूत्र का कार्यक्षेत्र स्पष्ट हो जाएगा तथा सूत्ररचना में लाघव रहेगा। पाणिनि ने गणपाठ की रचना सूत्रपाठ से पूर्व कर ली थी क्योंकि यदि सर्वादि होगे तभी सर्वादि लिखा जाएगा अन्यथा नहीं। विभिन्न सूत्रों में पठित इन गणों की संख्या लगभग 285 है। पाणिनि ने इन गणों की गणना अपने गणपाठ में विशेषक्रम से की है ताकि पाठकों को सुविधा रहे।

---

1 अष्टा0 2-4-72
2 अष्टा0 1-1-27
3 अष्टा0 1-1-27
4 अष्टा0 1-4-74
5 अष्टा0 2-1-40

पाणिनीयव्याकरण में चतुर्थ अङ्ग. उणादि सूत्रों का महत्त्व कम नहीं है। व्याकरणपरम्परा में प्राचीनकाल से ही सभी शब्द यौगिक स्वीकार किए जा रहे थे, परन्तु उत्तरकाल में मनुष्यों की धारणा शक्ति और मेघा ह्रास के कारण ये शब्द रूढ़ माने जाने लगे। वैयाकरणों की भी यही धारणा हो गयी। पाणिनि तक अनेक शब्द वैयाकरणों ने रूढ़ मान लिए। केवल वैयाकरणों में शाकटायन और नैरूक्तों में गार्ग्य ही सभी शब्दों को यौगिक मानते हैं।

शाकटायन के अतिरिक्त सभी वैयाकरणों द्वारा सहस्त्रों शब्दों को रूढ़ मानने पर भी उन्होंने यौगिकत्वरूपी प्राचीन पक्ष की रक्षा के लिए रूढ़ शब्दों के धातु-प्रत्यय निदर्शक के लिए उणादि सूत्र रूपी कृदन्त भाग को शब्दानुशासन से पृथक करके उसे व्याकरण परिशिष्ट भाग का रूप दिया है।

पाणिनीयव्याकरण की परम्परा में आचार्यो ने उणादि सूत्रों का अपने व्याकरण ग्रन्थों में समावेश किया है। ''पाणिनीयपरम्परायाम् यदुक्तम तदपि पाणिनीयम्'' इस कथन के अनुसार पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो द्वारा उणादि सूत्रपाठ भी पाणिनीय उणादि सूत्रपाठ माना जाता है। आचार्य पाणिनि उणादि सूत्रपाठ को स्वीकार करते हैं इस का प्रमाण ''उणादयो बहुलम्''[1] पाणिनीय सूत्र से स्पष्ट हो जाता है। आचार्य पाणिनि उणादि से परिचित थे परन्तु उन्होंने इनका वर्णन इसलिए नहीं किया है कि ये उणादि संख्या में अधिक हैं। वर्णन न करने पर भी इन्होंने उणादियों को स्वीकार किया है।

पाणिनीयपरम्परा में दो प्रकार के उणादि सूत्र प्राप्त होते हैं एक ''पञ्चपादी'' और दूसरे ''दशपादी''। ये दोनों प्रकार के उणादि सूत्र पाणिनीयपरम्परा में उक्त हैं। अत: ये दोनों ही प्रकार के उणादि सूत्र पाणिनीय उणादि सूत्र है क्योंकि ये सूत्र पाणिनीयपरम्परा में उक्त है। अत: उणादि सूत्र भी पाणिनीयव्याकरण के पूर्त्यर्थक हैं और चतुर्थ अङ्ग. के रूप में स्वीकार किये गये हैं।

व्याकरण में लिङ्ग.ानुशासन का महत्त्व कम नहीं है। यह पाणिनीव्याकरण के पञ्चम अङ्ग. के रूप में प्रसिद्ध है। प्राणिजगत समान व्याकरण में भी स्त्रीत्त्व, पुंस्त्व, नपुंस्कत्त्व आदि लिङ्ग. ज्ञान प्रत्येक नाम पद के अविभाज्य अङ्ग. हैं। स्त्रीत्त्व, पुंस्त्व, नपुंस्कत्व अनुशासन के विना शब्दानुशासन अधुरा है। अत: लिङ्ग.ानुशासन व्याकरण का ही भाग है। पाणिनि ने स्त्रीत्त्व, पुंस्त्व, नपुंस्कत्त्व बोध के लिए लिङ्ग.नुशासन नामक पञ्चम ग्रन्थ दिया है। जिसकी सहायता से हम लिङ्ग. ज्ञान प्राप्त करने में सहायता लेते हैं। पाणिनीयव्याकरण का यह ग्रन्थ सूत्रात्मक है। इस ग्रन्थ में 192 सूत्र है जो छ: प्रकरणों में विभक्त हैं।

2. पाणिनीयव्याकरण की अध्ययन अध्यापन पद्धति :-

समय की आवश्यकता के अनुसार पाणिनीयव्याकरण के अध्ययन और अध्यापन की दो पद्धतियाँ दृष्टिगत हैं - क. सूत्रमूलकपद्धति तथा ख. प्रक्रियामूलकपद्धति। परन्तु सम्प्रति पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से अधिक होता है।

---

1 अष्टा0 3-3-1

सूत्रमूलकपद्धति में सर्वप्रथम पाणिनीयव्याकरण के सूत्र को पढ़ा जाता है तदुपरान्त उस की व्याख्या के बाद उस सूत्र से सम्बन्धित उदाहरणों और प्रत्युदाहरणों को पढ़ा जाता है।[1]

पाणिनीयव्याकरंण का अध्ययन और अध्यापन प्रक्रियानुसारी भी होता है इस पद्धति में सर्वप्रथम उदाहरणें को पढा जाता है तदुपरान्त पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों को यथा क्रम उदाहरणों की रूपरचना के लिए संग्रह किया जाता है।[2]

व्याकरणपरम्परा में सूत्रमूलकपद्धति ही प्राचीन पद्धति है। प्रक्रियामूलकपद्धति नवीन पद्धति है। इन दोनों पद्धतियों का क्रमपूर्वक विवरण इस प्रकार है :-

क. सूत्रमूलकपद्धति :-

पाणिनीयव्याकरण का सूत्रक्रम से अध्ययन और अध्यापन ही सूत्रमूलकपद्धति है। पाणिनि की अष्टाध्यायी, पतञ्जलि का महाभाष्य, अष्टाध्यायी के काशिका आदि प्रमुख वृत्तिग्रन्थ तथा इन सभी के व्याख्याग्रन्थ सूत्रमूलकपद्धति के प्रमुख ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों द्वारा पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन सूत्रमूलकपद्धति से होता है।

सूत्रमूलकपद्धति में सर्वप्रथम सूत्र पढ़ा जाता है और उस की वृत्ति के बाद उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण पढ़े जाते हैं। जैसेः - ''वृद्धिरादैच्''[3] सूत्र पढ़ने के बाद उस की वृत्ति ''वृद्धि शब्दः संज्ञात्वेन विधीयते, प्रत्येकम् आदैचाम् वर्णानाम् सामान्येन तद्भावितानाम् अतद्भावितानाम् च'' पढ़ी जाती है तदुपरान्त, आश्वलायनः, ऐतिकायनः, औपगवः, औपमन्यवः, शालीयः, मालीयः आदि उदाहरणों को पढ़ा जाता है।[4]

पाणिनि ने वैदिक भाषा के लिए छान्दसि का प्रयोग किया है और लौकिक भाषा के लिए भाषा का प्रयोग किया है। इससे स्पष्ट होता है कि पाणिनि के समय एक जनसाधारण की भाषा थी तथा दूसरी छान्दस भाषा थी। शब्दों का बोध तो पाठकों को पहले ही होता था वे मात्र रूपरचना जानकारी के लिए व्याकरण अध्ययन करते थे। पाणिनि के समय पाठक शब्दों की सिद्धि मात्र सूत्र अध्ययन से ही कर लेते थे। व्याख्या, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों का ज्ञान उन्हें स्वतः ही हो जाता था। इसलिए ही पाणिनि ने केवल अष्टाध्यायी में सूत्रों का पाठ किया है।

---

1 काशिका

2 क. रूपावतार। ख - रूपमाला
ग - प्रक्रियाकौमुदी। घ - वै0सि0कौ0।
ङ - प्रक्रियासर्वस्व। च - मध्यसिद्धान्तकौमुदी।
छ - लघुसिद्धान्तकौमुदी। ज - सारसिद्धान्तकौमुदी।
झ - वेदाङ्ग.प्रकाश।

3 अष्टा0 1-1-1

4 अष्टा0 1-1-1

पाणिनि उत्तरकाल में भाषा में क्लिष्ठता आती गयी तथा भाषा में अनेक शब्दों का समावेश भी होता रहा। अत: अनेक स्थानों पर पाठक मात्र सूत्र से व्याकरण ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थन होने लगे। पाणिनि उत्तरकाल जिन शब्दों का समावेश भाषा में हुआ उन शब्दों की सिद्धि करने में पाणिनीयव्याकरण की असमर्थता को जानकर अनेक विद्वानों ने वार्तिक रचे, जिन में कात्यायन के वार्तिक प्रसिद्ध है। कात्यायन के वार्तिक भी सूत्र क्रम में रचे गये हैं।

कात्यायन ने सर्वप्रथम यह जाना कि भाषा में अनेक ऐसे शब्द प्रयुक्त हो रहे हैं जिन्हें पाणिनीयव्याकरण सिद्ध नहीं कर पा रहा है। अत: कात्यायन ने वार्तिक रचकर भाषा में प्रयुक्त शब्दों का उनमें उल्लेख किया। पाणिनि कालिक और कात्यायन कालिक भाषा में कुछ भिन्नता आ गयी थी। अत: केवल कुछ ही शब्द सिद्धि के लिए कात्यायन ने वार्तिक रचकर उन्हें सिद्ध करने का प्रयास किया। पतञ्जलि के महाभाष्य में ही कात्यायन के वार्तिक प्राप्त होते हैं स्वतन्त्र रूप से वार्तिकों का ग्रन्थ प्राप्त नहीं है।[1]

भाषागतिशील होती है निरन्तर परिवर्तित होती जाती है। कात्यायनोत्तर अनेक नवीन शब्द भाषा में प्रयुक्त होने लगे जिन का उल्लेख पाणिनि सूत्र और कात्यायन के वार्तिक नहीं कर पा रहे थे। उन शब्दों का वर्णन पतञ्जलि ने सूत्रमूलकपद्धति द्वारा महाभाष्य में किया है। इन्होंने भी सूत्रमूलकपद्धति का अनुकरण किया है। जैसे: - ''मिदचोऽन्त्यात् पर:'' सूत्र की व्याख्या के बाद पतञ्जलि ने ''कुण्डानि'' ''पयांसि'' आदि उदाहरणों में मित् आदेश अन्तिम अच् से परे होने का विधान किया है।[2]

पतञ्जलि के उतरकाल अनेक दार्शनिक और सांस्कृतिक शब्दों की उत्पत्ति हुई। भाषा में भी सरलता आती गई। पाठक अष्टाध्यायी, वार्तिक और महाभाष्य को समझने में कठिनाई समझने लगे क्योंकि इन में प्रयुक्त भाषा कठिन है। अत: पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों ने इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए अष्टाध्यायी पर अनेक वृत्ति ग्रन्थ रचे जिन में काशिका प्रमुख है।[3] काशिका में सूत्रवृत्ति उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों को स्पष्ट दर्शाया गया है। काशिका उस समय तक प्रयुक्त सभी नवीन शब्दों का उल्लेख पूर्ण रूप से करती है।

ऊपरलिखित विवरण सूत्रमूलकपद्धति के व्याकरणग्रन्थों से सम्बद्ध है इनमें सूत्रमूलकपद्धति का वर्णन है।

ख. प्रक्रियामूलकपद्धतिः –

व्याकरण के अध्ययन और अध्यापन की दोनों पद्धतियों में दूसरे प्रकार की पद्धति प्रक्रियामूलकपद्धति है। लक्ष्यानुसारी अथवा उदाहरण के अनुसार पढ़ी गयी पद्धति को प्रक्रियामूलकपद्धति कहते हैं। इस पद्धति

---

1 कात्यायन का वार्तिक पाठ स्वतन्त्र रूप से सम्प्रति उपलब्ध नहीं होता है। सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 334

2 महा0 1-1-47

3 सम्प्रति उपलभ्यमान पाणिनीयव्याकरण के ग्रन्थों में महाभाष्य और भर्तृहरिविरचित ग्रन्थों के अनन्तर यही वृत्ति प्राचीन और महत्त्वपूर्ण है। सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ - 50

में सर्वप्रथम उदाहरण दिये गये हैं तदुपरान्त सूत्रों का उदाहरणों की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी से चुन-चुन कर संग्रह किया गया है। इसमें सन्धि, समास, आदि प्रकरणों के उदाहरणों और प्रत्युदाहरणों से सम्बन्धित सूत्र रूपरचनाक्रम से सन्धि, समास आदि प्रकरणों में ही प्राप्त होते हैं।[1] प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना को प्राथमिकता दी गयी है, परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रजानकारी को प्राथमिकता दी गयी है। उदाहरण प्रत्युदाहरण सूत्र व्याख्या के बाद दिये गये है। जैसे ''वृद्धिरादैच्''[2] सूत्र के बाद ''वृद्धिशब्द: संज्ञात्वेन विधीयते, प्रत्येकम् आदैचां वर्णानां सामान्येन तद्भावितानाम् अतद्भावितानाम् च'' आदि सूत्रवृत्ति दी गयी है। सूत्रवृत्ति के उपरान्त ''आश्वलायन:, ऐतिकायन:, औपगव:, औपमन्यव:, शालीय:, मालीय:, आदि उदाहरण दिये गये हैं।[3] उदाहरणों की रूपरचना से सम्बन्धित उल्लेख इस पद्धति में प्राप्त नहीं है। उदाहरणों तथा प्रत्युदाहरणों के उपरान्त अगला सूत्र ''अदेङ्गुण:''[4] दिया गया है इसके उपरान्त ''इकोगुणवृद्धि''[5] सूत्र दिया गया है। इसी क्रम से इस पद्धति में सूत्रों को प्रधानता दी गई है।

सूत्रमूलकपद्धति तक मात्र सूत्र ज्ञान की उपयोगिता थी। उदाहरणों और प्रत्युदाहरणों से मात्र सूत्र के कार्यक्षेत्र का ज्ञान होता है। जैसे ''आश्वलायन:'','' ऐतिकायन:''[6] आदि ''वृद्धिरादैच्''[7] सूत्र के उदाहरणों से प्रतीत होता है कि ''आ, ऐ, औ'' वृद्धि संज्ञक हैं। वृद्धि संज्ञकों का बोध ही ''वृद्धिरादैच''[8] सूत्र का कार्यक्षेत्र है। उदाहरणों की रूपरचना सम्बन्धित हर कार्य को पाठक स्वयं जुटा लेते थे।

सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र के वृत्ति, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों को समाप्त करके दूसरा सूत्र दे दिया है। उदाहरणों तथा प्रत्युदाहरणों की रूपरचना से सम्बन्धित सूत्रों का विवरण एक साथ सूत्र क्रम में प्राप्त नहीं होता है। केवल समान कार्य करने वाले सूत्र एक क्रम में इकट्ठे प्राप्त होते हैं। जैसे:- ''वृद्धिरादैच्''[9] सूत्र से लेकर ''इग्यण: सम्प्रसारणम्''[10] सूत्र तक 44 सूत्र विभिन्न संज्ञाओं का बोध करवाते हैं, इससे आगे परिभाषा सूत्रों का प्रकरण शुरू होता है। परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रों को उदाहरण रूपरचनार्थ दिया गया है समान कार्य का इस में प्रश्न ही नहीं है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी से चुन-चुन कर एकत्र दिया गया है। जैसे :- ''सुद्ध्युपास्य''[11] उदाहरण की रूपरचना के लिए इकार के स्थान पर यकारादेशार्थ ''इको यणचि''[12] धकार को द्वित्व करने के लिए ''अनचि च''[13] सूत्र दिया गया है, इसी

---

1 (क) रूपावतार (ख) रूपमालाल
(ग) प्रक्रियाकौमुदी (घ) वै0 सि0 कौ0
(ङ) प्रक्रियासर्वस्व (च) म0 सि0 कौ0
(छ) ल0 सि0 कौ0

2 अष्टा0 1-1-1

3 का0 1-1-1

4 अष्टा0 1-1-2

5 अष्टा0 1-1-3

6 का0 1-1-1

7 अष्टा0 1-1-1

8 अष्टा0 1-1-1

9 अष्टा0 1-1-1

10 अष्टा0 1-1-44

11 वै0 सि0 कौ0 अचसन्धि प्रकरण।

12 अष्टा0 6-1-77

13 अष्टा0 8-4-47

क्रम में धकार को दकार करने के लिए ''झलां जश् झशि''[1] सूत्र प्रक्रियाक्रम में दिया है ''सयोगान्तस्य लोय:''[2] सूत्र से यकार लोप प्राप्त होता है ''यण:प्रतिषेधो वाच्य:''[3] वार्तिक निषेध करता है।

इस पद्धति में ''सुद्ध्युपास्य'' उदाहरण की रूपरचना के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी के षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों के विभिन्न पादों से उठाकर प्रक्रियाग्रन्थों के ''.अच्सन्धि'' प्रकरण में प्रारम्भ में दिया है। यहाँ केवल उपयोगी सूत्रों का ही वर्णन है इन के बाद और भी सूत्र हैं जिन्हें कि विभिन्न अध्यायों से चुनकर ''सुद्धयुपास्य'' उदाहरण की रूपरचना के लिए प्रक्रियाग्रन्थों में दिया है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में ''सुद्ध्युपास्य'' रूप की प्रक्रिया को पूर्ण करने के बाद ''पुत्रादीनि'' वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी में तथा अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में हरये, विष्णवे, आदि रूपरचनाओं के लिए अष्टाध्यायी के सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से उठाकर ''सन्धिप्रकरण'' में दिया है। इसी क्रम में अगले उदाहरण की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के सूत्रों को उपयोगिता के अनुसार विभिन्न अध्यायों से उठाकर ''सन्धिप्रकरण'' में रूपरचनाक्रम से दिया गया है। इस प्रकार की पद्धति को प्रक्रियामूलकपद्धति कहते हैं।[4]

प्रक्रियामूलकपद्धति की विशेषता है कि इस पद्धति में सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए ''सन्धि'', ''षड्लिङ्ग.'' आदि प्रकरणों के क्रमानुसार दिया गया है तथा प्रत्येक प्रकरण का नाम उस के विषयानुसार दिया गया है। जैसे :- संज्ञाप्रकरण, सन्धिप्रकरण, षडलिङ्ग.प्रकरण, स्त्रीप्रत्ययप्रकरण, कारकप्रकरण आदि।[5] प्रक्रियामूलकग्रन्थों में प्रकरणों की संख्या में अन्तर है। कुछ वैयाकरणों ने अपने ग्रन्थों की विशेषता के लिए प्रकरणों की संख्या में वृद्धि की है और कुछ वैयाकरणों ने प्रकरणों की संख्या में कमी की है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों को स्वयं नहीं जुटाना पड़ता। इस पद्धति में सूत्र रूपरचनाक्रम से दिये हैं तथा एक प्रकरण से सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी एक ही प्रकरण में दी है, परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्य करने वाले सूत्र इकट्ठे हैं दूसरे कार्यो से सम्बन्धि त सूत्र दूसरी जगह स्थिति हैं। जैसे समास कार्य करने वाले सूत्र अष्टाध्यायी के द्वितीय अध्याय प्रथम और द्वितीय पाद में दिये हैं, समासान्त पञ्चम अध्याय के चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं। एक शेष अर्थात पूर्वपद शेष रहे या उत्तरपद, इस कार्य से सम्बन्धित सूत्र षष्ठ अध्याय के तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। इसी तरह

---

1 अष्टा0 8-4-53
2 अष्टा0 8-2-23
3 महा0 वा0 8-2-23
4 (क) वै0 सि0 कौ0 (ख) म0 सि0 कौ0
(ग) ल0 सि0 कौ0
5 (क) रूपावतार। (ख) रूपमालाल।
(ग) प्रक्रियाकौमुदी। (घ) वै0 सि0 कौ0
(ङ) प्रक्रि0 सर्व0 (च) म0 सि0 कौ0
(छ) ल0 सि0 कौ0

कुछ समास सम्बद्ध कार्य करने वाले सूत्र प्रथम अध्याय द्वितीय पाद और कुछ द्वितीय अध्याय के चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं।[1]

सूत्रमूलकपद्धति से कम से कम छः अध्याय पढ़ने पर केवल समास ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति से केवल समास प्रकरण पढ़कर सरलता से समास ज्ञान हो जाता है, क्योंकि इस पद्धति में केवल समासप्रकरण में ही समास सम्बन्धित सभी सूत्रों को उपयोगितानुसार अष्टाध्यायी से चुनकर इसी प्रकरण में दिया है।[2]

3. पद्धति द्वय का विवेचन :-

सूत्रमूलकपद्धति व्याकरण में उपयोगी और सरल है फिर भी इस पद्धति में अनेक समस्याओं के कारण प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव हुआ है। यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक त्रुटियाँ हैं परन्तु समयानुकूल इस पद्धति की उपयोगिता बढ़ गयी है, क्योंकि इस पद्धति को उदाहरणों के क्रम से प्रकरणों में दिया है। एक प्रकरण को पढ़ने से उस प्रकरण की पूर्ण जानकारी हो जाती है।

सूत्रमूलकपद्धति से अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है परन्तु इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान चिरस्थायी होता है। दोनों पद्धतियाँ एक दूसरी की अपेक्षा न्यूनाधिक हैं। सूत्रमूलकपद्धति में समयानुसार अनेक समस्याएँ आयी हैं जिन के कारण व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति का उद्‌भव हुआ है। इन दोनों पद्धतियों की पूर्ण जानकारी के लिए निम्न दो विषयों का विवेचन जरूरी है जो इस प्रकार है :-

क. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा प्राप्त समस्याओं का विवेचन।

ख. पक्रियामूलकपद्धति का उद्‌भव एवम् उसका विवेचन।

इन विषयों में यथाक्रम सर्वप्रथम सूत्रमूलकपद्धति से सम्बन्धित विवेचन जरुरी है जो इस प्रकार है:-

क. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा प्राप्त समस्याओं का विवेचनः-

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति अति प्राचीन और महत्त्वपूर्ण है, परन्तु समयानुसार पाठकों को इस पद्धति से व्याकरण अध्ययन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त ये विभिन्न समस्याएँ इस प्रकार हैं :-

---

1 (क) अष्टाध्यायी (ख) काशिका

2 (क) रूपावतार समास प्रकरण (ख) रूपमाला समास माला
(ग) प्रक्रियाकौमुदी समास प्रकरण (घ) वै० सि० कौ० समास प्रकरण
(ङ) प्रक्रियासर्वस्व समास खण्ड (च) म० सि० कौ० समास प्रकरण
(छ) ल० सि० कौ० समास प्रकरण (ज) सारसिद्धान्तकौमुदी समास प्रकरण

1. **सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रपाठानुसार अध्ययनः –**

व्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र पढ़ने के बाद वृत्ति, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण दिये गये हैं।[1] सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र अपना कार्य क्षेत्र स्पष्ट करने के उपरान्त कुछ नहीं बता सकता। आवश्यकतानुसार सूत्र में दिये गये उदाहरणों की पूर्ण रूपरचना जानकारी के लिए न तो इस सूत्र से पूर्व सूत्र में उदाहरण के कार्य सम्बन्धी संकेत है और न ही कथित सूत्र से अगले सूत्र में उदाहरण सम्बन्धी कार्य प्राप्त होते हैं अर्थात उदाहरण की रूपरचना का वर्णन न पूर्वसूत्र में प्राप्त होता है और न अगले सूत्र में प्राप्त होता है। जैसे – ''वृद्धिरादैच्''[2] सूत्र के बाद ''वृद्धि शब्दः संज्ञात्वेन विधियते प्रत्येकमादैचां वर्णानां सामान्येन तद्भावितानामतद्भावितानां च'' सूत्रवृत्ति है तदुपरान्त आश्वलायनः, ऐतिकायनः, औपगवः, औपमन्यवः, शालीयः, मालीयः आदि उदाहरण दिये है।[3]

आश्वलायनः, ऐतिकायनः आदि उदाहरणों में प्रकृत सूत्र मात्र इतना ही स्पष्ट करता है कि ''आ ऐ औ'' वृद्धि संज्ञक हैं। ''आ ऐ औ'' किस क्रम से स्वरों के स्थान पर होते हैं ? क्यों होते हैं ? किस विधान द्वारा होते हैं ? इन कार्यो का ज्ञान पाणिनीयव्याकरण द्वारा ही होता है परन्तु इन कार्यो को करने वाले सूत्र विभिन्न अध्यायों में है। ''वृद्धिरादैच्''[4] सूत्र से तो केवल इतना ज्ञान होता है कि ''आ ऐ औ'' का नाम वृद्धि है। किस स्वर के स्थान पर कौन सा वृद्धि संज्ञक होता है यह कार्य अन्य सूत्रों का है प्रकृत सूत्र केवल नाम स्पष्टीकरण करता है।

जिस समय पाणिनि ने व्याकरण रचा था उस समय मात्र सूत्र अध्ययन से पाठक रूपरचना सम्बन्धित सभी कार्य जुटा लेता था। अन्यथा पाणिनि अष्टाध्यायी को किसी दूसरे क्रम से रचते। अष्टाध्यायी के बाद काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों से पूर्वकाल तक पाठक रूपरचना से सम्बन्धित सूत्रों को जुटा लेते थे, क्योंकि उस समय पाठकों को सूत्र पढ़ते ही उदाहरणों का ज्ञान हो जाता था तथा वे उदाहरणों की रूपरचना सम्बन्धित सभी कार्यो को तत्क्षण जुटा लेते थे।

आवश्यकतानुसार सूत्रवृत्ति, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण आदि तो बाद में इस परम्परा के आचार्यो ने वृत्तिग्रन्थों में दिये हैं, क्योंकि उस समय पाठक मात्र सूत्रपाठ से उदाहरणों और प्रत्युदाहरणों को नहीं जुटा पा रहे थे। अतः सूत्रक्रम में भी आवश्यकतानुसार सूत्रवृत्ति, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों को लिखने की परम्परा शुरू हो गयी।

इसके बाद ऐसा समय आ गया कि सूत्रवृत्ति तथा व्याख्या सम्बन्धित अनेक कार्य उदाहरणों और प्रत्युदाहरणों की रूपरचना विना पाठकों की समझ में नहीं आने लगे। कुछ पाठक तो सूत्र के उदाहरणों से सम्बन्धित सूत्रों को जुटाकर सूत्रकार्य समझ लेते थे परन्तु कुछ पाठक जिन्हें अष्टाध्यायी के सूत्र

---

1 काशिका

2 अष्टा 1-1-1

3 का0 1-1-1

4 अष्टा0 1-1-1

कण्ठस्थ नहीं थे, या जो उदाहरण से सम्बन्धित सूत्रों को तत्क्षण स्मरण नहीं कर पा रहे थे, उनको सूत्रक्रम से व्याकरण अध्ययन में कठिनाई होने लगी।

इस तरह अनेक पाठक इस क्रम से व्याकरण अध्ययन से विचलित होने लगे और व्याकरण अध्ययन को छोड़ने पर विवश होने लगे। जैसे - ''वृद्धिरादैच्''[1] सूत्र का उदाहरण ''औपगवः''[2] अनेक पाठकों को विचलित करने लगा क्योंकि प्रकृत सूत्र तो इतना ही कहता है कि ''आ ऐ औ'' वृद्धि संज्ञक है। अब कुछ पाठक सोचने पर विवश हुए कि ''उपगु'' से औपगवः कैसे बना औकार कहाँ से आया? औकार होने से पूर्व और पर उदाहरण में अनेक कार्य होते हैं जो पाठकों को कठिनाई उत्पन्न करने लगे थे। क्योंकि व्याकरण का चामत्कारिक खेल उन्हें तत्क्षण समझ नहीं आ रहा था।

इसी कारण अनेक पाठक ''उपगु'' से ''औमगवः'' रूपसिद्धि में विभिन्न परिवर्तनों से चकित होने लगे क्योंकि ''औपगवः'' उदाहरण को पढ़कर कुछ पाठक इस उदाहरण की रूपरचना से सम्बन्धि त जानकारी चाहने लगे थे। इस रूप में ''उपगु'' शब्द से ''तस्यापत्यम्''[3] सूत्र से आपत्य अर्थ में अण प्रत्यय होता है। ''तद्धितेष्वचामादेः''[4] सूत्र से उकार को औकार वृद्धि ''वृद्धिरादैच्''[5] तथा ''स्थानेऽन्तरतमः''[6] सूत्रों की सहायता से होती है। औपगु + अ इस स्थिति में ''यचि भम्''[7] सूत्र से भ संज्ञा ''ओर्गुणः''[8] सूत्र से उकार को ओकार गुण ''अदेङ्गुणः''[9] तथा ''स्थानेऽन्तरतमः''[10] सूत्रों की सहायता से होता है। औपगो + अ इस स्थिति में ''एचोऽयवायावः''[11] सूत्र से ओकार को अवादेश ''यथा संख्यमनुदेशःसमानाम्''[12] सूत्र की सहायता से होता है। औपगव इस स्थिति में ''कृतद्धितसमासाश्च''[13] सूत्र से प्रतिपदिक संज्ञा ''स्वौजसमोट्छष्टाभ्याम्भिसङेभ्याम्भ्यास्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्''[14] सूत्र से सु प्रत्यय रूत्व विसर्ग होकर ''औपगवः'' रूप सिद्ध होता है। इस उदाहरण में उक्त सभी सूत्र अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में प्राप्त है। अतः स्पष्ट होता है कि इस क्रम में सूत्र बिखरे हैं जो पाठकों को तत्क्षण स्मरण न आने पर समस्या में डाल देते हैं। केवल तीव्र बुद्धि छात्र ही तत्क्षण इस प्रकार की सिद्धि के लिए सम्पूर्ण अष्टाध्यायी से सूत्रों का संग्रह अपने मानसिक पटल पर कर लेते हैं परन्तु मन्द बुद्धि छात्र ऐसा करने में असमर्थ हैं। अतः यह छात्रों की विवशता है।

काशिका आदि वृत्ति ग्रन्थों के बाद पाठक मात्र सूत्रपाठ से सन्तुष्ट नहीं थे वे रूपसिद्धि की प्रक्रिया को जानने के इच्छुक थे। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र बिखरे होने के कारण पाठक रूपसिद्धि में कठिनाई का सामना कर रहे थे।

---

1 अष्टा0 1-1-1
2 का0 1-1-1
3 अष्टा0 4-1-92
4 अष्टा0 7-2-117
5 अष्टा0 1-1-1
6 अष्टा0 1-1-50
7 अष्टा0 1-4-18
8 अष्टा0 6-4-146
9 अष्टा0 1-1-2
10 अष्टा0 1-1-50
11 अष्टा0 6-1-78
12 अष्टा0 1-3-10
13 अष्टा0 1-2-46
14 अष्टा0 4-1-2

2. सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रार्थ समझने में समस्या :-

सूत्रमूलकपद्धति में अनेक स्थानों पर एक सूत्र की जानकारी के लिए दूसरे सूत्र की आवश्यकता होती है। पूर्वसूत्र से अगले सूत्र को अनुवृत्ति जाती है और सूत्रार्थ स्पष्ट हो जाता है। परन्तु अनेक स्थानों पर ऐसे सूत्रों की आवश्यकता पड़ती है जो सम्बन्धित सूत्र से अगले अध्याय या अगले पाद में प्राप्त होते हैं। अगले सूत्रों की पूर्ण जानकारी के बिना पूर्व सूत्र में दिये कार्य समझ में नहीं आते हैं तथा सूत्रवृत्ति समझने में भी समस्या आती है, अर्थात् क्या कार्य है ? कार्य किस स्थान पर होगा यह जानकारी अग्रिम सूत्रों के विना पूर्व सूत्र से नहीं होती है यद्यपि पाणिनीयव्याकरण में अग्रिम सूत्र से पूर्वसूत्र को व्यावृत्ति नियम है परन्तु फिर भी समस्या बनी रहती है क्योंकि व्यावृत्ति नियम सूत्रवृत्ति पर लागू होता है उदाहरणों पर नहीं। अतः समस्या बनी रहती है। जैसे :- ''तद्धितश्चासर्वविक्तिः''[1] इस सूत्र की वृत्ति का अर्थ है ''जिस से सारी विभक्ति उत्पन्न न हो ऐसे तद्धित प्रत्ययान्त शब्द की भी अव्यय संज्ञा होती है''[2] इस वृत्त्यर्थ से सूत्र के वास्तविक अर्थ को समझने में समस्या आती है क्योंकि इस सूत्र में वर्णित कार्यक्षेत्र का वर्णन पूर्व सूत्रों में प्राप्त नहीं होता है परन्तु इस सूत्र से अग्रिम सूत्रों में प्राप्त होता है। यदि किसी पाठक ने इस पद्धति से व्याकरण पढ़ना प्रारम्भ किया हो, और जो केवल प्रथम बार ही अध्ययन कर रहा हो, वह इस सूत्र को पढ़कर चकित रह सकता है। जब तक उसे जिन शब्दों से सारी विभक्ति उत्पन्न नहीं होती है ऐसे शब्द प्राप्त न हो जाए या अध्यापक द्वारा इनकी जानकारी न करवाई जाए, तब तक उसे इस सूत्र का प्रयोजन ही व्यर्थ लगेगा।

सूत्रमूलकपद्धति में इस सूत्र से सम्बन्धित उदाहरणों वाले सूत्र ''पञ्चम्यास्तसिल्''[3] से लेकर ''एधाच्च''[4] सूत्र तक 39 सूत्र पञ्चम अध्याय में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों के ततः, यत्र, तत्र, सदा, विना, नाना, कुतः, यतः आदि उदाहरणों में सारी विभक्तियाँ उत्पन्न नहीं होती हैं। प्रकृत सूत्र का अर्थ समझने के लिए ''पञ्चम्यास्तसिल्''[5] आदि 39 अग्रिम सूत्रों की जानकारी करनी पड़ती है तभी सूत्रार्थ समझ आता है। इस सूत्र को पढ़ने के बाद पाठक पञ्चम अध्याय तक इस सूत्र को भूल भी सकता है। जब पाँचवे अध्याय में इस से सम्बन्धित सूत्र और उदाहरण प्रकट होंगे तभी पाठक इस सूत्र का प्रयोजन समझेगा तथा अग्रिम सूत्रों की जानकारी के बाद उसे इस सूत्र का अर्थ समझ आएगा। इस तरह एक लम्बी प्रक्रिया बन जाती है जो अध्ययन और अध्यापन में कठिनाई उत्पन्न करती है। पाठक तो स्वयं इस समस्या को हल नहीं कर सकता वह तो इस सूत्र को छोड़कर अगला सूत्र प्रारम्भ कर देगा या फिर ऐसी अनेक समस्याओं के कारण वह सार्थक व्याकरण को निरर्थक जानकर व्याकरण अध्ययन भी छोड़ सकता है।

---

1 अष्टा0 1-1-38'
2 का0 1-1-38
3 का0 5-3-7
4 का0 5-3-46
5 का0 5-3-46

अध्यापक को भी इस सूत्र का अध्ययन करवाते समय पञ्चम अध्याय के ''पञ्चम्यास्तसिल्''[1] सूत्र से लेकर ''एधाच्च''[2] सूत्र तक 39 सूत्रों की वृत्ति उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों का ज्ञान पाठकों को करवाना पड़ता है तभी पाठकों को इस उपयोगी सूत्र का ज्ञान होता है।

इस पद्धति में अनेक सूत्रों में ऐसी समस्या पायी जाती है जिस के कारण इस पद्धति से सूत्रार्थ समझने में कठिनाई आती है। काशिका आदि वृत्ति ग्रन्थों से पूर्व जब अष्टाध्यायी से ही अध्ययन और अध्यापन होता था उस समय तो यह समस्या और भी अधिक थी क्योंकि पतञ्जलि के कुछ समय बाद अनेक पाठक मात्र सूत्रपाठ से सूत्रार्थ तथा उदाहरण भी नहीं जुटा पा रहे थे। यह समस्या तो और भी कठिन है परन्तु काशिका के बाद सूत्रवृत्ति, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण प्राप्त हो गये फिर भी इस पद्धति से अनेक स्थानों पर सूत्रार्थ समझने में समस्या आती है।

3. सूत्रमूलकपद्धति में समस्त सूत्र जानकारी आवश्यक :–

व्याकरण अध्ययन की सूत्रमूलकपद्धति में व्याकरण ज्ञानार्थ सम्पूर्ण अष्टाध्यायी के सूत्रों की जानकारी आवश्यक है। इस पद्धति में अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है क्योंकि इस पद्धति से किसी एक रूपसिद्धि के लिए भी तथा किसी एक प्रकरण की रूपसिद्धियों के लिए भी सम्पूर्ण अष्टाध्यायी के सूत्रों को कण्ठस्थ रखना जरूरी है। इसके बिना इस पद्धति से व्याकरण ज्ञान होना असम्भव है क्योंकि किसी भी रूपरचना के लिए अकस्मात अष्टाध्यायी के किसी भी सूत्र की आवश्यकता पड़ सकती है जो पाठक को तत्क्षण स्मरण होना चाहिए। पतञ्जलि के समय तक लग भग पाठक सूत्र कण्ठस्थ रखते थे परन्तु इस के बाद पाठक सूत्र कण्ठस्थ रखने में असमर्थता समझने लगे।

सूत्रमूलकपद्धति से पाठक को यदि सम्पूर्ण अष्टाध्यायी के सूत्र कण्ठस्थ हो तो वह तत्क्षण इस समस्या को सुलझा सकता है अन्यथा नहीं, क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति सम्पूर्ण अष्टाध्यायी को कण्ठस्थ चाहती है। सूत्रमूलकपद्धति से तो केवल सम्पूर्ण अष्टाध्यायी कण्ठस्थ कर लेने से ही व्याकरण की सही जानकारी होती है। उदाहरणार्थ ''वृद्धिरादेच्''[3] सूत्र सूत्रमूलकपद्धति में प्रथम सूत्र है इसके अनेक उदाहरणों में ''आश्वलायन:''[4] प्रथम उदाहरण है। इस उदाहरण की रूप रचना के लिए ''अश्वल'' शब्द से अपत्यर्थ में ''नडादिभ्य: फक्''[5] सूत्र से फक् प्रत्यय होता है। ''आयनेयीनीयिय: फढखछघां प्रत्ययादीनाम्''[6] सूत्र से ''यथासंख्यमनुदेश: समानाम्''[7] सूत्र की सहायता से फकार को आयन आदेश होने पर ''किति च''[8] सूत्र से अकार को आकार वृद्धि ''वृद्धिरादैच्''[9] तथा ''स्थानेऽन्तरतम:''[10] सूत्रों की सहायता से होने पर ''कृतद्धितसमासाश्च''[11] सूत्र से प्रतिपदिक संज्ञा

---

1 का० 5-3-9
2 का० 5-3-46
3 अष्टा० 1-1-1
4 का० 1-1-1
5 अष्टा० 4-1-99
6 अष्टा० 7-1-2
7 अष्टा० 1-3-10
8 अष्टा० 7-2-118
9 अष्टा० 1-1-1
10 अष्टा० 1.-1-50
11 अष्टा० 1-2-46

''स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्''[1] सूत्र से सु प्रत्यय अनुबन्ध लोप ''ससजुषो रुः''[2] सूत्र से पदान्त सकार को रु आदेश अनुबन्ध लोप होने पर रेफ को ''खरवसानयोर्विसर्जनीयः''[3] सूत्र से विसर्ग आदेश होने पर ''आश्वलायनः'' रूप सिद्ध होता है।

इस उदाहरण की सिद्धि से सिद्ध होता है कि इस रूप को सिद्ध करने के लिए चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद के नियान्नवे, सप्तम अध्याय प्रथम पाद के दूसरे, प्रथम अध्याय तृतीय पाद के दसवें, सप्तम अध्याय द्वितीयपाद के एक सौ अठारहवें, प्रथम अध्याय प्रथम पाद के पहले, प्रथम अध्याय प्रथम पाद के पचासवें, प्रथम अध्याय द्वितीय पाद के छियालीसवें, चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद के दूसरे, अष्टम अध्याय द्वितीय पाद के छियासठवें, अष्टम अध्याय तृतीय पाद के पन्द्रहवे इन मुख्यसूत्रों के बाद अन्य सूत्रों को भी अष्टाध्यायी से संग्रह करना पड़ता है। अतः सिद्ध होता है कि सूत्रमूलकपद्धति में अष्टाध्यायी की सम्पूर्ण सूत्र जानकारी आवश्यक है क्योंकि क्या मालूम किस सूत्र के उदाहरण में किन-किन सूत्रों की आवश्यकता पड़ेगी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सूत्रमूलकपद्धति से व्याकरण अध्ययन में समस्त सूत्र जानकारी आवश्यक है। यद्यपि इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है परन्तु ज्ञान प्राप्त करने में अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है।

4. सूत्रमूलकपद्धति में कारक ज्ञान क्रमरहित है :-

सूत्रमूलकपद्धति में कारकों से सम्बद्ध ज्ञान क्रम रहित है इसलिए पाठकों को इस पद्धति से कारक ज्ञान प्राप्त करने में समस्या का सामना करना पड़ता है। इस पद्धति में सर्वप्रथम विभक्तिसंज्ञा करने वाले सूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं जो संख्या में ''ध्रुवमपायेऽपादानम्''[4] सूत्र से लेकर ''तत्प्रयोजको हेतुश्च''[5] सूत्र तक 32 हैं। सूत्रमूलकपद्धित में विभक्तिसंज्ञाविधायक इन सूत्रों का क्रम अपादान, सम्प्रदान, करण, अधिकरण, कर्म तथा कर्ता संज्ञा विधायक सूत्रों के क्रम से है। जैसे:- ''ध्रुवमपायेऽपादानम्''[6] ''कर्मणायमभिप्रैति स सम्प्रदानाम्''[7] ''साधकतमं करणम्''[8] ''आधारोऽधि करणम्''[9] ''कर्तुरीप्सिततमं कर्म''[10] तथा ''स्वतन्त्रः कर्ता''।[11]

ये सूत्र कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण आदि संज्ञाओं के क्रम में नहीं हैं परन्तु ऊपरलिखित अपादान, सम्प्रदान, करण, अधिकरण, कर्म तथा कर्ता आदि संज्ञाओं के क्रम से हैं। विभक्तिसंज्ञा विधायक 32 सूत्रों में ऊपरलिखित सूत्र प्रमुख हैं।

विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्रों के शीघ्र बाद विभक्तिविधायक सूत्रों की आवश्यकता होती है, परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र प्रथम अध्याय में हैं और विभक्तिविधायकसूत्र द्वितीय

---

1 अष्टा0 4-1-2
2 अष्टा0 8-2-66
3 अष्टा0 8-3-15
4 अष्टा0 1-4-24
5 अष्टा0 1-4-55
6 अष्टा0 1-4-24
7 अष्टा0 1-4-32
8 अष्टा0 1-4-42
9 अष्टा0 1-4-45
10 अष्टा0 1-4-49
11 अष्टा0 1-4-54

अध्याय तृतीय पाद में समासविधायक सूत्रों के बाद प्राप्त होते हैं। अध्यापक हो या अध्येता हो उसे विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र के बाद विभक्तिविधायकसूत्र की आवश्यकता होती है। सूत्रमूलकपद्धति से प्रथम बार पढ़ने वाले छात्र को तो यह समस्या आती ही है, परन्तु अन्य पाठकों को भी आती है। जिन्हें विभक्तिविधायकसूत्र स्मरण न हों।

विभक्ति सम्बन्धित ज्ञान के लिए विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र पढ़ते समय प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद से द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में जाना पड़ता है क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में विभक्तिविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में दिए हैं जो ''अनभिहिते''[1] सूत्र से लेकर ''चतुर्थी चाशिष्यायुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः''[2] सूत्र तक संख्या में 73 हैं। इन में निम्नलिखित सूत्र प्रमुख हैं तथा इन का क्रम इस प्रकार है ''कर्मणिद्वितीया''[3] ''चतुर्थी सम्प्रदाने''[4] ''कर्तृकरणयोस्तृतीया''[5] ''अपादाने पञ्चमी''[6] ''सप्तम्यधि करणे च''[7] ''प्रतिपदिकार्थलिङ्ग.परिमाण वचन मात्रे प्रथमा''[8] तथा ''षष्ठी शेषे''[9]। इन सूत्रों का क्रम द्वितीया, चतुर्थी, तृतीया, पञ्चमी, सप्तमी, प्रथमा तथा षष्ठी विभक्ति है। सूत्रमूलकपद्धति में प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी तथा सप्तमी विभक्ति आदि क्रम नहीं है।

प्रथम तो सूत्रमूलकपद्धति में विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्रों में और विभक्तिविधायक सूत्रों में कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध एवम् अधिकरण आदि कारक तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी एवम् सप्तमी आदि विभक्ति क्रम नहीं है। दूसरी समस्या कारक ज्ञान प्राप्त करने में यह है कि इस पद्धति में विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में हैं और विभक्तिविध ायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में हैं। विभक्तिविधायक सूत्रों की आवश्यकता संज्ञाविधायक सूत्रों के साथ मिश्रित रूप से होती है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में संज्ञाविधायक सूत्रों के साथ विभक्तिविधायक सूत्रों को मिश्रित रूप में नहीं दिया है इस कारण पाठकों को इस पद्धति से कारक ज्ञान प्राप्त करने के लिए समस्या का सामना करना पड़ता है।

5. केवल समासज्ञान के लिए छः अध्यायों का पाठ ज़रूरी :–

सूत्रमूलकपद्धति से केवल समास ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही कम से कम छः अध्यायों का अध्यायन करना पड़ता है। समास सम्बद्ध प्रसङ्ग. प्रथम अध्याय द्वितीय पाद से ही प्रारम्भ हो जाता है परन्तु समासविध ायकसूत्र द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीयपाद में प्राप्त होतें हैं। सूत्रमूलकपद्धति में समासविधायक सूत्रों में सर्वप्रथम अव्यायीभावसमास के सूत्र है। इन सूत्रों की संख्या ''विभक्तिसमीपसमृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासम्प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्यसम्पत्तिसाकल्यान्तवचनेषु''[10]

---

1 अष्टा० 2-3-1
2 अष्टा० 2-3-73
3 अष्टा० 2-3-2
4 अष्टा० 2-3-13
5 अष्टा० 2-3-18
6 अष्टा० 2-3-28
7 अष्टा० 2-3-36
8 अष्टा० 2-3-40
9 अष्टा० 2-3-50
10 अष्टा० 2-1-6

सूत्र से लेकर ''अन्यपदार्थे च संज्ञायाम्''[1] सूत्र तक 16 है। ये सूत्र केवल समास करते है, समास सम्बद्ध अन्य कार्यो का वर्णन विभिन्न अध्यायों में प्राप्त है।

समास कार्यो से सम्बन्धित सूत्र सूत्रमूलकपद्धति में द्वितीय अध्याय प्रथम पाद के बाद वाले पादों और अध्यायों में प्राप्त होते हैं तथा कुछ समास कार्यो से सम्बन्धित सुत्र द्वितीय अध्याय से पूर्व प्रथम अध्याय द्वितीयपाद में भी प्राप्त होते है। समास तो सूत्र कर देता है परन्तु दूसरे कार्यो के लिए आगे-पीछे जाना पड़ता है। जैसे :- ''अधिहरि'' रूपरचना करने के लिए व्याकरण विग्रह के बाद हरि+ङि+अधि इस स्थिति में ''अन्ययंविभतिसमिपसमृद्धिव्यृद्धयथाभावात्ययासम्प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्य-सादृश्यसंपत्तिशाकल्यान्तवचनेषु''[2] सूत्र से अव्ययीभावसमास हो जाता है परन्तु शेष कार्यो के बाद ही अधिहरि रूप हमारे सामने आयेगा।

रूपरचनार्थ ''हरि+ङि+अधि'' इस स्थिति में समास करने पर ''प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम्''[3] सूत्र से अधि पद की उपसर्जनसंज्ञा होती है तथा ''उपसर्जनम् पूर्वम्''[4] सूत्र से उपसर्जन का पूर्व रूप होता है ''सुपोधातु प्रातिपदिकयो:''[5] सूत्र से ङि का लुक् ''कृतद्धितसमासाश्च''[6] सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा एक देशविकृतन्याय से ''स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्''[7] सूत्र से सु विभक्ति की उत्पति ''अव्ययीभावश्च''[8] सूत्र से अव्ययसंज्ञा होकर ''अव्ययादाप्सुप:''[9] सूत्र से समास के पश्चात आयी विभक्ति का लोप होने पर अधिहरि रूप सिद्ध होता है।

रूपरचनार्थ अव्ययीभावसमास से सम्बद्ध ''अव्ययादाप्सुप:''[10] ''नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्या:''[11] आदि सुपों को आदेश करने बाले सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थपाद और ''अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्य:''[12] ''अनश्च''[13] आदि समान्त टच् प्रत्ययविधायकसूत्र पञ्चम अध्याय चतुर्थपाद में प्राप्त होते हैं।

केवल अव्ययीभावसमास ज्ञान के अवलोकन से प्रतीत होता है कि अव्ययीभावसमास करने के लिए द्वितीय अध्याय प्रथम पाद का पाठ करना पड़ता है। उपसर्जन संज्ञा तथा प्रतिपदिक संज्ञा के लिए प्रथम अध्याय में जाना पड़ता है। अव्ययीभाव नपुस्कलिङ्ग. होता है यह जानकारी द्वितीय अध्याय में प्राप्त होती है। अव्ययीभावसमास मे सुपों को अमादेश करने वाले सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थपाद में प्राप्त होते हैं। अव्ययीभाव मे टच प्रत्यय के लिए पञ्चम अध्याय में जाना पड़ता है अर्थात यदि सूत्रपद्धति से अव्ययीभावसमास का ज्ञान चाहो तो केवल द्वितीय अध्याय प्रथमपाद के सूत्रों से नहीं किया जा सकता। अव्ययीभावसमास के कार्यो का अवलोकन करके उन्हें ढूण्डना पड़ेगा तभी समास ज्ञान समझ आयेगा।

---

1 अष्टा0 2-1-21
2 अष्टा0 2-1-6
3 अष्टा0 1-2-43
4 अष्टा0 2-2-30
5 अष्टा0 2-4-71
6 अष्टा0 1-2-46
7 अष्टा0 4-1-2
8 अष्टा0 2-4-18
9 अष्टा0 2-4-82
10 अष्टा0 2-4-82
11 अष्टा0 2-4-83
12 अष्टा0 5-4-107
13 अष्टा0 5-4-108

अव्ययीभावसमास के बाद सूत्रमूलकपद्धित में तत्पुरूष समास का क्रम आता है। ''अष्टाध्यायी'' में ''द्वितीया श्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः''[1] सूत्र से लेकर ''कत्वा च''[2] सूत्र तक तत्पुरूष समास विधायक 71 सूत्र दिये है। इनकी संख्या इसलिए अधिक है क्योंकि द्विगु तथा कर्मधारय समास तत्पुरूष के भेदोपभेद हैं। इस समास में नञ्, कु, गति संज्ञकों का क्रमशः समर्थ सुबन्त और प्रतिपादकों के साथ समास होता है। नञ् के नकार का लोप करने वाले सूत्र तथा इस प्रक्रिया में नुडागम करने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय के तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। तत्पुरूषसमास में टच् प्रत्यय करने वाले सूत्र पञ्चम अध्याय में प्राप्त होते हैं। कु तथा गति समास में परवत् लिङ्ग. होता है इस प्रकार के सूत्र द्वितीय अध्याय के चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं। इस वर्णन से स्पष्ट होता है कि तत्पुरूषसमास ज्ञान के लिए प्रथम, द्वितीय, पञ्चम तथा षष्ठ अध्यायों का पाठ आवश्यक है।

सूत्रमूलकपद्धति से ''अनेकमन्यपदार्थे''[3] सूत्र से लेकर ''तेन सहेति तुल्ययोगे''[4] सूत्र तक 5 सूत्र बहुव्रीहिसमास करते हैं। इसी समास में पुंवद्भावादि कार्य करने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय में प्राप्त होते हैं। कुछ पदों में अन्य प्रत्यय करने वाले सूत्र पाँचवे अध्याय में प्राप्त होते हैं।

व्याकरण में द्वन्द्वसमास के कुछ उदाहरणों में द्वन्द्वसमास के उपरान्त दोनों पदों मे से एक पद शेषार्थ सूत्र दिये हैं। जैसे :-''माता च पिता च'' इस लौकिक विग्रह में ''चार्थे द्वन्द्वः''[5] सूत्र से समास होने के बाद '' पितरौ'' पद की सिद्धि के लिए अष्टाघ्यायी में एक पद शेषार्थ ''पिता मात्रा''[6] सूत्र दिया है। दो पदों में से एक पद शेषार्थ अष्टाघ्यायी के प्रथम अध्याय के द्वितीयपाद में ''वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विषेशः''[7] सूत्र से लेकर ''ग्राम्य पशु सङघेष्वतरूणेषु स्त्री''[8] सूत्र तक नौ सूत्र प्राप्त हैं और ''राजदन्तादिषु परम्''[9] सूत्र से लेकर ''कडाराः कर्मधारये''[10] सूत्र तक आठ सूत्र दो पदों में से एकपद शेषार्थ द्वितीय अघ्याय द्वितीय पाद के अन्त में प्राप्त होते हैं। कहने का भाव यह है कि दो पदों में से एकपद शेष छोड़ने वाले सूत्र कुछ तो ''चार्थे द्वन्द्वः''[11] सूत्र के बाद प्राप्त होते हैं और कुछ इस सूत्र से पूर्व ही दिये हैं। द्वन्द्वसमास करने वाला सूत्र द्वितीय अघ्याय में है जबकि एक शेष करने वाले सूत्र प्रथम अघ्याय मे ही प्राप्त हो जाते हैं। एक पदशेष रखने वाले सूत्रों का ज्ञान विना समासज्ञान के असम्भव है प्रथम अघ्याय के इन सूत्रों की उपयोगिता ही द्वितीय अघ्याय तक समझ नहीं आती है।

ऊपरलिखित विवरण से ज्ञात होता है कि केवल समासज्ञान के लिए ही सूत्रमूलकपद्धति से कम से कम छः अघ्यायों के सूत्रों का समरण जरूरी है। काशिका के कुछ समय बाद पाठक इस समस्या के समाध

---

1 अष्टा0 2-1-24
2 अष्टा0 2-2-22
3 अष्टा0 2-2-24
4 अष्टा0 2-2-28
5 अष्टा0 2-2-29
6 अष्टा0 1-2-70
7 अष्टा0 1-2-65
8 अष्टा0 1-2-73
9 अष्टा0 2-2-31
10 अष्टा0 2-2-39
11 अष्टा0 2-2-29

ान हेतु चाह रहे थे, कि समास कार्यो से सम्बन्धित सूत्र एक क्रम मे इकट्ठे प्राप्त होने चाहिए ताकि वे छ: अध्यायों के पाठ विना कम परिश्रम से ही समास ज्ञान प्राप्त कर सके।

6. सूत्रमूलकपद्धति में क्रियारूपों का ज्ञान लकार एवम् गणादि क्रम रहित है :-

व्याकरण ज्ञान में क्रियाओं का ज्ञान उपयोगी होता है। विना क्रिया के वाक्य अधुरा रहता है। सूत्रमूलकपद्धति से क्रिया सम्बन्धित ज्ञान उपर्जित करने में अनेक समस्याओं का समना करना पड़ता है। व्याकरण इसका बोधक है कि किस काल में किस लकार का प्रयोग किया जाये और उस लकार में प्रत्येक क्रिया का क्या रूप होता है। छात्रों की सुविधा के लिए जैसे काशिका में "लस्य"[1] सूत्र में लट्, लिट्, लुट् लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, तथा लृङ् लकारों की गणना की है[2] या जैसे पाणिनि ने धातुपाठ में भ्वादि, अदादि आदि क्रम से 10 गणों की धातुओं का पाठ दिया है उस क्रम में व्याकरण में क्रियारूयों का ज्ञान होना चाहिए था। परन्तु सुत्रमूलकपद्धति में यह समस्या है कि इस पद्धति में क्रियाओं का ज्ञान उक्त क्रम में प्राप्त नहीं होता है।

इस में कारण यह है कि क्रियारूपों से सम्बद्ध सूत्र क्रम रहित हैं जैसे- आत्मनेपद और परस्मैपद व्यवस्था विधायक सूत्र प्रथम अध्याय तृतीय अध्याय तृतीय पाद, लकार एवम् लकारादेश विधायकसूत्र तृतीय अध्याय द्वितीय तथा तृतीय पाद, विकरण विधायक सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थपाद, विभिन्न धात्वादेशों से सम्बद्ध सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद तथा विभिन्न आगमादेश एवम् अभ्यास कार्यो से सम्बद्ध सूत्र सप्तम तथा अष्टम अध्यायों में हैं। ये सूत्र विखरे हैं। अतः क्रिया रूपों मे विखराव स्वभाविक है।

क्रियापदों से सम्बद्ध उदाहरण काशिका प्रथम अध्याय से प्राप्त होना आरम्भ हो जाते है। इस प्रकार के उदाहरण काशिका में "अनुदान्तङित आत्मनेपदम्"[3] सूत्र से लेकर "लुटि च कलृप:"[4] सूत्र तक 72 सूत्रों में पाये जाते हैं। इन सभी उदाहरणों में पाठकों को अपने मानसिक पटल पर सम्पूर्ण रूपसिद्धि प्रक्रिया की व्यावस्था करनी पड़ती है क्योंकि तिबादि प्रत्ययों के स्थान पर आदेश करने वाले सूत्र तृतीय अध्याय में हैं। आत्मनेपद और पस्मैपद प्रक्रिया प्रथम अध्याय तृतीय पाद में है। इस में भी कोई विषेशक्रम नहीं हैं। आत्मनेपद और परस्मैपदादेश करने वाले सूत्र मिश्रित हैं क्योंकि ये सूत्र कार्यो को ध्यान में रख कर दिये हैं। काशिका के कुछ समय बाद पाठक परस्मैपद प्रक्रिया और आत्मनेपद प्रक्रिया के सूत्रों को एक क्रम में तथा लकारों के सूत्रों को लट्, लिट्, लुट् आदि क्रम से चाह रहे थे। धातुओं के उदाहरण और सूत्रों का भी धातुपाठ मे दिये पाठ का क्रम चाह रहें थे।

सूत्रमूलकपद्धति में लकार विधायकसूत्र "लुङ्"[5] "अनद्यतने लङ्"[6] "परोक्षे लिट्"[7] "वर्तमाने लट्"[8] "लृट शेषे च"[9] "अनद्यतने लुट्"[10] "लिङ् निमिते लृङ् क्रियात्तिपतौ"[11] "विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाध

1 अष्टा0 3-4-77
2 का0 3-4-77
3 अष्टा0 1-3-12
4 अष्टा0 1-3-93
5 अष्टा0 3-2-110
6 अष्टा0 3-2-111
7 अष्टा0 3-2-115
8 अष्टा0 3-2-123
9 अष्टा0 3-3-13
10 अष्टा0 3-3-15
11 अष्टा0 3-3-139

ाष्टसम्प्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्''[1] ''लोट् च''[2] ''लिङर्थे लेट्''[3] इस क्रम से तृतीय अध्याय द्वितीय और तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों का क्रम लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों के क्रम से नहीं है तथा सम्बन्धित सूत्र विखरे होने के कारण उदाहरण भी विखरे हैं।

पाणिनि ने क्रिया रूपसिद्धि के लिए विभिन्न विकरणों के ज्ञानार्थ व्याकरण में ''अदि प्रभृतिभ्य: शप:''[4] ''जुहुत्यादिभ्य:श्लु''[5] आदि 10 सूत्र दिये हैं तथा अपने व्याकरण की पूर्ति के लिए द्वितीय अङ्ग के रूप में धातुपाठ नामक ग्रन्थ की रचना की है। धातुपाठ में विकरणों का बहुत महत्त्व होता है। धातुपाठ में विकरणों को ध्यान में रखकर लगभग 1950 धातुओं को 10 गणों में विभक्त किया है। धातु तथा प्रत्यय के बीच विकरणों का बहुत महत्त्व होता है। इसलिए पाणिनि ने रूपसिद्धि के लिए विकरणार्थ सूत्र दिये हैं। परन्तु जिस क्रम में पाणिनीय धातुपाठ में भ्वादि गणों को दिया है उस क्रम से सूत्रमूलकपद्धति में विकरणविधायकसूत्र प्राप्त नहीं होते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में ये सूत्र इस क्रम में हैं :- ''अदिप्रभृतिभ्य: शप:''[6] ''जुहुत्यादिभ्य: श्लु:''[7] ''सत्याप-पाश-रूप-वीणा-तूल-श्लोक-सेना-लोम-त्यम-वर्म-वर्ण-चूर्ण -चुरादिभ्य: णिच्''[8] ''कर्तरि शप्''[9] ''दिवादिभ्य: श्यन्''[10] ''स्वादिभ्य: श्नु:''[11] ''तुदादिभ्य: श:''[12] ''रूधादिभ्य: श्नम्''[13] ''तनादिकृञ्भ्य:उ:''[14] तथा ''क्रयादिभ्य: श्ना''[15]। इन सूत्रों से प्रत्येक गण के विकरणों का ज्ञान होता है। काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों मे नियमानुसार इन सूत्रों में केवल इन ही सूत्रों के उदाहरण हैं, शेष पूरे गण की धातुओं के रूप पूरे ग्रन्थों में बिखरे हैं। क्योंकि इस क्रम में जहां इडादेश करने वाले सूत्र है वहां इडादि कार्यो से सम्बन्धित धातुरूप दिये हैं जहाँ नुमादि कायों से सम्बन्धित सूत्र हैं वहाँ नुमादि कायों से सम्बद्ध धातुरूप दिये हैं। इस तरह प्रत्येक कार्य से सम्बद्ध धातु रूप वहां वहां हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में लकार और गाणों के क्रम को ध्यान नहीं दिया है क्योंकि इस क्रम में समान कार्य करने वाले सूत्र ही इकट्ठे प्राप्त होते हैं। इसलिए ही इस पद्धति में क्रियारूप विखरे प्राप्त होते हैं। काशिका के कुछ समय बाद पाठक क्रियारूपों को सिद्ध करने में समस्या समझने लगे, क्योंकि क्रियारूपों को सिद्ध करने वाले सूत्र विखरे हैं तथा इनका क्रम क्रियारूपों को सिद्ध करने के लिए व्यवस्थित नहीं हैं। जैसे लकारों और लकारादेशों से सम्बद्ध सूत्र तृतीय अध्याय द्वितीय और तृतीय पाद में हैं। धातु तथा प्रत्यय के बीच शप् आदि विकरणों से सम्बद्ध सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद और तृतीय अध्याय प्रथम पाद में है, धात्वादेशो से सम्बन्धित सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। नुम् इडादि आगम करने वाले सूत्र सप्तम अध्याय प्रथम और द्वितीय पाद में दिये हैं। विभिन्न आदेश और अभ्यास कार्य करने वाले सूत्र क्रमश: सप्तम अध्याय

1 अष्टा0 3-3-161
2 अष्टा0 3-3-162
3 अष्टा0 3-4-7
4 अष्टा0 2-4-72
5 अष्टा0 2-4-75
6 अष्टा0 2-4-72
7 अष्टा0 2-4-75
8 अष्टा0 3-1-25
9 अष्टा0 3-1-68
10 अष्टा0 3-1-69
11 अष्टा0 3-1-73
12 अष्टा0 3-1-77
13 अष्टा0 3-1-78
14 अष्टा0 3-1-79
15 अष्टा0 3-1-81

चतुर्थ पाद और अष्टम अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। इन सूत्रों के उदाहरणों में क्रियाओं से सम्बद्ध उदाहदण भी प्राप्त होते हैं। अत: स्पष्ट है कि एक तो ये क्रियारूप मिश्रित हैं तथा विखरे हैं।

काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के बाद ऐसा समय आ गया है कि पाठक क्रियारूपों को गणों के क्रम में और लकारों के क्रम को भी लट्, लिट्, लुट् लृट्, लेट्, लोट्, लङ् लिङ्, लुङ्, तथा लृङ् आदि लकारों में चाहने लगे तथा भ्वादिगणों की सम्पूर्ण धातुओं के क्रियारूपों को केवल उसी गण के प्रकरण में चाहने लगे। सूत्रमूलकपद्धति में क्रियारूप विखरे होने के कारण पाठकों को समस्या का सामना करना पड़ता है।

7. सूत्रमूलकपद्धति में उपयोगी सन्धि ज्ञान ग्रन्थान्त में तथा अच्, हलादि क्रम रहित है :–

सूत्रमूलकपद्धति में एक गहन समस्या हमारे सामने यह आती है कि व्याकरण ज्ञान के मूलभूत सन्धि विधायकसूत्र शुरू में नहीं हैं। व्याकरण के हर क्षेत्र में सन्धियों कि आवश्यकता होती है क्योंकि पग-पग पर सन्धि करनी पड़ती है। सूत्रमूलकपद्धति में सन्धियों का अभाव नहीं है परन्तु सन्धियों से सम्बद्ध सूत्र षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में हैं। वैसे भी व्याकरण अध्ययन सन्धि ज्ञान प्रथम चाहता है। मन्दबुद्धि तो क्या तीव्रबुद्धि छात्र के लिए भी सूत्रमूलकपद्धति से सन्धिज्ञान के अभाव में व्याकरण के अनेक क्षेत्रों में सन्धि विधायक सूत्रों तक अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सूत्रमूलकपद्धति में सन्धियों से सम्बद्ध कुछ सूत्र षष्ठ अध्याय में प्राप्त होते हैं शेष सूत्र अष्टम अध्याय में हैं। षष्ठ अध्याय में ''इको यणचि''[1] सूत्र से लेकर ''सोऽचिलोपे चेत् पाद पूरणम्''[2] सूत्र तक सन्धिविधायकसूत्र प्राप्त होते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में सन्धिविधायक सूत्रों में कोई स्वरसन्धि का सूत्र है, कोई प्रकृतिभाव का सूत्र है, कोई हल्सन्धि का सूत्र है, कोई स्वादिसन्धि का सूत्र है अर्थात सूत्र मिश्रित हैं इन सूत्रों में अच् हलादि सन्धि क्रम नहीं है।

सूत्रमूलकपद्धति में हल् तथा विसर्ग सन्धि से सम्बन्धित सूत्र अष्टम अध्याय तृतीय पाद में मिश्रित रूप में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों को सूत्रमूलकपद्धति में किसी एक हल् या विसर्ग आदि सन्धिक्रम से नहीं दिया है।

प्रथम तो इन सूत्रों में विशेष क्रम नहीं है और व्याकरण अध्ययन में उपयोगी सन्धिविधायकसूत्र षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में दिये हैं। पाणिनि से लेकर काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के कुछ समय बाद तक पाठक आवश्यकता पड़ने पर सन्धि सम्बन्धी रूपों को तत्काल सिद्ध करके अग्रिम कार्यवाही कर लेते थे अर्थात सन्धि सम्बन्धी समस्याओं को तत्काल सुलझा लेते थे। परन्तु समयानुसार पाठक काशिका के कुछ समय बाद व्याकरण के हर क्षेत्र में सन्धि सम्बन्धी कार्यो को तत्काल सुलझाने में असमर्थता समझने लगे। मन्दबुद्धि छात्रों को व्याकरण अध्ययन छोड़ने पर विवश होना पड़ा। मन्दबुद्धि तो क्या कुशाग्रबुद्धि छात्र भी चाहने लगे कि व्याकरणोपयोगी सन्धिविधायक सूत्रों में कोई विशेष क्रम होना चाहिए तथा इन सूत्रों का अध्ययन अन्य सूत्रों को छोड़कर सर्वप्रथम होना चाहिए।

---

1 अष्टा0 6-1-77   2 अष्टा0 6-1-134

8 **सूत्रमूलकपद्धति में सुबन्त रूपों का ज्ञान लिङ्ग. एवम् विभक्ति क्रम रहित है :-**

संस्कृतभाषा में प्रयोग करने के लिए सविभक्त पदों की आवश्यकता होती है। प्रातिपदिक शब्दों का किस विभक्ति में क्या रूप बनता है? यह जानकारी व्याकरणशास्त्र द्वारा की जाती है। संस्कृत में दो प्रकार के शब्द हैं। कुछ शब्द ऐसे हैं जिन के अन्त में अच् आते हैं उन्हें अजन्त कहते हैं। कुछ शब्दों के अन्त में हल् आते हैं उन्हें हलन्त प्रातिपदिक कहते हैं। पाणिनीयव्याकरण के अनुसार इन शब्दों को अजन्तपुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग. तथा हलन्तपुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग. शब्द बोध से जाना जाता है।

सूत्रमूलकपद्धति में यह समस्या है कि इस पद्धति में अच् अन्त वाले पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग तथा हल् अन्त वाले पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग. शब्दों से सम्बन्धित सूत्र बिखरें हैं इनको रूपरचना दृष्टि से किसी बिशेष क्रम में नहीं रखा है। इसी कारण इन सूत्रों में दिये उदाहरण विखरे है तथा इन का कोई क्रम नहीं हैं।

काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के उपरान्त पाठक यह जान रहे थे कि अच् अन्त वाले पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग. शब्दो से सम्बन्धित सूत्र एक प्रकरण में इकट्ठे होने चाहिए। इसी तरह हल् अन्त वाले पुलिङ्ग. स्त्रीलिङ्ग. और नंपुस्कलिङ्ग. शब्दों से सम्बन्धित सूत्र किसी विशेष क्रम में इकट्ठे होने चाहिए। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्य करने वाले सूत्र एक क्रम में इकट्ठे दिये हैं। अत: प्रत्येक कार्य से सम्बद्ध सूत्र विभिन्न अध्यायों में प्राप्त होते हैं। षड्लिङ्गो से सम्बन्धित सूत्र, प्रथम, षष्ठ, सप्तम और अष्टम अध्यायों में प्राप्त होते हैं। इस लिए ही सुबन्तरूप विखरे हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में अजन्तपुलिङ्ग. शब्दों से पूर्व अजन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा हलन्त् प्रातिपदिकों से सम्बन्धित ''हल्ङ्याब्भ्योदीर्घात् सुतिस्यपृक्तम् हल्''[1] सूत्र प्राप्त होता हैं। यह सूत्र हलन्त्, ङ्यत् तथा आवन्त् शब्दों से परे सु प्रत्यय का लोप करता है इस सूत्र का सम्बन्ध हलन्त शब्दों से तथा अजन्तस्त्रीलिङ्ग. शब्दों से हैं। अजन्तपुलिङ्ग. शब्दों से सम्बन्धित सूत्र षष्ठ अध्याय के अन्त में प्राप्त होते हैं।

सु लोप सम्बन्धित सुत्रों के बाद तुक् आगम सम्बन्धित सूत्रों का प्रकरण शुरू हो जाता हैं। पाठकों को प्रातिपदिक शब्दों का ज्ञान एक साथ इकट्ठा प्राप्त नहीं होता है। प्रथम अध्याय प्रथमपाद में सर्वनाम संज्ञको का मात्र प्रसङ्ग शुरू होता है। इसमे ''सर्वादीनि सर्वनामानि''[2] सूत्र से लेकर ''अन्तरं वहिर्योगोपसंव्यानम्''[3] सूत्र तक 10 सूत्र सर्वनाम शब्दों से सम्बन्धित है। परन्तु इस प्रकरण में सभी सर्वनाम शब्दों और सर्वनाम शब्दों की सभी विभक्तियों का ज्ञान नहीं होता, क्योंकि कुछ विभक्तियों के रूप प्रथम अध्याय के उपरान्त अन्य अध्यायों में प्राप्त होते हैं।

---

1 अष्टा0 6-1-68

2 अष्टा0 1-1-26

3 अष्टा0 1-1-36

सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र मिश्रित हैं और विखरे हैं किसी एक प्रकरण के क्रम में नहीं हैं। जैसे :- ''औतोऽम-शसो:''[1] षष्ठ अध्याय प्रथम पाद का सूत्र औकारान्त शब्दों से सम्बन्धित है इस सूत्र के बाद ''प्रथमयो: पूर्वस्वर्ण:''[2] यह सूत्र अकारान्त, इकारान्त तथा उकारान्त शब्दों से सम्बन्धित है। इसी प्रकरण में ''ऋत उत्''[3] सूत्र ऋकारान्त शब्दों से सम्बद्ध है। इस सूत्र से अगला सूत्र ''रव्यत्यात् परस्य''[4] सूत्र सखि शब्द से सम्बन्धित है जो इकारान्त है। इन शब्दों का क्रम अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त आदि क्रम से नहीं हैं क्योंकि उदाहरणों में औकारान्त के बाद अकारान्त, अकारान्त के बाद ऋकारान्त, ऋकारान्त के बाद इकारान्त सखि शब्द से सम्बन्धित सूत्र है। अत: सूत्रमूलकपद्धति में अजन्त तथा हलन्त् शब्दों से सम्बद्ध सूत्र किसी प्रकरण क्रम या अन्य क्रम से प्राप्त नहीं है परन्तु मिश्रित हैं जो छात्रों को समस्या उत्पन्न करते हैं।

उदाहरणार्थ यदि पाठक अकारान्त शब्द को ही अपने ज्ञान के लिए मस्तिस्क में रखे तो भी ''स्वौजसमौट् छष्टाभ्याम्भ्यस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यसुङसोसामङ्योस्सुप्''[5] सूत्र में लिखित प्रत्ययों के क्रम से सूत्र इकट्ठे प्राप्त नही होते हैं। जैसे राम अकारान्त शब्द से सम्बन्धित सूत्र ''तस्माच्छसो न:पुंसि''[6] सूत्र पूर्व है, उक्त सूत्र शस् प्रत्यय के सकार को नकारादेश करता है। ''नादिचि''[7] सूत्र पूर्वस्वर्ण का निषेध करता है, यह सूत्र बाद में प्राप्त होता है, इस सूत्र का सम्बन्ध औ प्रत्यय से है। अम् प्रत्यय के अकार को पूर्व रूप करने वाला सूत्र ''अमि पूर्व:''[8] और भी आगे प्राप्त होता है। इसके बाद भिस् प्रत्यय को ऐस् करने वाला सूत्र ''अतो भिस ऐस्''[9] सप्तम अध्याय में प्राप्त होता है। टा, ङसि और ङस से सम्बद्ध ''टाङसिङसामिनात्स्या:''[10] सूत्र पूर्व सूत्र से आगे प्राप्त होता है, टा, प्रत्यय से सम्बन्धित सूत्र भिस् प्रत्यय से सम्बद्ध सूत्र से पूर्व होना चाहिए था परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में सु, औ, जस् आदि प्रत्यय के क्रम से आदेश सम्बन्धित सूत्र नहीं दिये हैं। उक्त सूत्र के बाद ङे को यकार करने वाला ''ङेर्य:''[11] सूत्र सप्तम अध्याय प्रथम पाद में है। सप्तम अध्याय प्रथम पाद के उपरान्त कुछ सूत्र सप्तम अध्याय तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। जैसे :-''सुपि च''[12] ''बहुवचने झल्येत्''[13] ये सूत्र दीर्घ और एकारादेश करते हैं। अत: स्पष्ट होता है कि ''स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यसुङसोसाम्ङ्योस् सुप्''[14] आदि सूत्र में दिये गये सु, औ, जस् आदि प्रत्ययों के क्रम से भी आदेश सम्बन्धित सूत्रों का क्रम सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त नहीं होता है इसी कारण सुबन्त रूप विखरे है तथा क्रम रहित हैं।

यदि पुलिङ्ग. या नपुस्कलिङ्ग. में से किसी एक लिङ्ग. से सम्बन्धित सूत्र ही एक क्रम से प्राप्त होते तो भी पाठकों को समस्या नहीं आनी थी। इस पद्धति में पुलिङ्ग. शब्द से सम्बन्धित सूत्र के बाद नुपंस्कलिङ्ग.

---

1 अष्टा0 6-1-93
2 अष्टा0 6-1-102
3 अष्टा0 6-1-111
4 अष्टा0 6-1-112
5 अष्टा0 4-1-2
6 अष्टा0 6-1-103
7 अष्टा0 6-1-104
8 अष्टा0 6-1-107
9 अष्टा0 7-1-9
10 अष्टा0 7-1-12
11 अष्टा0 7-1-13
12 अष्टा0 7-3-102
13 अष्टा0 7-3-103
14 अष्टा0 4-1-2

शब्द का सूत्र प्राप्त हो जाता है या स्त्रीलिङ्ग. शब्द से सम्बद्ध सूत्र के उपरान्त नपुस्कलिङ्ग. शब्द से सम्बन्धित सूत्र प्राप्त हो जाता है। जैसे – ''औङ आप:''[1] सूत्र के बाद ''नपुंस्काच्च''[2] सूत्र आता है, पाठक स्त्रीलिङ्ग. शब्दों से सम्बन्धित सूत्र पढ़कर स्त्रीलिङ्ग. सम्बद्ध सूत्रों को इकट्ठा पढ़ना चाहते हैं परन्तु उक्त सूत्र नपुस्कलिङ्ग. शब्दों से सम्बन्धित है। इस प्रसङ्ग. के बाद अगला सूत्र ''अष्टाभ्य औश्''[3] हलन्त पुलिङ्ग. से सम्बन्धित है। अत: स्पष्ट है कि इस पद्धति में लिङ्गादि क्रम से भी सूत्र नही दिये हैं। जब सूत्र ही विखरे और मिश्रित है तो उदाहरणों में विखराव स्वभाविक है।

सूत्रमूलकपद्धति में प्रसङ्ग. मात्र से केवल हलन्तपुलिङ्ग. से सम्बद्ध अस्मद् और युष्मद् शब्दों से सम्बन्धित सूत्र ही एक क्रम से प्राप्त होते हैं परन्तु इन शब्दों की पूर्ण जानकारी भी एक साथ सम्पूर्ण नहीं होती है क्योंकि अस्मद् और युष्मद् शब्दों से उत्तर प्रत्ययों को आदेश करने वाले सूत्र ''युष्मदस्मदभ्याम् ङशोऽश्''[4] सूत्र से ''सामआकम्''[5] सूत्र तक 7 सूत्र युष्मद् और अस्मद् से उत्तर प्रत्ययों को आदेश करते हैं। इन सूत्रों में भी ''स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्''[6] सूत्र में प्राप्त प्रत्ययों का क्रम नहीं है। प्रत्ययों को आदेश करने वाले ये सूत्र सप्तम अध्याय प्रथमपाद मे दिये हैं।

युष्मद् और अस्मद् के स्थान पर आदेश करने वाले सूत्र तथा युष्मद् और अस्मद् के अद् भाग को आदेश करने वाले सूत्र ''युष्मदोरनादेशे''[7] सूत्र से लेकर ''त्वमावेकवचने''[8] सूत्र तक 12 सूत्र सप्तम अध्याय द्वितीय पाद के अन्त में प्राप्त होते हैं। अत: स्पष्ट होता है कि युष्मद् और अस्मद् शब्दों के ज्ञान के लिए भी सप्तम अध्याय प्रथम और द्वितीय पाद के सूत्रों का अध्ययन जरूरी है।

ऊपरलिखित विवरण से ज्ञात होता है कि अजन्त और हलन्त प्रातिपदिकों से निर्मित विभिन्न पदों की जानकारी के लिए पाठकों को अत्यधिक परिश्रम का सामना करना पड़ता है क्योंकि इन शब्दों की जानकारी के लिए प्रथम, षष्ठ सप्तम और अष्टम अध्यायों का अध्ययन जरूरी हैं। एक तो ये सूत्र विखरे हैं तथा इन में लिङ्गादि या सु, औ, जस् आदि प्रत्ययों का क्रम प्राप्त नहीं है, इसी कारण सुन्बत पद विखरे हैं। काशिका आदि वृतिग्रन्थों के उपरान्त पाठक सुबन्त पदों की जानकारी के लिए विशेष क्रम चाह रहे थे ताकि सविभक्त पदों को जानकर वे उन्हें भाषा में प्रयोग कर सकें।

9. कृदन्त जानकारी में समस्या :–

सूत्रमूलकपद्धतिपद्धति में कृत् प्रत्ययों का वर्णन तृतीय अध्याय में प्राप्त होता है। सम्बन्धित सूत्र संख्या में अधिक हैं। पाणिनि ने अष्टाध्यायीं में कृत् प्रत्ययविधायक सूत्रों का अनेक अधिकारों में वर्णन किया है, परन्तु इन्हें भागों में विभक्त नहीं किया है। इसके बाद सूत्रमूलकपद्धति में कृत् प्रत्ययविधायकसूत्र

---

1 अष्टा0 7-1-18
2 अष्टा0 7-1-19
3 अष्टा0 7-1-21
4 अष्टा0 7-1-27
5 अष्टा0 7-1-33
6 अष्टा0 4-1-2
7 अष्टा0 7-2-86
8 अष्टा0 7-2-97

विखरे हैं क्योंकि इनमें लकारादि वर्णन से सम्बन्धित सूत्र मिश्रित हैं। काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के उपरान्त पाठक एक तो छोटे प्रकरण चाह रहें थे तथा कृदन्तपदों की जानकारी रूपरचना क्रम से चाहने लगे थे।

10. अनेक अधिकारों में वार्णित होने पर भी तद्धिताधिकार संयुक्त रूप में :–

सूत्रमूलकपद्धति में तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र संख्या में 1025 हैं तथा प्रसंङ्गवश इकट्ठे प्राप्त हैं जो चतुर्थ तथा पञ्चम अध्ययों में पाये जाते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में पाठक तद्धिताधिकार को देखकर कठिनाई में पड़ जाते हैं क्योंकि इसे भागों में विभक्त नहीं किया है यद्यपि यह अनेक अधिकारों में वर्णित है। इसके बाद इस पद्धति में तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र एक क्रम से प्राप्त हैं पाठक तद्धितान्त पदों की जानकारी रूपरचना क्रम से चाहते हैं। तद्धितान्त पदों की रूपरचना के लिए पाठकों को सूत्र स्वयं जुटाने पड़ते है जो कि सम्पूर्ण ग्रन्थों में विखरे हैं। तद्धिताधिकार में तो मात्र प्रत्ययों का वर्णन है।

11. सूत्रमूलकपद्धति में प्रत्ययान्त आरव्यात रूपों का क्रम व्यत्यय :–

आवश्यकतानुसार व्याकरण में इच्छा, आचार, चाहना, प्रेरणा, बार–बार होना या अधिक होना, भाव और कर्म आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं और अनेक सुबन्त पदों से प्रक्रिया ज्ञानार्थ सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, णिच्, यङ् आदि प्रत्ययों का विधान किया गया है। इन प्रत्ययों के योग से धातु तथा सुबन्तपदों द्वारा निर्मित पद इच्छा, चाहना, प्रेरणा, बार–बार होना या अधिक होना , भाव और कर्म आदि अर्थो को प्रकट करते हैं।

इन प्रत्ययों का वर्णन सूत्रमूलकपद्धति में तृतीय अध्याय में प्राप्त होता है। सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, णिच्, यङ्,आदि प्रत्ययों के उरापरान्त लकारार्थो का वर्णन भी इसी अध्याय में हैं। प्रक्रिया से सम्बद्ध आत्मनेपद व्यावस्था और परस्मैपद व्यवस्था विधायकसूत्र प्रथम अध्याय तृतीयपाद में प्राप्त होते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में सम्बन्धित सूत्रों के उदाहरणों में क्रम व्यत्यय है। पाठक काशिका के कुछ समय बाद प्रत्ययान्त आरव्यात पदों की जानकरी विशेष क्रम से चाह रहे थे।

सूत्रमूलकपद्धति से पाठकों को यह समस्या आ रही थी कि इस उपयोगी प्रकरण के सूत्र प्रथम अध्याय तथा तृतीय अध्याय के विभिन्न पादों में विखरे है। इन सूत्रों से सम्बद्ध उदाहरणों की रूपरचना लगभग मिलती जुलती है परन्तु सूत्रक्रम में इन सूत्रों के बीच अन्य सूत्र दिये हैं जो कारक, समास आदि विभिन्न कार्यो से सम्बन्धित है। पाठक समयानुसार एक प्रकार की रूपरचना वाले उदाहरणों से सम्बन्धित जानकारी एक साथ चाह रहे थे, क्योंकि बीच में दूसरे प्रकरण की शुरूआत से व्यवधान पड़ता है। दूसरी बार वैसे उदाहरण आने पर पूनः पूर्व सूत्रों की जानकारी करनी पड़ती है। इसके उपरान्त सूत्रमूलकपद्धति में इस प्रकरण के सूत्रों में भी एक क्रम नहीं है जैसे लकारों का क्रम लट्, लिट्, लुट् आदि क्रम नहीं है। सनादि प्रत्ययों में भी विशेष क्रम नहीं है तथा आत्मनेपद, परस्मैपद व्यावस्था में भी किसी एक पद के वर्णन के उपरान्त दूसरे का आरम्भ नहीं है अर्थात मिश्रित वर्णन है जिस से पाठक भ्रमित अवस्था में आ जातें हैं। वैसे भी किसी एक प्रवरण का एक साथ वर्णन हो तो उस में सरलता रहती है। अतः पाठक काशिका

आदि वृत्तिग्रन्थों के उपरान्त इस पद्धति में आख्यात रूपों के क्रम व्यत्यय के कारण समस्या का अनुभव कर रहे थे।

ख प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन :-

भाषा गतिशील होती है समयानुसार परिवर्तित होती रहती है। पतञ्जलि तक संस्कृत शिष्टजनों की भाषा थी, फिर भी इसमें अनेक परिवर्तन आये थे। समयानुसार पाणिनीय अष्टाध्यायी में अनेक समस्याएँ आती रहीं। अत: व्याकरणपरम्परा में भी परिवर्तन आया जो स्वभाविक था। इस परिवर्तन का किसी को लाभ और किसी को हानि होना भी स्वभाविक था, क्योंकि यदि एक को लाभ होना हो तो दूसरे की हानि निश्चित होती है। अत: व्याकरणपरम्परा में इस परिवर्तन से सूत्रमूलकपद्धति को हानि हुई।

व्याकरणपरम्परा में काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों तक सूत्रमूलकपद्धति में अपर्याप्त विकास हुआ था, परन्तु काशिका उत्तर काल में भी समस्याओं की वृद्धि रूकी नहीं अपितु बढ़ती रही। इस कारण व्याकरणपरम्परा समयानुसार अध्ययन में कुछ और परिवर्तन दिशा चाहने लगी। यह जानकर व्याकरणपरम्परा में शर्ववर्मा ने समय का लाभ उठाकर प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति को जन्म दिया जो व्याकरणपरम्परा में कातन्त्रव्याकरण से पूर्व प्राप्त नहीं होती है। यदि गहरायी से विचार किया जाये तो किसी भी कार्य में परिवर्तन करना योग्यता का प्रमाण है।

शर्ववर्मा की रचना कातन्त्रव्याकरण के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ये महान् विद्वान थे जिन्होने इतनी प्रसिद्धि प्राप्त की है। इन्होने सर्वप्रथम सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं का सग्रंह किया तथा उन समस्याओं के समाधान हेतु ''प्रक्रियामूलक'' एक साधारण पद्धति मे ''कातन्त्रव्याकरण'' नामक स्वतन्त्र व्याकरणग्रन्थ रचा।

यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति का पूर्णस्वरूप ''कातन्त्रव्याकरण'' में प्राप्त नहीं होता है, जो इस समय हमारे सम्मुख है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति का स्त्रोत जरूर इस व्याकरण में प्राप्त होता है। उस समय इसी स्वरूप की आवश्यकता थी। समयानुसार परिवर्तन होता रहता है। इस पद्धति में और विकास हुआ है यह अलग बात है परन्तु ''कातन्त्रव्याकरण'' प्रक्रियामूलकपद्धति की प्रथम रचना है।

विक्रम सम्वत 1000 के लगभग शर्ववर्मा ने ''कातन्त्रव्याकरण'' की रचना की इन्होने अपना व्याकरण लगभग 1500 साधारण सूत्रों द्वारा रचा, जोकि पाणिनीयव्याकरण की संख्या के एक तिहायी से कुछ अधिक है। इन्होने प्राचीन व्याकरणों के साथ पाणिनीयव्याकरण का भी अनुकरण किया है परन्तु पद्धति प्रक्रियामूलक है। कातन्त्रव्याकरण के अध्ययनोपरान्त ज्ञात होता है कि यह व्याकरण पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा बहुत सरल है।

पाणिनीयव्याकरण के वृत्तिग्रन्थों के समान ही इस व्याकरण में सर्वप्रथम सूत्र दिये हैं तदपरान्त उदाहरण दिये है। इसमें पाणिनीय परम्परा के समान उदाहरण प्रथम नहीं है परन्तु सूत्रों को उदाहरणों की सिद्धि के लिए प्रक्रियामूलकपद्धति मे सन्धि आदि प्रकरणों के क्रम से दिया है।

कातन्त्रव्याकरण को पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह व्याकरण प्रक्रियाक्रम में दिया गया है इस व्याकरण के शुरू में संज्ञा तथा परिभाषासूत्रों के बाद सन्धिप्रकरण शुरू होता है। इस व्याकरण में द्वितीय पाद के ''समानः सवर्णे दीर्घी भवति परश्च लोपम्''[1] सूत्र से लेकर ''न व्यञ्जने स्वराः सन्धेयाः''[2] सूत्र तक 18 सूत्र अच् सन्धि से सम्बद्ध हैं। यद्यपि इस व्याकरण में अच्सन्धि प्रकरण पृथक नहीं दिया है, परन्तु ''सन्धिवृत्ति'' द्वितीय पाद के सभी सूत्र अच् सन्धि से सम्बद्ध हैं। तृतीय पाद के चारों सूत्र प्रकृतिभाव से सम्बन्धित है। चतुर्थपाद में ''वर्गप्रथमाः पदान्ता स्वरघोषवत्सु तृतीयान्''[3] सूत्र से लेकर ''वर्गे तवर्ग पञ्चमं वा''[4] सूत्र तक 16 सूत्र हल्सन्धि से सम्बद्ध हैं यद्यपि हल्वृत्ति का अलग नामाकरण नहीं है।

कातन्त्रव्याकरण पञ्चमपाद में ''वियर्जनीयश्चे छे वा शम्''[5] सूत्र से लेकर ''द्विर्भावं स्वरपरश्छकारः''[6] सूत्र तक 18 सूत्र विसर्ग सन्धि से सम्बद्ध हैं। इस व्याकरण की यह विशेषता हैं कि इतने कम सूत्रों द्वारा सन्धियों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा सूत्रार्थ भी सूत्र पढ़ते ही स्पष्ट हो जाता है।

इस व्याकरण में सन्धिवृति, नाम प्रकरण आदि प्रकरणों में सूत्रों का उल्लेख दिया है तथा नामकरण भी विषयानूसार किया गया है। जैसे :- सन्धिवृत्ति, नाम प्रकरण, कारक प्रकरण, समास पाद, तद्धित पाद आदि। इन प्रकरणों में उसी प्रकरण से सम्बद्ध सूत्र प्राप्त होते हैं। इसी विशेषता के कारण यह व्याकरण प्रक्रियामूलकपद्वित की विषेशता को प्राप्त हुआ है। अतः स्पष्ट होता है कि यह व्याकरण प्रक्रियामूलकपद्धति की प्रथम रचना है।

कातन्त्रकार ने पाणिनियव्याकरण की अपेक्षा लघुसूत्र रचना की है तथा इन्होने अनेक कार्य एक सूत्र से नहीं सुलझाये है जबकि सुविधार्थ प्रत्येक कार्य के लिए अलग सूत्र दिया। पाणिनि ने जिन कार्यो का एक ही सूत्र में उल्लेख किया है शर्ववर्मा ने उन कार्यो को पृथक पृथक सूत्रों में वर्णित किया है। जैसे पाणिनीय सूत्र ''आद गुणः''[7] में वर्णित कार्यो का कातन्त्रकार ने ''अवर्ण इवर्णे ए''[8] ''उवर्णे ओ''[9] ''ऋवर्णे अर्''[10] ''लृवर्णेऽल्''[11] इन चार सूत्रों द्वारा उलेख किया है। इस प्रकार इस व्याकरण से छात्रों को यह सुविधा हुई कि पाणिनीयव्याकरण के एक सूत्र में वर्णित कार्यो के लिए उन्हे कातन्त्रव्याकरण में पृथक-पृथक साधारण सूत्र प्राप्त हो गये जिन्हे स्मरण करना अतयन्त आसान है।

कातन्त्रव्याकरण की यह रचना अल्पमति छात्रों को पाणिनीयव्याकरण से सरल प्रतीत हुई क्योंकि पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों में अनेक कार्यो और कार्यक्षेत्रों का वर्णन लगभग एक ही सूत्र द्वारा दिया है। कातन्त्रव्याकरण में इसका अभाव है तथा सूत्रार्थ समझने की प्रक्रिया में भी अन्तर है क्योंकि पाणिनीयव्याकरण

---

1 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 24
2 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 41
3 कातं० व्या० सं० वृ० च० पा० - 46
4 कातं० व्या० सं० वृ० च० पा० - 61
5 कातं० व्या० सं० वृ० पं० पा० - 62
6 कातं० व्या० सं० वृ० पं० पा० - 79
7 अष्टा० 6-1-87
8 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 25
9 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 26
10 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 27
11 कातं० व्या० सं० वृ० द्वि० पा० - 28

के सूत्र, सूत्रवृत्ति द्वारा भी बड़ी कठिनाई से समझ आते हैं। इसकी अपेक्षा कातन्त्रव्याकरण के सूत्र, मात्र सूत्र अध्ययन से ही समझ आ जाते हैं।

कातन्त्रकार ने अपने व्याकरण को पाणिनीयव्याकरण की तुलना में सरल बनाने का प्रयत्न किया है। इन्होने सरल प्रक्रिया में व्याकरण रचा ताकि अल्पमति छात्र भी इनके व्याकरण को सरलता से जान सकें। जैसे ''वृक्षान्'' उदाहरण की सिद्धि के लिए कातन्त्रव्याकरण में ''धातुविभक्तिवर्ज्जमर्थवल्लिङ्गम्''[1] सूत्र से लिङ्ग. संज्ञा ''तस्मात् परा विभक्तय:''[2] सूत्र से वृक्ष लिङ्ग. से शस् विभक्ति होती है। ''शसि शस्य च न:''[3] सूत्र से लिङ्गात अकार को दीर्घादेश तथा विभक्ति शस् के सकार को नकारादेश होने पर ''वृक्षान्'' रूप सिद्ध होता है। परन्तु पाणियव्याकरण में ''वृक्षान्'' पद की रूपरचना के लिए एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। जैसे वृक्ष शब्द से प्रातिपदिक संज्ञा करने के बाद ''स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्''[4] सूत्र से शस् प्रत्यय अनुवन्ध लोप करने पर वृक्ष + अस् शेष रहता है। इस स्थिति में ''प्रथमयो:पूर्वस्वर्ण:''[5] सूत्र से पूर्व स्वर्ण दीर्घ होने पर ''तस्माच्छसोन: पुंसि''[6] सूत्र से शस् के सकार को नकारादेश होता है। पदान्त नकार को णकारादेश प्राप्त होने पर उसका ''पदान्तस्य''[7] सूत्र से निषेध करने पर वृक्षान् रूप सिद्ध होता है।

कातन्त्रव्याकरण में अकार को दीर्घ तथा सकार को नकारादेश केवल एक सूत्र कर देता है तथा इस सूत्र की रचना भी लघु है। पाणिनीयव्याकरण में दोनों कार्यो को 2 सूत्र करते हैं तथा दोनों सूत्रों की रचना लम्बी है। इन दोनों सूत्रों को समझने की प्रक्रिया भी लम्बी और कठिन है। कातन्त्रव्याकरण में ऐसा नहीं है अत: यह अल्पमति छात्रों को सरल प्रतीत हुआ।

अनेक स्थानों पर कातन्त्रकार ने पाणिनीयव्याकरण के अनेक सूत्रों को एक सूत्र में ही सरल प्रक्रिया द्वारा वर्णित कर दिया है। जैसे :- ''यस्मै दित्सा रोचते धारयते वा तत् सम्प्रदानम्''[8] कातन्त्रव्याकरण में मात्र इस सूत्र से सम्प्रदान संज्ञा होती है। इसकी अपेक्षा पाणिनीयव्याकरण में ''कर्मणा यमभिप्रेति स सम्प्रदानम्''[9] सूत्र से लेकर ''अनुप्रतिगृणश्च''[10] सूत्र तक 10 सूत्र सम्प्रदान संज्ञा का उल्लेख करते हैं। अत: स्पष्ट है कि कातन्त्रकार ने पाणिनीयव्याकरण के अनेक सूत्रों को एक सूत्र में ही सरल प्रक्रिया द्वारा वर्णित कर दिया है।

सभी विभक्तियों के लिए कातन्त्रकार ने विभक्तिविधायकसूत्र भी तीन ही दिये हैं। पाणिनीयव्याकरण में प्रत्येक विभक्ति के लिए ''प्रातिपदिकार्थ लिङ्ग. परिमाणवचनमात्रे प्रथमा''[11] ''कर्मणि द्वितीया''[12] आदि 7 प्रमुख सूत्र दिये हैं। इनके उपरान्त ''अतथितं च''[13] ''येनाङ्गविकार:''[14] आदि उपपद विभक्ति

---

1 कातं0 व्या0 ना0 प्र0 पा0 - 1
2 कातं0 व्या0 ना0 प्र0 पा0 - 2
3 कातं0 व्या0 ना0 प्र0 पा0 - 16
4 अष्टा0 4-1-2
5 अष्टा0 6-1-102
6 अष्टा0 6-1-103
7 अष्टा0 8-4-37
8 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 216
9 अष्टा0 1-4-32
10 अष्टा0 1-4-41
11 अष्टा0 2-3-46
12 अष्टा0 2-3-2
13 अष्टा0 1-4-51
14 अष्टा0 2-3-20

विधायक अन्य सूत्र भी हैं। उपपद विभक्तिविधायकसूत्र कातन्त्रव्याकरण में भी है परन्तु वे पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा कम है। कातन्त्रकार ने पाणिनीयव्याकरण के प्रमुख 7 विभक्तिविधायक सूत्रों को ''प्रथमाविभक्ति लिङ्ग.र्थवचने''[1] ''आमन्त्रिते''[2] ''शेषा: कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु''[3] इन तीन सूत्रों में ही वर्णित कर दिया है।

इनके उपरान्त ''पर्यपाङ्योगे पञ्चमी''[4] ''दिगितरर्तेऽन्यैश्च''[5] आदि उपपद विभक्तिविधायकसूत्र भी हैं परन्तु वे पाणिनीय अष्टाध्यायी की अपेक्षा बहुत कम हैं। क्योंकि कातन्त्रकार ने पाणिनि के अनेक सूत्रों का समावेश एक सूत्र में ही कर दिया है। इसी कारण इस व्याकरण में कम परिश्रम की आवश्यकता है। यही कारण है कि पाठकों ने इस व्याकरण को उस समय पसन्द किया था।

इसी तरह यदि कान्तत्रव्याकरण के समासप्रकरण को लिया जाए तो कातन्त्रकार ने 28 प्रमुख सूत्रों कि रचना द्वारा ही समासप्रकरण को पूर्ण कर दिया है। जबकि पाणिनीयव्याकरण में इसकी अपेक्षा अधिक सूत्रों द्वारा समास सम्बन्धित कार्यो का उल्लेख होता है। इस की विशषेता यह है कि इस व्याकरण में पाणिनीयव्याकरण के अनेक सूत्रों का एक सूत्र में समावेश कर दिया है वह भी सरल प्रक्रिया में। अत: पाठकों को पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा कातन्त्रव्याकरण में अनेक सूत्रों के स्थान पर एक ही सूत्र स्मरण करना पड़ता है।

कातन्त्रव्याकरण के सभी प्रकरण कम सूत्रों द्वारा अधिक कार्यो का उल्लेख करते हैं इस कारण इस व्याकरण को पढ़ने से परिश्रम कम और लाभ अधिक है। इसी कारण तात्कालिक अल्पमति पाठकों ने सूत्रक्रम को छोड़कर कातन्त्रव्याकरण की प्रक्रियमूलक रचना का अध्ययन शुरू कर दिया।

कातन्त्रव्याकरण की उत्पत्ति से पाणिनीयव्याकरण पर यह प्रभाव पड़ा कि पाठकों ने सूत्रमूलकपद्धति को छोड़कर प्रक्रियामूलकपद्धति से व्याकरण अध्ययन में रूचि ली। इससे सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। समयानुसार किसी भी कार्य में या कार्यप्रणाली में परिवर्तन आता रहता है। इसी तरह किसी भी रचना की पद्धति में परिवर्तन भी लोकप्रसिद्ध है क्योंकि उस रचना में समयानुसार परिवर्तन की आवश्यकता होती है। लेखक पुरानी रचना में त्रुटि देखकर उसकी पूर्ति का प्रयत्न करता है।

जब व्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धित की उत्त्पति हो गयी तो उसमें विकास भी स्वभािविक था। अत: प्रक्रियामूलकपद्धित में कातन्त्रव्याकरण के बाद अनेक व्याकरण रचे गये जिनमें चान्द्रव्याकरण का दूसरा स्थान है। सर्ववर्मा के उपरान्त आचार्य चान्द्रगोमी ने इस पद्धित में अन्य व्याकरण रचा यह

1 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 123
2 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 124
3 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 125
4 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 126
5 कातं0 व्या0 का0 प्र0 - 127

चान्द्रव्याकरण के नाम से प्रसिद्ध है। इस व्याकरण की यह प्रसिद्धता है, कि यह व्याकरण पाणिनीय अष्टाध्यायी का अनुकरण भी करता है तथा प्रक्रियमूलकपद्धित का अनुकरण भी करता है। इस व्याकरण को पढ़ने से ज्ञात होता है, कि आचार्य चन्द्रगोस्वामी ने इस व्याकरण को रचने में पाणिनीय अष्टाध्यायी और महाभाष्य से भी सहायता ली है।

कातन्त्रव्याकरण के समान इस व्याकरण में भी सन्धिवृत्ति, नामप्रकरण आदि प्रकरणों के सूत्र एक क्रम से प्राप्त होते हैं। यद्यपि इस व्याकरण में अनेक स्थानों पर पाणिनीयव्याकरण के समान इट्, नुमादि करने वाले सूत्र भी सूत्रक्रम में प्राप्त होते हैं[1], फिर भी इस व्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धित को महत्त्व दिया गया है। इस व्याकरण में प्रकरणें का नामकरण नहीं किया है परन्तु सूत्र प्रक्रियानुसारी क्रम में दिये हैं। इस व्याकरण की उत्पत्ति से भी सूत्रमूलकपद्धति पर प्रभाव पड़ा क्योंकि अल्पमति पाठक सूत्रमूलकपद्धति को छोड़कर प्रक्रियामूलक व्याकरणों का अध्यायन करने लगे। चान्द्रव्याकरण की उत्पत्ति से प्रक्रियामूलकपद्धित में विकास का क्रम शुरू हो गया इस तरह यह व्याकरण भी प्रक्रियमूलकपद्धित की उत्पत्ति में सहायक सिद्ध होता है। व्याकरणपरम्परा में चान्द्रव्याकरण के उपरान्त अनेक अर्वाचीन व्याकरण रचे जो प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्पत्ति में सहायक सिद्ध होते हैं। ये सभी व्याकरण क्रम से एक दूसरे में शैलीगतत्रुटि, सूत्रगतत्रुटि, सूत्रक्रमगतत्रुटि, प्रकरणगतत्रुटि, आदि अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने पर अनेक विद्वानों ने रचे हैं ये व्याकरण लगभग 20 - 25 हैं जिनमें निम्न व्याकरण उपयोगी हैं। जिनका प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्तत्ति और विकास में अधिक प्रभाव रहा हैं इन व्याकरणों मे कातन्त्रव्याकरण और चान्द्रव्याकरण का उल्लेख पूर्व आ गया है। इन के उपरान्त अन्य व्याकरण ये है: -

	व्याकरण का नाम		लेखक
1.	(अज्ञात संज्ञक) व्याकरण	-	क्षपणक
2.	जैनेन्द्र व्याकरण	-	देवनन्दी
3.	विश्रान्तविद्याधर	-	वामन
4.	जैन शाकटायन व्याकरण	-	पाल्यकीर्ति
5.	(अज्ञात संज्ञक) व्याकरण	-	शिवस्वामी
6.	सरस्वतीकष्ठाभरण	-	महाराजभोज
7.	बुद्धिसागर (पञ्चग्रन्थी)	-	बुद्धिसागर सूरि
8.	दीपक	-	भद्रेश्वर सूरि
9.	(अज्ञात संज्ञक) व्याकरण	-	वर्धमान

1 चान्द्रव्याकरण

10.	सिद्धहैमशब्दानुशासन	-	हेमचन्द्र सूरि
11.	शब्दानुशासन	-	मलयगिरि
12.	संक्षिप्तसार	-	क्रमदीश्वर
13.	सारस्वतव्याकरण	-	अज्ञात व्याकरणकार
14.	मुग्धबोध	-	वोपदेव
15.	सुपद्म	-	पद्मनाभदत्त
16.	भोजव्याकरण (अज्ञात व्याकरण)	-	विनयसागर सूरि
17.	कर्णाटक शब्दानुशासन	-	भट्टअकलङ्क

उपरलिखित सभी व्याकरण प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्पत्ति और विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं। अर्वाचीन व्याकरण भी पूर्व व्याकरण में शैलीगतत्रुटि, सूत्रगतत्रुटि, सूत्रक्रमगतत्रुटि, प्रकरणगतत्रुटि, आदि अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने पर, वैयाकरणों ने इन त्रुटियों को दूर करने के लिए, दूसरे व्याकरण की रचना की है। ये सभी व्याकरण प्रक्रियामूलकपद्धति में रचे गये हैं।

पाणिनीयेतर अर्वाचीन व्याकरण मात्र लौकिकसंस्कृत के शब्दों की मीमांसा ही करते हैं। एक दो व्याकरणों को छोड़कर ये सभी व्याकरण वैदिकप्रक्रिया से रहित हैं। इन व्याकरणों में अनेक व्याकरण लौकिकसंस्कृत के साथ प्राकृतभाषा के शब्दों की मीमांसा भी करते हैं। ये सभी व्याकरण छात्रों को सरल प्रतीत हुए क्योंकि ये सभी व्याकरण प्रकरणों में रचे गये हैं। इन व्याकरणों के एक प्रकरण को पढ़ने से ही सरलता से कम समय मे उस प्रकरण का ज्ञान हो जाता है। दूसरा इन व्याकरणों में वैदिकप्रक्रिया को छोड़ दिया है क्योंकि इन व्याकरणों को रचने वाले वैयाकरण लगभग बौद्ध या जैन आचार्य थे। इन्होने वैदिकप्रक्रिया की परवाह नहीं की है। इन्हे जिन शब्दों की आवश्यकता थी उनके लिए इन्होने सूत्र रचे हैं। समयानूसार उस समय लौकिकशब्दों की ही आवश्यकता थी क्योंकि उस समय वैदिकशब्दों की उपयुक्तता कम हो गयी थी। अत: सूत्रमूलकव्याकरण को छोड़कर अल्पमति पाठक प्रक्रियामूलक व्याकरणों का अध्ययन अधिक करने लगे।

इन व्याकरणों की अपनी अपनी विशेषताएँ हैं, क्योंकि समयानुसार लोकप्रसिद्ध बनाने के लिए इनके लेखकों ने अपने व्याकरण को विशेष रूप दिया है। प्राचीनकाल से ही शास्त्रों को उत्तरोत्तर संक्षिप्त रूप दिया गया हैं इसलिए ही ये अर्वाचीन व्याकरण लघुकाय हैं। इनमें से कुछ वैयाकरणों ने व्याकरण के मुख्य भाग संज्ञा और परिभाषा प्रकरण को मूल व्याकरण के साथ नहीं दिया है, इसे पृथक दिया है। कुछ वैयाकरणों ने व्याकरण के पांच अङ्गों को मूल व्याकरण के साथ ही दिया है पृथक नहीं दिया है। अनेक वैयाकरणों ने इन अङ्गों को पृथक दिया है।

अनेक वैयाकरणों ने प्रकरणों की संख्या में कमी या अधिकता स्वीकार की है इन्होंने प्रकरणों को विशेष क्रम से दिया है। अनेक वैयाकरणों ने अल्पाक्षर संज्ञायें दी है। कुछ व्याकरण संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओं का अन्वाख्यान करते हैं।

इन व्याकरणों में सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण इतना लोप्रसिद्ध था कि उस समय लकड़ी काटने वाला भी संस्कृत प्रेमी हो गया था।

उपर्युक्त ये सभी प्रक्रियमूलकव्याकरण एक दूसरे की अपेक्षा उक्त अनेक कारणों की प्रसिद्धता के कारण लोकप्रसिद्ध हो गये क्योंकि ये सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा सरल और लघुकाय हैं। इसी कारण ये व्याकरण कम परिश्रम से अधिक लाभदायक हैं।

अत: समयानुसार लोक में सूत्रमूलकपद्धति का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा और प्रक्रियामूलकपद्धति का अध्ययन और अध्यापन अधिक होने लगा। यद्यपि इन के द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन नहीं होता है फिर भी पाठकों ने सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं के कारण इसे अस्वीकार दिया और प्रक्रियामूलक इन व्याकरणों से अध्ययन और अध्यापन करने लगे।

4 पाणिनीयव्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन :–

व्याकरणपरम्परा में रूपावतार की उत्पत्ति तक एक मत से पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन सूत्रमूलकपद्धति से ही होता रहा, चाहे इस में अनेक समस्याओं के निवारण हेतु अनेक वार्तिकों, महाभाष्य, अष्टाध्यायी के वृत्तिग्रन्थों एवम् इन सब के व्याख्याग्रन्थों का प्रचलन आवश्यकतानुसार होता रहा, परन्तु कुछ समय तक सूत्रमूलकपद्धति में कोई परिवर्तन नहीं आया। समयानुसार इस पद्धति में अनेक समस्याओं का प्रादुर्भाव होता ही रहा क्योंकि भाषा परिवर्तन के कारण भाषा में अनेक नवीन शब्दों का प्रादुर्भाव होता रहा तथा छात्र विद्या अभ्यास कम करने लगे। अत: सूत्रमूलकपद्धति में अनेक अल्पमति छात्रों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा।

सूत्रमूलकपद्धति भी उदाहरण रूपरचना का ही वर्णन करती है परन्तु इस में इतनी भिन्नता है कि इस पद्धति में सूत्र रूपरचनाक्रम से नहीं हैं। रूपरचना के लिए उन सूत्रों को आवश्यकतानुसार विभिन्न अध्यायों से चुनकर संग्रह करना पड़ता है। अत: इस पद्धति से परिश्रम की आवश्यकता है। यही कारण है कि बिना परिश्रम के अनेक अल्पमति छात्रों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा तथा अनेक छात्रों को व्याकरण अध्ययन छोड़ने पर विवश होना पड़ा। इन समस्याओं के निवारण हेतु पाणिनीयपरम्परा के आचार्य तो सर्वप्रथम विचार नहीं कर सके परन्तु पाणिनीयेत्तर परम्परा में कातन्त्रव्याकरणकार शर्ववर्मा ने पाणिनीयव्याकरण में आयीं अनेक समस्याओं के निवारण हेतु सर्वप्रथम विचार किया। शर्ववर्मा ने पाणिनीयव्याकरण में इन समस्याओं का अध्ययन करके इन के निवारण हेतु प्रक्रियामूलक एक स्वतन्त्र व्याकरण की रचना की।

पाणिनीयपरम्परा के आचार्य भी पद्धति परिवर्तन आदि व्यवस्था कर सकते थे परन्तु वे पाणिनीयव्याकरण की महत्ता सूत्रमूलकपद्धति से बनाये रखना चाहते थे क्योंकि यह पद्धति वैज्ञानिक वर्णन करती है जो व्याकरण के वास्तविक ज्ञान के लिए उपयोगी है। प्रक्रियामूलकपद्धति तो एक काम चलाऊ व्यवस्था है जो व्याकरण का गहन ज्ञान नहीं दे सकती। यह जानकर पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों ने पद्धति परिवर्तन में या अन्य व्यवस्था में सर्वप्रथम विचार नहीं किया है। यद्यपि पाणिनीयपरम्परा में भी प्रक्रियामूलकपद्धति का अनुकरण हुआ है, परन्तु वह कुछ समय बाद आचार्यों को विवशता में करना पड़ा है। पाणिनीयेत्तरपरम्परा के आचार्यों ने यह पहल जरूर की है परन्तु वे पाणिनीयव्याकरण की महत्ता से परिपूर्ण नहीं थे। अत: उन्होंने तात्कालिक समस्यार्थ समयानुकूल पद्धति परिवर्तन करके स्वतन्त्र व्याकरण रचे, जिन में कातन्त्रव्याकरणकार शर्ववर्मा प्रथम है।

कातन्त्रव्याकरण पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा अति सरल है। यह व्याकरण सन्धि, नाम, समास आदि प्रकरणों के क्रम से प्रक्रियाक्रम में दिया गया है।[1] इस व्याकरण में परिश्रम कम और लाभ अधिक है क्योंकि इस में पाणिनि के अनेक सूत्रों का वर्णन एक सूत्र द्वारा ही कर दिया है तथा इसकी रचना भी सरल है जो आसानी से समझ आ जाती है। इस व्याकरण में समस्या कोई नहीं है क्योंकि इसे सन्धि, नाम, समास आदि प्रकरणों में रूपरचनाक्रम से दिया गया है जिस से पाठकों को किसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता है तथा इस में दिये गये उदाहरण भी समयानुकूल हैं। इंसी व्याकरण के साथ अनेक पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रचलन शुरू हो गया। ये व्याकरण संख्या में अधिक हैं परन्तु इन में से कातन्त्र, चान्द्र, जैनेन्द्र आदि 17 व्याकरण प्रसिद्ध हैं। ये सभी व्याकरण एक दूसरे की त्रुटियों के निवारण हेतु प्रक्रियाक्रम में रचे गये हैं। ये सभी व्याकरण लगभग बौद्ध, जैन, आदि आचार्यों द्वारा रचे गये हैं। अत: एक दो को छोड़कर इन में वैदिकवर्णन नहीं है। तत्काल वैदिकपदों का प्रचलन वैसे भी कम हो गया था। अत: पाठकों की पाणिनीयेत्तर परम्परा में रूचि बढ़ गयी।

पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से अध्ययन और अध्यापन सरल है क्योंकि पाणिनीयव्याकरण की विभिन्न समस्याओं के निवारण हेतु कातन्त्रकार ने कातन्त्रव्याकरण रचा, उस में अनेक त्रुटियां जानकर आचार्य चन्द्रगोमी ने जैनेन्द्रव्याकरण रचा, इस क्रम से पाणिनीयेत्तर व्याकरण रचे गये अर्थात इनमें लगातार शोध ही होता रहा जो पाठकों को फलदायक सिद्ध हुआ। इस कारण पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का पाणिनीयव्याकरण पर यह प्रभाव पड़ा कि पाठकों ने पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन छोड़कर पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कुछ समय न के बराबर हो गया। मात्र कुछ लोग ही इस व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन करने लगे अर्थात पाणिनीयव्याकरण लगभग लुप्त प्राय: ही हो गया। पाणिनीयव्याकरण यद्यपि कातन्त्र आदि व्याकरणों की अपेक्षा सर्वाङ्ग.पूर्ण है तथा इस द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है फिर भी इसे अनेक समस्याओं के कारण लगभग अध्ययन समाप्ति का समय देखना पड़ा।

- कातं0 व्या0

पाणिनीयपरम्परा के आचार्य इस व्याकरण की यह दूर्दशा देखकर चिन्ता में पड़ गये क्योंकि पाणिनीयव्याकरण से अध्ययन और अध्यापन में पाठकों का रुझान घट गया था। इस परम्परा के विद्वान सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन नहीं चाहते थे क्योंकि वे जानते थे कि पाणिनि जैसे विद्वान ने व्याकरण को लाभार्थ इस पद्धति में दिया है। उन्होंने इस पद्धति से ''एक पंथ दो काज'' वाली उक्ति को सार्थक किया है क्योंकि वे पूर्ण सूत्र जानकारी के साथ रूपरचना जानकारी चाहते थे। इसलिए ही पाणिनीयपरम्परा के आचार्य पद्धति परिवर्तन नहीं चाहते थे। यही कारण था कि पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो ने कातन्त्रव्याकरण से लेकर बुद्धिसागर(पञ्चग्रन्थी) व्याकरण तक पद्धति परिवर्तन नहीं करना चाहा। परन्तु पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का बढ़ता प्रभाव देखकर पाणिनीयपरम्परा में भी हलचल मच गयी। इन व्याकरणों में सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण बहुत लोक प्रसिद्ध था, इसके प्रभाव से लकड़हारे भी संस्कृत प्रेमी हो गये थे। इस व्याकरण की पाणिनीयपरम्परा में भी प्रशंसा की गयी है तथा प्रक्रियासर्वस्व में तो नारायण भट्ट ने सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण का दिल खोल कर वर्णन किया है।

जब पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया तो पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो ने भी पद्धति परिवर्तन का मन बना लिया क्योंकि वे पाणिनीयव्याकरण की रक्षा करना चाहते थे। यद्यपि वे जानते थे कि प्रक्रियामूलकपद्धति व्याकरण ज्ञान का सर्वोत्तम उपाय नहीं है परन्तु उनके सम्मुख पाणिनीयव्याकरण की रक्षा तक का समय आ गया था क्योंकि अनेक समस्याओं से घिरने के कारण इस का अध्ययन लगभग न के बराबर हो गया था। यदि वे सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन न करते तो आज पाणिनीयव्याकरण हमारे सम्मुख न होता। उन्हीं का प्रभाव है कि पाणिनीयव्याकरण में पद्धति परिवर्तन करने पर पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन और अध्यापन समाप्त हो गया तथा सम्प्रति सम्पूर्ण भारत में पाणिनीयव्याकरण का आवश्यकतानुसार सूत्रमूलक और प्रक्रियामूलकपद्धति से अध्ययन और अध्यापन होता है।

इन आचार्यो में आचार्य धर्मकीर्ति सर्वप्रथम है। इन्होंने जब यह जाना कि पाणिनीयव्याकरण की रक्षा के लिए सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन जरूरी है तो इन्होने पाणिनीयव्याकरण में समयानुरूप पद्धति परिवर्तन किया। आचार्य धर्मकीर्ति ने अष्टाध्यायी के सूत्रों को सन्धि, समास, तद्धित आदि प्रकरणों में विभक्त किया तथा उदाहरणों की रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर आवश्यकतानुसार इन्हें रूपरचनाक्रम से दिया है। आचार्य धर्मकीर्ति ने तात्कालिक उदाहरणों का चयन किया है तथा पाणिनीय सभी सूत्रों का वर्णन अनावश्यक समझा है।

आचार्य धर्मकीर्ति जैसे विद्वान की कृत्ति में अनेक विशेषताओं के कारण पाठकों की रूचि इस ओर बढ़ना स्वभाविक थी। इन की रचना का नाम ''रूपावतार'' है। पाणिनीयपरम्परा में प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्पत्ति के साथ रूपावतार का यह प्रभाव पड़ा कि अनेक पाठक पाणिनीयेत्तर व्याकरणों को छोड़कर पाणिनीयपरम्परा से अध्ययन शुरू करने लगे। पाणिनीयपरम्परा में भी पाणिनीयेत्तर परम्परा के समान अनेक प्रक्रियाग्रन्थ रचे गये। ये ग्रन्थ भी एक दूसरे की प्रतिस्पर्धा को प्रदर्शित करते हैं। अत: एक दूसरे से प्रभावशाली हैं। इन में भी पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के समान समयानुकूल वर्णन है। समयानुसार पाणिनीयपरम्परा

के इन प्रक्रियाग्रन्थों का प्रभाव बढ़ गया क्योंकि ये प्रक्रियाग्रन्थ सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ हैं। इन में सम्पूर्ण जानकारी है। पाठकों ने पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन छोड़ दिया क्योंकि ये एक तो विभिन्न लेखकों की भिन्न भिन्न कृत्तियां हैं तथा सम्पूर्णता के अभाव में मात्र अधुरा वर्णन करते हैं। इसलिए पाठकों ने इन व्याकरणों को छोड़कर पाणिनीयपरम्परा के प्रक्रियाग्रन्थों से अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियामूलक विवेचन की पूर्ण जानकारी के लिए पाणिनीयपरम्परा के प्रक्रियाग्रन्थों में प्राप्त प्रक्रिया विकास का क्रमपूर्वक विवरण जरूरी है जो क-''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण'' तथा ख-''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी परवर्ती प्रक्रिया विवरण'' आदि दो विषयों में किया जा सकता है। क्रमानुसार सर्वप्रथम ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण'' विषय की जानकारी जरूरी है जो इस प्रकार है :-

क. व्याकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण :-

इस विवरण में रूपावतार से लेकर वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तक रचित प्रक्रियाग्रन्थों का विभिन्न वर्णन आता है। व्याकरणपरम्परा में पाणिनीयव्याकरण की रक्षार्थ आचार्य धर्मकीर्ति ने लगभग 1140 विक्रम सम्वत् के उपरान्त पाणिनीयव्याकरण को प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पादित कर सर्वप्रथम ''रूपावतार'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा। पाणिनीयव्याकरण में इस पद्धति की उत्पत्ति से यह प्रभाव पड़ा कि पाठकों का रूझान पाणिनीयव्याकरण की ओर बढ़ने लगा। यह प्रक्रियाग्रन्थ इस परिणाम हेतु ही रचा गया था कि अनेक अल्पमति छात्र पाणिनीयेत्तर व्याकरणों को छोड़कर पाणिनीयव्याकरण की ओर आकर्षित हों। इस प्रक्रियाग्रन्थ में वे सब सुविधाएँ उपलब्ध थी जो तत्काल पाठकों को चाहिएँ थीं। अत: पाठक आसानी से सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण का प्रक्रियाक्रम से अध्ययन करने लगे। इस से पाणिनीयव्याकरण की रक्षा निश्चित सी हो गयी। यह आचार्य धर्मकीर्ति की ही देन है कि आज पाणिनीयव्याकरण का सूत्रमूलकपद्धति और प्रक्रियामूलकपद्धति से उभयविध अध्ययन और अध्यापन हो रहा है। यदि तत्काल धर्मकीर्ति पाणिनीयव्याकरण को प्रक्रियाक्रम में न बदलते तो पाणिनीयव्याकरण पाणिनि से पूर्ववर्ती व्याकरणों के समान नाममात्र से जाना जाता। धर्मकीर्ति ने इसे प्रक्रियाक्रम में इसलिए सम्पादित किया कि यह व्याकरण पाणिनि से प्राचीन और अर्वाचीन व्याकरणों में सर्वाङ्ग.पूर्ण और उपयोगी है। अत: व्याकरणपरम्परा में इस व्याकरण की सत्ता किसी प्रकार जरूरी है।

रूपावतार के उपरान्त व्याकरणपरम्परा में कालक्रम से ''प्रक्रियारत्न'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ का स्थान आता है। इस के रचयिता व्याकरणपरम्परा में अज्ञात संज्ञक हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ का वर्णन भी प्राचीन व्याकरणों के समान यत्र-तत्र अनेक स्थानों पर उदाहरण रूप से उद्धृत है। स्वतन्त्र रूप से यह ग्रन्थ भी प्राप्त नहीं हो रहा है। इस का केवल प्रक्रियाग्रन्थ होना प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने क्या मालुम कितने पाणिनीय सूत्रों का किस प्रकार वर्णन किया है अर्थात् इस में कितने प्रकरण हैं ? प्रकरण विभाजन कैसा है, कैसे उदाहरण हैं ? यह ग्रन्थ विषयप्रधान है या प्रक्रियाप्रधान है यह नहीं कहा जा सकता, परन्तु इतना स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियाग्रन्थ से प्रसिद्ध है।

व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियारत्न के उपरान्त "रूपमाला" नामक प्रक्रियाग्रन्थ का स्थान है। इस के रचयिता विमलसरस्वती हैं। ग्रन्थकार ने पूर्व रचित रूपावतार, प्रक्रियारत्न आदि प्रक्रियाग्रन्थों में अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने पर पाणिनीय सूत्रों का रूपमाला में सन्धिमाला, समासमाला, तिङन्तमाला आदि प्रकरणों में वर्णन किया है। इस में रूपरचना में सहायक सम्बद्ध सूत्रों और वातिर्कों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इन्हें प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है। ये सूत्र सूत्रक्रम में रूपरचना दृष्टि से विभिन्न अध्यायों में विखरे हैं।

प्रक्रिया का इतना स्वरूप इस ग्रन्थ में प्राप्त नहीं है जितना स्वरूप इस ग्रन्थ से अर्वाचीन प्रक्रियाग्रन्थों में है। परन्तु ग्रन्थकार ने तत्काल वैसा वर्णन किया है जो उस समय की मांग थी। रूपमाला में लगभग उदाहरण रूपावतार से मिलते जुलते ही हैं। इतना जरूर है कि रूपमाला में रूपावतार से वर्णन रुचिकर है। इस ग्रन्थ का उपजीव्य रूपावतार ही है परन्तु रूपमाला में वर्णन सुन्दर और सरल है तथा रूपमाला रूपावतार की अपेक्षा संक्षिप्त है। संक्षिप्त और सरल वर्णन स्वभाविक भी है क्योंकि प्रक्रियाग्रन्थ भी एक दूसरे की अपेक्षा प्रभावशाली रचे गये हैं ताकि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के साथ पाणिनीयपरम्परा के पूर्व प्रक्रियाग्रन्थ से दूसरे प्रक्रियाग्रन्थ का प्रभाव पाठकों पर अधिक पड़े और पाठक पाणिनीयपरम्परा से अध्ययन में रूचि रखें । क्योंकि तत्काल पाणिनीयपरम्परा के प्रक्रियाग्रन्थों के समान पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का रचनाक्रम भी प्रचलित था।

व्याकरणपरम्परा में रूपमाला के उपरान्त प्रक्रियापद्धति में प्रक्रियाकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना हुई है। रूपमाला और प्रक्रियाकौमुदी में प्रक्रिया दृष्टि से बहुत अन्तर है। रूपमाला के उपरान्त व्याकरणपरम्परा में कुछ ऐसे पाणिनीयेत्तर व्याकरणों की रचना हुई जो विषयप्रधान की अपेक्षा प्रक्रियाप्रधान थे। अत: पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो को भी समयानुकूल पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से बढ़कर प्रक्रियाग्रन्थ की रचना जरुरी थी। यह जानकर रामचन्द्राचार्य ने पाणिनीयव्याकरण पर प्रक्रियाप्रधान प्रक्रियाकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा। इस प्रक्रियाग्रन्थ में सन्धि, षड्लिङ्ग., समास, कारक आदि प्रकरणों में पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से उदाहरण लगभग भिन्न है। शेष प्रकरणों के उदाहरण मिलते-जुलते हैं। रामचन्द्र ने पाणिनीय सूत्रों द्वारा तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त पदों का वर्णन किया है। रूपमाला के उपरान्त भाषा में प्रयुक्त पदों का वर्णन होता तो पाणिनीय सूत्रों द्वारा ही था परन्तु इस में परिश्रम की आवश्यकता थी। इस की अपेक्षा पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में इन पदों के लिए माल तैयार था। अत: पाठकों का ध्यान पाणिनीयेत्तर व्याकरणों की ओर बढ़ना स्वभाविक था।

रामचन्द्र ने पाठकों की भावनानुकूल प्रक्रियाकौमुदी की रचना की है। एक तो इस में तात्कालिक पदों का वर्णन किया है तथा उदाहरणों की रूपरचना पूर्णप्रक्रिया के साथ प्रदर्शित की है क्योंकि तत्काल पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में पूर्णप्रक्रिया का स्वरूप झलक रहा था जो पाठकों को प्रभावित कर रहा था। अत: रामचन्द्राचार्य ने पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों और पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से बढ़कर प्रक्रिया का स्वरूप प्रक्रियाकौमुदी में प्रदर्शित किया ताकि पाठकों की रूचि पाणिनीयव्याकरण की तरफ बढ़े। प्रक्रियाकौमुदी में प्रकरणों का

विभाजन आधुनिक है। रामचन्द्र ने रूपावतार आदि पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में यह जाना कि इनमें विशेष विषयवार प्रकरण विभाजन और वर्णनक्रम नहीं है। अत: इन्होंने सुबन्त और तिङन्त पदों को दो भागों में विभक्त करके सर्वप्रथम सुबन्त पदों की जानकारी के लिए प्रकरणों का कलात्मकविशिष्टता से वर्णन किया है तदुपरान्त तिङन्त पदों की जानकारी के लिए कलात्मकविशिष्ट प्रकरणों में जानकारी दी है। रामचन्द्राचार्य ने प्रक्रियाकौमुदी में वैदिक पदों का वर्णन भी किया है। प्रक्रियाकौमुदी की यह विशेषता है कि इस में उदाहरणों की पूर्ण रूपरचना जानकारी है। ग्रन्थकार ने रूपरचना के लिए जिस सूत्र की आवश्यकता समझी है उसे तत्काल वहीं उद्धृत किया है। चाहे पूर्ण जानकारी के साथ उस सूत्र को ग्रन्थ में दूसरी जगह दिया है परन्तु रूपरचनार्थ उसे अनेक स्थानों पर सूत्र या सूत्रार्थ रूप में पुन: उद्धृत किया है ताकि पाठक उस सूत्र को तत्काल उसी स्थान पर प्राप्त कर सकें। यही प्रक्रिया का पूर्ण स्वरूप होता है।

रामचन्द्र से अर्वाचीन भट्टोजिदीक्षित आदि प्रक्रियाग्रन्थकारों ने प्रकरण विभाजन में इन्हीं का अनुकरण किया है, केवल नारायण भट्ट का प्रकरण विभाजन भिन्न है। यद्यपि प्रक्रियासर्वस्व का उपजीव्य प्रक्रियाकौमुदी ही है परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में प्रकरण विभाजन प्रक्रियाककौमुदी से बहुत भिन्न है। इसकी अपेक्षा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा सारसिद्धान्तकौमुदी में प्रकरण विभाजन प्रक्रियाकौमुदी से मिलता-जुलता ही है। वैसे भी रामचन्द्र का प्रकरण विभाजन सराहनीय है इसलिए ही अर्वाचीन ग्रन्थकारों ने इस का अनुकरण किया है क्योंकि रामचन्द्र ने बड़ी कुशलता से आधुनिक जानकारी के साथ प्रकरणों को पूर्ण किया है। अत: अर्वाचीन ग्रन्थकारों द्वारा इनका अनुकरण करना स्वभाविक ही था। यदि प्रकरणों में कहीं मामुली परिवर्तन किया है तो वह जरूरी था क्योंकि साक्षात रूप में वर्णन करना नकल मानी जाती है। अत: अवार्चीन प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस से बचने के लिए अनेक स्थानों पर आधुनिक वर्णन करके अपनी निपुणता को प्रकट किया है।

इस से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थ भी प्रक्रियामूलकपद्धति के प्रदर्शक हैं परन्तु इन में पूर्णप्रक्रिया का स्वरूप नहीं है। प्रक्रियाकौमुदी में पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से वर्णन भी अधिक है चाहे उसे सूत्रों की दृष्टि से देखा जाये चाहे इसे उदाहरणों की दृष्टि से देखा जाये।

व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियाकौमुदी के उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति के शिरोमणि ग्रन्थ ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' की रचना हुई है। यह प्रक्रियाग्रन्थ अपनी अनेक विशेषताओं के कारण पाठकों की हर इच्छा की पूर्ति करता है तथा प्रक्रियामूलकपद्धति में उत्पन्न अनेक शंकाओं के साथ पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में प्राप्त विशेषताओं के समाधान की क्षमता भी रखता है। इस प्रक्रियाग्रन्थ को ग्रन्थकार ने इसलिए ही रचा है कि यह ग्रन्थ व्याकरणपरम्परा में पाणिनीय प्रक्रियाग्रन्थों तथा पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में अपना स्थान स्थापित करके पाणिनीयेत्तर व्याकरणों की अपूर्णता प्रकट करके पाणिनीयव्याकरण की पूर्णता का अभास कराये। इस प्रक्रियाग्रन्थ की उत्पत्ति से ऐसा ही हुआ है।

व्याकरणपरम्परा में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त पाणिनीयेत्तरपरम्परा में अनेक व्याकरणों की रचना हुई है परन्तु वे इस ग्रन्थ की विशेषताओं की क्षमता पूर्ति करने में असमर्थ रहे। इस ग्रन्थ से

पूर्व और इस से पर रचित पाणिनीयेत्तर व्याकरणों को परास्त करने की क्षमता पाणिनीय प्रक्रियाग्रन्थों में मात्र वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी रखता है। इस ग्रन्थ की उत्पत्ति से ही पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से पाठकों का ध्यान हट गया क्योंकि इस में पाणिनीयव्याकरण की विशेषताओं का अवलोकन करके वे पाणिनीयव्याकरण की उपयोगिता को समझ सके हैं। भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी को ऐसे वर्णनक्रम से रचा है कि पाठक पाणिनीयव्याकरण की उपयोगिता को समझ सकें।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पूर्ववर्ती प्रक्रियाग्रन्थों में विषयवार विभाजन, सरल सूत्रार्थ, समयानुकूल उदाहरण तथ पूर्णप्रक्रिया में उदाहरण जानकारी करवाना आदि अनेक विशेषताओं के कारण प्रक्रियाकौमुदी की बहुत प्रसिद्धि थी। परन्तु कुछ समय बाद पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से भट्टोजिदीक्षित ने पाया कि पाठकों को प्रक्रियाकौमुदी से सूत्रार्थ जानकारी में भी कठिनाई प्रतीत हो रही है तथा विषयवार विभाजन एवम् वर्णनक्रम में भी कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है, तदुपरान्त प्रक्रियाकौमुदी में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के वर्णन से जो पाठकों पर प्रभाव पड़ रहा था उस अग्राह्यपरम्परा का निवारण भी पाणिनीयपरम्परा में आवश्यक था। भट्टोजिदीक्षित नवीन उदाहरणों की जानकारी एवम् समयानुरूप प्रक्रियाकौमुदी से बढ़कर प्रक्रिया का स्वरूप चाहते थे ताकि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन और अध्यापन में नामशेष न रहे। यह सब कार्य वे सर्वाङ्ग.पूर्ण जानकारी से चाहते थे।

भट्टोजिदीक्षित ने जब यह जाना कि प्रक्रियाकौमुदी में अनेक त्रुटियाँ प्राप्त हैं, जो पाठकों की अनेक इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर सकतीं। अतः इन्होंने समयानुकूल पूर्ण प्रक्रिया का स्वरूप, प्रक्रियापद्धति का शिरोमणि ग्रन्थ वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी व्याकरण जगत को प्रस्तुत किया, जो पाठकों की अनेक कमियों को पूर्ण करता है। क्योंकि इस प्रक्रियाग्रन्थ में व्याकरण के त्रिमुनि आचार्यों के मतों का नवीन एवम् प्राचीन उदाहरणों की जानकारी के लिए सरल प्रक्रिया में वर्णन है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में पाणिनीयव्याकरण के समस्त सूत्रों और वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है। प्रक्रिया का स्वरूप इस ग्रन्थ में प्रक्रियाकौमुदी से बढ़कर है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में वह प्रक्रिया का स्वरूप है जो तत्काल की मांग थी। हर शंका का समाधान वहीं कर दिया है पाठकों की भटकन इस में नहीं है। यह प्रक्रियाग्रन्थ पूर्व तथा पर प्रक्रियाग्रन्थों से हर दृष्टि में बड़ा है। इस प्रक्रियाग्रन्थ से पाणिनीयव्याकरण के पांचों अङ्ग.ों का सरल प्रक्रिया में प्रयोग हुआ है। इनके उपरान्त पाणिनीयपरम्परा में अभिमत फिट्सूत्रों का वर्णन भी इस ग्रन्थ में प्राप्त है। इस प्रक्रियाग्रन्थ की इतनी विशेषता है कि इस में पाणिनीयेत्तर वर्णन के लिए अलग प्रकरण दिये हैं। प्रक्रियाकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व के समान इस में पाणिनीयेत्तर वर्णन पाणिनीय प्रसङ्ग. में नहीं है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में वैदिक और स्वरप्रक्रिया की पूर्ण जानकारी है। यह प्रक्रियाग्रन्थ सूत्रमूलक ग्रन्थों के समान अपने में पूर्ण है। पाठक स्वैच्छा अध्ययन कर सकता है जिस भी प्रकरण को चाहे इस प्रक्रियाग्रन्थ से साधारण प्रक्रिया द्वारा जान सकता है। इस प्रक्रियाग्रन्थ का उपजीव्य प्रक्रियाकौमुदी ही है तथा यह ग्रन्थ प्रक्रियाकौमुदी से मिलता-जुलता है, प्रकरणों में परिवर्तन एवम् प्रकरणों के नामकरण

विषयानुसार अलग भी हैं जो कि पाठकों की सुविधा में सहायक हैं। ऐसे उदाहरण भट्टोजिदीक्षित की प्रवीणता प्रदर्शित करते हुए साधारण रीति से प्रक्रिया ज्ञान की जानकारी भी प्रदर्शित करते हैं।

इस प्रक्रियाग्रन्थ में उहदारण, प्रकरण तथा पाणिनीय सूत्रों का उद्धृतक्रम प्रक्रियाकौमुदी से लगभग समान है। अन्तर सिर्फ इतना है कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रिया का स्वरूप अधिक झलकता है तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रियाकौमुदी की अपेक्षा उदाहरण और प्रकरण अधिक हैं। रामचन्द्राचार्य ने अनेक प्रकार का वर्णन अवाञ्छनीय समझा है। भट्टोजिदीक्षित ने वाञ्छनीय एवम् अवाञ्छनीय का विचार त्यागकर पूर्ण जानकारी का उदाहरण प्रस्तुत किया है। भट्टोजिदीक्षित ने यह जानकर वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की रचना की है कि इसमें कोई कमी न रहे जिसे विद्वान बाद में पूर्ण करें। सम्भवत: इस में कोई त्रुटि नहीं है जिस पर विद्वानों की दृष्टि टीक सके।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमदी की साधारण प्रक्रिया द्वारा उदाहरण जानकारी, सरल सूत्रार्थ, प्राचीन एवम् नवीन उदाहरणों का आधुनिक प्रकरणों द्वारा प्रायोगिक वर्णन करना आदि अनेक विशेषताएँ हैं जिन के कारण यह प्रक्रियाग्रन्थ समस्त प्रक्रियाग्रन्थों में शिरोमणि स्थान बनाये हुए है।

ख. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी परवर्ती प्रक्रिया विवरण :-

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थों में ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' के साथ-साथ ''प्रक्रियासर्वस्व'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना हुई है। फिर भी ग्रन्थप्रसिद्धि के कारण ''प्रक्रियासर्वस्व'' का स्थान वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त आता है। यद्यपि ये दोनों प्रक्रियाग्रन्थ सामकालिक हैं इसलिए एक काल में रचे गये समान ग्रन्थों में कुछ समानता होनी चाहिए क्योंकि ये एक समय की समस्याओं को पूरा करते हैं। परन्तु सामकालिक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी और प्रक्रियासर्वस्व एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। यद्यपि इन में समान समस्याओं के निवारण हेतु वर्णन है। दोनों प्रक्रियाग्रन्थों का उपजीव्य प्रक्रियाकौमुदी है तथा दोनों में प्रक्रियाकौमुदी का वर्णन प्राप्त है। भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के उपजीव्य प्रक्रियाकौमुदी तक का खण्डन कर दिया है परन्तु नारायण भट्ट, भट्टोजिदीक्षित की अपेक्षा विनम्र स्वभाव के थे। इन्होंने प्रक्रियाकौमुदी का आदर ही किया है। प्रक्रियासर्वस्व में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के समान सभी पाणिनीय सूत्रों का वर्णन है परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा उदाहरण जानकारी अधिक है। क्योंकि इस ग्रन्थ में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के कुछ उदाहरणों का भी वर्णन किया गया है। वैसे भी इस प्रक्रियाग्रन्थ में दूसरे प्रक्रिाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण संख्या अधिक है। नारायण भट्ट ने भी भट्टोजिदीक्षित के सम्मान इस प्रक्रियाग्रन्थ को प्रक्रियाग्रन्थों में शिरोमणि स्थान देने का प्रयास किया है। यह अलग बात है कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की विशेषताओं के समान विशेषताएँ यह व्याकरण जगत को प्रस्तुत नहीं कर सके फिर भी इन का प्रयास भट्टोजिदीक्षित के समान ही था।

नारायण भट्ट ने जब यह जाना कि प्रक्रियाकौमुदी के होते हुए भी पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रभाव बढ़ रहा है क्योंकि इन व्याकरणों में सरलसूत्ररचना, सरलसूत्रवृत्ति के साथ आधुनिक प्रकरणों में

समयानुकूल उदाहरणों की जानकारी पूर्णप्रक्रिया में प्राप्त है। यद्यपि प्रक्रियाकौमुदी में इन विशेषताओं की कमी नहीं थी परन्तु पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में इन विशेषताओं में अत्यधिक विकास हो रहा था जिस कारण पाणिनीयव्याकरण से पाठकों का ध्यान हट रहा था। कुछ काल तक पाणिनीयपरम्परा में प्रक्रियाकौमुदी की अत्यधिक प्रसिद्धि थी परन्तु बाद में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में पद्धति विकास ने इसे कम करना शुरू कर दिया था। यह जानकर पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो ने इन व्याकरणों के प्रभाव को जड़मूल से उखाड़ने का निर्णय लिया जिन में भट्टोजिदीक्षित और नारायण भट्ट एक हैं। इन्होंने एक ही काल में प्रक्रियाग्रन्थ रचे हैं जिन का एक दूसरे को बिल्कुल ज्ञान नहीं था। यह इस से सिद्ध होता है कि इनके ग्रन्थों में एक दूसरे का मामुली वर्णन भी प्राप्त नहीं होता है। ये दोनों एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। भट्टोजिदीक्षित तथा नारायण भट्ट द्वारा अपरोक्ष रूप से पाणिनीयेत्तर व्याकरणों को ध्वस्त करने का अपना-अपना प्रयास था। इन में भट्टोजिदीक्षित को अत्यन्त सिद्धि मिली है परन्तु समयानुकूल नारायण भट्ट का प्रयास कोई कम नहीं है।

''प्रक्रियासर्वस्व'' का अर्थ है प्रक्रिया में सर्वस्व। नारायण भट्ट द्वारा रचित ''प्रक्रियासर्वस्व'' के नामकरण से यही ज्ञात होता है कि इन का लक्ष्य भी प्रक्रियापद्धति में शिरोमणि प्रक्रियाग्रन्थ प्रस्तुत करना था। प्रक्रियासर्वस्व में सरलसूत्रार्थ, आधुनिक एवम् प्राचीन उदाहरणों का आधुनिक प्रकरणों द्वारा सरल वर्णन से बोध करवाना, पाणिनीयपरम्परा के साथ पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का बोध करवाना आदि विशेषताएँ भी यही सिद्ध करती हैं कि इनका लक्ष्य प्रक्रियासर्वस्व को प्रक्रियापद्धति में सर्वोच्च स्थान पर स्थापित करना था।

नारायण भट्ट ने जब यह जाना कि पाणिनीयव्याकरण की प्रक्रियाकौमुदी के होते हुए भी पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से यह दशा हो रही है तो इन्होंने विशेष क्रम में ''प्रक्रियासर्वस्व'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की। ग्रन्थकार ने ग्रन्थ रचने में जो लक्ष्य रखा था वह ग्रन्थ रचना से ग्रन्थकार प्राप्त नहीं कर सके। एक तो इस ग्रन्थ में विषयवार विभाजन दूसरे प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न है तथा इस ग्रन्थ में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का खुलकर उल्लेख किया गया है। नारायण भट्ट ने इस ग्रन्थ में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से प्रभावित होकर सन्धि, षड्लिङ्ग; कारक, स्त्रीप्रत्यय आदि प्रकरणों का पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न विषयवार विभाजन द्वारा अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों से भिन्न वर्णन किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में सन्धि जानकारी के उपरान्त कृदन्त जानकारी है, कृदन्तों के उपरान्त तद्धितों का वर्णन है, तद्धित जानकारी के उपरान्त समास जानकारी है। समास के उपरान्त स्त्रीप्रत्यायों का वर्णन है।

स्त्रीप्रत्यायों के उपरान्त विभक्त्यर्थो पर विचार है, विभक्त्यर्थ के उपरान्त षड्लिङ्ग. जानकारी है। इस तरह सुबन्तों का वर्णन समाप्त करके इस ग्रन्थ में तिङन्त पदों का वर्णन शुरू किया गया है, इसमें सर्वप्रथम आत्मनेपद और परस्मैपद जानकारी है। वैसे भी यह वर्णन शेष तिङन्त पदों से पूर्व होना चाहिए। इस वर्णन के उपरान्त विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के बाद लकारार्थो का उल्लेख है, तदुपरान्त विभिन्न प्रक्रिया जानकारी के लिए सनन्त, यङ्, यङ्लुक्, सुप्धातु आदि प्रकरणों का वर्णन है। इसके

उपरान्त परिभाषा, धातुपाठ तथा उणादि पर विचार किया गया है। ग्रन्थ के अन्त में वैदिकपदों की जानकारी के लिए छान्दस खण्ड है।

प्रक्रियासर्वस्व विषयानुक्रमणी की शेष प्रक्रियाग्रन्थों से तुलना की जाये तो बहुत अन्तर सामने आता है। सन्धियों में नारायण भट्ट ने अच्सन्धि से पूर्व तुक् तथा सुट्सन्धि भाग अलग दिया है। इन्होंने सन्धियों को सात भागों में विभक्त किया है जो शेष प्रक्रियाग्रन्थों से बिल्कुल भिन्न है। कृदन्त पदों का वर्णन अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में तिङत पदों की जानकारी के उपरान्त दिया है परन्तु नारायण भट्ट ने इसे सन्धिप्रकरण के उपरान्त दिया है। यह ठीक है कि कृदन्तों का अधिक सम्बन्ध सुबन्तपदों से है फिर भी कृदन्त पद विभिन्न धातुओं से प्रत्यय करने पर सिद्ध किये जाते हैं। अत: शेष प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को क्रिया रूपों की जानकारी के उपरान्त दिया है।

नारायण भट्ट ने षड्लिङ्ग. जानकारी के लिए सुबन्तपदों की जानकारी में अन्तिम प्रकरण ''सुब्विधि खण्ड'' दिया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में इसे सन्धिप्रकरण के एक दम बाद दिया है। वैसे भी षड्लिङ्ग. जानकारी शेष सुबन्तपदों से पूर्व होनी चाहिए, क्योंकि इस जानकारी में विभिन्न प्रातिपादिकों से विभिन्न सुप् प्रत्ययों के विधान का वर्णन होता है। शेष विभकत्यर्थ, स्त्रीप्रत्यय, समास, तद्धित, कृदन्त आदि में इसी विधान से सुबन्त पद निर्मित होते हैं। अत: यह प्रकरण सर्वप्रथम होना चाहिए। तिङत पदों का वर्णन शेष प्रक्रियाग्रन्थों से प्रक्रियासर्वस्व में रूचिकर है क्योंकि इस में आत्मनेपद, परस्मैपद आदि जानकारी के उपरान्त विभिन्न क्रियापदों का वर्णन है।

नारायण भट्ट ने इस तरह विषयवार प्रकरणों में नवीन एवम् प्राचीन उदाहरणों की जानकारी इसलिए सरलसूत्रवृत्ति और सरलप्रक्रिया में दी थी कि प्रक्रियाकौमुदी से पाठकों का निवृत्त ध्यान प्रक्रियासर्वस्व जानकारी से पाणिनीयव्याकरण की तरफ आकर्षित होता, जिस कारण प्रक्रियासर्वस्व रचना से पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रभाव एक दम खत्म हो जाता। सम्भवत: ऐसा ही होता यदि इस के समकाल ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ न रचा होता। यदि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियाग्रन्थ न रचता तो सम्भवत: जो स्थान इस समय वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का है उसे प्रक्रियासर्वस्व लेता जिस कारण नारायण भट्ट का लक्ष्य पूर्ण होता। परन्तु ऐसा नहीं हुआ तत्काल वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियाग्रन्थ रचा जिस में प्रक्रियाकौमुदी का अनुकरण किया गया है। प्रक्रियाकौमुदी के विषयवार प्रकरण विभाजन की विद्वानों द्वारा अत्याधिक प्रसंशा की जाती है। इतना जरूर है कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के होते हुए इस का अध्ययन और अध्यापन नहीं है क्योंकि दोनों ग्रन्थों में वर्णन अपना-अपना है। इनमें भट्टोजिदीक्षित का वर्णन श्रेष्ठ है जिस कारण वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी सम्प्रति अध्ययन और अध्यापन में प्रचलित है। यद्यपि विषयवार विभाजन और वर्णनक्रम में भट्टोजिदीक्षित ने लगभग प्रक्रियाकौमुदी का ही अनुकरण किया है। अत: सिद्ध होता है कि प्रक्रियाकौमुदी और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में इतना ही अन्तर है कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रियाकौमुदी की अपेक्षा हर तरह का विकास हुआ है जिस कारण

यह ग्रन्थ प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है। परन्तु यदि गहरायी से देखा जाये तो वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का यह विकास प्रक्रियाकौमुदी पर आश्रित है।

नारायण भट्ट ने इस के विपरीत प्रक्रियाकौमुदी के विषयवार प्रकरण विभाजन और वर्णनक्रम को छोड़कर अन्य ही प्रकार के प्रकरण विभाजन और वर्णनक्रम से प्रक्रियासर्वस्व को पूर्ण किया। जो रुचिकर की अपेक्षा अरूचिकर सिद्ध हुआ। प्रक्रियासर्वस्व में पाणिनीयेत्तरपरम्परा से भिन्न ''चान्द्रव्याकरण'' ''सरस्वतीकण्ठाभरण'' तथा ''मुग्धबोध'' आदि व्याकरणों के मतों का भी उल्लेख है। यह सब उल्लेख पाणिनीयव्याकरण द्वारा सिद्ध है परन्तु ग्रन्थकार ने इस उल्लेख को सरलता हेतु पाणिनीयपरम्परा के उल्लेख में मिश्रित कर दिया है जिस कारण पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों ने तो इसे सर्वथा अग्राह्य समझा परन्तु पाणिनीयेत्तरपरम्परा में भी इसे अग्राह्य माना गया क्योंकि इस में पाणिनीय वर्णन अधिक है जिससे वे दूर रहना चाहते थे। इसलिए प्रक्रियासर्वस्व का अधिक प्रचार नहीं हो सका। सम्भवत: होता भी यदि इस प्रक्रियाग्रन्थ को प्रचार हेतु कुछ समय मिलता। परन्तु ठीक इसी समय पाणिनीयपरम्परा में प्रक्रियाग्रन्थों के शिरोमणि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की रचना भी हुई जिस कारण अध्यापकों और पाठकों का ध्यान उस ओर लगना स्वभाविक था क्योंकि इस प्रक्रियाग्रन्थ में चुम्बकीय शक्ति है जो अध्यापकों और पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। अत: प्रक्रियासर्वस्व प्रक्रियाग्रन्थ वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के आगे पनप ही नहीं सका केवल नाममात्र से ही जाना जाता है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के आगे प्रक्रियासर्वस्व का पनपना असम्भव था, क्योंकि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त विषयवार विभाजन, सरलसूत्रवृत्ति, समयानुकूल उदाहरणों की पूर्ण प्रक्रिया से जानकारी करवाना आदि में जो विकास हुआ वह अपने आप में परिपूर्ण था जिस के आगे सब प्रक्रियाग्रन्थों तथा पाणिनीयेत्तर व्याकरणों को झुकना पड़ा। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की उत्पत्ति से व्याकरण में आयी अनेक प्रकार की उथल-पुथल समाप्त हो गयी। इस ग्रन्थ के उपरान्त एक मत से केवल मात्र पाणिनीयपरम्परा से ही व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन होने लगा। इस कारण प्रक्रियासर्वस्व भी व्याकरणपरम्परा में अपना कोई विशेष स्थान नहीं बना सका। यद्यपि प्रक्रियासर्वस्व में भी सरलसूत्रवृत्ति, प्राचीन और नवीन उदाहरणों का उपयोग तथा पूर्ण एवम् सरल प्रक्रिया में उदाहरण जानकारी है। परन्तु इस में विषयवार विभाजन में अनेक त्रुटियों तथा पाणिनीयेत्तर उल्लेख के कारण यह प्रसिद्धि को प्राप्त नहीं हो सका। यद्यपि इस में पाणिनीयव्याकरण के समस्त सूत्रों की जानकारी है परन्तु पाणिनीय पञ्चाङ्गी व्याकरण की सम्पूर्ण जानकारी नहीं है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में यह सब जानकारी है। प्रक्रियासर्वस्व में सब प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण अधिक है परन्तु प्रक्रिया जानकारी में वह विकास नहीं जो वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व के लगभग 25-30 वर्ष बाद मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी और सारसिद्धान्तकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थों की रचना हुई है। प्रक्रियासर्वस्व के उपरान्त रचित प्रक्रियाग्रन्थों में किसी ने भी प्रक्रियासर्वस्व का अनुकरण नहीं है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी,

लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा सारसिद्धान्तकौमुदी आदि प्रक्रियाग्रन्थ वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के अनुयायी हैं। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के प्रभाव ने प्रक्रियासर्वस्व का वर्चस्व कायम नहीं रहने दिया। हो सकता है नारायण भट्ट क्रम बदलते या अन्य कोई उपाय करते यदि उन्हें वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का ज्ञान होता। परन्तु उन्हें इस प्रक्रियाग्रन्थ का ज्ञान ही प्रक्रियासर्वस्व रचने के बाद हुआ है तत्काल उपाय असंभव था।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी अपनी अनेक विशेषताओं के कारण पूर्व और पर प्रक्रियाग्रन्थों में प्रभावशाली है। वरदराज वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के प्रभाव से परिचित थे। इसलिए इन्होंने मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी और सारसिद्धान्तकौमुदी रचने में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अनुकरण किया है क्योंकि वे वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के दूरभावी परिणाम एवम् निर्देशन से परिचित थे।

पारिनीयपरम्परा में सम्प्रति व्याकरण ज्ञान के लिए प्रक्रियामूलकपद्धति में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी तीन प्रक्रियाग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। वरदराज ने अपने गुरु भट्टोजिदीक्षित की कृत्ति में सर्वप्रथम यह जाना कि अनेक अल्पमति छात्र इस ग्रन्थ की उपयोगिता न समझ कर पाणिनीयपरम्परा से पुनः अध्ययन छोड़ सकते हैं। भट्टोजिदीक्षित का लक्ष्य तो पाणिनीयपरम्परा के प्रक्रियाग्रन्थों और पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में पाणिनीयव्याकरण को शिरोमणि सिद्ध करना था इनकी रचना से हुआ भी ऐसा ही है। वरदराज भट्टोजिदीक्षित की भावना से परिचित थे। इन्होंने पाठकों की भावनानुरुप तीन प्रकार से व्याकरण ज्ञान की व्यवस्था की है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी की रचना से वरदराज ने व्याकरण की पूर्ण जानकारी के लिए वैयाकरणसिद्धान्त कौमुदी का संकेत दिया है तथा पाणिनीयव्याकरण में प्रवेशार्थियों के लिए लघुसिद्धान्तकौमुदी का और लघुसिद्धान्तकौमुदी ज्ञान प्राप्त छात्रों की ज्ञानवृद्धि के लिए मध्यसिद्धान्तकौमुदी का वर्णन किया है। ताकि पाठक इस सोपान से चढ़कर वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का ज्ञान प्राप्त कर सकें। लघुसिद्धान्तकौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का बिल्कुल सारमात्र है तथा मध्यसिद्धान्तकौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी का सामान्य वर्णन करती है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी न तो वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का सार है और न ही पूर्ण जानकारी है अर्थात् मध्यवर्ती वर्णन है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी नामक दो प्रक्रियाग्रन्थों की रचना इसलिए की है कि अल्पमति छात्र वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की उपयोगिता तक पहुंच सके अर्थात् वे लघुसिद्धान्तकौमुदी आदि सोपान से चढ़कर पाणिनीयव्याकरण के अध्ययन में रूचि ले सकें। हुआ भी ऐसा ही, इन प्रक्रियाग्रन्थों की उत्पत्ति से पाठकों की पाणिनीयव्याकरण में रूचि बढ़ी जिस कारण पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन और अध्यापन लुप्त प्रायः हो गया। सम्प्रति सम्पूर्ण भारत में इसी ग्रन्थक्रम से प्रक्रियामूलकपद्धति का अध्ययन और अध्यापन होता है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी और लघुसिद्धान्तकौमुदी के साथ बालकों के सुखबोध के लिए सारसिद्धान्तकौमुदी की रचना भी की है। इस ग्रन्थ द्वारा ग्रन्थकार का लक्ष्य छोटी आयु के बालकों को साध ारण प्रक्रिया द्वारा व्याकरण ज्ञान प्राप्त करवाना है।

व्याकरणपरम्परा में सारसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति में उपयोगी प्रक्रियाग्रन्थ वेदाङ्ग.प्रकाश की रचना हुई है। इस ग्रन्थ के लेखक स्वामी दयानन्द सरस्वती है। इस ग्रन्थ में लौकिक और वैदिक उभयविध पदों की पूर्ण रूपरचना जानकारी दी है। इस प्रक्रियाग्रन्थ मे ग्रन्थकार ने समयानुकूल वर्णन किया है। इस में मात्र सूत्र एवम् वार्तिक ही मूलरूप में दिये है। शेषवर्णन हिन्दी में दिया है जो तात्कालिक पाठकों की मांग थी। ग्रन्थकार का लक्ष्य वेद और वैदिक संस्कृति में प्रयुक्त पदों की जानकारी था परन्तु व्याकरण की पूर्ण जानकारी के विना वेदों की समग्र जानकारी कठिन है। अत: इन्होंने वैदिक एवम् लौकिक उभयविध पदों की पूर्ण जानकारी का वर्णन किया है।

आधुनिककाल में ''प्रारम्भिकपाणिनीयम्'' (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी) एवम् ''पाणिनीयप्रबोध'' नामक उपयोगी प्रक्रियाग्रन्थ रचे गये हैं। इन प्रक्रियाग्रथों में आधुनिक पदों की मीमांसा की गयी है। इन प्रक्रियाग्रन्थों में सरलप्रक्रिया द्वारा समयानुरूप संक्षिप्त वर्णन किया गया है। इन प्रक्रियाग्रन्थों के रचयिता क्रमश: विश्वनाथ शास्त्री एवम् गोपाल शास्त्री नेने हैं।

तृतीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार

विषय प्रवेश

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार

1. रूपवतार ग्रन्थकार धर्मकीर्ति
2. प्रक्रियारत्न ग्रन्थकार अज्ञात संज्ञक
3. रूपमाला ग्रन्थकार विमल सरस्वती
4. प्रक्रियाकौमुदी ग्रन्थ्कार रामचन्द्राचार्य।
5. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार भट्टोजिदीक्षित
6. प्रक्रियासर्वस्व ग्रन्थकार नारायण भट्ट।
7. मध्यसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार वरदराज
8. लघुसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार वरदराज।
9. सारसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार वरदराज।
10. वेदाङ्प्रकाश ग्रन्थकार स्वामी दयानन्द सरस्वती
11. प्रारम्भिकपारिनीयम् (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी) ग्रन्थकार विश्वनाथ शास्त्री।
12. पाणिनीय प्रवोध ग्रन्थकार गोपालशास्त्री नेने।

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन

तृतीय अध्याय

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार

विषय प्रवेश

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार :–

व्याकरणपरम्परा में कातन्त्र आदि प्रक्रियामूलकव्याकरणों की उत्पत्ति से सूत्रमूलकपद्धति को यह हानि हुई की पाठक सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण को छोड़कर कातन्त्र आदि प्रक्रियामूलकव्याकरणों का अध्ययन करने लगे। जिस कारण पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों से यह सब सहन न हो सका क्योंकि उन्हें ज्ञात था कि केवल सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण पाणिनीयव्याकरण ही है। अतः वे आचार्य व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियामूलकपद्धति के कारण सूत्रमूलकपद्धति में आयी इस दशा को सहन नहीं कर सकते थे।

पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों ने यह जानते हुए भी व्याकरण अध्ययन पद्धति में समयानुकूल परिवर्तन कर दिया कि सूत्रमूलकपद्धति ही सरल और उपयोगी पद्धति है। परन्तु वे पाणिनीयव्याकरण का किसी तरह समयानुसार उद्धार चाहते थे ताकि पाठक इस सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण का लाभ उठा सकें। इन आचार्यों ने शर्ववर्मा आदि वैयाकरणों के समान स्वतन्त्र रूप में व्याकरणों की रचना नहीं की है जबकि पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रों को ही प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरण रूपरचनार्थ रूपरचनाक्रम से दिया है। इन आचार्यों के प्रक्रियाग्रन्थों का क्रम पूर्वक वर्णन इस प्रकार है :–

1. रूपावतार ग्रन्थकार धर्मकीर्ति :–

पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के बढ़ते प्रभाव को देखकर आचार्य धर्मकीर्ति ने पाणिनीयव्याकरण पर रूपावतार नामक प्रक्रियामूलक प्रक्रियाग्रन्थ रचा है। पाणिनीयव्याकरण की प्रक्रियामूलकपद्धति परम्परा मे रचित यह प्रक्रियाग्रन्थ सर्वप्रथम रचा गया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ की उत्पत्ति से पाणिनीयपरम्परा मे प्रक्रियाग्रन्थों का प्रचलन शुरू हुआ है। इस ग्रन्थ के रचयिता धर्मकीर्ति एक प्रसिद्ध बौद्ध आचार्य हैं। व्याकरणपरम्परा में इन का काल 1140 विक्रम सम्वत् माना गया है। यद्यपि अन्य विद्वानों के समान यह काल भी अनुमानिक है फिर भी इसे प्रामाणिक माना गया है। आचार्य धर्मकीर्ति ने अन्य विद्वानों के समान रूपावतार का रचनाकाल अपने ग्रन्थ रूपावतार में कहीं प्रदर्शित नहीं किया है और न ही इन के जीवन वृत्त का वर्णन रूपावतार में प्राप्त होता है। यह विद्वान न्यायविन्दु के रचयिता धर्मकीर्ति से भिन्न है। इसके बाद आचार्य धर्मकीर्ति के जीवनवृत्त विषय में किसी अन्य ग्रन्थ में भी वर्णन प्राप्त नहीं होता है।

आचार्य धर्मकीर्ति ने अष्टाध्यायी के प्रमुख सभी प्रकरणों के मुख्य सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। इन्होंने सभी पाणिनीय सूत्रों का वर्णन रूपावतार में नहीं किया है। आचार्य धर्मकीर्ति ने समयानुकूल उपयोगी वर्णन ही किया है। तत्काल पाणिनीयव्याकरण की यह दशा थी कि यदि धर्मकीर्ति समयानुकूल संक्षिप्त वर्णन न करते तो पाठकों की पाणिनीयव्याकरण में शेष आस्था भी उठ जाती। वास्तव में धर्मकीर्ति पाणिनीयव्याकरण के उद्धारक हैं। यदि धर्मकीर्ति तत्काल पाणिनीय सूत्रमूलकव्याकरण को प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पादित न करते तो सम्भवतः सम्प्रति पाणिनीयव्याकरण का नामशेष न होता क्योंकि पाणिनीयेत्तर कातन्त्र, चान्द्र, जैनेन्द्र आदि व्याकरणों में प्राप्त संक्षिप्त, सरल एवम् तात्कालिक वर्णन पाठकों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा था।

अल्पमति छात्र पाणिनीयव्याकरण की महत्ता समझने में असमर्थ थे जिस कारण पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन लगभग लुप्त प्रायः हो गया था। ऐसा होना स्वभाविक भी था, क्योंकि इन व्याकरणों में तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त पदों की जानकारी सरलता से प्राप्त हो रही थी। वैसे भी यदि कोई कार्य सरल उपाय से सिद्ध हो रहा हो तो उसी कार्य के लिए कठिन उपाय का चुनाव कौन करेगा। पाणिनीयव्याकरण कोई कठिन नहीं है अतिसरल है परन्तु इस के पद्धति वर्णन में समयानुसार कुछ कठिनाई प्रतीत हो रही थी। यद्यपि इसमें वैज्ञानिकवर्णन किया गया है तथा सूत्रमूलकपद्धति से प्राप्त ज्ञान गहन होता है परन्तु अल्पमति छात्रों की दूरदर्शी दृष्टि कहां होती है वे तो सरलता से ज्ञानोपार्जन के इच्छुक होते हैं। तत्काल भी वैसी ही दशा थी जिस कारण पाठकों की रुचि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में बढ़ गयी तथा पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन नाम मात्र होने लगा। सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण की महत्ता समझना भी किसी-किसी के वश का कार्य है। आचार्य धर्मकीर्ति यद्यपि बौद्ध आचार्य थे परन्तु ये पाणिनीयव्याकरण की महत्ता से भली भान्ति परिचित थे। अतः इन्होंने पाणिनीयव्याकरण को समयानुकूल प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पादित किया। इस प्रकार के विद्वान स्वतन्त्र व्याकरण भी रच सकते हैं परन्तु आचार्य धर्मकीर्ति पाणिनीयव्याकरण के पारखी विद्वान थे। अतः इन्होंने छात्रों की भलाई और सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण की सत्ता कायम रखने के लिए इस व्याकरण के पद्धति क्रम को बदल दिया जिस कारण पाणिनीयव्याकरण पुनः स्थापित हो सका।

व्याकरणपरम्परा में ''रूपावतार'' एक ऐसा प्रक्रियाग्रन्थ है जिसका पाणिनीयपरम्परा में सब प्रक्रियाग्रन्थकारों ने अनुकरण किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में वे सब गुण विद्यमान हैं जिन की प्रक्रियापद्धति को आवश्यकता थी। धर्मकीर्ति से अर्वाचीन प्रक्रियाग्रन्थकारों ने साक्षात रूप से ''रूपावतार'' का अनुकरण किया है चाहे वर्णनक्रम में चाहे विषयवार प्रकरण विभाजन में, चाहे सूत्रवृत्ति में, चाहे उदाहरण रूपरचना जानकारी में, जो भी किया है उस की प्रेरणा प्रक्रियाग्रन्थकारों को रूपावतार से ही मिली है। यह ठीक है कि अर्वाचीन प्रक्रिया ग्रन्थों में प्रक्रियापद्धति का विकास हुआ है परन्तु अर्वाचीन प्रक्रिया ग्रन्थकारों ने कोई नया कार्य नहीं किया है जिसे इन की विशेषता से जोड़ा जाये।

रूपमाला के रचयिता विमल सरस्वती ने ''रूपमाला'' को नया रूप देने का प्रयास किया है परन्तु वह लोक प्रसिद्धि में सहायक नहीं हो सका। रूपमाला में रूपरचना दृष्टि से सूत्रों को आवश्यकतानुसार रूपावतार के समान प्रत्येक उदाहरण में पुनः उद्धृत नहीं किया है। सूत्र को ग्रन्थ में एक बार ही उद्ध ृत किया है तथा रूपरचना क्रमपूर्वक व्याख्यात्मक वर्णन भी इस ग्रन्थ में प्राप्त नहीं है। फिर भी इस ग्रन्थ में सूत्रों का वर्णन प्रक्रियात्मक है क्योंकि इस में सूत्रों को रूपरचनाक्रम से उद्धृत किया है। यद्यपि दूसरे उदाहरण में सम्बन्धित सूत्र को पुनः उद्धृत नहीं किया है परन्तु पाठक पूर्व जानकारी से वहां उस सूत्र को प्रयुक्त कर सकता है। फिर भी रूपमाला का उपजीव्य रूपावतार ही है क्योंकि ग्रन्थकार ने विषयवार प्रकरण विभाजन एवम् उदाहरण जानकारी लक्ष्य आदि तो रूपावतार से ही प्राप्त किया है।

रूपमाला के साथ प्रक्रियाकौमुदी आदि सभी प्रक्रिग्रन्थों का उपजीव्य ''रूपवतार'' ही है। यदि किसी प्रक्रियाग्रन्थ का उपजीव्य साक्षात् रूप से रूपावतार नहीं है तो उस के उपजीव्य प्रक्रियाग्रन्थ का उपजीव्य ''रूपावतार'' है। अतः सिद्ध होता है कि सभी प्रक्रियाग्रन्थ रूपावतार के अनुयायी हैं।

धर्मकीर्ति ने व्याकरणपरम्परा में पाणिनीयव्याकरण के प्रति यह अनुभव किया कि इस व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन जरुरी है इस के विना पाठकों का उद्धार नहीं है। चाहे किसी प्रकार भी हो व्याकरण के वास्तविक ज्ञान के लिए पाणिनीयव्याकरण के साथ पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का तुलनात्मक अध्ययन किया ताकि वे समस्या समाधान के लिए किसी निष्कर्ष तक पहुँचें। इस अध्ययन से आचार्य धर्मकीर्ति इस निष्कर्ष में पहुँचें कि पाणिनीयव्याकरण की अध्ययन और अध्यापन पद्धति को बदलना जरूरी है जिस कारण पाठक सरलता से व्याकरण जानकारी प्राप्त कर पायेंगे तथा पाणिनीयव्याकरण की महत्ता से अवगत हो जायेंगे। इसलिए उन को दोहरा लाभ होगा। अतः धर्मकीर्ति ने सूत्रमूलकक्रम को बदलने का निर्णय लिया। पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के अध्ययन से आचार्य धर्मकीर्ति ने यह जाना कि इन व्याकरणों में रूपरचना जानकारी पूर्णप्रक्रिया से नहीं दी गयी है। इतना ही अन्तर है कि सन्धि, समास, तद्धित आदि प्रकरणों के उदाहरण एक प्रकरण में प्राप्त हैं तथा संयोगवश अनेक सूत्र एक प्रकरण में प्राप्त होते हैं, परन्तु कुछ सूत्रों के लिए इन व्याकरणों में भी जानकारी स्वयं जुटानी पड़ती है। इन ग्रन्थों में रूपरचना जानकारी के लिए उतना व्याख्यात्मक वर्णन भी नहीं है जितना होना चाहिए। अतः आचार्य धर्मकीर्ति ने इन व्याकरणों की तुलना में अधिक विकासात्मक वर्णन में ''रूपावतार'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ व्याकरणपरम्परा को प्रस्तुत किया। इस ग्रन्थ में पाणिनीय सूत्रों को रूपरचना जानकारी के लिए सन्धि, समास, तद्धित, स्त्रीप्रत्यय आदि प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन प्रकरणों में उदाहरणों की जानकारी पूर्णप्रक्रिया से प्रदर्शित की गयी है। जिस भी सूत्र की ग्रन्थकार को आवश्यकता हुई है उसे उसी स्थान पर उद्धृत किया गया है। अनेक सूत्रों की जानकारी के लिए रूपरचनार्थ व्याख्यात्मक वर्णन किया गया है। इस प्रकार का वर्णन पाणिनीपेत्तर व्याकरणों में प्राप्त नहीं है। समयानुसार यह प्रक्रियाग्रन्थ पाठकों को सरल एवम् सार्थक प्रतीत हुआ क्योंकि इस में तात्कालिक पदों की जानकारी यथोचित प्रकरणों में सरल वर्णन द्वारा प्रस्तुत की गयी है।

आचार्य धर्मकीर्ति ने सर्वप्रथम यह जाना कि सूत्रमूलकपद्धति समान कार्यों से सम्बन्धित वर्णन एक क्रम से इकट्ठा करती है जिस कारण इस पद्धति से विभिन्न पदों की रूपरचना जानकारी के लिए सम्बन्धित सूत्रों को स्वयं जुटाना पड़ता है। इसलिए आचार्य धर्मकीर्ति ने सुबन्त और तिङन्त पदों को विभिन्न प्रकरणों में वर्गीकृत किया और इन पदों की रूपरचना जानकारी के लिए सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इन्हें प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया, जिस कारण सूत्रों के बिखराव बाली समस्या समाप्त हो गयी तथा पाठकों को सुबन्त और तिङन्त पदों की जानकारी क्रमपूर्वक इकट्ठी प्राप्त हो गयी।

व्याकरण में सन्धियों का ज्ञान प्रारम्भिक ज्ञान माना जाता है। सूत्रमूलकग्रन्थों में सन्धियों का वर्णन षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में दिया हे। धर्मकीर्ति के समय सन्धियों की जानकारी अन्य जानकारी से पूर्व होना जरुरी हो गयी थी। अतः इन्होंने सन्धियों की जानकारी सर्वप्रथम दी है। इस प्रकारण में सन्धियों से सम्बन्धित सूत्र और वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के षष्ठ तथा अष्टम् अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।

वस्तुतः देखा जाये तो धर्मकीर्ति का रूपावतार में किया गया वर्णन रूचिकर वर्णन है। इन्होंने सुबन्तपदों से सम्वद्ध वर्णन ''रूपावतार'' प्रथम भाग में दिया है तथा धातु एवम् प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले पदों का वर्णन रूपावतार द्वितीय भाग में किया है। कृदन्त पद धातु और प्रत्यय के योग से निर्मित होते हैं परन्तु ये पद सुबन्त पद हैं क्योंकि पूर्ण प्रक्रिया जानकारी हेतु इन पदों में सुबादि प्रत्ययों का विधान किया जाता है। इसलिए पद सुबन्तपद हैं। अतः इन का वर्णन सुबन्तपदों के साथ होना चाहिए था परन्तु ग्रन्थकार ने इन का वर्णन ग्रन्थ के द्वितीय भाग के अन्त में ''धातु प्रत्यय पञ्चिका'' में किया है। ग्रन्थकार ने विषय वार प्रकरण विभाजन ही इस तरह किया है कि विभिन्न शब्दों तथा प्रत्ययों के योग से निर्मित होने वाले सुम्बतों से सम्बन्धित जानकारी सर्वप्रथम दी है तदुपरान्त धातु तथा प्रत्ययों के योग से निर्मित होने वाले पदों का वर्णन किया है। यही कारण है कि कृन्दत पदों का वर्णन "धातुप्रत्ययपञ्चिका" में प्राप्त होता है।

धर्मकीर्ति ने रूपावतार में सर्वप्रथम विभिन्न शब्दों एवम् प्रत्ययों के योग से निर्मित पदों से सम्बद्ध जानकारी का वर्णन किया है। इस में सन्धि, नाम पद, समास, तद्धित कारक, स्त्रीप्रत्यय आदि जानकारी आती है क्योंकि इन प्रकरणों में सम्बन्धित उदाहरणों का सम्बन्ध विभिन्न सुबन्त पदों से है या वे पद विभिन्न व्याकरणादि प्रक्रिया के उपरान्त सुबन्त पद के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं। अतः ग्रन्थकार ने इन का वर्णन पूर्व भाग में किया है।

''अपदम् न प्रयुञ्जीत्'' कथित नियमानुसार जो पद नहीं है उसे भाषा में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। व्याकरण में विभिन्न प्रतिपदिकों का सुबन्त पद जानकारी हेतु वर्णन किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति में यह वर्णन विखरा है क्योंकि सम्बन्धित सूत्र विखरे होने के कारण सम्बद्ध उदाहरण

विखरे हैं। धर्मकीर्ति ने इस वर्णन को एकत्रित करके एक प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। ग्रन्थकार ने सुबन्त पदों की रूपरचनार्थ विभिन्न प्रतिपदिकों को विशिष्टक्रम से उद्धृत किया है तथा इन की रूपरचना के लिए सूत्रों और वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

व्याकरण में विभिन्न पदों से स्त्रीत्व विवक्षा में प्रत्ययों का विधान किया गया है। सूत्रमूलकग्रन्थों में सम्बन्धित सूत्र एवम् वार्तिक चतुर्थ अध्याय प्रथमपाद में प्राप्त होते हैं तथा एक क्रम से इकट्ठे हैं। उदाहरण रूपरचना के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ सम्बद्ध अन्य सूत्रों की आवश्यकता भी होती है जो सूत्रमूलक पद्धति में विखरे हैं। आचार्य धर्मकीर्ति ने स्त्रीप्रत्यायान्त पदों की जानकारी के लिए स्त्रीप्रत्यय प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों और वार्तिकों के साथ अन्य सम्बद्ध सूत्रों और वार्तिकों को भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने प्रत्ययविधायक सूत्रों से मुख्य सूत्रों का चुनाव किया है अनेक सूत्र छोड़ दिये हैं।

रूपावतार में कारक जानकारी के लिए रूचिकर वर्णन प्राप्त होता है। सूत्रमूलकग्रन्थों में विभक्तिसंज्ञा विधायकसूत्र एवम् वार्तिक प्रथम अध्याय चतुर्थपाद में दिये हैं तथा विभक्तिविधायकसूत्र एवम् वार्तिक द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में दिये हैं। विभक्ति संज्ञाविधायक सूत्रों और विभक्तिविधायक सूत्रों में लोकप्रसिद्ध कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध एवम् अधिकरण आदि संज्ञा तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी एवम् सप्तमी आदि विभक्ति क्रम नहीं है। रूपरचना, जानकारी के लिए विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र के बाद विभक्तिविधायकसूत्र की आवश्यकता होती है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में इन सूत्रों का यह क्रम प्राप्त नहीं है। अत: धर्मकीर्ति ने पाठकों की समस्या समाधान हेतु पाणिनीयव्याकरण के इन सूत्रों और वार्तिकों को उदाहरणों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। पाठक समयानुकूल इस तरह का वर्णन चाह रहे थे। ग्रन्थकार नें इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के मुख्य सूत्रों और वार्तिकों का वर्णन किया है। अनेक सूत्र व वार्तिक छोड़ दिये हैं।

व्याकरणशास्त्र में दो या दो से अधिक पदों को एक साथ रखने के लिए वर्णन प्राप्त होता है। इस वर्णन को समास कहते हैं। सूत्रमुलकपद्धति में समासविधायकसूत्र एवम् वार्तिक द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीय पाद में प्राप्त होते हैं। परन्तु ये सूत्र समास करने तक ही सीमित हैं। समास करने के उपरान्त समस्त पदों की रूपरचना के लिए एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। काशिका के कुछ समय बाद तक पाठक समास करने के उपरान्त समस्त पदों की जानकारी के लिए सम्पूर्ण प्रक्रिया सामग्री को जुटा लेते थे, परन्तु बाद में पाठक इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को एक प्रकरण में चाहने लगे थे क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति से कम से कम छ: अध्याय पढ़ने पर मात्र समास ज्ञान प्राप्त होता है। रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र तो सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरे हैं। सूत्रमूलकपद्धति में समासान्त प्रत्यय विधायकसूत्र पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद में है, समास में पूर्वात्तर पद को निमित्त मानकर होने वाले कार्यो का वर्णन षष्ठ अध्याय तृतीय पाद में प्राप्त होता है, दो पदों में से एक पद शेष रखने वाले सूत्र प्रथम अध्याय द्वितीय पाद में प्राप्त होते हैं। काशिका के कुछ काल

बाद पाठक इस सामग्री को जुटाने में असमर्थ थे। अतः धर्मकीर्ति ने सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलक ग्रन्थों से चुनकर विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीही, द्वन्द्व आदि समास प्रकरणों में रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है। इस से पाठकों को यह सुविधा हुई कि वे केवल समास प्रकरण पढ़ने से ही समास ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, उन्हें अष्टाध्यायी के समान अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता, क्योंकि इन प्रकरणों में केवल समास कार्यों से सम्बन्धित सूत्रों का ही वर्णन है जो कि अष्टाध्यायी में विखरे हैं।

व्याकरण में संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम आदि शब्दों से आवश्यकतानुसार अपत्य, उत्पन्न होना, बाला या युक्त आदि विभिन्न अर्थ जानकारी के लिए अण्, इञ्, ढक् आदि अनेक तद्धित प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है। सूत्रमूलकग्रन्थों में यह वर्णन चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में प्राप्त होता है। अष्टाध्यायी में तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों की संख्या 1025 है। सूत्रमूलकपद्धति में अनेकाधिकारों में वर्णित होने पर भी इन सूत्रों को छोटे-छोटे प्रकरणों में विभक्त नहीं किया है। काशिका के कुछ समय बाद तक पाठक तद्धितान्त पदों की रूपरचना सामग्री जुटा लेते थे, परन्तु बाद में वे इन पदों की जानकारी के लिए सामग्री जुटाने में असमर्थता समझने लगे तथा तद्धिताधिकार का वर्णन वे छोटे प्रकरणों में चाहने लगे। छोटे प्रकरणों से सूत्रों की संख्या में तो कमी नहीं होती है परन्तु पाठकों की भावना में अन्तर आ जाता है। पाठक छोटे प्रकरण पढ़ने में रूचि लेते हैं। अतः धर्मकीर्ति ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को अनेकाधिकारों या सूत्र कार्यानुसार अनेक छोटे-छोटे प्रकरणों में विभक्त किया है तथा तद्धितान्त पदों की रूपरचना के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों एवम् वार्तिकों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इन्हें प्रकरणों में रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। आचार्य धर्मकीर्ति ने तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध अनेक सूत्रों का वर्णन नहीं किया है अर्थात् धर्मकीर्ति ने मात्र उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए मुख्य सूत्रों का ही वर्णन किया है।

सुबन्त पदों की जानकारी के उपरान्त धर्मकीर्ति ने धातुओं एवम् प्रत्ययों के योग से निर्मित पदों की जानकारी का वर्णन किया है। इस वर्णन में तिङन्त तथा कृदन्त पदों का वर्णन आता है। क्योंकि तिङन्त तथा कृदन्त पद धातु और प्रत्ययों के योग से निर्मित होते हैं। अतः ग्रन्थकार ने इन पदों की जानकारी के लिए ''रूपावतार'' द्वितीय भाग में ''धातु प्रत्ययपञ्चिका'' नामक संयुक्त प्रकरण में अनेक छोटे-छोटे प्रकरणों में सुन्दर वर्णन किया है।

ग्रन्थकार ने ''रूपावतार'' द्वितीय भाग में सर्वप्रथम क्रियारूपों का वर्णन किया है। सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्यों से सम्बन्धित सूत्र इकट्ठे हैं इसलिए विभिन्न क्रियारूप विखरे हैं क्योंकि विभिन्न लकारों, विकरणों, लकारादेशों, धात्वादेशों, अभ्यास कार्यों एवम् विभिन्न आगमादेशों से सम्बन्धित सूत्र विभिन्न अध्यायों में विखरे हैं। अतः विभिन्न क्रिया रूपों से सम्बद्ध उदाहरण वहां-वहां उद्धृत हैं। काशिका के कुछ समय बाद पाठक विभिन्न क्रिया रूपों की जानकारी सूत्रमूलकक्रम से प्राप्त करने में असमर्थता समझ रहे

थे। अत: धर्मकीर्ति ने रूपावतार में विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के लिए क्रियारूपों को सार्वधातुक और आर्धधातुकलकारों में विभक्त करके सर्वप्रथम सार्वधातुकलकारों से सम्बद्ध क्रियारूपों की जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों और वार्तिकों का रूपरचनाक्रम से वर्णन किया है तदुपरान्त आध ातुकलकारों का वर्णन है।

सार्वधातुकलकारों के परिच्छेद में ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम ''शब्विकरणे भ्वादौ लट्'' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकारण में ग्रन्थकार ने भ्वादि गण की 1010 धातुओं में से मात्र 54 धातुओं की लट् लकार में रूपरचना का वर्णन किया है। विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए इस प्रकारण में पाणिनीयव्याकरण के 78 सूत्रों और 3 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1] रूपरचना में सहायक अन्य 20 सूत्रों को भी मात्र सूत्ररूप से उद्धृत किया है इन की व्याख्या अन्यत्र है परन्तु ग्रन्थ वर्णन विधि क्रमानुसार इन्हें इस प्रकरण में पुन: उदधृत किया है। ग्रन्थकार ने रूपावतार में उद्धृत सूत्रों को अपना कोई संख्याक्रम नहीं दिया है इन्हें अष्टाध्यायी संख्याक्रम से ही उद्धृत किया है। ठीक इसी तरह महाभाष्य में दिये गये सूत्र के वार्तिकों को भी अष्टाध्यायी सूत्र संख्याक्रम से उद्धृत किया है। रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने रूपावतार में अनेक सूत्रों और वार्तिकों के लिए व्याख्यात्मक वर्णन किया है। इस वर्णन से सूत्र व वार्तिक स्मरण आ जाते हैं। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा इस प्रक्रियाग्रन्थ की यह एक विशेषता है कि इस में अनेक उदाहरणों को अर्थ सहित प्रदर्शित किया है।

सार्वधातुक लकारों के परिच्छेद में ''शब्विकरणे भ्वादौ लट्'' नामक प्रकरण के उपरान्त ''अदादौ लुग्विकरणे लट्'' नामक प्रकरण है। इस प्रकरण में ग्रन्थाकार ने 74 धातुओं में से 34 धातुओं की रूपरचना जानकारी के लिए सूत्रमूलक ग्रन्थों से 54 सूत्रों और 2 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त सार्वधातुक परिच्छेद में ''जुहोत्यादौ श्लुविकरणे लट्'' नामक प्रकरण दिया है। इस में जुहोत्यादिगण की 16 धातुओं की लट् लकार में रूपरचना जानकारी है। पाणिनीय धातुपाठ में इस गण में 24 धातुओं को पढ़ा गया है। इस प्रकरण को धर्मकीर्ति ने 31 पाणिनीय सूत्रों और 3 कात्यायनीय कार्तिकों द्वारा पूर्ण किया है।[3] इस प्रकरण के उपरान्त ''दिवादौ श्यन विकरणे लट्'' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थाकार ने 140 पाणिनीय धातुओं में से 34 धातुओं की लट् लकार में रूपरचना का वर्णन किया है। इस जानकारी के लिए लट् लकार में रूपरचना का वर्णन किया है। इस जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी से 12 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[4] इस प्रकरण के उपरान्त रूपावतार में ''स्वादौश्नुविकरणे लट्'' नामक प्रकरण आता है। इस में

---

1 रूपा0 शब्विवकरणे भ्वादौ लट् प्रकरणम्।

2 रूपा0 अदादौ लुग्विकरणे लट् प्रकरणम्।

3 रूपा0 जुहोत्यादौ श्लुविकरणे लट् प्रकरणम्।

4 रूपा0 दिवादौश्यनविकरणे लट् प्रकरणम्।

पाणिनीय धातुपाठ में पठित 34 धातुओं में से ग्रन्थकार ने मुख्य 11 धातुओं की रूपरचना जानकारी के लिए 10 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1]

स्वादिगण की जानकारी के उपरान्त ग्रन्थकार ने तुदादि धातुओं की रूपरचना जानकारी के लिए ''तुदादौ शविकरणे लट्'' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीय धातुपाठ में पठित 157 धातुओं में से मात्र 27 धातुओं की लट् लकार में रूपरचना के लिए मात्र 8 सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2] तदुपरान्त ''रूधादौ श्नम्विकरणे लट्'' नामक प्रकरण है इस में 18 धातुओं की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से उठाकर 7 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम स ेप्रयोग किया है। इस गण में 25 धातुएँ हैं परन्तु ग्रन्थकार ने 18 धातुओं की रूपरचना का वर्णन किया है।[3]

इस भाग के उपरान्त ''तनादौ उविकरणे लट्'' नामक प्रकरण है। इस में 8 क्रियाओं की रूपरचना के लिए 8 सूत्रों का रूपरचनाक्रम से वर्णन है।[4] इस गण में 10 धातुएँ हैं जिन में से धर्मकीर्ति ने 8 का वर्णन किया है। इस प्रकरण के उपरान्त ''क्रयादौ श्नाविकरणे लट्'' नामक प्रकरण है। इस में पाणिनीय 16 धातुओं की रूपरचना जानकारी है जबकि धातुपाठ में इस गण में 71 धातुएँ हैं। इस प्रकारण में 10 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग प्राप्त है।[5] रूपावतार में ''सार्वधातुक परिच्छेदे लट्'' नामक प्रकरण के अन्त में ''चुरादौणिज्विविकरणे लट्'' नामक भाग है। इस में पाणिनीय धातुपाठ में पठित 410 धातुओं में से ग्रन्थकार ने 61 धातुओं की लट् लकार में रूपरचना जानकारी दी है। इस भाग में ग्रन्थकार ने रूपरचना के लिए 16 पाणिनीय सूत्रों और 2 कात्यायनीय वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[6] उपरोक्त इन सभी प्रकरणों में इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक मात्र सूत्र रूप में पुनः उद्धृत सूत्र भी है। इन की पूर्ण जानकारी अन्यंत्र है परन्तु ग्रन्थ वर्णन क्रमानुसार इन्हें आवश्यकतानुसार पुनः उद्धृत किया है ताकि पाठक सूत्र को तत्क्षण प्राप्त कर सकें।

ग्रन्थकार ने ''लट् प्रकरण'' के उपरान्त "लङ् लकार" की शुरूआत की है। इस में भ्वादि भाग प्रथम है। इस भाग में 41 धातुओं की लङ् लकार में रूपरचना का वर्णन किया है। इस प्रकरण में पाणिनीय 12 सूत्र हैं।[7] अदादि भाग में 43 धातुओं की रूपरचना के लिए 19 सूत्रों का प्रयोग है।[8] जुहोत्यादि में 15 धातुओं की रूपरचना जानकारी है। इस प्रकरण में व्याख्या सहित ''नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके''[9]

---

1 रूपा0 स्वादौश्नुविकरणे लट् प्रकरणम्।
2 रूपा0 तुदादौ शविकरणे लट् प्रकरणम्।
3 रूपा0 सधादौ श्नाम्विकरणे लट् प्रकरणम्।
4 रूपा0 तनादौ उविकरणे लट् प्रकरणम्।
5 रूपा0 क्रयादौ श्नाविकरणे लट् प्रकरणम्।
6 रूपा0 चुरादौ णिज्विकरणे लट्।
7 रूपा0 शब्विकरणे लङ्।
8 रूपा0 लुग्विकरणे लङ्।
9 अष्टा0 7-3-87

मात्र एक सूत्र उद्धृत है। तदुपरान्त ''दिवादौ श्यन्विकरणे लङ्'' नामक प्रकरण है। इस में 16 धातुओं की रूपरचना जानकारी है। ग्रन्थकार ने ''सार्वधातुक परिछेदे लङ्'' नामक प्रकरण में भी ''सार्वधातुक परिच्छेदे लट्'' नामक प्रकरण के अनुरूप ही भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रूधादि, तनादि, क्रयादि, एवम् चुरादि गणों की मुख्य धातुओं की लङ् लकार में विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों को चुनकर ''शब्विकरणे लङ्'', ''लुग्विकरणे लङ्'', ''श्लुविकरणे लङ्'' नामक प्रकरणों में रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण के बाद शेष लोट् और लिङ् लकारों की रूपरचना के लिए ''सार्वधातुक परिच्छेदे लोट्'' और ''सार्वधातुक परिच्छेदे लिङ्'' नामक प्रकरणों में भी भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रूधादि, तनादि, क्रयादि एवम् चुरादि गणों की धातुओं की क्रम से रूपरचना जानकारी का वर्णन है। ग्रन्थकार ने केवल उपयोगी धातुओं की रूपरचना के लिये उपयोगी सूत्रों का चुनाव किया है।

सार्वधातुक लकारों के प्रसङ्ग. में ग्रन्थकार ने भाव और कर्मप्रक्रिया जानकारी हेतु ''भावकर्म प्रकियायां यक'' नामक प्रकरण दिया है। यह प्रकरण प्रक्रिया प्रकरणों से सम्बद्ध है परन्तु सार्वधातुक लकारों में रूपरचना जानकारी के लिए इस प्रकरण का ''सार्वधातुक परिच्छेद'' भाग में वर्णन करना स्वभाविक है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 58 धातुओं से यक् प्रत्यय का विधान किया है। इस भाग में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 24 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रिया क्रम से प्रयोग हुआ है।

ग्रन्थकार ने सार्वधातुक लकारों का वर्णन प्रसिद्ध लट्, लोट् ,लङ्, और विधिलिङ् लकारों के क्रम से नहीं दिया है। रूपावतार में लट्, लङ् ,लोट् एवम् विधिलिङ् लकारों के क्रम से वर्णन है।

सार्वधातुक लकारों के वर्णन के उपरान्त ग्रन्थकार ने रूपावतार मे आर्धधातुक लकारों की रूपरचना का वर्णन किया है। आर्धधातुक परिच्छेद में ग्रन्थाकार ने ''आशीर्लिङ् लकार'' का वर्णन शुरू में दिया है। इस प्रकरण में भ्वादि, अदादि आदि गणों की 1950 धातुओं में से ग्रन्थकार ने मात्र 67 धातुओं की रूपरचना जानकारी का वर्णन किया है। इस भाग में 30 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[1] तदुपरान्त ग्रन्थकार ने लिट् लकार में पाणिनीय सभी धातुओं में से मात्र 162 धातुओं की रूपरचना जानकारी का वर्णन किया है। इन रूपरचनाओं की जानकारी हेतु ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 91 सूत्रों और 7 वार्तिकों को चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] इसी क्रम से ग्रन्थकार ने आर्धधातुक परिच्छेद के शेष लुङ्, लुट्, लृङ्, लृट् आदि लकारों के प्रकरणों में भ्वादि 1950 धातुओं में से मात्र कुछ-कुछ धातुओं के क्रियारूपों की जानकारी दी है। सभी प्रकरणों में अनेक धातुओं को छोड़ दिया है। इन प्रकरणों में रूपरचना जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों का चुनाव करके रूपरचना क्रम दिया है।

---

1 रूपा0 आर्धधातुक परिच्छेदे लिङ् प्रकरणम्।

2 रूपा0 आर्धधातुक परिच्छेदे लिट् प्रकरणम्।

यदि ग्रन्थकार क्रियारूपों की जानकारी के लिए तत्काल इस प्रकार का प्रायोगिक वर्णन न करते तो पाठक पाणिनीयव्याकरण से अध्ययन छोड़ने पर विवश हो जाते। क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में कभी लट् लकार के, कभी लोट् लकार के, कभी लिट् लकार के, कभी लृङ् लकार के सूत्र प्राप्त होते हैं तथा कभी भ्वादि गण से, कभी दिवादि गण से, कभी चुरादि गण से सम्बद्ध धातुओं के सूत्र प्राप्त होते हैं । अत: पाठक इस पद्धति से क्रियापदों का क्रमिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। छात्र क्रियारूपों का अध्ययन प्रायोगिक वर्णन से चाह रहे थे। अत: धर्मकीर्ति ने समयानुरूप वर्णन किया है जिसे पाठकों ने बहुत पसंद किया है।

इस जानकारी के उपरान्त भाव और कर्मप्रक्रिया जानकारी हेतु ग्रन्थकार ने ''चिण्वद्भाव'' नामक भाग दिया है। इस प्रकरण में भाव और कर्मार्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं से लिङ्, लिट्, लुङ्, लुट्, लृङ्, और लृट् आदि प्रकरणों में विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। यह वर्णन ''आर्धधातुक'' लकारों से सम्बद्ध है। सार्वधातुक लकारों का वर्णन पूर्व सार्वधातुक लकारों में आ गया है।

व्याकरण में इच्छा, चाहना, प्रेरणा, बार-बार होना या अधिक होना, आचार आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए व्याकरण में सन् आदि प्रत्ययों का विधान किया गया है। यह जानकारी सूत्रमूलक ग्रन्थों में तृतीय अध्याय में दी गयी है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में पाठकों को यह ज्ञान रूपरचनाक्रम से नहीं होता है। काशिका के कुछ काल बाद पाठक प्रायोगिक वर्णन चाहने लगे थे। अत: धर्मकीर्ति ने रूपावतार में इच्छा, चाहना आदि अर्थों को प्रकट करने वाले पदों की जानकारी के लिए प्रायोगिक वर्णन किया है। सूत्रमूलक ग्रन्थों में इच्छा आदि अर्थों को विभिन्न प्रत्यय प्रकट करते हैं। प्रत्ययविधायक इन सूत्रों में सन् प्रत्यय विधायक ''गुप्तिज्किद्भयस्सन्''[1] सूत्र सर्वप्रथम दिया है। ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए इस प्रत्यय से सम्बद्ध वर्णन को प्रक्रिया जानकारी में सर्वप्रथम दिया है। इस प्रकरण का नामकरण भी गन्थकार ने सनन्त परिछेद प्रकरण प्रत्ययानुसार ही दिया है। इस भाग में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए व्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 110 पाणिनीय सूत्रों और 2 कात्यायनीय वार्तिकों का रूपरचना क्रम से प्रयोग हुआ है।[2] इन सूत्रों में प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''यङ् परिच्छेद'' प्रकरण है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 49 सूत्रों और 3 वातिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[3] इस प्रकरण के उपरान्त रूपावतार में ''यङ्लुक परिच्छेद'' प्रकरण दिया है। धर्मकीर्ति ने समान रूपरचनार्थ कुछ ऐसे उदाहरणों को यङ् प्रकरण से पृथक किया है जिस में बार-बार होना या अधिक अर्थ प्रकट करने के लिए ''धातोरेकाचो हलादे: किया समविहारे यङ्''[4] सूत्र से यङ् प्रत्यय

1 अष्टा 3-1-5

2 रूपा0 सनन्तपरिच्छेद प्रकरणम्।

3 रूपा0 यङ् परिच्छेद प्रकरणम्।

4 अष्टा0 3-1-22

होता है परन्तु उस यङ् का ''यङोऽचि च''[1] सूत्र से लोप हो जाता है। धातुसंज्ञा आदि पूर्णप्रक्रिया के उपरान्त इस प्रकरण मे बोभविति, बोभोति आदि उदारहण सिद्ध होते हैं। इस प्रकरण मे यङ् प्रत्यय के लोप का विधान है। अतः ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''यङ्लुक्परिछेद प्रकरण'' प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने 30 पाणिनीय सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रिया से प्रयोग किया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त विभिन्न धातुओं से प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए णिच् प्रत्यय का विध ान किया गया है। विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के 90 सूत्रों और 9 वार्तिकों को रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है।[3] इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''हेतुमण्णिच्'' प्रकरण संज्ञा विषयानुसार ही दी है क्योंकि इस में णिच् प्रत्यय का वर्णन है।

इस प्रकरण के उपरान्त रूपावतार में ''प्रत्ययमाला प्रकरण'' है इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीय 2 सूत्रों और कात्यायनीय 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[4] अनेक जानकारी व्याख्यात्मक है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''रूपावतार'' में ''सुब्धातु प्रकरण'' दिया है। आचार, उत्साह आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए इच्छा आदि के कर्म और कर्ता के सम्बन्धी वाचक सुबन्त पद से इच्छा आदि अर्थो में क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, आदि प्रत्यय किये जाते हैं। इन का उल्लेख अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय प्रथम पाद में है परन्तु वहां मात्र प्रत्ययों का उल्लेख है पूर्ण रूपरचना जानकारी सूत्रमूलक ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं है। छात्र धर्मकीर्ति के समय पूर्ण रूपरचना जानकारी से प्रायोगिक वर्णन चाह रहे थे। अतः ग्रन्थककार ने सम्पूर्ण पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 32 सूत्रों और 13 वार्तिकों द्वारा विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना का वर्णन किया है।[5] इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''सुब्धातु प्रकरण'' संज्ञा दी है क्योंकि इस में आचार, उत्साह आदि अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न सुबन्त पदों से क्यच् आदि प्रत्यय करने पर पूर्ण प्रक्रिया के लिए ''सनाद्यन्ता धातवः''[6] सूत्र से धातु संज्ञा करने पर "पुत्रीयति" आदि उदाहरण सिद्ध होते हैं अर्थात् इस प्रकरण में सुबन्तो से धातु संज्ञा करने पर तिङन्त रूपों की जानकारी है। इसलिए ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''सुब्धातु प्रकरण'' संज्ञा दी है क्योंकि इस में सुबन्तो से धातु प्रक्रिया का वर्णन है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''तिङ् विभक्त्यर्थ प्रकरण'' है। इस में तिङ् विभक्तियों के अर्थो की जानकारी है अर्थात् लकारार्थ जानकारी है। इस प्रकरण में विभिन्न लकारर्थो तथा विशिष्ट उपपदों के योग

---

1 अष्टा० 2-4-74

2 रूपा० यङ्लुक्परिच्छेद प्रकरणम्।

3 रूपा० हेतुमण्णिच प्रकरणम्।

4 रूपा० प्रत्ययमाला प्रकरणम्।

5 रूपा० सुब्धातु प्रकरणम्।

6 अष्टा० 3-1-32

में विशिष्ट लकारों की जानकारी दी गयी है। सूत्रमूलक ग्रन्थों में यह वर्णन तृतीय अध्याय द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पाद में दिया गया है। धर्मकीर्ति ने आवश्यकतानुसार इन सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में मिलाकर सब सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रमशः 29 और 3 है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त कृदन्त जानकारी है। धातु के अधिकार में तिङ् से भिन्न प्रत्ययों को कृत् प्रत्यय कहते हैं।[2] कृत् प्रत्ययों के योग से निर्मित पदों को कृदन्त पद कहते हैं। कृत् प्रत्ययविधायकसूत्र अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में दिये गये हैं। धर्मकीर्ति ने विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रत्ययविधायक सभी सूत्रों का उल्लेख नहीं किया है। इन्होंने उदाहरण रूपरचनार्थ उपयोगी सूत्रों का चुनाव किया है तथा इन सूत्रों को उदाहरण जानकारी हेतु तीन प्रकरणों में विभक्त किया है। कृदन्त पदों की जानकारी के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सम्बन्धित सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इन प्रकरणों से प्रक्रियाक्रम से दिया है।

ग्रन्थकार ने रूपावतार में कृदन्त पदों की जानकारी के लिए सर्वप्रथम वर्तमान काल में कर्ता अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न क्रियाओं से शतृ , शानच् आदि प्रत्ययों का विधान किया है। इन उदाहरणों की जानकारी हेतु ग्रन्थकार ने शतृ, शानच् आदि प्रत्ययों से सम्बद्ध विखरे सूत्रों को अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा कृदन्त प्रकरण के इस छोट से भाग को ''शत्रादिप्रकरण'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ सम्बन्धित अन्य सूत्रों की संख्या अधिक है, जो ग्रन्थकार ने रूपरचना जानकारी के लिए विभिन्न अध्यायों से चुने हैं। इस प्रकरण में सूत्रमूलक ग्रन्थों से चुने गये सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रमशः 38 और 2 है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''कृत्य प्रकरण'' आता है। ''कृत्याः''[4] सूत्र के अधिकार में वर्णित ''ण्वल् तृचौ''[5] सूत्र तक जो प्रत्यय कहे गये हैं उनकी कृत्य संज्ञा होती है।[6] धर्मकीर्ति ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए इन कृत्य संज्ञक प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को एक प्रकरण में आवश्यकतानुसार प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है तथा वर्णनानुसार इस प्रकरण को ''कृत्य प्रकरण'' संज्ञा दी है। प्रत्ययविध ायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से उद्धृत किये हैं। इस प्रकरण् में प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रमशः 55 और 5 है।[7]

---

1 रूपा0 तिङ् विभक्त्यर्थ प्रकरणम्।
2 अस्मिन्न धात्वाधिकारे तिङ् वर्जितः प्रत्ययः कृत् संज्ञको भवति। का0 3-1-93
3 रूपा0 शत्रादिप्रकरणम्।
4 अष्टा0 3-1-95
5 अष्टा0 3-1-133
6 प्रागेतस्माण्ण्वुल संशब्दनाद् यानित उर्ध्वमनुक्रमिष्याम् ते कृत्य संज्ञा वेदितव्यः। का0 3-1-95
7 रूपा0 कृत्यप्रकरणम्।

इस प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थाकार ने ''कृत् प्रकरण'' दिया है। धर्मकीर्ति ने इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए ''ण्वुल् तृचौ''[1] सूत्र से लेकर ''कर्तरि कृत्''[2] सूत्र तक शेष बचे कृत्प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों में से केवल उपयोगी सूत्रों का चुनाव किया है क्योंकि ग्रन्थकार ने केवल उपयोगी उदाहरणों की ही जानकारी दी है शेष उदाहरणों को छोड़ दिया है। इन सूत्रों को ग्रन्थकार ने एक ही प्रकरण में दिया है। इन के छोटे प्रकरण नहीं बनाये हैं। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकार इस प्रकरण में सभी सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रमशः 408 और 63 है।[3]

ग्रन्थकार ने रूपावतार में उणादि सूत्रों का वर्णन नहीं किया है यदि यत्र-तत्र प्राप्त होता है तो वह पाणिनीय वर्णन के साथ ही दिया है पृथक जानकारी नहीं है। धर्मकीर्ति ने वैदिक पदों की जानकारी भी रूपावतार में नहीं दी है।

2. प्रक्रियारत्न ग्रन्थकार अज्ञात संज्ञक :-

रूपावतार के उपरान्त व्याकरणपरम्परा में काल क्रम से ''प्रक्रियारत्न" नामक प्रक्रियाग्रन्थ का स्थान आता है। इस के रचयिता व्याकरणपरम्परा में अज्ञात संज्ञक है। इस प्रक्रियाग्रन्थ का वर्णन भी प्राचीन व्याकरणों के समान यत्र-तत्र अनेक स्थानों पर उदाहरण रूप से उद्धृत है। स्वतन्त्र रूप से यह ग्रन्थ भी प्राप्त नहीं हो रहा है। इस का केवल प्रक्रियाग्रन्थ होना प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ में ग्रन्थकार ने क्या मालुम कितने पाणिनीय सूत्रों का किस प्रकार वर्णन किया है ? अर्थात् इस में किने प्रकरण है, विषयवार प्रकरण विभाजन कैसा है, कैसे उदाहरण हैं, यह ग्रन्थ विषयप्रधान है या प्रक्रियाप्रधान है यह नहीं कहा जा सकता परन्तु इतना स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियाग्रन्थ से प्रसिद्ध है। व्याकरणपरम्परा में इस ग्रन्थ का रचनाकाल सम्वत् 1300 विक्रम पूर्व माना गया है।

3. रूपमाला ग्रन्थकार विमल सरस्वती :-

विमल सरस्वती ने विक्रम सम्वत् 1400 से पूर्व अष्टाध्यायी के प्रमुख सूत्रों को प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों के क्रम से दिया है तथा इस ग्रन्थ को ''रूपमाला'' संज्ञा दी है। विमल सरस्वती ने ''रूपमाला'' में पाणिनि के समस्त सूत्रों का उल्लेख नहीं किया है। ''रूपमाला'' का वाराणसी संस्करण प्राप्त है परन्तु इस में ग्रन्थकार का जीवन वृत्त प्राप्त नहीं है। अतः इस विषय में अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता केवल इतना ही कहा जा सकता है कि ''रूपमाला'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ के रचयिता विमल सरस्वती हैं।

विमल सरस्वती ने इस ग्रन्थ के मङ्गलाचरण में ही वर्णित किया है कि वे बच्चों के कण्ठभूषण के लिए एक छोटी माला बना रहे हैं जिस में पाणिनीय अनेक सूत्र रूप धागों में शब्दावलि रूप पुष्पों को पिरोया

---

1 अष्टा0 3-1-133

2 अष्टा0 3-4-67

3 रूपा0 कृत्प्रकरणम्।

जायेगा।[1] इस से स्पष्ट होता है कि यह माला अल्पाकार है। परन्तु अल्पाकार होते हुए भी यह अधिकाधिक वर्णन करती है। विमल सरस्वती ने व्याकरण को अल्पाकार प्रदान किया है।

रूपमाला में सरस्वती ने अनेक कारिकायें भी दी हैं जो पाठकों को हर क्षेत्र में सन्देहमुक्त करती हैं। जैसे प्रत्याहार सन्देहार्थ 41 प्रत्याहारों को णकारान्त, ककारान्त आदि विभाग ''एकस्त्रयः पुनश्चैको वेदा एकस्त्रयस्त्रयः''[2] आदि कारिका में वर्णित किया है जो पाठकों को इस क्षेत्र में संन्देहमुक्त करती है।

इसी तरह अनेक कारिकायें पाठकों की संन्देहमुक्ति के लिए विमल सरस्वती ने इस प्रक्रिया ग्रन्थ में अनेक स्थानों पर दी है जो पाठकों का उस स्थान पर संन्देहमुक्त करती हैं।

रूपमाला में विमल सरस्वती ने सर्वप्रथम संज्ञाविधायक सूत्रों का वर्णन किया है तथा इस प्रकरण को ''संज्ञा माला'' संज्ञा दी है। इस में 23 पाणिनीय सूत्रों का संग्रह किया गया है। इस के उपरान्त ''सन्धि माला'' प्रकरण में ''स्वर सन्धि'' प्रकरण से सन्धि माला का प्रारम्भ किया है। इस में सर्वप्रथम उदाहरण दिये हैं तदुपरान्त उदाहरणों की रूप रचना के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी से चुनकर ''रूपमाला'' में प्रक्रिया क्रम से दिया है। ये सूत्र अष्टाध्यायी के षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में हैं।

रूपमाला में उदाहरण रूपरचना जानकारी सरलता से करवायी गयी है। जैसे ''मध्वत्र'' उदाहरण में अन्य सूत्रों के अलावा ''अनचि च''[3] ''सर्वत्र शाकल्यस्य''[4] में इन सूत्रों के कार्यों की उदाहरण सहित जानकारी भी स्पष्ट की है ताकि पाठक उदाहरण और सूत्र में सम्बन्ध को सरलता से समझ सकें। रूपमाला में इसी तरह का वर्णन है।

विमल सरस्वती ने ''सन्धिमाला'' में कम सूत्रों द्वारा अधिकाधिक ज्ञान करवाने का प्रयत्न किया है। इस प्रकरण में विमल सरस्वती ने 86 पाणिनीय सूत्रों को अष्टाध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। जिन में से 25 सूत्र स्वरसन्धि प्रकरण में, 15 सूत्र प्रकृतिभाव प्रकरण में, 33 सूत्र व्यञ्जन सन्धिप्रकरण में तथा 13 सूत्र विसर्गसन्धि प्रकरण में हैं जो अधिकाधिक उदाहरण जानकारी करवाते हैं।

संस्कृत में सविभक्त पद ही प्रयोग किये जाते हैं। क्योंकि ''अपदं न प्रयुञ्जीत'' नियमानुसार जो पद नहीं हैं उसे संस्कृत में प्रयोग नहीं किया जा सकता। अतः प्रातिपदिक शब्दों को भी पद बनाने के लिए पाणिनीयव्याकरण में अनेक सूत्र प्राप्त हैं। प्रक्रियाग्रन्थों में पाणिनीय सूत्रों को सुबन्त पदों की रूपरचना के लिये अष्टाध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है ताकि प्रतिपदिकों से सुबन्त पदों की रचना की जा सके। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान विमल सरस्वती ने भी ऐसा ही किया है परन्तु इन्होंने प्रतिपादिकों के वर्गीकरण को अलग स्वरूप दिया है तदनुसार ही सूत्रों का चयन किया है।

---

1 शिवमभिवन्द्य विदध्मो मालामल्यां सुरूपकुसुमानाम्।
शिशुकण्ठभूषणार्थं पाणिनि सूत्रैरनेकगुणैः।। रूप मा0 संज्ञा वृत्ति।

2 एकस्त्रयः पुनश्चैको वेदा एकस्त्रयस्त्रयः।
एको द्वौ षट् तथेत्येकश्चत्वारः पञ्च षट् च ते।। रूप मा0 संज्ञा वृत्ति।

3 अष्टा0 8 - 4 - 47

4 अष्टा0 8 - 4 - 51

सुबन्त पदों की पूर्ण प्रक्रिया सिध्यर्थ विमल सरस्वती ने सर्वप्रथम अच् अन्त वाले प्रातिपदिकों के लिए सूत्रों का संग्रह किया है। इन्होंने अच् अन्तवाले पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नंपुस्कलिङ्ग. प्रतिपदिकों को सुबन्त रूपरचनार्थ मिश्रित दिया है क्योंकि इन्होंने अजन्त पुलिङ्ग. आदि प्रकरणों में विभाग नहीं किया है जबकि तीनों ही लिङ्गों से सम्बन्धित सुबन्त इस प्रक्रियाग्रन्थ में मिश्रित रूप में प्राप्त होते हैं।

इन्होंने प्रतिपदिकों के विभाग में एक नया तरीका अपंनाया है। विमल सरस्वती ने नितलिङ्ग और अनियत लिङ्ग. विभाग में प्रतिपदिकों को दो भागों में विभक्त किया है तथा इन की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी से सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

विमल सरस्वती ने प्रतिपादिकों का वर्गीकरण ही सराहनीय किया है। इन्होंने प्रतिपादिकों को अनियतलिङ्ग. और नियतलिङ्ग. प्रतिपादिकों में विभक्त करके रूपरचना जानकारी दी है। हलन्त प्रातिपदिकों की जानकारी के बाद, सर्वनाम और संख्यावाची प्रतिपदिकों को अजन्त और हलन्त से निकाल कर पृथक स्थान दिया है। वैदिक पदों की जानकारी पृथक प्रकरण में दी है।

भाषा में कुछ अनियतलिङ्ग प्रातिपदिक हैं और कुछ नियतलिङ्ग. प्रतिपदिक हैं। अनियतलिङ्ग. प्रतिपदिक उन्हें कहते हैं जो पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. एवम् नपुंस्कलिङ्ग. तीनों लिङ्गों में से मात्र एक लिङ्ग. के अर्थ वाचक होते हैं। विमल सरस्वती ने अनियतलिङ्ग. और नियतलिङ्ग. प्रतिपदिकों का चुनाव करके उनकी सिद्धि के लिए पृथक-पृथक प्रकरण दिये हैं। ग्रन्थकार ने रूपमाला में सर्वप्रथम अनियतलिङ्ग. प्रतिपदिकों को अजन्त और हलन्त दो भागों में विभक्त करके अजन्तमाला और हलन्तमाला दो प्रकरणों में वर्णन किया है। ग्रन्थकार ने इन प्रकरणों में पुलिलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. एवम् नपुस्कलिङ्ग. तीनों लिङ्गों का मिश्रित वर्णन किया है। इन्होंने प्रत्येक लिङ्ग. के लिए पृथक प्रकरण नहीं दिया है। विमल सरस्वती ने रूपमाला में सर्वप्रथम अजन्त प्रतिपदिकों की विभिन्न रूपरचना जानकारी का वर्णन किया है। इस प्रकरण को ''अजन्तमाला'' संज्ञा दी है। इस में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 94 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1] इस प्रकरण में अजन्त प्रतिपदिकों को अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त आदि क्रमानुसार रूपरचना के लिए उद्धृत किया है जो छात्रों सुविधाजनक रहा है।

अजन्त माला के उपरान्त रूपमाला में ''हलन्तमाला'' नामक प्रकरण दिया हे। इस में भी विमल सरस्वती ने हलन्तपुलिङ्ग., हलन्तस्त्रीलिङ्ग. और हलन्तनपुस्कलिङ्ग. प्रतिपदिकों का मिश्रित वर्णन किया है। इन्होंने इन की पृथक-पृथक जानकारी नहीं करवायी है। ग्रन्थकार ने उदाहरणों को रूपरचनार्थ कवर्गान्त, चवर्गान्त आदि क्रम से उद्धृत किया है। इस प्रकरण में 58 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है।[2]

हलन्तमाला प्रकरण के उपरान्त रूपमाला में ''सर्वनाममाला'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में सर्वनामशब्दों की रूपरचना के लिए पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम में दिया है। विमल सरस्वती ने अजन्त

---

1 रूप मा0 अजन्तमाला

2 रूप मा0 हलन्त माला

पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग., नपुंस्कालिङ्ग. तथा हलन्त पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. एवम् नपुंस्कलिङ्ग. सर्वनाम शब्दों का चयन करके इन के लिये पृथक प्रकरण दिया है।[1] इन का वर्णन अजन्त तथा हलन्तमाला में नहीं किया है। ग्रन्थकार ने रूपरचनार्थ शब्दों को अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त तथा कवर्गान्त, चर्वगान्ता आदि क्रम से दिया है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने 66 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है। इस के उपरान्त ''संख्यामाला'' प्रकरण है। विमल सरस्वती ने संख्या वाचक प्रतिपादिकों की जानकारी के लिए पृथक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण को विमल सरस्वती ने 14 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है।[2]

पूर्ववर्णित अनियतलिङ्ग. और नियतलिङ्ग. में अनियतलिङ्ग. के वर्णन के उपरान्त नियमलिङ्ग., जानकारी के लिए विमल सरस्वती ने ''नियतलिङ्ग.माला'' प्रकरण पृथक से दिया है। नियमलिङ्ग. प्रातिपदिक उन्हें कहते हैं जो केवल एक ही लिङ्ग. के वाचक हैं। सखि, पति आदि शब्दों की जानकारी के लिए विमल सरस्वती ने नियतलिङ्ग. माला प्रकरण दिया है। इनमें जो पुलिङ्ग. वाचक है उनके लिए ''पुलिङ्ग.ा:'' तथा जो स्त्रीलिङ्ग.वाचक है उनके लिए ''स्त्रीलिङ्ग.ा:'' नामक दो प्रकरण दिये हैं। इन दोनों प्रकरणों में क्रमश: 21 तथा 14 सूत्र हैं।

वैदिकपदों की जानकारी विमल सरस्वती ने मात्र 2 सूत्रों द्वारा दी है जिन में मासि, मासे, निशि, निशायाम् आदि वैदिकपदों की रूपरचना का वर्णन है।

अव्यय ज्ञानार्थ विमल सरस्वती ने रूपमाला प्रथम भाग के अन्त में ''अव्ययमाला'' नामक प्रकरण दिया है इस में 32 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है।

रूपमाला द्वितीय भाग में ''स्त्रीप्रत्यय माला'' ''कारक माला'' और ''तिङ्.न्तमाला'' प्रकरण हैं। ''स्त्रीप्रत्यय माला'' प्रकरण को विमल सरस्वती ने 41 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है जो अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में प्राप्त होते हैं क्योंकि स्त्रीप्रत्यय विधायक सूत्र तो चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद में हैं परन्तु रूपरचना में सहायक सूत्र विखरे हैं।

रूपमाला में ''स्त्रीप्रत्ययमाला'' प्रकरण की यह विशेषता है कि कुछ उदाहरणों का विमल सरस्वती ने कारिकाओं में उल्लेख किया है। कारिका में उल्लिखित उदाहरणों से सम्बन्धित सूत्र रूपमाला के ''स्त्रीप्रत्ययमाला'' प्रकरण में प्राप्त नहीं हैं। केवल उदाहरण ही कारिका में प्राप्त होते हैं। ग्रन्थकार उदाहरणों की जानकारी चाहते थे। अत: इन्होंने इन का वर्णन दिया है। इन्होंने ''स्त्रीप्रत्यय माला'' को बड़ा स्वरूप न देने के कारण ऐसा किया है। इस प्रकार के उदाहरण ''पिशङ्गी, शवली, काली, कल्माषी नित्यमिष्यते''[3] आदि कारिका में प्राप्त होते हैं। ''पिशङ्गी'' आदि उदाहरणों में ग्रन्थकार स्वमतानुसार ङीष् का नित्यत्व भी स्पष्ट करते हैं।

---

1 रूप मा0 संख्या माला

2 रूप मा0 संख्या माला

3 कारिका रूप मा0 स्त्रीप्रत्ययमाला

पिशङ्गी, लोहिता, लोहिनी, हरिता, रोहिता आदि अनेक उदाहरणों में "पिशङ्गादुपसंख्यानम्"[1] वार्तिक और "वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः"[2] "जानपदकुण्डगोण स्थलभाजनागकालनीलकुशकामुककबराद् वृत्यमत्रावपनाकृत्रिमाश्राणास्थौल्यवर्णनाच्छादनायोविकारमैथुनेच्छाकेशवेषु"[3] आदि सूत्रों से ङीप् और टाप् होने पर ये रूप सिद्ध होते हैं। ये सूत्र रूपमाला में नहीं दिये हैं। अतः स्पष्ट होता है कि कारिका में विमल सरस्वती ने उदाहरणों का उल्लेख तो कर दिया है, परन्तु रूपरचना सिद्धि से सम्बद्ध सूत्रों का वर्णन नहीं किया है। ये चाहते थे कि आवश्यकता पड़ने पर पाठक सूत्र जानकारी कर लें परन्तु वे रूपमाला को अल्पाकार ही देना चाहते थे।

रूपमाला द्वितीय भाग में "स्त्रीप्रत्यय माला" के उपरान्त कारकों से सम्बन्धित प्रकरण "कारकमाला" प्रारम्भ होता है। इस प्रकरण में विमल सरस्वती ने अष्टाध्यायी से सूत्र चुनकर उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इन में विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्रों का क्रम कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञा के क्रम से है तथा विभक्ति विधायक सूत्रों का क्रम प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति क्रम से है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाठकों की सुविधा के लिये केवल सूत्रक्रम को ही बदला है इसके बाद कोई अन्य विशेषता इस प्रकरण की नहीं है। कारक माला में केवल उपयोगी उदाहरणों के लिए उपयोगी सूत्र जानकारी ही है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 78 है जो विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिये हैं।[4]

रूपमाला द्वितीय भाग में तृतीय प्रकरण "तिङ्न्तमाला" है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने एक विशेष क्रम में दिया है। "तिङमाला" में विमल सरस्वती ने सर्वप्रथम सार्वधातुकलकारों से सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों का अष्टाध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है तदुपरान्त आर्धधातुकलकारों से सम्बद्ध उदाहरणों का उल्लेख है।

सार्वधातुकलकारों के प्रकरण में प्रत्येक धातु के उदाहरणों को लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ्लकारों के क्रम से दिया है। इस प्रकरण में भ्वादि के बाद अदादि, अदादि के बाद जुहोत्यादि, आदिक्रम से सभी गणों की मुख्य धातुओं के सार्वधातुक लकारों की रूपरचना का वर्णन किया है।[5]

सूत्रमूलकपद्धति में क्रियारूप विखरे हैं तथा क्रम रहित हैं। मालाकार ने इन क्रियारूपों को व्यवस्थित किया है तथा इन से सम्बन्धित अष्टाध्यायी में विखरे सूत्रों को प्रक्रियाक्रम में इकट्ठा दिया है।

तिङन्तमाला में सार्वधातुक लकारों का प्रकरण विमल सरस्वती ने 159 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है जो अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में प्राप्त होते हैं। परन्तु यहां छात्रों की सुविधा के लिए एक ही प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिये हैं। यह प्रकरण अल्पकाय है परन्तु अधिक परिणामी है।

---

1 महा० वा० 4-1-39
2 अष्टा० 4-1-39
3 अष्टा० 4-1-42
4 रूप मा० कारकमाला
5 रूप मा० तिङन्तमाला

तिङन्तमाला नामक भाग में सार्वधातुक लकारों के प्रकरण के उपरान्त ''सार्वधातुकमाला'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में मालाकार ने अर्थ सहित धातुपाठ दिया है जो पाणिनीय धातुपाठ के क्रमानुसार ही है। इस में सौत्र धातुओं का भी वर्णन है। इसी प्रकरण में भावकर्म प्रक्रिया और कर्मकर्तृप्रक्रिया का उल्लेख भी किया गया है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त तिङन्त माला में ग्रन्थकार ने आर्धधातुक लकारों से सम्बद्ध तिङन्तपदों की जानकारी के लिये आर्धधातुक लकारों का प्रकरण आरम्भ किया है। इस प्रकरण में लकारों को ''अ इ उण्'' आदि सूत्र क्रमांनुसार नहीं दिया है अर्थात् लट्, लिट्, लुट् आदि क्रमांनुसार नहीं दिया है।

आर्धधातुक लकारों के प्रकरणों में ''आशीर्लिङ्माला'' प्रकरण प्रारम्भ में है। इस प्रकरण में मालाकार ने भ्वादिगणों की मुख्य धातुओं के आशीर्लिङ्लकार की विभिन्न रूपरचनाओं का वर्णन किया है।[2] इस प्रकरण में 22 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। तदुपरान्त 11 सूत्रों में लुट्लकार की जानकारी है। 6 सूत्रों में लृट्लकार का वर्णन है। लृङ्लकार में मात्र 2 सूत्र हैं। 54 सूत्रो में लुङ्लकार के मुख्य उदाहरण देकर प्रकरण पूर्ण किया है। लिट्लकार को 61 पाणिनीय सूत्रों द्वारा वर्णित किया है। लेट्लकार के ज्ञानार्थ ''लिङर्थे लेट्''[3] मात्र एक ही सूत्र है।

मालाकार ने लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्, आशीर्लिङ्माला आदि प्रकरणों में तिङन्तपदों की जानकारी करवायी है। प्रत्येक लकार में सरस्वती ने भ्वादि के बाद अदादि, अदादि के बाद जुहोत्यादि, आदिक्रम से सभी गणों की धातुओं की विभिन्न रूपरचना का वर्णन किया है। इस से पाठकों को यह सुविध ा हुई कि सूत्रमूलकपद्धति में विखरे और क्रमरहित तिङन्तपदों की जानकारी वे रूपरचनाक्रम से एक प्रकरण में प्राप्त करने लगे।

विमल सरस्वती ने रूपमाला तृतीय-भाग में शेष तिङन्तपदों की जानकारी के लिए सर्वप्रथम सनादिभाग, लकारार्थ भाग, परस्मैपदात्मनेपद भाग नामक प्रकरणों में वर्णन किया है तदुपरान्त कृदन्तमाला, षत्वणत्वमाला तथा तद्धितमाला प्रकरण हैं।

व्याकरण में इच्छा, आचार, बार-बार होना या अधिक होना, प्रेरणा आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं तथा प्रतिपदिकों से सन् , क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, यङ्, णिच् आदि प्रत्ययों का विधान है। सूत्रमूलकपद्धति में इन प्रत्ययों का उल्लेख तृतीय अध्याय में है। परन्तु वहां केवल प्रत्ययों का ही विधान है अन्य रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र इस पद्धति में विखरे हैं। पाठक काशिका के उपरान्त पूर्णप्रक्रिया के सूत्र एक साथ एक क्रम से चाहने लगे थे। अत: मालाकार ने इच्छा आदि अर्थ प्रकट करने वाले पदों की जानकारी के लिए सनादिभाग में पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक सूत्र दूसरे अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। ये

---

1 रूप मा0 सार्वधातुक माला

2 रूप मा0 आशीर्लिङ्. माला

3 आष्टा0 3-4-7

पद धातुसंज्ञा के बाद तिङन्त निर्मित होते हैं। अतः इन्हें तिङन्त पद कहते हैं। यही कारण है कि मालाकार ने इन्हें प्रक्रियाक्रम में तिङन्त माला में स्थान दिया है। सन्, क्यच्, काम्यच् आदि प्रत्ययों में सन् प्रत्ययविध ायकसूत्र ''गुप्तिज्किद्भ्यः सन्''[1] अष्टाध्यायी में अन्य प्रत्ययविधायक सूत्रों से पूर्व है। मालाकार ने भी इसी प्रत्यय से रूपरचना का प्रारम्भ किया है तथा सभी प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन इसी प्रकरण में दिया है। अतः इन्होंने प्रकरण को ''सनादिभाग'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिए मालाकार ने 106 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है।

सनादिभाग के उपरान्त रूपमाला में ''लकारार्थ भाग'' प्रकरण है। इस भाग में विमलसरस्वती ने पाणिनीयव्याकरण में बिखरे लकारार्थो से सम्बन्धित सूत्रों का संग्रह करके प्रक्रियाक्रम से किया है। इस प्रकरण में मात्र 16 सूत्र हैं क्योंकि अनेक सम्बन्धित सूत्र पूर्व प्रकरणों में आ गये हैं।

सनादिभाग के अन्त में ''परस्मैपदात्मनेपद भाग'' प्रकरण है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी में वर्णित परस्मैपद तथा आतमनेपद विधायक सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। सुविधानुसार समान रूपरचना ज्ञानार्थ अष्टाध्यायी के सूत्रों को आगे पीछे किया है। जैसे : ''अपह्नवे ज्ञः''[2] सूत्र में वर्णित ज्ञ के प्रसङ्ग. में ''अनुपसर्गाज्ज्ञः''[3] सूत्र को पीछे किया गया है तथा ''वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः''[4] सूत्र में वर्णित क्रम के प्रसङ्ग. में ''उपपराभ्याम्''[5] सूत्र को पीछे से उठाकर आगे दिया गया है। इस तरह समान रूपरचना के लिए सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा प्रकरण का नाम भी विषयानुसार परस्मैपदात्मनेपद भाग दिया है। इस प्रकरण में परस्मैपद और आत्मनेपद विधायकसूत्र मिश्रित ही दिये हैं तथा केवल उपयोगी सूत्रों का ही वर्णन किया है। इस प्रकरण में 34 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[6]

इस प्रकरण के उपरानत ''कृदन्तमाला'' प्रकरण है। धातु से जिस प्रत्यय को जोड़कर संज्ञा, विशेषण तथा अव्यय बनते हैं उस प्रत्यय को कृत् प्रत्यय कहते हैं। धातु तथा कृत् प्रत्यय के योग से बने पदों को कृदन्त पद कहते हैं। मालाकार ने कृदन्त पदों की जानकारी के लिए रूपमाला तृतीय भाग में सनादिभाग के उपरान्त ''कृदन्तमाला'' नामक प्रकरण दिया है। पाणिनीयव्याकरण अष्टाध्यायी में कृत् प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्र तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं। विमल सरस्वती ने इन सूत्रों में से कृदन्त पदों की जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार सूत्रों का चयन किया है अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है। कृदन्त पदों की रूपरचना के लिए प्रत्यय विधायक इन सूत्रों के बीच रूपरचना से सम्बद्ध अन्य सूत्र भी हैं । इस से पाठकों को यह सुविधा हुई कि पाठक कृदन्त पदों की जानकारी एक प्रकरण में ही प्राप्त करने लगें। इस प्रकरण को विमल सरस्वती ने 273 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण क़िया है।[7]

---

1 अष्टा0 3-1-5
2 अष्टा0-1-3-44
3 अष्टा0-1-3-76
4 अष्टा-1-3-38
5 अष्टा0 1-3-39
6 रूप मा0 सनादि भाग
7 रूप मा0 कृदन्तमाला

इस प्रकरण के उपरानत रूपमाला में ''षत्वणत्वमाला'' प्रकरण दिया है। इस प्रकारण में सकार को षकार और नकार को णकारादेश करने वाले सूत्र प्रक्रियाक्रम में प्राप्त होते हैं। ये सूत्र अष्टाध्यायी में अष्टम अध्याय तृतीय और चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों में से सरस्वती ने रूपरचना जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार चयन किया है। इस प्रकरण में 41 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है इन में षत्व, णात्व आदेश करने वाले सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं।[1]

षत्वणत्वमाला प्रकरण के उपरानत रूपमाला तृतीय भाग के अन्त में ''तद्धितमाला'' प्रकरण का प्रारम्भ होता है। व्याकरण में अनेक प्रत्यय ऐसे हैं जो संज्ञा, विशेषण तथा सर्वनाम शब्दों से प्रयुक्त होकर अनेक अर्थ निकालते हैं। जैसे :- कुन्ती संज्ञा शब्द से ''स्त्रीभ्योढक्''[2] सूत्र से ढक् प्रत्यय् करने पर पूर्णप्रक्रिया के उपरानत ''कौन्तेय:'' पद सिद्ध होता है। यह पद ''कुन्ती का पुत्र'' अर्थवाचक है। इस प्रकार के अनेकार्थ वाचक प्रत्ययों को तद्धित प्रत्यय कहते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में तद्धित प्रत्ययों का उल्लेख चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में प्राप्त होता है। परन्तु वहां केवल तद्धतिप्रत्ययों की ही जानकारी है। पाठक काशिका के कुछ समय बाद तद्धितान्त पदों की पूर्ण रचना जानकारी एक प्रकरण में चाह रहे थे। अत: विमल सरस्वती ने समय का लाभ उठाकर इस प्रकरण को प्रक्रियाक्रम से दिया है। पाठक तद्धितों से सम्बन्धित सूत्रों की संख्या से भी घबराने लगे थे। विमल सरस्वती ने पाठकों की समस्या को जानकर तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को प्रकरणानुसार वांट दिया है तथा उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए केवल आवश्यकतानुसार ही सूत्रों का चयन किया है अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है बड़े प्रकरण को छोटे प्रकरण में विभक्त करने से पाठकों की भावना में अन्तर आता है। अत: सरस्वती ने भी तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध प्रकरण को रूपरचना जानकारी के लिए छोटे-छोटे प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से दिया है।

तद्धितमाला में सर्वप्रथम ''अपत्यप्रकरण'' है। इस प्रकरण में उदाहरणों की रूपरचना के लिए अपत्यर्थ में प्रत्यय करने वाले सूत्रों का संग्रह किया गया है। उदाहरणों की सिद्धि में सहायक सूत्र भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिये गये हैं। इस प्रकरण में 46 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''रक्ताद्यर्थ प्रकरण'' है। इस प्रकरण का ग्रन्थकार ने रूचिकर वर्णन किया है। इस प्रकरण में अनेक अर्थो में प्रत्ययों का उल्लेख है परन्तु उन प्रत्ययों में रागवाची शब्द से रक्त इस अर्थ में अण् प्रत्यय करने वाला सूत्र ''तेन रक्तं रागात्''[4] आदि में दिया है। अत: ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को रक्ताद्यर्थ प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में पाणिनीय 30 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[5]

---

1 रूप मा0 षत्वणत्व माला
2 अष्टा0 4-1-120
3 रूप मा0 अपत्य प्रकरण
4 अष्टा0 4-2-1
5 रूप मा0 रक्ताद्यर्थ प्रकरण

तदुपरान्त चातुरर्थिक प्रकरण है। इस प्रकरण में 19 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[1] इसी प्रकरण के साथ रूपमाला तृतीय भाग सम्पन्न हो जाता है।

रूपमाला चतुर्थ भाग प्रारम्भ ''तद्धितमाला'' प्रकरण में ''शैषिक" भाग से होता है। ग्रन्थकार ने अपत्य अर्थ से लेकर चातुरर्थिक पर्यन्त से भिन्न शेष तद्धितों को शेष तद्धित माना है। इन शेष प्रत्ययों से सम्बन्धित तद्धितों को शैषिक प्रकरण में रखा है। ग्रन्थकार ने शैषिकप्रकरण को आवश्यकतानुसार छोटे-छोटे भागों में विभक्त करने के लिए ''विकारार्थ'' ''ठगधिकार'', आदि प्रकरणों में विभक्त किया है। शौषिक प्रकरण में ''विकारार्थ'' प्रकरण तक विभिन्न रूपरचनार्थ 63 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रिया क्रम से उल्लेख किया है।[2]

तदुपरान्त ''विकारार्थ'' प्रकरण है इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों से विकारार्थ प्रकट करने के लिए विकारार्थक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 15 है।[3]

तदुपरान्त ''ठगधिकार'' प्रकरण है इस में ग्रन्थकार ने ठक् प्रत्यय के अधिकार में आने वाले प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में 24 सूत्र हैं।[4] इसी प्रकार विमल सरस्वती ने किसी एक सूत्र का आश्रय लेकर उस अधिकारी सूत्र में वर्णित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को पृथक-पृथक प्रकरणों में रूपरचूनार्थ प्रक्रियाक्रम से दिया है। ठगधिकार में आये प्रत्ययों के उपरान्त शेष तद्धित प्रत्ययों का वर्णन विमल सरस्वती ने ''प्राग्धितीयाधिकार'' ''छयतोरधिकार'' ''कालाधिकार'' ''भवनाधिकार'' ''मतुबर्थीय'', ''स्वार्थिक'' आदि प्रकरणों में किया है। इन प्रकरणों में ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक विभिन्न सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से उठाकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[5]

विमल सरस्वती ने रूपमाला में ''तद्धितमाला'' के उपरान्त "समासमाला" प्रकरण दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में समासविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीय पाद में प्राप्त हैं। समस्त पदों की जानकारी के लिए केवल समासविधायक सूत्रों से ही कार्य नहीं चलता है। इन के ज्ञान के लिए समासान्त प्रत्यय विधायक सूत्रों तथा एक शेष विधायक सूत्रों के बाद अन्य समास कार्यो से सम्बद्ध सूत्रों की जानकारी भी आवश्यक है। सूत्रमूलकपद्धति में समासान्त प्रत्ययविधायकसूत्र पञ्चय अध्याय चतुर्थ पाद में है। समास प्रक्रिया मे पूर्व या उत्तर दो पदों में से एक पद शेष रखने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। कुछ समास कार्यो से सम्बन्धित सूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद और द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं।

---

1 रूप मा0 चातुरार्थ प्रकरण

2 रूप मा0 शैषिका:

3 रूप मा0 विकारार्था:

4 रूप मा0 ठगाधिकार

5 रूप मा0 तद्धितमाला

काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के कुछ समय बाद पाठक समास सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना करने में कठिनाई का अनुभव कर रहे थे क्योंकि इस पद्धति में कम से कम छः अध्यायों का अध्ययन जरूरी है। अतः विमल सरस्वती ने पाणिनीयव्याकरण के इन समास कार्यों से सम्बन्धित विखरे सूत्रों का संग्रह किया और रूपमाला के ''समासमाला'' प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1]

समासमाला में सर्वप्रथम समास विषय में कुछ चर्चा के उपरान्त ''अव्ययीभाव'' समास का वर्णन हे। ग्रन्थकार ने उदाहरणों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार अष्टाध्यायी के द्वितीय अध्याय प्रथम और चतुर्थ पाद के बाद षष्ठ अध्याय से सूत्रों को चुनकर इसी प्रकरण में प्रक्रिया क्रमानुसार दिया है। इस कारण पाठक रूपरचना में कोई समस्या नहीं समझते क्योंकि हर समस्या का समाधान उन्हें इसी प्रकरण में हो जाता है। इस प्रकरण में मात्र 21 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग है।

अव्ययीभाव के उपरान्त ''तत्पुरूष समास'' प्रकरण है। इस प्रकरण में क्रम से द्वितीयान्त, तृतीयान्त आदि विभक्त्यान्त पदों का समर्थ सुबन्तों के साथ समास का वर्णन है। इसके बाद कर्मधारयतत्पुरुष के उदाहरणों से सम्बन्धित सूत्र हैं। तदुपरान्त कर्मधारय समास के भेद द्विगु से सम्बन्धित उदाहरण और सूत्र हैं। इस प्रकारण में 68 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। ''बहुव्रीहि समास'' प्रकरण में 14 सूत्र हैं तथा ''द्वन्द्वसमास'' प्रकरण में 22 सूत्र हैं। इन 22 सूत्रों में ''रात्राह्नाहा: पुंसि''[2] आदि 5 सूत्र लिङ्ग. ानुशासन ज्ञान भी करवाते हैं।

समासमाला में द्वन्द्व समास के उपरान्त समास के अन्त में अ, टच् आदि समासान्त प्रत्यय करने वाले सूत्रों का प्रकरण दिया है। इसे ''समासान्त भाग'' संज्ञा दी गयी है। अष्टाध्यायी में समासविधायक सूत्रों के उपरान्त जाकर पञ्चम अध्याय में समासन्तप्रत्यय करने वाले सूत्र प्राप्त होते हैं। इस बीच अनेक कार्यो से सम्बन्धित जानकारी है परन्तु मालाकार ने ''समासमाला'' में ही ''समासान्त भाग'' प्रकरण दे दिया है। इस से पाठकों को बहुत सुविधा होती है। इस प्रकरण में 49 पाणिनीय सूत्रों को रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''एक शेष भाग'' प्रकरण में ''पुमान् स्त्रिया''[3] आदि छः सूत्रों को उदाहरण रूपरचनार्थ प्रक्रिया क्रम में दिया है। सम्बन्धित सूत्र समास प्रक्रिया में पूर्व या उत्तर पदों में से एक पद शेषार्थ उल्लेख करते हैं। ये सूत्र अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय द्वितीय पाद में प्राप्त होते हैं। जबकि समासविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय में हैं। समासविधायक सूत्रों से पूर्व इन सूत्रों को समझना कठिन है। अतः ग्रन्थकार ने इन्हें ''समासमाला' में ''समासन्तभाग'' के उपरान्त उचित स्थान दिया है।

''एकशेषभाग'' प्रकरण के उपरान्त ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में 51 सूत्रों का उल्लेख उदाहरणों सहित प्रक्रियाक्रम में दिया है।[4] ये सूत्र अष्टाध्यायी षष्ठ अध्याय में प्राप्त होते हैं।

1 रूप मा० समासमाला
2 अष्टा० 2-4-29
3 अष्टा० 1-2-67
4 रूप मा० समासाश्रयविधि।

सम्बन्धित प्रकरण में उदाहरणों की रूपरचना समास पर आश्रित है। अत: ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''समासमाला'' में दिया है तथा इस का नाम विषयानुसार ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण दिया है। इसी प्रकरण के साथ ''समासमाला'' प्रकरण समाप्त हो जाता है।

''समासमाला'' के उपरान्त ''द्विरुक्त'' प्रकरण प्रारम्भ होता है। इस प्रकरण में बार बार तथा व्याप्तीच्छा प्रकट करने वाले पाणिनीयसूत्र दिये हैं। ये सूत्र सूत्रमूलकपद्धति में अष्टम अध्याय प्रथम-पाद में प्राप्त होते हैं। इस प्रकरण में इन सूत्रों की संख्या 6 है। तदुपरान्त ''षत्वसत्वणत्वमाला'' प्रकरण है। इस प्रकरण में नकार को णकारादेश तथा विसर्ग को सकार तथा षकारादेश करने वाले सूत्रों का वर्णन है। इन सूत्रों को इस प्रकरण में उदाहरण जानकारी हेतु अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय से उठाकर दिया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 29 है।[1] विमल स्वरस्वती ने रूपमाला में सभी पाणिनीय सूत्रों का उल्लेख नहीं किया है परन्तु इनका वर्णन अधिकाधिक ज्ञान करवाता है। इन्होंने सर्वप्रथम साधारण वाक्यज्ञानार्थ सन्धि, सुबन्त, स्त्रीप्रत्यय और तिङन्तपदों की जानकारी करवायी है तदुपरान्त प्रक्रिया, कृदन्त, तद्धित तथा समास ज्ञान की जानकारी दी है। इनका वर्णन रूचिकर है जिस से पाठकों का ध्यान व्याकरण अध्ययन में दृढ़ होता है।

4. प्रक्रियाकौमुदी ग्रन्थकार रामचन्द्र

रामचन्द्राचार्य ने विक्रम सम्वत् 1450 के लगभग पाणिनीय अष्टाध्यायी पर ''प्रक्रियाकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। यह ग्रन्थ रामचन्द्र से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों से विस्तृत है परन्तु इस में भी पाणिनीय अष्टाध्यायी के समस्त सूत्रों का उल्लेख नहीं है। रामचन्द्र ने व्याकरणशास्त्र में प्रवेश के इच्छुक पाठकों के लिए प्रक्रियाकौमुदी की रचना की है। नाम से ही ज्ञात हो जाता है कि इस ग्रन्थ का मुख्य उदेश्य प्रक्रियाक्रम से व्याकरणज्ञान करवाना है।

''प्रक्रियाकौमुदी'' में रामचन्द्राचार्य का जीवन वृत्त प्राप्त नहीं होता है। परन्तु सम्भवत: ''रूपावतार'' से प्रेरणा प्राप्त करके रामचन्द्र ने चौदवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ''प्रक्रियाकौमुदी'' की रचना की है।[2] रामचन्द्राचार्य का वंश शेषवंश कहाता है।[3] इस वंश के अनेक वैयाकरणों ने पाणिनीयव्याकरण पर अनेक पौढ ग्रन्थ रचे हैं। रामचन्द्र के पिता का नाम ''कृष्णाचार्य'' था।[4] रामचन्द्र का पुत्र नृसिंह था। रामचन्द्र ने अपने पिता कृष्णाचार्य तथा ताऊ गोपालाचार्य से विद्याध्ययन किया था।[5] रामचन्द्र के बड़े भाई का पुत्र शेषकृष्ण रामचन्द्राचार्य का शिष्य था। इन के बड़े भतीजे और शिष्य शेषकृष्ण ने ''प्रक्रियाकौमुदी'' पर ''प्रक्रियाप्रकाश'' नामक टीका लिखी है तथा पौत्र विट्ठल ने ''प्रक्रियाप्रसाद'' नामक अन्य टीका लिखी है।

---

1 रूप मा0 षत्वसत्वणत्वमाला।

2 प्रक्रियाकौमुदी विर्मश: पृष्ठ 16

3 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 589

4 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 589

5 सं0 व्या0 शा0 का इति0 पृष्ठ 589

''रूपावतार'' ''प्रक्रियारत्न'' ''रूपमाला'' के उपरान्त रामचन्द्र ने प्रक्रियाक्रम में, एक विशिष्ट क्रम से 'प्रक्रियाकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ व्याकरणपरम्परा को प्रस्तुत किया है। इस ग्रन्थ के नाम से ही स्पष्ट होता है कि यह ग्रन्थ प्रक्रियाक्रम में एक प्रकार से कौमुदी अर्थात् चांदनी प्रस्तुत करने वाला ग्रन्थ है तथा इस को पढ़ने से इस की अन्वयर्थक संज्ञा का प्रमाण मिला है। कुछ काल तक यह ग्रन्थ सार्थक रूप में व्याकरणपरम्परा में प्रसिद्ध रहा परन्तु समायानुसार परिवर्तनशील संसार में अनेक समस्याओं के कारण इस की विशेषता कम हो गयी।

प्रक्रियाकौमुदी रूपरचना प्रधान ग्रन्थ है विषय प्रधान ग्रन्थ नहीं है। प्रत्येक रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने सम्बन्धित सूत्र का उल्लेख किया है। प्रसङ्ग. वश एक सूत्र को अनेक बार भी उद्धृत किया है परन्तु उस सूत्र को व्याख्या सहित एक बार ही दिया है। दूसरी बार किसी रूपरचना में आवश्यकता पड़ने पर सूत्र स्मरणार्थ मात्र सूत्र या सूत्रार्ध भाग को उद्धृत किया है। इस प्रकार एक रूपरचना पूर्ण करने पर दूसरी रूपरचना के लिए सूत्रों का क्रमिक वर्णन है।

रामचन्द्र ने उदाहरण देने में रूपावतार, रूपमाला आदि ग्रन्थों का अनुकरण नहीं किया है। इन ग्रन्थों में जो उदाहरण हैं रामचन्द्र ने उन में से तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त उदाहरणों का ग्रहण किया है शेष छोड़ दिये हैं। प्रक्रियाकौमुदी में पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से उदाहरण अधिक हैं क्योंकि ग्रन्थकार ने भाषा में प्रयुक्त पदों का अधिकाधिक वर्णन किया है।

रूपमाला में ''लाकृति'' सन्धिप्रकरण में प्रथम उदाहरण हैं। ''प्रक्रियाकौमुदी'' में ''सुध्युपास्य'' ''अच्सन्धिप्रकरण'' में प्रथम उदाहरण है यद्यपि लाकृति उदाहरण भी दिया है। परन्तु ग्रन्थकार ने भाषा में प्रयुक्त अन्य शब्दों का वर्णन भी किया है। प्रक्रियाकौमुदी में दिये गये उदाहरण पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से लगभग भिन्न है। पूर्वप्रक्रियाग्रन्थों के उदाहरण काशिका से मेल रखते हैं। इन्होंने काशिका के उदाहरणों को भी आवश्यकतानुसार स्थान दिया है। किसी भी ग्रन्थ की प्रसिद्धि के लिए भाषा में प्रयुक्त कार्यो का वर्णन आवश्यक होता है। इसी तरह व्याकरण को लोकप्रसिद्ध करने के लिए लोकप्रसिद्ध शब्दों का उल्लेख करना जरूरी है। रामचन्द्राचार्य ने भी ''प्रक्रियाकौमुदी'' को लोकप्रसिद्ध करने के लिए भाषा में प्रयुक्त उदाहरण दिये हैं तथा उनकी रूपरचना के लिए पाणिनीय अष्टाध्यायी से सूत्रों को चुनकर प्रत्येक प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है।

रामचन्द्र की यह समस्या थी कि इन से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थ तत्काल प्रयुक्त शब्दों का वर्णन नहीं कर रहे थे। इन से पूर्व रचित रूपावतार आदि ग्रन्थ मात्र कुछ पदों का उल्लेख करते थे। शेष तत्काल प्रयुक्त पदों की जानकारी के लिए पाठकों को अन्य पाणिनीयेतर व्याकरणों का अध्ययन करना पड़ता था या सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही अधिक परिश्रम से जानकारी करनी पड़ती थी। सूत्रमूलकपद्धति उस समय अनेक समस्याओं से घिर गयी थी।

रामचन्द्र ने पाठकों की समस्या समाधान हेतु सरल ढंग से ''प्रक्रियाकौमुदी'' की रचना की। रामचन्द्र ने त्रिमुनि व्याकरण को रूचिकर क्रम से प्रस्तुत किया है। इन्होंने समयानुसार उपयोगी सूत्रों का वर्णन किया है कुछ पाणिनीय सूत्रों, कात्यायन के वार्तिकों तथा महाभाष्य की इष्टियों को छोड़ दिया है। अनेक स्थानों पर रामचन्द्र ने त्रिमुनि मत के उपरान्त अन्य पाणिनीयपरम्परा से भिन्न आचार्यो के मत भी उद्धृत किये हैं। उन स्थानों पर किसी आचार्य का नामोल्लेख नहीं है परन्तु वहां उक्त "केचित्" पद यह सिद्ध करता है कि ये मत त्रिमुनि मत के उपरान्त किसी अन्य आचार्य के हैं क्योंकि वहां उद्धृत उदहारण भी पाणिनीयपरम्परा से भिन्न हैं। जैसे :- सरव्युः, सुत्युः उदाहरणों में ''ख्यत्यात्परय''[1] सूत्र से यणादेश होने पर खि और ति से परे ङसि, ङस् के अकार को उकारादेश होता है सख्युः तथा सुत्युः पद सिद्ध होते हैं। प्रक्रियाकौमुदी में इन उदाहरणों के प्रसङ्ग. में ''वेतिकेचित्''[2] यह सिद्ध करता है कि अन्य आचार्यो के मत में उकार विकल्प से होता है। अतः प्रक्रियाकौमुदी में सख्यः, सुत्यः पद भी उदाहरणार्थ दिये हैं। इसी तरह ''आमि शसि च तृज्वद्भावो वेति केचित्''[3] नियमानुसार कुछ आचार्यो के मत में आम और शस विभक्ति परे रहते भी क्रोष्टू को तृज्वद् भाव होता है। उनके मत में क्रोष्टृन और क्रोष्टृणाम् पद भी सिद्ध होते हैं। इसी तरह अनेक स्थानों पर प्रक्रियाकौमुदी में रामचन्द्राचार्य ने अपाणिनीय मतों का समर्थन भी किया है।

प्रकरणों का विषयवार विभाजन भी रामचन्द्र ने प्रशंसनीय किया है। इन्होंने सर्वप्रथम सुबन्त तथा तिङन्त पदों का विभाजन किया है तदुपरान्त उन में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के पदों को विभिन्न प्रकरणों में प्रस्तुत किया है। रामचन्द्र ने प्रक्रियाकौमुदी को पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दो भागों में विभक्त किया है। पूर्वाध में सुबन्त पदों का और उत्तरार्ध में तिङन्तपदों का उल्लेख है।[4] पूर्वार्ध में सन्धि, षड्लिङ्ग., समास तथा तद्धित हैं उत्तरार्ध में तिङन्त प्रत्ययों से सम्बन्धित विभिन्न क्रियारूपों तथा कृदन्तपदों की जानकारी है। इन से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में इस तरह का वर्गीकरण नहीं है। पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में सुबन्त तथा तिङन्त प्रकरण मिश्रित हैं।

प्रक्रियाकौमुदी में सर्वप्रथम संज्ञा प्रकरण है। इस में मङ्ग.लाचरण के उपरान्त "अ इ उण्" आदि प्रत्यहार सूत्र दिये हैं। संज्ञा प्रकरण मे रामचन्द्राचार्य ने पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्र ''उपदेशेऽजनुनासिक इत्''[5] सूत्र को प्रक्रियाकौमुदी में प्रथम स्थान दिया है। रामचन्द्र ने ''प्रक्रियाकौमुदी'' संज्ञाप्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के 30 सूत्रों का संग्रह किया है। इस प्रकरण में ''आद्यन्तौ टकितौ''[6] आदि 4 सूत्र परिभाषासूत्र हैं। इन सूत्रों को भी ग्रन्थकार ने संज्ञाप्रकरण में ही दिया है जबकि ये परिभाषासूत्र हैं। ''प्रक्रियाकौमुदी'' में सूत्रवृत्ति काशिकावृत्ति का अनुकरण करती है फिर भी इस में भिन्नता है क्योंकि इसे

---

1 अष्टा0 6-1-112
2 प्रक्रि0 पृष्ठ 260
3 प्रक्रि0 पृष्ठ 265
4 प्रक्रियाकौमुदी
5 अष्टा0 1-3-2
6 अष्टा0 1-1-46

सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। रामचन्द्र ने ''स्थानिवदादेशोऽनलविधौ''[1] अतिदेश सूत्र भी प्रसङ्. वश संज्ञा प्रकरण में दिया है क्योंकि उक्त सूत्र के उपरान्त सन्धिप्रकरण की शुरूआत है। अत: इस सूत्र को सन्धिप्रकरण से पूर्व उद्धृत किया है।

संज्ञा प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियाकौमुदी'' में सन्धिप्रकरण है। रामचन्द्राचार्य ने ''सन्धिप्रकरण'' को चार भागों में विभक्त किया है। इन से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में अच्सन्धि, हल्सन्धि तथा विर्गसन्धि आदि तीन प्रकरणों में सन्धियों का उल्लेख है। परन्तु रामचन्द्राचार्य ने अच्, हल्, विसर्ग सन्धि के बाद सु प्रत्यय से सम्बद्ध या सु प्रत्ययान्त शब्दों का अन्य सन्धि योग्य शब्दों के साथ सन्धि का वर्णन पृथक प्रकरण में दिया है। इन से पूर्व ग्रन्थकारों ने इसे विसर्गसन्धि प्रकरण में ही दिया है क्योंकि इस प्रकरण का सम्बन्ध विसर्गसन्धि से है। अत: रामचन्द्राचार्य से पूर्व ग्रन्थकारों ने स्वादि सन्धि का अलग उल्लेख नहीं किया है। रामचन्द्र ने पाठकों की सुविधा के लिए ''स्वादिसन्धि" प्रकरण को विसर्ग सन्धि से निकाल कर अलग दिया है।

सन्धि प्रकरण में ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम अच्सन्धि का वर्णन किया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए रामचन्द्र ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है । पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों के समान प्रकृतिभाव सम्बन्धी जानकारी भी इसी प्रकरण में है। इस प्रकरण में 48 पाणिनीयसूत्र और 12 वार्तिक है।[2]

अच्सन्धि के उपरान्त ''प्रक्रियाकौमुदी'' में "हल्सन्धिप्रकरण" दिया है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने श्चुत्व, ष्टुत्व प्रसङ्. से प्रारम्भ किया है। जिसे वैज्ञानिक उपज कहा जा सकता है। इस से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में ''हल्सन्धि'' प्रकरण जशत्व प्रसङ्. से प्रारम्भ होता है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने 21 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] इस प्रकरण में दिये गये उदाहरण काशिका तथा पूर्व रूपावतार आदि प्रक्रियाग्रन्थों से लगभग भिन्न हैं। रामचन्द्र ने पूर्व ग्रन्थों में उक्त उदाहरणों के स्थान पर नवीन उदाहरणों का प्रयोग किया है।

हल्सन्धि प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियाकौमुदी" में "विसर्गसन्धिप्रकरण" दिया है। विसर्गसन्धिप्रकरण में रामचन्द्राचार्य ने लगभग काशिका में प्रयुक्त उदाहरणों का अनुकरण किया है। इन्होंने पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में प्रयुक्त उदाहरणों और सूत्रवृत्ति का अनुकरण नहीं किया है। प्रक्रियाकौमुदी से पूर्व रचित रूपमाला में प्रयुक्त उदाहरण तथा सूत्रवृत्ति काशिका के अतिरिक्त अन्य वृत्ति का अनुकरण करती है। रामचन्द्र ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी के 5 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[4]

---

1 अष्टा0 1-1-56
2 प्रक्रि0 अच् सन्धि प्रकरण
3 प्रक्रि0 हलसन्धि प्रकरण
4 प्रक्रि0 विसर्गसन्धि प्रकरण

विसर्गसन्धि प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियाकौमुदी'' में ''स्वादिसन्धि'' प्रकरण है। सु प्रत्यय से सम्बद्ध या सु प्रत्ययान्त शब्दों का अन्य सन्धि योग्य शब्दों के साथ सन्धि का वर्णन पृथक प्रकरण में दिया है। ये उदाहरण विसर्ग सन्धि से सम्बद्ध है परन्तु इनका वर्णन रामचन्द्र ने विसर्गसन्धि में न देकर पाठकों की सुविधार्थ पृथक प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने 13 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है। इस प्रकरण में 3 वार्तिक हैं।

सन्धिप्रकरण के उपरान्त प्रक्रियाकौमुदी में ''स्वादिप्रक्रिया'' नामक प्रकरण है। प्रसिद्ध नियम ''अपदम् न प्रयुञ्जीत्'' के अनुसार जो पद नहीं है उसे भाषा में प्रयोग नहीं किया जा सकता। इस समस्या के समाधान हेतु रामचन्द्र ने सूत्रमूलकपद्धति में विखरे सुबन्त पदों से सम्बन्ति उदाहरणों की रूपरचना का वर्णन किया है ताकि ये सुबन्त पदों की संज्ञा पाकर भाषा में प्रयोग किये जा सकें।

रामचन्द्र ने सुबन्त पदों की जानकारी के लिए प्रातिपदिकों को छः भागों में विभक्त किया है। इन्होंने अपने से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों के वर्गीकरण का अनुकरण नहीं किया है। इन से पूर्व ग्रन्थकारों ने भी प्रातिपादिकों को रोचक वर्गीकरण में विभक्त करके रोचक प्रकरणों में सुबन्त पदों की जानकारी दी है। परन्तु इन्होंने उन प्रक्रियाकारों का अनुकरण नहीं किया है। इन्होंने विभिन्न प्रातिपदिकों को एक नवीनक्रम में रखा है और उसी के अनुसार प्रकरण का नामकरण किया है प्रत्येक प्रकरण से सम्बन्धित उदाहरण और सूत्र उसी प्रकरण में एक विशेष क्रम में दिये हैं।

रामचन्द्र ने प्रातिपदिकों का रोचक वर्गीकरण किया है। इन्होंने प्रातिपादिकों को सर्वप्रथम अजन्त प्रातिपदिक और हलन्तप्रातिपदिक दो वर्गों में विभक्त किया है। इन दोनों को पुनः तीन-तीन भागों में विभक्त किया है। संस्कृत में तीन लिङ्ग. होने के कारण स्वभाविक है कि प्रातिपादिक शब्द भी तीन लिङ्गों में विभक्त है। रामचन्द्राचार्य ने सर्वप्रथम अजन्तप्रातिपदिकों को अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा अजन्त नपुंस्कलिङ्ग. शब्दों के रूप में वर्गीकृत किया है। इसी तरह हलन्तप्रतिपदिकों को हलन्तपुलिङ्ग., हलन्तस्त्रीलिङ्ग. और हलन्त नपुंस्कालिङ्ग. के रूप में वर्गीकृत किया है। इस वर्गीकरण में पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों के वर्गीकृत प्रातिपदिक अपने प्रकरणों में सम्मिलित हो गये हैं।

इसके उपरान्त रामचन्द्र ने इन अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग. आदि प्रातिपदिकों के सुबन्तपद ज्ञानार्थ सन्धिप्रकरण के उपरान्त ''स्वादिप्रक्रिया'' नामक प्रकरण में विभिन्न पदों की जानकारी के लिए ''अजन्तपुलिङ्ग.'' ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग.'' आदि प्रकरण दिये हैं। इन प्रकरणों में उदाहरणों की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्र चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इस तरह सम्पूर्ण जानकारी इसी प्रकरण में हो जाती है। सूत्रमूलकपद्धति के समान सुबन्त पदों के विखराव वाली समस्या यहां नहीं है।

रामचन्द्र ने प्रक्रियाकौमुदी में ''स्वादिप्रक्रिया'' नामक प्रकरण में विभिन्न सुबन्त पदों को जानकारी के लिए ''अजन्तपुलिङ्ग.'' प्रकरण प्रारम्भ में दिया है। इस प्रकरण में अजन्त प्रातिपदिकों को अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त आदि क्रम से रूपरचनार्थ दिया है तथा इन प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए

अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 101 पाणिनीय सूत्रों और 6 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम में प्रयोग हुआ है। इस प्रकरण में 65 प्रातिपदिकों का वर्णन है।

इन से पूर्व रचित रूपमाला में सर्वादि प्रातिपदिकों की जानकारी के लिए सर्वनाम माला नामक प्रकरण में वर्णन प्राप्त है। इस में अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों का मिश्रित वर्णन है। रामचन्द्राचार्य ने सर्वादियों का पृथक वर्णन नहीं किया है। इन्होंने अजन्त सर्वादि प्रातिपदिकों का उल्लेख ''अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा अजन्तनपुस्कलिङ्ग. प्रकरणों में किया है इसी तरह सर्वादियों में हलन्त प्रातिपदिकों की जानकारी हलन्त पुलिङ्ग., हलन्तस्त्रीलिङ्ग. और हलन्तनपुस्कलिङ्ग. प्रकरणों में दी है। ठीक इसी तरह संख्या वाचक प्रातिपदिक भी अपने-अपने सम्बन्धित प्रकरणों में प्राप्त होते हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में नियतलिङ्ग. और अनियतलिङ्ग. की जानकारी अध्ययन के साथ-साथ होती रहती है क्योंकि ऐसे स्थानों पर व्याख्या सहित वर्णन प्राप्त होता है।

अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण में ग्रन्थकार ने अनेक अकारान्त प्रातिपदिकों से उदाहरणार्थ राम अकारान्त प्रातिपादिक को चुना है। इस उदाहरण से रामचन्द्र का वैष्णवी होना प्रतीत होता है तथा उस समय वैष्णव धर्माबलम्बियों का बोल बाला था ऐसा ज्ञात होता है। इस उदाहरण के उपरान्त रामचन्द्र ने सर्वादियों से सर्व प्रातिपदिक को विभिन्न रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। इस के उपरान्त ग्रन्थकार ने अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त आदि क्रम से प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना का वर्णन किया है।

प्रक्रियाकौमुदी में ''अजन्तपुलिङ्ग.'' प्रकरण के उपरान्त ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग.'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने उन अजन्त प्रातिपदिकों का वर्णन किया है जो स्त्रीलिङ्ग. के बोधक हैं। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने रमा शब्द की रूपरचना का वर्णन किया है।

अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण में भी उदाहरणों का क्रम आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त आदि ही है। इस प्रकरण में 25 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया गया है। इस प्रकरण में रमा आदि 36 प्रतिपदिकों की विभिन्न रूपरचना का वर्णन है।[1]

अजन्तनपुस्कालिङ्ग. प्रतिपदिकों की विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए यथा क्रम ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. '' प्रकरण के उपरान्त रामचन्द्र के "अजन्तनपुस्कालिङ्ग" प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ज्ञान् आदि 38 प्रतिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने 16 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2]

अजन्त प्रातिपादिकों की विभिन्न रूपरचना वर्णन के उपरान्त हलन्त प्रातिपदिकों की विभिन्न जानकारी के लिए रामचन्द्र ने हलन्तप्रातिपदिकों को हलन्तपुलिङ्ग. ,हलन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा हलन्तनपुंस्कालिङ्ग. में विभक्त किया है तथा इसी नाम से प्रकरण दिये हैं। प्रत्येक प्रकरण की रूपरचना के लिए

1 प्रक्रि0 अजन्त स्त्रीलिङ्ग. प्रकरण

2 प्रक्रि0 अजन्त नपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण

पाणिनीयव्याकरण मे विभिन्न अध्यायों से आवश्यकतानुसार सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। प्रक्रियाकौमुदी में हलन्तसर्वनाम तथा हलन्त संख्या वाचक प्रतिपदिकों का उल्लेख लिङ्गानुसार उसी प्रकरण में प्राप्त होता है ग्रन्थकार ने रूपमालानुसार इन के लिए अलग प्रकरण नहीं दिया है। इस प्रकार का विभाजन ही इन के प्रक्रियाग्रन्थ की विशेषता है। इसी कारण यह प्रक्रियाग्रन्थ दूसरे ग्रन्थों से पाठकों को उपयुक्त प्रतीत हुआ तथा यही कारण था जिस कारण प्रक्रियाकौमुदी का महत्त्व दूसरे पूर्व ग्रन्थों से अधि क रहा है क्योंकि इस में प्रकरणों का विभाजन रोचक है।

हलन्तप्रातिपदिकों की विभिन्न जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने प्रक्रियाकौमुदी में सर्वप्रथम ''हलन्तपुलिङ्ग.'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने लिह् आदि 140 प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए 108 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को आवश्यकतानुसार विभिन्न अध्यायों से चुन कर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियाकौमुदी में ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग.'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में उपानह् आदि 21 हलन्तस्त्रीलिङ्ग. पदों की विभिन्न रूपरचना के लिए ''नहो धः''[1] आदि तीन सूत्रों को अष्टम तथा सप्तम अध्यायों से उठाकर रूपरचनाक्रम से दिया है। ये सूत्र संख्या में इसलिए कम हैं कि अनेक प्रकार की जानकारी पाठक इस प्रकरण से पूर्व कर आते हैं ।

इस प्रकरण के उपरान्त हलन्तपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग.'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में स्वनडुह् आदि 32 पातिपादिकों की जानकारी के लिए ''अहन्''[2] आदि 5 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन के बाद अनेक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से पुनः स्मरणार्थ उद्धृत किया गया है, इन का व्याख्या सहित वर्णन पूर्व प्रकरणों में आ गया है। यह प्रकरण स्वादिप्रक्रियाप्रकरण में अन्तिम प्रकरण है। स्वादिप्रक्रियाप्रकरण उदाहरणों और सूत्रों की दृष्टि से प्रक्रियाकौमुदी में सब प्रकरणों से बड़ा प्रकरण है।

प्रक्रियाकौमुदी की यह विशेषता है कि इस में पूर्ण रूपरचना जानकारी की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इससे पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में रूपरचना जानकारी की ओर इतना ध्यान नहीं दिया गया है जितना की इस ग्रन्थ में प्राप्त होता है। प्रक्रियाकौमुदी में किसी भी रूपरचना के लिए कार्यानुसार लगभग सभी सूत्रों का क्रमपूर्वक उल्लेख प्राप्त है चाहे इन सूत्रों में से कुछ सूत्र व्याख्या सहित उदाहरणों से पूर्व या पर दिये गये हैं, परन्तु आवश्यकतानुसार उन सूत्रों को रूपरचना जानकारी के लिए पुनः पूर्णसूत्र रूप में या सूत्राध रूप में सूत्र कार्य वर्णन के लिए अन्य सूत्रों के साथ उद्धृत किया गया है। जैसे :- "मनोरथः" रूपरचना के लिए ''हशिच्''[3] ''रोरि''[4] तथा ''पूर्वत्रासिद्धम्''[5] आदि तीनों सूत्रों को ग्रन्थकार ने रूपरचना प्रसङ्ग.

---

1 अष्टा० 8 - 2 - 34

2 अष्टा० 8 - 2 - 68

3 अष्टा० 6 - 1 - 114

4 अष्टा० 8 - 3 - 14

5 अष्टा० 8 - 2 - 1

में इन सूत्रों के कार्य ज्ञानार्थ क्रम पूर्वक रूपरचना क्रम से पुनः उद्धृत किया है। यद्यपि ये तीनों सूत्र व्याख्या सहित उदाहरण से पूर्व आ गये हैं।[1]

अनेक स्थानों पर उन सूत्रों को भी आवश्यकतानुसार रूपरचना के लिए संग्रहित किया है जो कि व्याख्या सहित सम्बन्धित उदाहरणों से आगे दिये हैं। परन्तु सूत्रकार्य वर्णन के लिए उन्हें मात्र सूत्र रूप में या सूत्रार्ध रूप में उद्धृत किया है। इन की विस्तृत व्याख्या उदाहरणों से आगे दी गयी है। ग्रन्थकार इन सूत्रों की पूर्ण जानकारी अग्रिम उदाहरणों में देना चाहते हैं पूर्व में नहीं। नहीं तो वे इन सूत्रों की पूर्ण जानकारी पूर्ण उदाहरणों में देते।

इस ग्रन्थ से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में रामचन्द्र के समान पूर्ण रूपरचना जानकारी की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। इन से पूर्व रचित रूपमाला में रूपरचना के लिए सूत्र का वर्णन अनेक बार नहीं किया है। रूपावतार में रूपरचनार्थ सूत्रों को अनेक बार उद्धृत किया है परन्तु यह वर्णन भी समयानुरूप छात्रों की समस्यापूर्ति नहीं कर पा रहा था। अतः रामचन्द्राचार्य ने प्रक्रियाकौमुदी में पाठकों की सुविधा के लिए आवश्यकतानुसार किसी भी रूपरचना जानकारी के लिए उससे सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन प्रत्येक उदाहरण में किया है। रामचन्द्राचार्य इस कार्य के लिए पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों से कुछ आगे निकल गये हैं। इस कारण इनका प्रक्रियाग्रन्थ अति प्रसिद्ध हुआ है। प्रक्रियाकौमुदी में अन्य प्रकरणों के समान ''स्वादिप्रक्रिया'' प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने इसी तरह का वर्णन दिया है जिस से पाठकों को सुबन्तपदों की जानकारी के लिए अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता जैसे कि सूत्रमूलकपद्धति से करना पड़ता है।

रामचन्द्र ने सुबन्तपदों की जानकारी के उपरान्त प्रक्रियाग्रन्थ में ''अव्यय'' ज्ञानार्थ ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग.'' प्रकरण के बाद ''अव्यय प्रकरण'' दिया है। इस में विभिन्न अव्ययों की जानकारी के लिए ''स्वरादिनिपातमव्ययम्''[2] आदि 5 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है।

शब्दगत लिङ्ग. के अनुसार भाषा में तीन प्रकार के शब्द हैं पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुंस्कलिङ्ग.। अनेक पुलिङ्ग.शब्दों से स्त्रीलिङ्ग.शब्दों का निर्माण किया जाता है। व्याकरण विभिन्न पदों का निर्माण कर्ता है। पुलिङ्ग. शब्दों से स्त्रीलिङ्ग. बनाने के लिए भी व्याकरण में वर्णन किया गया है। अष्टाध्यायी में पुलिङ्ग. शब्दों से स्त्रीत्वविवक्षा में स्त्रीप्रत्ययों का वर्णन किया गया है। इस में अनेक समस्याओं के कारण प्रक्रियाग्रन्थकार ने इस प्रकरण को एक विशेषक्रम से दिया है तथा इस प्रकरण को ''स्त्रीप्रत्यय'' प्रकरण संज्ञा दी है। यह प्रकरण अव्ययप्रकरण के उपरान्त दिया गया है।

सूत्रमूलकपद्धति में स्त्रीप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र ''अजाद्यतष्टाप्''[3] सूत्र से लेकर ''दैवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्ठेविद्धिभ्योऽन्यतरस्याम्''[4] सूत्र तक चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद के 77 सूत्र

---

1 प्रक्रियाकौमुदी ।

2 अष्टा0 1-1-37

3 अष्टा0 4-1-4

4 अष्टा0 4-1-81

विभिन्न स्त्रीप्रत्ययों का वर्णन करते हैं। परन्तु ये सूत्र मात्र अपना कार्य स्पष्ट करते हैं उदाहरणों की रूपरचना सम्बन्धित अन्य जानकारी के लिए विभिन्न अध्यायों का अध्ययन जरूरी है। क्योंकि सूत्रमूलक पद्धति में समान कार्यो से सम्बद्ध सूत्रों का वर्णन इकट्ठा है। रूपरचना जानकारी के लिए पाठकों को स्वयं परिश्रम करना पड़ता है।

रामचन्द्र ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान विभिन्न स्त्रीप्रत्यान्त पदों की जानकारी के लिए अव्ययप्रकरण के उपरान्त ''स्त्रीप्रत्ययप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने उपयोगी उदाहरणों की रूपरचना के लिए स्त्रीप्रत्यय सम्बन्धित अष्टाध्यायी के 77 सूत्रों में से 56 सूत्रों का संग्रह किया है। इन सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सभी प्रकार के सूत्रों की संख्या 67 तथा वार्तिक संख्या 56 है। इस प्रकरण में अजा आदि 285 उदाहरणों की रूपरचना जानकारी है। इसी प्रकरण के साथ प्रक्रियाकौमुदी प्रथम भाग की समाप्ति है।

रामचन्द्र ने प्रक्रियाकौमुदी द्वितीय भाग में कारक, समास तथा तद्धितों का वर्णन किया है। द्वितीय भाग की शुरूआत ''कारकप्रकरण'' से होती है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों का ही अनुकरण किया है। इस प्रकरण को रामचन्द्र भी किसी विशेष क्रम से वर्णन नहीं कर पाये हैं। जैसे कि इन्होंने सुबन्त पदों की जानकारी के लिए पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों से विशेष वर्णन किया है। इतना जरूर है कि इस प्रक्रियाग्रन्थ में पूर्वरचित प्रक्रियाग्रन्थों से उदाहरणों की जानकारी अधिक है। इस ग्रन्थ में आधुनिक उदाहरणों की जानकारी है। इस में दिये गये उदाहरण काशिका तथा पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से लगभग भिन्न हैं। प्रक्रियाकौमुदी से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में दिये गये उदाहरण लगभग काशिका के ही हैं। परन्तु रामचन्द्र ने तत्काल प्रचलित उदाहरणों का भी वर्णन किया है जोकि उस समय की मांग थी।

सूत्रमूलकपद्धति में कर्तृ, कर्म, कारण, सम्प्रदान, अपादन आदि संज्ञाविधायकसूत्र प्रथमअध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी तथा सप्तमी आदि विभक्तिविध ायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में दिये हैं। एक तो इन सूत्रों का सूत्रमूलकपद्धति में कर्तृ, कर्म, करण, सम्प्रदान तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी आदि क्रम नहीं हैं। तदुपरान्त विभाक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र के उपरान्त रूपरचना जानकारी के लिए विभक्तिविधायक सूत्र की आवश्यकता होती है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रों का क्रम ऐसा नहीं है। इस समस्या के समाधान हेतु उपयोगी उदाहरणों की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने इन सूत्रों को चुनकर कारक प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। आवश्यकतानुसार रूपरचना के लिए अन्य अध्यायों से भी सूत्रों का संग्रह प्रक्रियाक्रम से किया गया है। इस प्रकरण में 107 सूत्रों और 34 वार्तिकों का विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रयोग हुआ है।[1]

प्रक्रियाकौमुदी के हर प्रकरण में रामचन्द्र ने पूर्वग्रन्थकारों से अधिक जानकारी दी है। प्रक्रियाकौमुदी से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में केवल कुछ उदाहरणों के लिए कुछ सूत्रों का प्रयोग किया गया है। इस कारण

1 प्रक्रि0 कारक प्रकरण

व्याकरण का स्त्तर काफी नीचे आ रहा था क्योंकि इन ग्रन्थों से पूर्ण जानकारी नहीं हो रही थी। इस के बाद एक समस्या इन ग्रन्थों से व्याकरण अध्ययन में और आ रही थी कि इन ग्रन्थों में दिये उदाहरण तत्काल भाषा से लुप्त हो रहे थे। पाठक नवीन उदाहरणों की जानकारी चाह रहे थे। अतः रामचन्द्राचार्य ने अधिक शब्द बोध के लिए पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों का अधिक प्रयोग किया है।

रूपमाला में कारकमाला के उपरान्त ''तिङन्तमाला'' प्रकरण दिया है परन्तु रामचन्द्राचार्य ने ''प्रक्रियाकौमुदी'' में कारक प्रकरण के उपरान्त समासप्रकरण का उल्लेख किया है। क्योंकि रामचन्द्र ने पदों को सुबन्त और तिङन्त पदों में विभक्त करके प्रक्रियाकौमुदी पूर्वार्द्ध भाग में सर्वप्रथम सुबन्त पदों की जानकारी करवायी है तदुपरान्त तिङन्त पदों का वर्णन उत्तरार्द्ध भाग में दिया है।[1]

कारकप्रकरण के उपरान्त रामचन्द्र ने ''प्रक्रियाकौमुदी'' में समासप्रकरण दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में कम से कम छः अध्याय पढ़ने पर ही समास ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में समास कार्यों से सम्बन्धित सूत्र छः अध्यायों के विभिन्न पादों में विखरे हैं।[2] काशिका के कुछ समय बाद पाठक समस्तपदों की रूपरचना के लिए सूत्रों को रूपरचनाक्रम से एक ही प्रकरण में चाह रहे थे। इस समस्या को सुलझाने के लिए रामचन्द्र ने समासकार्यों से सम्बन्धित सूत्रों को सूत्रमूलकपद्धति के छः अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से एक ही प्रकरण में दिया है और उस प्रकरण को समासप्रकरण की संज्ञा दी है। रामचन्द्र से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में समासप्रकरण बहुत कम उदाहरणों और सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है। इस कारण पूर्व ग्रन्थों से समास ज्ञान की पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती। ऐसा जानकर रामचन्द्राचार्य ने समास ज्ञान की पूर्ण जानकारी के लिए प्रक्रियाकौमुदी ''समासप्रकरण'' में अधिक उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के अधिक सूत्रों का प्रयोग किया है। प्रक्रियाकौमुदी समास प्रकरण में अधिकत्तर उदाहरण काशिका के ही हैं। रूपावतार, रूपमाला आदि में दिये गये उदाहरणों में से कुछ ही उदाहरण काशिका वाले प्राप्त होते हैं। रूपमाला के समासमाला प्रकरण में लगभग सभी उदाहरण काशिका से भिन्न हैं।

प्रक्रियाकौमुदी समासप्रकरण की शुरुआत ग्रन्थकार ने ''अव्ययीभावसमास'' प्रकरण से की है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए 31 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। तदुपरान्त "तत्पुरुषसमास" प्रकरण में ग्रन्थकार ने रूपरचनार्थ 103 पाणिनीय सूत्रों और 126 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण के बाद "बहुव्रीहिसमास'' प्रकरण है। विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए ''बहुव्रीहिसमास'' प्रकरण में विभिन्न अध्यायों से चुनकर 60 पाणिनीय सूत्रों और 20 वार्तिकों को प्रक्रिया क्रम से दिया है। बहुव्रीहिसमास प्रकरण के उपरान्त "द्वन्द्वसमास" प्रकरण है। इस में रूपरचना जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने 9 वार्तिकों और 33 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है।

---

1 प्रक्रियाकौमुदी ।

2 (क) अष्टाध्यायी ।

(ख) काशिका। ।

द्वन्द्वसमास प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''सर्वसमासशेष'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने समासप्रकरण में पृथक स्थान दिया है। इस में अव्ययीभाव आदि सभी समासों के अन्त में होने वाले विभिन्न समासान्तप्रत्ययों की जानकारी है। ग्रन्थकार ने इन प्रत्ययों की अलग से जानकारी करवाने हेतु इस पृथक स्थान दिया है तथा सभी समासों से सम्बन्धित होने के कारण इस प्रकरण को ''सर्वसमासशेष'' प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचनार्थ समासान्त प्रत्ययविधाक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम में दिया है। इस प्रकरण में 63 पाणिनीय सूत्रों और 11 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[1]

सर्वसमासशेष प्रकरण के उपरानत प्रक्रियाकौमुदी समासप्रकरण के अन्त में ''अलुक्समास'' प्रकरण दिया है। समस्तपदों में कुछ ऐसे उदाहरण भी हैं जिनमें विभक्ति का लोप नहीं होता है जबकि विभक्तिकार्य करने पर समस्तपद सिद्ध होते हैं। यद्यपि समास इसी का नाम है जहां दो या तीन पदों का समास होने पर इन पदों में प्राप्त विभक्तियों का लोप होने के उपरान्त संक्षिप्त पद शेष रहे उसे समास कहते हैं। परन्तु अनेक ऐसे उदाहरण हैं जहां समास के उपरानत पदों में विहित विभक्ति का लोप नहीं होता है। इन उदाहरणों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकपद्धति में षष्ठ अध्याय तृतीय पाद में सूत्र दिये हैं जो समास के उपरान्त प्राप्त विभक्ति के लोप का निषेध करते हैं।

रामचन्द्र ने जिन पदों में विभक्ति का लोप नहीं होता उनकी जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा इस प्रकरण का नाम ''अलुक्समास'' प्रकरण दिया है क्योंकि समास सम्बद्ध इन उदाहरणों में विभक्ति का अलुक् होता है। अतः यह ''अलुक्समास'' प्रकरण है। रामचन्द्र ने इस प्रकरण में 20 पाणिनीय सूत्रों और 7 वार्तिकों का उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2]

प्रक्रियाकौमुदी द्वितीय भाग में समासप्रकरण के उपरान्त ''तद्धितप्रकरण'' दिया है। तद्धितप्रत्यय वे प्रत्यय हैं जो विभिन्न प्रयोगों की रूपरचना में काम आते हैं। संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम आदि शब्दों से आवश्यकतानुसार अपत्य, उत्पन्न होना, बाला या युक्त आदि अनेक अर्थ निकालने के लिए उक्त शब्दों से अण्, इञ्, ढक् आदि तद्धित प्रत्ययों का प्रयोग करने पर तद्धितान्त पदों की रूपरचना की जाती है। व्याकरण में अनेक प्रत्यय हैं जो संज्ञा, विशेषण तथा सर्वनाम आदि शब्दों से प्रयुक्त होकर अनेक अर्थ निकालते हैं। इन प्रत्ययों को तद्धितप्रत्यय कहते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में इन प्रत्ययों का उल्लेख चतुर्थ तथा पञ्चम् अध्यायों में प्राप्त होता है। काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के उपरान्त ऐसा समय आ गया कि रूपरचना करने में पाठक कठिनाई समझने लगे। इस समस्या समाधान हेतु प्रक्रियाग्रन्थकारों ने अनेक प्रक्रियामूलकग्रन्थ रचे। इन ग्रन्थों में सूत्रों को रूपरचनाक्रम में दिया है। तद्धितान्त पदों की रूपरचना के लिए रूपावतार, रूपमाला आदि ग्रन्थों में उल्लेख होते हुए भी रामचन्द्र ने तद्धितान्त पदों की जानकारी का उल्लेख किया

1 प्रक्रि0 सर्वसमास शेष प्रकरण ।

2 प्रक्रि0 अलुक्समास प्रकरण ।

है क्योंकि समसयानुसार भाषा में प्रयुक्त शब्दों में परिवर्तन आ गया था तथा रूपावतार आदि में सूत्रवृत्ति सरल नहीं थी। अत: रामचन्द्राचार्य ने प्रक्रियाकौमुदी में उपयुक्त विषय विभाजन, सरलसूत्रार्थ तथा अधिक और उपयोगी उदाहरणों द्वारा तद्धितप्रकरण को पूर्ण किया है।

रामचन्द्र ने तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को प्रकरणानुसार बांट दिया है तथा उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए केवल आवश्यकतानुसार ही सूत्रों का चयन किया है। अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है। बड़े प्रकरण को छोटे प्रकरणों में विभक्त करने से पाठकों की भावना में अन्तर आता है। अत: रामचन्द्र ने भी तद्धितपदों की जानकारी के लिए तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से छोटे - छोटे प्रकरणों में दिया है। इन के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। रामचन्द्र ने तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को प्रत्ययों और सूत्र कार्यों के आधार पर छोटे - छोटे प्रकरणों में दिया है।

तद्धितप्रकरण के शुरू में रामचन्द्र ने ''अपत्यप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न तद्धितान्त पदों की जानकारी के लिए अपत्य अर्थ में होने वाले विभिन्न प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का अष्टाध्यायी से संग्रह करके, इन्हें प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सूत्र संख्या 65 तथा वार्तिक संख्या 1 है। इस प्रकरण में दिये गये उदाहरण पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से अधिक है। लगभग उदाहरण पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों तथा काशिका से मिलते जुलते हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''अपत्यानपत्यादिसाधारण प्रत्यय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में साधारण प्रत्ययों का वर्णन किया है। वैयाकरण ''प्राग्दिव्यतोऽण्''[1] सूत्र के अधिकार में विभिन्न प्रत्ययों को साधारण प्रत्यय कहते हैं। ''अणादय इति ''प्राग्दिव्यतोऽण्'' इत्यादि साधारणा प्रत्यया: इत्यर्थ:''[2]। इन साधारण प्रत्ययों का उल्लेख रामचन्द्र ने ''अपत्यानपत्यादिसाधारणप्रत्यय'' प्रकरण में किया है। इस प्रकरण में ''आश्वपतम्'' आदि उदाहरणों की जानकारी के लिए ''अश्वपत्यादिभ्यश्च''[3] आदि 4 सूत्रों और 4 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।

इस प्रकरण के उपरानत ''रक्ताद्यर्थक'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए रक्ताद्यर्थक प्रत्ययों का वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में अनेक अर्थो में प्रत्ययों का उल्लेख है परन्तु उन प्रत्ययों में रागवाची शब्द से रक्त अर्थ में प्रत्यय करने वाला सूत्र ''तेन रक्तं रगात्''[4] प्रकरण के शुरू में दिया है। इसी कारण इस प्रकारण का नाम ''रक्ताद्यर्थक'' दिया है। इस प्रकरण में रक्ताद्यर्थक प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस प्रकरण में 43 पाणिनीय सूत्रों और 3 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।

प्रक्रियाकौमुदी में ''रक्ताद्यर्थक'' प्रकरण के उपरान्त रामचन्द्र ने ''शैषिक'' प्रकरण दिया है अपत्यर्थ तथा चातुरर्थ के उपरान्त कुछ जात, भव आदि अर्थ शेष रहते हैं ये अर्थ ''शेषे''[5] सूत्र के

1 अष्टा0 4 - 1 - 83
2 बालमनोरमा 4 - 2 - 92
3 अष्टा0 4 - 1 - 84
4 अष्टा0 4 - 2 - 1
5 अष्टा0 4 - 2 - 92

अधिकार में आते हैं। शेषाधिकार में विभिन्न प्रत्ययों का वर्णन है। शेषाधिकार में होने वाले इन प्रत्ययों के उल्लेख के लिए ग्रन्थकार ने शैषिक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीय अष्टाध्यायी के 48 सूत्रों और कात्यापन के 10 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।

शैषिकप्रकरण के उपरानत रामचन्द्र ने प्रक्रियाकौमुदी में ''विकारार्थक प्रत्यय'' प्रकरण दिया है। ग्रन्थकार ने विकारार्थक प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम में दिया है। उदाहरणों की रूपरचना में सहायक सूत्र भी यथा क्रम उद्धृत हैं। रामचन्द्र ने पाठकों की सुविधा के लिए छोटे प्रकरण दिये हैं। तद्धित ज्ञानार्थ सभी प्रकरणों का ज्ञान जरूरी है फिर भी इतनी सुविधा हो जाती है कि इन प्रकरणों में एक प्रकार की जानकारी है इसे जानकर पाठक अगले प्रकरण की जानकारी की इच्छा रखते हैं। बड़े प्रकरण देखकर पाठकों में आलस जागृत होता है। इसलिए ही ग्रन्थकार ने तद्धितों को छोटे प्रकरणों में विभक्त किया है तथा रूपरचना के लिए विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर इन प्रकरणों में रूपरचना क्रम से दिया है। विकारार्थक प्रत्ययप्रकरण भी एक ऐसा उदाहरण है। इस प्रकरण में उदाहरण लगभग काशिका से उद्धृत किये हैं। इस प्रकरण में 14 सूत्र और 2 वार्तिक है।

इस प्रकरण के उपरानत ''प्राग्वहतीय'' प्रकरण आता है। इस प्रकरण में ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्''[1] सूत्र में विहित वहति अर्थ से पूर्व सूत्रों को उदाहरणों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार चुना है। इस प्रकरण में पाणिनीय 23 सूत्रों और 5 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है। एक अपाणिनीय सूत्र ''न्यङ्क्वोर्वेति''[2] का उल्लेख उदाहरणों सहित किया है।

तदुपरान्त ''प्राग्धितीय'' प्रकरण है। इस प्रकरण में ''तस्मै हितम्''[3] सूत्र में उक्त हितार्थक प्रत्ययों के अधिकार से पूर्व प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है। विभिन्न उदाहरणार्थ उद्धृत प्रत्यय विधायक इन सूत्रों के उपरान्त अन्य रूपरचना में सहायक सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम में दिया है। इस प्रकरण में 15 सूत्र हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्राक्क्रीतीय'' प्रकरण शुरू होता है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 'तस्मै हितम्''[4] ''शरीरावयवाद् यत्''[5] ''आत्मनविश्वजन भोगोत्तरपदात् खः''[6] ये तीन प्रत्यय विधायक दिये हैं। ''आत्माध्वानौ खे''[7] सूत्र ''आत्मनीनम्'' आदि उदाहरणों में प्रकृतिभाव करता है। इस प्रकरण में मात्र 4 ही सूत्र हैं। प्रकरण के नामकरण से ज्ञात होता है कि इस प्रकरण में ''तेन क्रीतम्''[8] सूत्र से पूर्व तक की जानकारी होनी चाहिए परन्तु उक्त सूत्र तक सम्पूर्ण जानकारी इस प्रकरण में प्राप्त नहीं है। ''तस्मै हितम्''[9] आदि 3 सूत्रों के उपरान्त शेष जानकारी इस से अगले प्रकरण में दी है। इस प्रकरण से अगला प्रकरण ग्रन्थकार ने ''तेन क्रीतम्''[10] सूत्र से प्रारम्भ किया है। अतः रामचन्द्र ने पूर्व प्रकरण को

---

1 अष्टा0 4-4-76
2 प्रक्रियाकौमुदी द्वि0 भाग0 पृष्ठ 334
3 अष्टा0 5-1-5
4 अष्टा0 5-1-5
5 अष्टा0 5-1-6
6 अष्टा0 5-1-9
7 अष्टा0 6-4-169
8 अष्टा0 5-1-37
9 अष्टा0 5-1-5
10 अष्टा0 5-1-37

प्राक्क्रीतीय'' प्रकरण की संज्ञा दी है, क्योंकि प्रक्रियाकौमुदी ग्रन्थ पद्धति के क्रमानुसार ''क्रीतम्'' से पूर्व का वर्णन इस प्रकरण में है।

इस प्रकरण से अगला प्रकरण ''आर्हीय प्रकरण'' है। रामचन्द्र ने अष्टाध्यायी से उदाहरणों की रूपरचना के लिए कुछ ऐसे तद्धित प्रत्ययविधायक सूत्रों को पृथक किया है जो एक अधिकार में आते हैं। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पञ्चम अध्याय प्रथमपाद के ''संख्याया अतिशदन्तायाः कन''[1] सूत्र से लेकर पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद के ''इष्टाभ्यिश्च''[2] सूत्र तक 203 सूत्रों में से उदाहरणार्थ केवल 57 सूत्रों का चयन किया है। इस प्रकरण में आर्हीय अर्थो में विभिन्न प्रत्ययविधायक सूत्रों का वर्णन है। अतः ग्रन्थकार ने इस प्रकरण का नाम "आर्हीय प्रकरण" दिया है। इस प्रकरण में ''साप्तातिकः'' आदि विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 63 सूत्रों का प्रक्रिया क्रम से उल्लेख किया है। इस प्रकरण में 5 कात्यायन के वार्तिक हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियाकौमुदी में ''मत्वर्थीय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने श्रीमान्, श्रीमती आदि विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए मतुप् और मतुप् अर्थ में होने वाले विभिन्न प्रत्यय विधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का भी प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 30 और वार्तिकों की 12 है।

इस प्रकरण से अगला प्रकरण ''प्राग्दिशीय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के ''दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्योदिग्देशकालेष्वस्तातिः''[3] इस सूत्र से पूर्व प्रत्ययविधायक सूत्रों का विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए वर्णन किया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम से प्राप्त है इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 25 और वार्तिक संख्या 1 है।

इस प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''स्वार्थिक'' प्रकरण दिया है। रामचन्द्र ने स्वार्थ में प्रत्ययविध ायक सूत्रों को अष्टध्यायी से चुनकर उदाहरणों की सिद्धि के लिए रूपरचनाक्रम से दिया है। जिन के साथ अन्य सूत्र भी हैं जो रूपरचना में सहायक हैं। इस प्रकरण में 52 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है। इस प्रकरण में दिये गये उदाहरण लगभग काशिका के ही हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रागिवीय'' प्रकरण शुरू होता है। इस प्रकरण में ''इवे प्रतिकृतौ''[4] अष्टाध्यायी के इस सूत्र से पूर्व इस प्रकरण का अधिकार मानकर ग्रन्थकार ने इन सूत्रों को आवश्यकतानुसार उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। प्रक्रियाक्रम से उद्धृत इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 44 और वार्तिकों की संख्या 5 है।[5]

---

1 अष्टा० 5-1-22

2 अष्टा० 5-2-88

3 अष्टा० 5-3-27

4 अष्टा० 5-3-96

5 प्रक्रि० प्रागिवीयाः प्रकरणम् ।

इस प्रकरण के उपरान्त ''द्विरुक्तप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस में बार-बार या व्याप्ति इच्छा प्रकट करने वाले उदाहरणों के लिए सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया गया है। इस प्रकरण से सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी के अष्टम अध्याय प्रथम पाद में प्रांप्त होते हैं। रामचन्द्र ने इन्हें उदाहरणों की जानकारी के लिए चुनकर ''द्विरुक्तप्रक्रिया'' प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में 7 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।

प्रक्रियाकौमुदी के प्रथम दो भागों में सुबन्तपदों की जानकारी के उपरान्त तृतीय भाग के शुरू में ग्रन्थकार ने तिङन्त पदों की जानकारी के लिए सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन किया है। तदुपरान्त कृदन्त पदों की जानकारी दी है। ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम पदों को दो भागों में विभक्त करने के उपरान्त, सन्धि, षड्लिङ्ग., स्त्रीप्रत्यय, समास तथा तद्धितान्त आदि सुबन्त पदों का उल्लेख "प्रक्रियाकौमुदी'' प्रथम और द्वितीय भाग में किया है। तदुपरान्त प्रक्रियाकौमुदी तृतीय भाग में सर्वप्रथम तिङन्तपदों की जानकारी के लिये, विभिन्न क्रियारूपों, ण्यन्त, सन्नन्त, यङन्त, यङ्लुक्, सुब्धातु, नामधातु, आत्मनेपद, परस्मैपद, भावकर्म, लकारार्थप्रक्रिया आदि का वर्णन किया है। तिङन्तपदों की जानकारी के उपरान्त उत्तरार्ध भाग में पूर्वार्ध भाग के शेष सुबन्तपदों की जानकारी के लिए कृदन्तपदों का वर्णन किया है। क्योंकि कृदन्तपदों की रचना विभिन्न धातुओं से होती है। अतः ग्रन्थकार ने इनका वर्णन धातु ज्ञान के उपरान्त दिया है।

भाषा में प्रयुक्त अनेक तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए विभिन्न धातुओं तथा प्रातिपादिकों से तिङन्त रूपरचना के लिए पाणिनीय अष्टाध्यायी में उल्लेख प्राप्त है। परन्तु इस में समयानुसार अनेक समस्याएँ आती गयीं जिस कारण इस व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। इस समस्या के समाधान हेतु पाणिनीयपरम्परा के अनेक आचार्यों ने पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन कर के प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रक्रियाग्रन्थ रचे। इन प्रक्रियाकारों में रामचन्द्राचार्य भी एक है।

तिङन्त पदों के वर्णन में रामचन्द्र ने सर्वप्रथम क्रियापदों की जानकारी के लिए पाणिनीय धातुपाठ के क्रमानुसार भू आदि धातुक्रम से विभिन्न क्रियापदों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार विभिन्न अध्यायों से पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस क्रम से पाठकों को यह सुविधा हुई की वे धातुरुपों की रूपरचना सम्बन्धित पूर्ण जानकारी एक साथ प्राप्त करने लगे। अतः पाठकों की इच्छा प्रक्रियाकौमुदी से व्याकरण पढ़ने को जाग्रित हुई।

रामचन्द्र ने प्रक्रियाकौमुदी उत्तरार्ध में विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के लिए ''भवादि'' प्रकरण से प्रारम्भ किया है। इन्होंने ''भू सत्तायाम्'' धातु के क्रियारूपों की रूपरचना से शुरुआत की है। भू धातु के क्रियारूपों में रामचन्द्र ने सर्वप्रथम सार्वधातुक लकारों का उल्लेख किया है तदुपरान्त आर्धधातुक लकारों का वर्णन है। रामचन्द्र ने ''धातोः''[1] सूत्र में दस लकारों की गणना लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ् और लृङ् इस क्रम से की है। परन्तु लकारों के इस क्रम से रूपरचना नहीं दी है। इन्होंने लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् सार्वधातुकलकारों की रूपरचना करने पर आर्धधातुकलकारों का

---

1 अष्टा0 3-1-91

वर्णन किया है।[1] इन से पूर्ववर्ती प्रक्रियाग्रन्थों में भी यही क्रम है। पूर्ववर्ती प्रक्रिया मूलकग्रन्थों से इस प्रक्रियाग्रन्थ में यह विशेषता है कि इस में परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों का ज्ञान करवाने के लिए परस्मैपद और आत्मनेपद क्रियारूपों का वर्णन एक साथ किया है। रामचन्द्र ने भू धातु लट् लकार परस्मैपद की रूपरचना जानकारी के उपरान्त, भू धातु लट्लकार आत्मनेपद की रूपरचना के लिए सूत्रों को यथाक्रम रूपरचनाक्रम से दिया है तदुपरान्त क्रम से भू धातु विधिलिङ् लकार परस्मैपद ओर आत्मनेपद की रूपरचना जानकारी है। इसी क्रम से सार्वधातुक लकारों के उपरान्त इन्होंने लिट्, लुट् आदि आर्धधातुक लकारों की रूपरचना के लिए परस्मैपद और आत्मनेपद से सम्बन्धित सूत्रों का चयन किया है।[2] लट् लकार के उपरान्त सार्वधातुक लकारों में लोट्लकार आना चाहिए परन्तु प्रक्रियाकौमुदी में लट् लकार के उपरान्त विधिलिङ् सम्बन्धित रूचरचना जानकारी है। इसी तरह आर्धधातुक लकारों में भी लिट्, लुट् लकार आदि क्रम के स्थान पर लुङ्, लिट्, लुट्, आशीर्लिङ्, लृट् और लृङ् आदि लकारों के क्रम से वर्णन है।

''भू सतायाम्'' धातु के क्रियारूपों के उपरान्त रामचन्द्र ने ''चिती संज्ञाने'', ''श्च्युतिर क्षरणे'' आदि परस्मैपदी विभिन्न धातुओं की रूपरचना का वर्णन है। रामचन्द्र ने सर्वप्रथम परस्मैपदी धातुओं की रूपरचना जानकारी दी है। इसके उपरान्त भ्वादि प्रकरण में ''आत्मनेपदप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस में ''एध वृद्धौ" आदि आत्मनेपदी विभिन्न धातुओं के क्रियारूपों की रूपरचना जानकारी के लिए अष्टाध्यायी से सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। तदुपरान्त ''पत्लृ पतने'' आदि उभ्यपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचना जानकारी दी गयी है।[3] इसी तरह भ्वादि सभी प्रकरणों में रामचन्द्र ने सर्वप्रथम परस्मैपदी धातुओं का और फिर आत्मनेपदी धातुओं का और बाद में उभयपदी धातुओं का वर्णन किया है। भ्वादि प्रकरण को पूर्ण करने के लिए रामचन्द्र ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 269 पाणिनीय सूत्रों और 7 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस क्रम से पाठकों को किसी भी रूपरचना जानकारी के लिए अनेक समस्याओं से नहीं गुजरना पड़ता है क्योंकि उन्हें एकक्रम से एक साथ रूपरचना का ज्ञान हो जाता है। इस कारण पाठकों को व्याकरण ज्ञान उपार्जित करने में बहुत सुविधा हुई है।

''भ्वादि प्रकरण'' के उपरान्त पाणिनीय धातुपाठ क्रमानुसार रामचन्द्र ने ''अदादि प्रकरण" दिया है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने अदादि गण के क्रिया रूपों को तीन भागों में विभक्त करके परस्मैपद, आत्मनेपद और उभ्यपद भागों में यथा क्रम अदादि धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी से चुनकर अदादि प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 66 पाणिनीय सूत्रों और 3 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है। लकारों का क्रम सार्वधातुक और आर्धधातुक लकार क्रम ही है।

इस ग्रन्थ से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि गणों के नाम से प्रकरणों का वर्णन नहीं है यद्यपि उन ग्रन्थों में भ्वादि गणों की धातुओं का क्रमपूर्वक वर्णन किया गया है परन्तु वहां

1 प्रक्रि0 भ्वादि प्रकरण
2 प्रक्रि0 भ्वादि प्रकरण पृ0 118
3 प्रक्रि0 भ्वादि प्रकरण पृ0 140 से 156

ग्रन्थकारों का अपना ही क्रम है। जैसे लट् लकार के वर्णन में भ्वादि 10 गणों की धातुओं के लट् लकार की रूपरचना का वर्णन ''लट् लकार'' प्रकरण में ही दिया गया है। इसी तरह सभी लकारों की रूपरचना का वर्णन सम्बद्ध लकार के प्रकरण में है परन्तु प्रक्रियाकौमुदीकार ने भ्वादि प्रकरणों में रुचिकर क्रम से जानकारी दी है।

प्रक्रियाकौमुदी में ''अदादि प्रकरण'' के उपरान्त ''ह्वादिप्रक्रिया'' प्रकरण प्रारम्भ होता है। इस प्रकरण में भी आवश्यकतानुसार मुख्यरूपों की जानकारी के लिए परस्मैपद, आत्मनेपद तथा उभयपद भागों में विभक्त करके क्रियारूपों का वर्णन दिया है। इस प्रकरण में 15 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है। इसी क्रमानुसर दिवादि प्रक्रिया में 19 और स्वादि प्रक्रिया में 9 सूत्र हैं। तुदादि में 10 सूत्र 2 वार्तिक हैं। तनादि में 6 सूत्र 1 वार्तिक, क्र्यादि में 9 सूत्र 1 वार्तिक तथा चुरादि प्रक्रिया प्रकरण में मात्र 5 सूत्र प्रक्रिया क्रम से प्रयुक्त हैं।

प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना, चाहना, आचार, भाव और कर्म आदि अर्थ प्रकट करने के लिए धातु तथा अनेक सुबन्त शब्दों से णिच्, सन्, यङ्, क्यच्, क्यङ्, काम्यच् आदि अनेक प्रत्यय किये जाते हैं। बाद में धातु संज्ञा करने पर ये तिङन्त रूप सिद्ध होते हैं। प्रेरणा आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में उल्लेख किया गया है। समयानुसार सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं का सामना हुआ जिस कारण पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रों को रूपरचना क्रम से प्रकरणों में दिया गया है। रामचन्द्र ने प्रेरणा आदि अर्थों से सम्बन्धित सूत्रों को अनेक भागों में विभक्त किया तथा णिच्, सन् आदि प्रतययों के आधार पर अनेक छोटे-छोटे प्रकरण बनाये जो समान जानकारी देते हैं। इन प्रकरणों में अनेक उदाहरणों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है। प्रेरणा आदि अर्थ प्रकट करने वाले शब्द तिङन्त है। अत: इन का उल्लेख ग्रन्थकार ने तिङन्त भाग में क्रियारूपों की जानकारी के उपरान्त किया है।

प्रक्रियाकौमुदी पूर्ववर्ती रूपमाला में इन प्रकरणों को अलग-अलग नहीं दिया है। रूपमाला में इन सभी प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को एक ही प्रकरण में रखा है यद्यपि उन्होंने उदाहरणार्थ वर्णन प्रक्रियाक्रम से दिया है परन्तु विभिन्न प्रकरणों के रूप में नहीं। सूत्रमूलकपद्धति में सन्, यङ्, णिच्, आदि प्रत्ययविध ायक सूत्रों में सन् प्रत्ययविधायकसूत्र ''धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा''[1] सूत्र दूसरे सूत्रों से पूर्व है। प्रक्रियाकौमुदी से पूर्ववर्ती रूपमाला में इस सूत्र को प्रकरण के शुरू में दिया है तथा इस के बाद क्रमानुसार सभी प्रत्ययविधायक सूत्रों को उदाहरणों की जानकारी के लिए उद्धृत किया है। सभी प्रत्ययों की जानकारी एक ही प्रकरण में है तथा उस प्रकरण में आदि सूत्र सन् प्रत्ययविधायक है। अत: ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को सन्नादि प्रकरण संज्ञा दी है।

रामचन्द्र ने सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, यङ्, णिच् आदि प्रत्ययों से सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना में सर्वप्रथम यह जाना कि इन प्रत्ययों से सम्बद्ध रूपरचना में किस प्रत्यय से सम्बन्धित रूपरचना

---

1 अष्टा0 3-1-7

दूसरे प्रत्ययों से सम्बन्धित रूपरचना से सरल है। अतः उन्होने उस प्रत्यय से सम्बन्धित प्रकरण को दूसरे प्रत्ययों से सम्बद्ध प्रकरणों से पूर्व दिया है। यही कारण है कि णिच् प्रत्यय से सम्बन्धित प्रकरण ''ण्यन्तप्रक्रिया'' प्रकरण दूसरे प्रकरणों से पूर्व है। इस प्रकरण में प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए रामचन्द्र ने सूत्रों को रूपरचना क्रम से दिया है। विभिन्न उदहारणों की जानकारी के लिए रामचन्द्र ने इस प्रकरण में सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर पाणिनीय 40 सूत्रों और 6 कात्ययनीय वार्तिकों का चयन किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''सन्नतप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में रामचन्द्र ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिये पाणिनीयव्याकरण के 24 सूत्रों और 1 वार्तिक को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण के उपरान्त "यङन्तप्रक्रिया" प्रकरण है। इस में 22 सूत्र और 2 वार्तिक हैं तदुपरान्त ''यङ्लुगन्त प्रक्रिया'' है इस प्रकरण में बोभवीति, बोभेति आदि उदहारण जानकारी के लिए 6 पाणिनीयसूत्र और 1 कात्यायनीय वार्तिक का प्रयोग हुआ है।

यङ्लुगन्तप्रक्रिया प्रकरण के उपरानत प्रक्रियाकौमुदी में "सुबधातु प्रकरण'' शुरू होता है। तिङन्तपदों के इस प्रकरण से पूर्व धातुओं से प्रेरणा आदि अर्थों की विवक्षा में प्रत्यय किये गये हैं। परन्तु ''सुबधातु प्रक्रिया'' प्रकरण में अनेक सुबन्तपदों से इच्छा आदि अनेक अर्थ प्रकट करने के लिए रूपरचनार्थ ''सुप आत्मनः क्यच्''[1] आदि सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया हे। प्रक्रियाकौमुदीकार ने सन् आदि प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को प्रत्ययों के नाम से अनेक प्रकरणों में विभक्त किया है या उदाहरण रूपरचना के आधार पर प्रकरणों में विभक्त किया है। इच्छा अर्थ को प्रकट करने वाले प्रत्यय सुबन्तपदों से होते हैं जो रूपरचना के लिए धातुसंज्ञा करने पर धातु बनाये जाते हैं। अतः ग्रन्थकार ने इस प्रकरण का नाम रूपरचना आधार पर ''सुबधातु प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। क्योंकि इस प्रकरण के उदाहरण सुबन्तों से ध ातुसंज्ञा करने पर तिङन्त पद तैयार होते हैं। इस प्रकरण में अनेक उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 20 पाणिनीय सूत्रों और 19 वार्तिकों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

प्रक्रियाकौमुदी तृतीय भाग के पृष्ठ संख्या 363 से 372 तक को ''नामधातु प्रक्रिया'' नाम से सम्बोधित किया है। इस भाग में अनेक उदाहरण हैं परन्तु सूत्र ''कण्ड्वादिभ्योयक्''[2] मात्र एक है। कण्ड्वादि धातु और प्रातिपदिक भेद से दो प्रकार के हैं।[3] इसी कारण इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''नामधातुप्रक्रिया'' प्रकरण से सम्बोधित किया है। इस प्रकरण के अन्त में ''इति नामधातुप्रक्रिया'' लिखा गया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''पदव्यवस्था'' प्रकरण दिया है। वैसे तो धातुओं की परस्मैपद, आत्मनेपद और उभयपद व्यवस्था पाणिनि ने धातुपाठ में ही कर दी है। परन्तु विभिन्न अर्थो को प्रकट करने के लिए

---

1 अष्टा0 3-1-8

2 अष्टा0 3-1-27

3 धातवः प्रातिपदिकानि चेति कण्ड्वादयो द्विविधाः प्रक्रि0 पृष्ठ 368

या अनेक उपसर्गों के योग में भी धातुओं को आत्मनेपद और परस्मैपद व्यवस्था की जानकारी अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय तृतीय पाद में दी गयी है। परन्तु अष्टाध्यायी में मिश्रित वर्णन है तथा रूपरचना में सहायक सूत्र विखरे हैं। रामचन्द्र ने इन समस्याओं की एक क्रम से जानकारी के लिए ''पदव्यवस्था'' नामक प्रकरण दिया है। इस में सर्वप्रथम उदाहरणों की जानकारी के लिए परस्मैपद विधायक सूत्रों का वर्णन है तदुपरान्त आत्मनेपद जानकारी के लिए आत्मनेपद विधायक सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। इस प्रकरण में 76 पाणिनीय सूत्र और 15 वार्तिक हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''भावकर्मप्रक्रिया'' प्रकरण आता है। वाच्य परिवर्तन के लिए क्रिया परिवर्तन किया जाता है। कर्तृवाच्य की क्रिया यदि सर्कमक हो तो कर्मवाच्य में और यदि अकर्मक हो तो भाववाच्य में बदल जाती है अर्थात् सकर्मक धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में , इसी प्रकार अकर्मक धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं कर्तृवाच्य और भाववाच्य में। विभिन्न ध ातुओं की कर्मवाच्य और भाववाच्य में क्या-क्या रूपरचना होगी इस विषय की जानकारी के लिए रामचन्द्र ने भावकर्मप्रक्रिया प्रकरण दिया है। भाव और कर्म अर्थ प्रकट करने के लिए धातु से प्रत्यय, आदेश और आगम से सम्बन्धित सूत्रों को ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय प्रथम पाद से चुनकर इस प्रकरण में दिया है। आवश्यकतानुसार ''भावकर्मणोः''[1] आदि रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 18 है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''लकारार्थप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पाद में, लट् लिट्, लुट्, लृट् आदि दस लकारों के क्या-क्या अर्थ हैं या किन-किन अर्थों में ये लकार होते हैं ? इसके बाद अष्टध्यायी में धातु से विभिन्न उपपदों के योग में विशिष्ट लकारों का उल्लेख भी किया गया है। ये सूत्र वहां विखरे हैं रामचन्द्र ने इन सूत्रों को चुनकर उदाहरणों के ज्ञानार्थ ''लकारार्थ प्रक्रिया'' प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी आवश्यकतानुसार उद्धृत किया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 45 है।[2] इसी प्रकरण के साथ तिङन्त प्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरानत रामचन्द्र ने कृदन्तपदों की जामकारी के लिए ''कृत्यप्रक्रिया'' प्रकरण से शुरुआत की है। धातु से जिस प्रत्यय को जोड़कर संज्ञा, विशेषण तथा अव्यय बनता है उस प्रत्यय को कृत् प्रत्यय कहते हैं। धातु तथा कृत् प्रत्यय के योग से बने पद को कृदन्त पद कहते हैं।

अष्टाध्यायी में कृदन्त प्रत्यय सम्बन्धित सूत्र संख्या में अधिक हैं। रामचन्द्र ने इन्हें तीन भागों में बांट कर छोटे प्रकरणों द्वारा कृदन्त ज्ञान करवाने का प्रयत्न किया है। वे प्रकरण हैं कृत्यप्रक्रिया, पूर्वकृदन्त और उत्तरकृदन्त प्रकरण। इन प्रकरणों में ''कृत्यप्रक्रिया'' प्रकरण दूसरे प्रकरणों के आदि में है।

---

1 अष्टा0 1-3-13

2 प्रक्रि0 लकारार्थ प्रक्रिया।

''कृत्याः''[1] सूत्र के अधिकार में वर्णित ''ण्वुल् तृचौ''[2] सूत्र से पूर्व जो प्रत्यय आते हैं उन्हें कृत्य संज्ञकों से जाना जाता है।[3] ग्रन्थकार ने इन कृत्य संज्ञक प्रत्ययों को उदाहरणों की जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार एक प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा विषयानुसार इस प्रकरण का ''कृत्य प्रक्रिया'' नाम दिया है। इस प्रकारण में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 66 सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किये हैं तथा इस प्रकरण में 13 वार्तिक हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''कृदन्तप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। धातु के अधिकार में तिङ् से भिन्न प्रत्यय की कृत् संज्ञा होती है। कृत् संज्ञक प्रत्यय जिन शब्दों के अन्त में होते हैं उन्हें कृदन्त कहते हैं। कृदन्त पदों की जानकारी के लिए रामचन्द्र ने कृदन्त कार्यो से सम्बन्धित सूत्रों को चुनकर इस प्रकरण में रूपरचना क्रम से दिया है। कृदन्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों में से रामचन्द्र ने ''ण्वुल् तृचौ''[4] सूत्र से लेकर तृतीय अध्याय द्वितीय पाद के अन्त तक केवल आवश्यकतानुसार ही ''पूर्वकृदन्त'' प्रकरण में वर्णन किया है अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है। उदाहरण रूपरचना के लिए अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम से उद्धृत है। इस में सूत्रों की संख्या 252 तथा वार्तिक संख्या 61 है। इस प्रकरण के अन्त में 9 सूत्र उणादिसूत्र हैं। इन का उल्लेख भी ग्रन्थकार ने इसी प्रकरण में किया है अनेक स्थानों पर पाणिनीयेत्तर वर्णन भी है। ग्रन्थकार ने ''उणादि प्रक्रिया'' का नाम तो नहीं दिया है परन्तु चलते-चलते ''उणादयो बहुलम्''[5] सूत्र के उपरान्त उणादि वर्णन किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''उत्तरकृदन्त'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थाकार ने तृतीय अध्याय में शेष कृदन्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में द्रष्टुम्, दर्शकः आदि विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। तृतीय अध्याय द्वितीय पाद तक की जानकारी ग्रन्थकार ने पूर्वकृदन्त प्रकरण में दी है। अतः शेष कृदन्तों की जानकारी के लिए इन्होंने अन्य प्रकरण में वर्णन किया है तथा उस का नाम उत्तरकृदन्त प्रकरण दिया है क्योंकि यह प्रकरण पूर्वकृदन्तों के बाद है। इस प्रकरण में 109 पाणिनीय सूत्रों और 22 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन हुआ है।[6]

रामचन्द्र ने ''उत्तरकृदन्त'' प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियाकौमुदी में ''वैदिकीप्रक्रिया प्रकरण'' दिया है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने वैदिकपदों की जानकारी के लिए अपने ग्रन्थों में स्थान नहीं दिया है परन्तु प्रक्रियाकौमुदीकार ने अष्टाध्यायी में वर्णित वैदिकपदों का उल्लेख करना उचित समझा है। इस प्रकरण में वैदिक उदाहरणों की जानकारी के लिए सन्धि, सुबन्त, स्त्रीप्रत्यय, समास, तद्धित, तिङन्त तथा

---

1 अष्टा0 3-1-95

2 अष्टा0 3-1-133

3 प्रागेतस्माण्ण्वुल संशब्दनात् यानित उर्ध्वमनुक्रमिष्यामः, कृत्यसंज्ञकास्ते वेदितव्याः। का0 3-1-95

4 अष्टा0 3-1-133

5 अष्टा0 3-3-1

6 प्रक्रि0 उत्तरकृदन्त प्रकरण।

कृदन्त सम्बन्धित सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। यद्यपि इस भाग में सन्धि षड्लिङ्ग. आदि प्रकरण विभाजन नहीं है परन्तु सभी प्रकार की जानकारी एक ही प्रकरण में दी है। रामचन्द्र ने इस प्रकरण में आवश्यकतानुसार पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 44 सूत्र और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से दिया है।

5 वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार भट्टोजिदीक्षित

विक्रम सम्वत् 1650 से पूर्व भट्टोजिदीक्षित ने सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण के क्रम को बदलकर प्रक्रियामूलकपद्धति में सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वाङ्ग.पूर्ण ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। भट्टोजिदीक्षित ने अपने से पूर्व रूपावतार आदि प्रक्रियाग्रन्थों में अनेक त्रुटियों का अध्ययन करके इस प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। समयानुसार भट्टोजिदीक्षित द्वारा रचित यह प्रक्रियाग्रन्थ इतनी प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है कि सम्प्रति प्रक्रियामूलकपरम्परा में सम्पूर्ण भारत में इसी ग्रन्थ से अध्ययन और अध्यापन होता है। भट्टोजिदीक्षित की शिक्षा श्री कृष्ण की देख रेख में हुई है। इन के भ्राता रंगोजि थे। प्रसिद्ध वैयाकरण भट्टोजिदीक्षित का कालनिर्णय भी विवादास्पद है फिर भी अनेक प्रमाणों से इनका काल 1570 विक्रम सम्वत् से 1650 विक्रम सम्वत् के मध्य निश्चित किया गया है। भट्टोजिदीक्षित ने व्याकरणपरम्परा में शब्दकौस्तुभ, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी और प्रौढ़मनोरमा नामक प्रसिद्ध तीन ग्रन्थों की रचना की है। ये तीनों ही ग्रन्थ व्याकरण अध्ययन में पाठकों की सहायता करते हैं परन्तु ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ अत्यन्त प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है।

''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' प्रक्रियाग्रन्थ के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इस में ग्रन्थकार ने यह प्रयत्न किया है कि इन द्वारा रचित ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' प्रक्रियाग्रन्थ ही सर्वत्र प्रचलित हो जाये अर्थात् व्याकरणपरम्परा में रूपावतार आदि प्रक्रियाग्रन्थों एवम् पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन पूर्णरूप से समाप्त हो जाये। समयानुसार इस ग्रन्थ की अनेक विशेषताओं के कारण ऐसा ही हुआ। आज इस ग्रन्थ की मान्यता अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से अधिक है चाहे वे ग्रन्थ इस से पूर्व रचित हैं या इस ग्रन्थ के बाद रचित हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में सूत्रमूलक व्याकरण के सभी सूत्रों और वार्तिकों की व्याख्या अधिकाधिक उदाहरणों की जानकारी के लिए रुचिकर प्रकरणों में दी है।

भट्टोजिदीक्षित के समक्ष सबसे बड़ी समस्या पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के बढ़ते प्रभाव को रोकना थी। इसके उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति के रूपावतार आदि ग्रन्थों में एक तो समयानुसार पुराने उदाहरण थे तथा इन ग्रन्थों में भी पूर्णप्रक्रिया का स्वरूप नहीं झलक रहा था जैसे कि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में प्रक्रिया का स्वरूप लहरा रहा था। समयानुसार पाठक पूर्ण प्रक्रिया जानकारी चाह रहे थे। प्रक्रियाकौमुदी विषय प्रधान ग्रन्थ न होने पर भी इस में पूर्णप्रक्रिया का स्वरूप नहीं है जिस की समयानुसार व्याकरणपरम्परा में आवश्यकता थी तथा प्रक्रियाकौमुदी में उदहारण संख्या भी कम थी इसलिए भाषा में प्रयुक्त शब्दों की पूर्ति नहीं हो पा रही थी। प्रक्रियाकौमुदी में प्रयुक्त उदाहरणों के उपरान्त नवीन शब्दों का भी भाषा में प्रचलन हो गया था जिन की मीमांसा भी जरूरी थी। प्रक्रियाकौमुदी में सूत्रवृत्ति भी सरल नहीं थी तथा प्रक्रियाकौमुदी

में ''अन्य केचित्'' कह कर पाणिनीयेत्तर आचार्यो के मतों का भी उल्लेख किया गया है जो कि पूर्णरूप से पाणिनीयेतर व्याकरणों के सूत्रों का उल्लेख है। पाणिनीयपरम्परा में इस अग्राह्य परम्परा का परिवर्तन भी जरूरी था इसके बाद प्रक्रियाकौमुदी में विषयवार प्रकरणों में भी कुछ त्रुटियां थी।

इन सभी समस्याओं को ध्यान में रख कर भट्टोजिदीक्षित ने त्रिमुनि व्याकरण के आचार्यो के मतों का प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक उदाहरणों की जानकारी के लिए संग्रह किया है और इस ग्रन्थ को ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' संज्ञा दी है। इस ग्रन्थ की अनेक विशेषताओं के कारण इस ने प्रक्रियामूलकपद्धति में अपना सर्वप्रथम स्थान बनाया है। प्रक्रियामूलक ग्रन्थों में यह सर्वाङ्ग.पूर्ण रचना है। इस पद्धति में इस प्रसिद्धि को कोई अन्य ग्रन्थ प्राप्त नहीं कर सका है।

प्रक्रियाकौमुदी के उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की रचना हुई है। प्रक्रिकौमुदी में विषयवारविभाजन, सरलसूत्रवृत्ति, समयानुकूल उदाहरण, पूर्णप्रक्रिया में उदाहरण जानकारी करवाना आदि अनेक विशेषताओं के कारण प्रक्रियाकौमुदी की बहुत प्रसिद्धि थी। प्रक्रियाकौमुदी की अत्यधिक प्रसिद्धि होने पर भट्टोजिदीक्षित ने प्रक्रियापद्धति में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी को पाठकों की सुविधार्थ दिया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में लगभग प्रक्रियाकौमुदी का ही अनुकरण है परन्तु इस ग्रन्थ की अनेक विशेषताओं के कारण यह प्रक्रियाग्रन्थ सभी प्रक्रियामूलकपद्धति के प्रक्रियाग्रन्थों में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की यह विशेषता है कि इस में विषयवार प्रकरण विभाजन दूसरे ग्रन्थों से उपयुक्त है। सूत्रवृत्ति व्याख्या सहित अति सरल है, उपयुक्त तथा अधिक उदाहरण जानकारी है, पाणिनीय सभी सूत्रों की व्याख्या है, सभी वार्तिकों का वर्णन है, वैदिक एवम् स्वर प्रक्रिया का भी वर्णन है। इस से पूर्व स्वरप्रक्रिया का पृथक उल्लेख किसी भी प्रक्रियाग्रन्थकार नें नहीं दिया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अनेक विशेषताओं में यह एक विशेषता है कि इस में प्रक्रियाकौमुदी के समान पाणिनीयेत्तर उल्लेख प्राप्त नहीं है। यदि होता भी है तो उसे पृथक प्रकरण से प्रदर्शित किया है तथा वह पाणिनीयपरम्परा में अभिमत भी है। प्रक्रियाकौमुदी में यथेच्छा पाणिनीयेत्तर उल्लेख भी कर दिया है परन्तु भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में मुनित्रय के मतों का ही वर्णन किया है। अनेक स्थानों पर भट्टोजिदीक्षित ने अनेक फकिकाओं द्वारा अनेक आचार्यो का खण्डन करके अपने मत का समर्थन किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में उदाहरण लगभग प्रक्रियाकौमुदी अनुसार ही है परन्तु सूत्रवृत्ति काशिका से अधिक मेल रखती है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में चार भाग है। प्रथम और द्वितीय भाग पूर्वार्ध में आते हैं तथा तृतीय चतुर्थ भाग उतरार्ध में हैं। प्रथम भाग में संज्ञा परिभाषा, सन्धि, षड्लिङ्., कारक तथा स्त्रीप्रत्ययप्रकरण हैं। द्वितीय भाग में समास और तद्धित हैं। तृतीय भाग में विभिन्न क्रियापदों की रूपरचना जानकारी है। चतुर्थ भाग में णिजन्त, सनन्त, यङन्त, यङ्लुक्, नामधातु, कण्डवादिप्रक्रिया तथा आत्मनेपद, परस्मैपदप्रक्रिया के

उपरान्त, कृदन्तप्रकरण,.उणादि प्रकरण, वैदिक तथा स्वरप्रक्रिया के बाद, फिट् सूत्र तथा लिङ्ग.नुशासन का वर्णन है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रथम भाग में मङ्ग.लाचरण के उपरान्त संज्ञा प्रकरण में सर्वप्रथम महेश्वर सूत्रों का वर्णन है। तदुपरान्त पाणिनीय अष्टाध्यायी में वर्णित संज्ञाविधायक सूत्रों को यथा क्रम उदाहरणों की जानकारी के लिए उद्धृत किया है। इन सूत्रों की पूर्ण जानकारी के लिए भट्टोजिदीक्षित ने इन की उदाहरणों सहित सरल भाषा में व्याख्या की है। इस प्रकरण में आवश्यकतानुसार संज्ञाविधायक सूत्रों के उपरान्त दूसरे ''हलन्त्यम्''[1], ''पूर्वत्रासिद्धम्''[2] आदि नियम तथा अधिकार आदि सूत्रों को भी दिया गया है। इस प्रकरण में 33 सूत्र और ''ऋलृवर्णयोः मिथःसार्वणयम् वाच्यम्'' 1 वार्तिक है।[3]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में परिभाषा ज्ञान के लिए ''परिभाषाप्रकरण'' अलग दिया है। इस ग्रन्थ से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में परिभाषा सम्बन्धी जानकारी संज्ञाप्रकरण में ही दी है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी परिभाषाप्रकरण में मात्र 13 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है अन्य सूत्रों का आवश्यकतानुसार विभिन्न स्थानों पर वर्णन है। इस प्रकरण में पाणिनीयपरम्परा में अभिमत्त ''यत्रानेकविधमान्तर्यं तत्र स्थानत आन्तर्यं बलीयः'' आदि 3 परिभाषाओं का उल्लेख भी दिया है।[4]

परिभाषाप्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''अच्सन्धिप्रकरण'' दिया है। सन्धि की परिभाषा के अनुसार दो वर्णों के मेल को सन्धि कहते हैं। सन्धियों को ग्रन्थकार ने पांच भागों में विभक्त किया है जिन में अच्सन्धि एक है। इस सन्धि में नियमानुसार दो अचों का आपस में मेल होता है। ग्रन्थकार ने सम्पूर्ण सन्धियों के उदाहरणों को पांच भागों में विभक्त किया है तथा प्रत्येक भाग की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों के विभिन्न पादों से सूत्रों को चुनकर रूप रचनाक्रम से दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में सन्धि सम्बन्धित जानकारी ग्रन्थों के अन्त में है। व्याकरण के हर क्षेत्र में सन्धियों की आवश्यकता होती है। अतः व्याकरण का प्रारम्भिक ज्ञान सन्धि ज्ञान पर आश्रित है। भट्टोजिदीक्षित ने इस समस्या की जानकारी के लिए सन्धियों का वर्णन वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में सर्वप्रथम किया है।

इन से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में भी सन्धियों का ज्ञान ग्रन्थ के शुरू में है परन्तु इन से पूर्व ग्रन्थकारों ने उपयोगी और अनुपयोगी के विचार से वर्णन किया है। भट्टोजिदीक्ष्ञित ने उपयोगी और अनुपयोगी का विचार नहीं किया है। इन्होंने सम्पूर्ण जानकारी के लिए सन्धि सम्बन्धित सभी सूत्रों और सभी वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है। पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में उदाहरणों, सूत्रों और वार्तिकों की संख्या वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से काफी कम है। भट्टोजिदीक्षित ने सन्धिविधायक सभी सूत्रों और वार्तिकों की व्याख्या करने में लाभ समझा है क्योंकि इस से पूर्ण जानकारी सम्भव है। इस प्रकरण में 42 पाणिनीय सूत्रों और 17 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[5]

1 अष्टा0 1-3-3
2 अष्टा0 8-2-1
3 वै0 सि0 कौ0 संज्ञा प्रकरण।
4 वै0 सि0 कौ0 परिभाषा प्रकरण।
5 वै0 सि0 कौ0 अच्सन्धिप्रकरण।

अच्सन्धि के उपरान्त सन्धियों में द्वितीय प्रकरण ''प्रकृतिभावप्रकरण'' है। भट्टोजिदीक्षित ने अच्सन्धि में से कुछ ऐसे प्रकरण को पृथक दिया है जो समयानुसार समझने के लिए "अच्सन्धिप्रकरण'' से पृथक होना चाहिए था। इस प्रकरण के उदाहरणों में अचों में ही सन्धि का वर्णन है परन्तु सूत्रों की सहायता से इन उदाहरणों में इन अचों को यण्, गुण, वृद्धि, दीर्घ आदि आदेश न होकर प्रकृतिभाव हो जाता है।अत: सुविधा के लिए भट्टोजिदीक्षित ने इन उदाहरणों को ''प्रकृतिभाव'' नामक प्रकरण में अलग दिया है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इन उदाहरणों का वर्णन ''अच्सन्धिप्रकरण'' में ही किया है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने 21 पाणिनीय सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा इस में 4 वार्तिक हैं।[1]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''प्रकृतिभाव'' प्रकरण के उपरान्त ''हल्सन्धि प्रकरण'' दिया है। इस में सम्बन्धित हलों को सन्धि का वर्णन है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने उदाहरण देने में प्रक्रियाकौमुदी का अनुकरण किया है। इन्होंने भी श्चुत्व , ष्टुत्व से सम्बद्ध उदहारणों की जानकारी प्रथम दी है। रूपावतार, रूपमाला आदि के समान जशत्व जानकारी सर्वप्रथम नहीं है। इस प्रकरण में उदाहरण भी लगभग प्रक्रियाकौमुदी से ही दिये हैं कुछ उदाहरण काशिका से हैं। प्रक्रियाकौमुदी की तुलना में इस ग्रन्थ में उदाहरण संख्या अधिक है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में हल्सन्धि सम्बन्धित सभी सूत्रों के लिए उदाहरणों का प्रावधान किया गया है। इस प्रकरण में सूत्रमूलकपद्धति से चुनकर 39 सूत्रों और 10 वार्तिकों को प्रक्रियामूलक क्रम से दिया है।[2]

भट्टोजिदीक्षित ने रूपरचना हेतु वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थपद्धति वर्णन विधि के अनुसार दो प्रकार से पाणिनीय सूत्रों का वर्णन किया गया है। प्रथम प्रकार से पाणिनीय सूत्र को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में दिये सूत्रसंख्या क्रम के साथ पाणिनीय अष्टाध्यायी में दिया गया उस सूत्र का अध्याय, पाद , सूत्रसंख्या आदि क्रम भी दिया है तथा सम्बन्धित सूत्र में उस सूत्र की वृत्ति उदाहरण, प्रत्युदाहरण आदि व्याख्या सामग्री का वर्णन भी किया गया है। पाणिनीय सूत्रों का दूसरी प्रकार के वर्णन में अनेक स्थानों पर पाणिनीय सूत्रों को मात्र रूपरचना कार्य हेतु स्मरणार्थ सूत्ररूप या सूत्रार्ध रूप में पुन: उद्धृत किया गया है। क्योंकि ये सूत्र व्याख्या सहित वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में अन्यत्र वर्णित है। अत: जानकारी के लिए पुन: उद्धृत किये हैं। ऐसे स्थानों पर पाणिनीय अष्टाध्यायी का सूत्रक्रम वर्णित नहीं है अपितु वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी बाला सूत्र संख्याक्रम दिया है ताकि पाठक आवश्यकतानुसार पूर्ण जानकारी उस सूत्र को ढूण्ड कर प्राप्त कर सके। इस प्रकार वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में एक सूत्र को अनेक बार उद्धृत किया गया है। अनेक स्थानों पर सूत्र कार्य देकर अगली रूपरचना का वर्णन कर दिया है। इस वर्णन से ज्ञात होता है कि भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में सूत्रों की व्याख्या और रूपरचना में सूत्र की उपयुक्तता दोनों का ज्ञान एक साथ करवाया है।

---

1 वै0 सि0 कौ0 प्रकृतिभावप्रकरण।

2 वै0 सि0 कौ0 हल्सन्धिप्रकरण।

हल्सन्धिप्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''विसर्गसन्धिप्रकरण'' दिया है। इस में प्रक्रियाकौमुदी का ही क्रम है। परन्तु इस में पूर्ण जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विसर्गसन्धि सम्बन्धित सभी सूत्रों की रूपरचनाक्रम में व्याख्या की गयी है। प्रक्रियाकौमुदी की तुलना में वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी में उदाहरण और सूत्र संख्या अधिक है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिए ग्रन्थकार ने 12 सूत्रों और 6 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1]

विसर्गसन्धिप्रकरण के उपरान्त ''सन्धिप्रकरण'' में भट्टोजिदीक्षित ने पञ्चम प्रकरण ''स्वादिसन्धि '' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने सु प्रत्यय से सम्बद्ध या सु प्रत्ययान्त शब्दों का अन्य सन्धि योग्य शब्दों के साथ सन्धि का वर्णन किया है। यह प्रकरण प्रक्रियाकौमुदी में भी दिया गया है परन्तु सन्धियों में प्रकृतिभाव के वर्णन को पृथक प्रकरण देना भट्टोजिदीक्षित की विशेषता है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के ''स्वादिसन्धिप्रकरण'' में भट्टोजिदीक्षित ने 16 सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[2]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियाकौमुदी के समान रूपरचना प्रधानग्रन्थ है विषय प्रधान नहीं है। परन्तु प्रक्रियाकौमुदी की अपेक्षा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रिया का पूर्ण स्वरूप प्राप्त होता है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में अतिसूक्ष्म वर्णन से उदाहरणों की जानकारी करवायी गयी है। इस ग्रन्थ में स्पष्ट वर्णन है साङ्केतिक जानकारी नहीं है। जैसे - ''मनोरथ'' उदाहरण की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने मनर्+रथ इस स्थिति में ''हशि च''[3] सूत्र से रकार को उकार तथा ''रो रि''[4] सूत्र से रकार लोप का उल्लेख किया है। ''विप्रतिषधे परम् कार्यम्''[5] सूत्र से पर कार्य के लिए विधान किया गया है। ''पूर्वत्रासिद्धम्''[6] सूत्र से पूर्व सूत्र, पर सूत्र की दृष्टि में असिद्ध होने के कारण ''रो रि''[7] इस सूत्र के असिद्धत्व के उल्लेख करने पर उत्वविधान करके ''मनोरथः'' उदाहरण की रूपरचना का वर्णन किया है। इस उदाहरण में सूक्ष्म जानकारी के लिए सूत्रों को अनेक बार उद्धृत किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रियाकौमुदी के समान सांकेतिक वर्णन नहीं है। ठीक इसी तरह वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में लगभग सभी उदाहरणों की रूपरचना के लिए नामोल्लेख किया गया है प्रक्रियाकौमुदी में विशेष उदाहरणों में सबन्धित सूत्रों का उल्लेख है। उन में भी अनेक सूत्रों को छोड़ दिया गया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पूर्णरूप रचना करने का प्रयास किया गया है चाहे वहां व्याख्यात्मक जानकारी ही क्यों न हो।

भट्ओजिदीक्षित ने भाषा में प्रयुक्त शब्दों का सुबन्त और तिङन्त पदों के रूप में वर्गीकरण किया। लोक भाषा में प्रयुक्त शब्द सुबन्त और तिङन्त रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं और न होते थे परन्तु

---

1 वै० सि० कौ० विसर्गसन्धिप्रकरण।
2 वै० सि० कौ० स्वादिसन्धिप्रकरण।
3 अष्टा० 6-1-114
4 अष्टा० 8-3-14
5 अष्टा० 1-4-2
6 अष्टा० 8-2-1
7 अष्टा० 8-3-14

संस्कृतभाषा में प्रयोगार्थ इन्हें सुबन्त और तिङन्त बनाया जाता है क्योंकि ''अपदम् न प्रयुञ्जीत'' नियमानुसार अपद प्रयोग नहीं किया जा सकता। अत: पदसंज्ञार्थ व्याकरण में अनेक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इस का उल्लेख व्याकरणशास्त्र द्वारा किया जाता है।

भट्टोजिदीक्षित ने भी रामचन्द्र के समान शब्दों को दो भागों में विभक्त किया है। वर्गीकरण के उपरान्त सर्वप्रथम सुबन्तपदों से सम्बन्धित रूपरचना वाले प्रकरण दिये हैं तदुपरान्त तिङन्त पदों से सम्बन्धि त रूपरचना वाले प्रकरणों को दिया है। सन्धियों से सम्बन्धित उदाहरण भी सुबन्त पदों में आते हैं। अत: इस प्रकरण से लेकर तद्धित प्रकरण तक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में सुबन्त पदों का वर्णन किया गया है।

सन्धिप्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''अजन्तपुलिङ्ग.प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने प्रातिपादिकों को छ: भागों में विभक्त किया है। इन्होंने रूपावतार आदि में दिये प्रकरणों का अनुकरण नहीं किया है। सर्वप्रथम भट्टोजिदीक्षित ने प्रतिपादिकों को अजन्त और हलन्तप्रातिपदिकों के रूप में दो भागों में विभक्त किया। संस्कृत में पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग., तथा नपुंस्कलिङ्ग. आदि तीन लिङ्ग. होने के कारण स्वभाविक है कि प्रातिपदिक भी तीन लिङ्ग.ों में विभक्त हैं। अत: भट्टोजिदीक्षित ने अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों को पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुंस्कलिङ्ग. तीन भागों में वर्गीकृत किया। इस तरह अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग., अजन्तनपुंस्कलिङ्ग., हलन्तपुलिङ्ग., हलन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. आदि छ: भाग बनते है। इन्होंने प्रत्येक भाग के प्रातिपदिकों को सुबन्त रूपरचनार्थ अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग. आदि प्रकरणों में दिया है तथा प्रत्येक उदाहरण की रूपरचना पूर्ण प्रक्रियानुसार प्रदर्शित की है।

भट्टोजिदीक्षित ने सर्वनाम तथा संख्या बाचक प्रातिपदिकों को पृथक प्रकरण नहीं दिया है क्योंकि ये भी अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों में विभक्त होने के कारण यथाक्रम ''अजन्तपुलिङ्ग.'' आदि प्रकरणों में वहीं वर्णित हैं। यद्यपि प्रक्रियाकौमुदी में भी ऐसा ही प्रसंशनीय वर्णन है परन्तु इस में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा अनेक त्रुटियां पायी गयी हैं जिस कारण प्रक्रियाकौमुदी उतनी प्रसिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकी है।

सुबन्तपदों की जानकारी के लिए भट्टोजिदीक्षित ने ''अजन्तपुलिङ्ग.प्रकरण'' से शुरुआत की है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने अजन्तप्रतिपदिकों को रूपरचना के लिए अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त आदि क्रम से दिया है तथा इन की सिद्धि के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से आवश्यकतानुसार सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 94 अजन्तप्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए 109 पाणिनीय सूत्रों तथा 15 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[1] इन से पूर्व रचित प्रक्रियाकौमुदी में मात्र 65 प्रातिपदिकों की जानकारी है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने समान कार्य वाले अन्य प्रातिपदिकों की रूपरचना के लिए निर्देश दिय हैं। अत: सिद्ध होता है कि भाषा में प्रयुक्त किसी भी प्रातिपदिक की सुबन्तपद हेतु रूपरचना का वर्णन वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त है।

1 वै0 सि0 कौ0 अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।

अजन्तपुलिङ्ग.प्रकरण के उपरान्त ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' शुरू होता है। इस प्रकरण में भी आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त आदि क्रम से प्रातिपदिकों को रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 44 प्रातिपदिकों को विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के 22 सूत्रों और 4 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] किसी भी रूपरचना के लिए समान कार्य सम्बन्धित उदाहरण से सहायता लेकर कार्य चलाने के निर्देश हैं। इस कारण इस ग्रन्थ में अब तक कोई कठिनाई न आने के कारण सुचारु रूप से कार्य चल रहा है। प्रक्रियाकौमुदी की अपेक्षा इस में अधिक उदाहरण हैं तथा उपयोगी वर्णन है। प्रक्रियाकौमुदी में मात्र 36 अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रातिपादिकों की जानकारी है जबकि इस में प्रक्रियाकौमुदी की अपेक्षा 44 प्रातिपादिकों का वर्णन है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''अजन्तनपुंस्कलिङ्ग.प्रकरण'' है। ग्रन्थकार ने 38 प्रातिपादिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए सूत्रों को यथा सम्भव प्रक्रियाक्रम से दिया है। यह प्रकरण लगभग प्रक्रियाकौमुदी ''अजन्तनपुस्कलिङ्ग.'' प्रकरण के समान ही है क्योंकि उदाहरण और सूत्र समान ही है। परन्तु भट्टोजिदीक्षित का रूपरचना हेतु अपना विशेष क्रम है, इन्होंने अति सरल व्यारव्यात्मक जानकारी दी है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को 15 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों द्वारा पूर्ण किया है।[2]

अजन्तनपुस्कलिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त हलन्तप्रातिपदिकों को सुबन्त बनाने की प्रक्रिया का वर्णन है। हलन्तप्रातिपदिकों की जानकारी के लिए भट्टोजिदीक्षित ने ''हलन्तपुलिङ्ग.प्रकरण'' से प्रकरणों की शुरुआत की है। इस प्रकरण में 132 हलन्तपुलिङ्ग. प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 115 सूत्रों तथा 11 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[3] इस प्रकरण में प्रक्रियाकौमुदी से 8 उदाहरण कम हैं। प्रक्रियाकौमुदी में रामचन्द्र ने इस प्रकरण को 108 सूत्रों तथा 5 वार्तिकों में पूर्ण किया है[4] जबकि प्रक्रियाकौमुदी में उदाहरणों का उल्लेख अधिक है प्रक्रियाकौमुदी में इस प्रकरण में दो स्थानों पर पाणिनीयेत्तर उल्लेख है उदाहरण भी भिन्न हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्त स्त्रीलिङ्ग.'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने 21 हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रातिपादिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के 3 सूत्रों का व्यारव्या सहित उल्लेख किया है। इन सूत्रों के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की पद्धति वर्णन विधि अनुसार रूपरचना में सहायक अन्य उपयोगी सूत्रों को भी आवश्यकतानुसार सूत्र या सूत्रार्ध रूप में उद्धृत किया है। इन की व्यारव्या इस प्रक्रियाग्रन्थ में अन्यत्र है सूत्र कायार्थ इन्हें यहां केवल सूत्ररूप में पुनः उद्धृत किया है।

प्रक्रियाकौमुदी में पाणिनीयपरम्परा में अभिमत 21 प्रातिपदिकों के साथ ''घूर्णुत'' एक अपाणिनीय उदाहरण भी दिया है।[5] दोनों प्रक्रियाग्रन्थों में इतनी भिन्नता है कि एक अपाणिनीय उदाहरण के साथ

---

1 वै0 सि0 कौ0 अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण।
2 वै0 सि0 कौ0 अजन्तनपुंलिङ्ग. प्रकरण।
3 वै0 सि0 कौ0 हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।
4 प्रक्रि0 हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।
5 प्रक्रि0 पृष्ठ 393 .

प्रक्रियाकौमुदी में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा व्याख्या सहित उद्धृत सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र या सूत्रार्ध रूप में उद्धृत सूत्रों की संख्या कम है। प्रक्रियाकौमुदी में उदाहरणों की पूर्ण रूपरचना का उल्लेख नहीं है जैसा कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में वर्णित है।

हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग.'' प्रकरण में 44 प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए मुख्यरूप में व्याख्या सहित 4 सूत्रों और 5 वार्तिकों का प्रयोग किया है।[1] इन के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की वर्णनविधि परम्परानुसार रूपरचना में सहायक दूसरे सूत्रों का उल्लेख भी है परन्तु वे व्याख्या सहित अन्यत्र उद्धृत हैं इस प्रकरण में रूपरचनार्थ सूत्ररूप में पुन: उद्धृत किये हैं। इन से पूर्व रचित प्रक्रियाकौमुदी में 44 की अपेक्षा केवल 32 प्रातिपदिकों की रूपरचना के लिए 6 सूत्र और 5 वार्तिकों का प्रयोग किया गया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''अव्ययप्रकरण'' दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में अव्ययों का उल्लेख विखरा है एक प्रकरण में इकट्ठा प्राप्त नहीं है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए सम्बन्धित 6 सूत्रों और 1 वार्तिक को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] रूपरचना में सहायक अन्य 6 सूत्रों को भी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के सूत्रसंख्या क्रम से पुन: उद्धृत किया है क्योंकि ये व्याख्या सहित मुख्य रूप में अन्यत्र वर्णित हैं।

अव्ययप्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''स्त्रीप्रत्यय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न शब्दों से स्त्रीत्व विवक्षा में अनेक प्रत्ययों का वर्णन किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति में स्त्रीत्व विवक्षा में प्रत्ययविधायकसूत्र चतुर्थ अध्याय में दिये हैं और ये सूत्र एक ही क्रम में प्राप्त होते हैं। जैसे :- ''अजाद्यतष्टाप्''[4] सूत्र से लेकर ''दैवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्ठेविद्धिभ्योऽन्यन्तरस्याम्''[5] सूत्र तक 77 सूत्र हैं। परन्तु स्त्रीप्रत्ययान्त शब्दों की रूपरचना में सहायक सूत्र विभिन्न अध्यायों में पाये जाते हैं। समयानुसार पाठक काशिका के उपरान्त व्याकरण का अध्ययन रूपरचनानुसार प्रक्रियाक्रम में चाहने लगे थे क्योंकि कातन्त्र आदि व्याकरणों का उन पर बहुत प्रभाव पड़ा था तथा पाणिनीयपरम्परा में भी अनेक व्याकरणग्रन्थ प्रक्रियाक्रम में प्रचलित थे। परन्तु इन में भी अनेक समस्याओं का सामना था। अत: भट्टोजिदीक्षित ने इन समस्याओं को दूर करने का प्रयत्न किया है।

भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में स्त्रीप्रत्ययान्त शब्दों की रूपरचना के लिये ''स्त्रीप्रत्यय प्रकरण'' पृथक से दिया है। इन्होंने पाणिनीयव्याकरण के स्त्रीप्रत्यय सम्बद्ध सभी सूत्रों का संकलन किया है। क्रम में भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं है। परन्तु इन्होंने स्त्रीप्रत्यय सम्बन्धित सूत्रों के साथ स्त्रीप्रत्ययान्त

---

1 वै० सि० कौ० हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण।

2 प्रक्रि० हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण।

3 वै० सि० कौ० अव्ययप्रकरण।

4 अष्टा० 4-1-4

5 अष्टा० 4-1-81

शब्दों की रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 79 सूत्र और 58 वार्तिक हैं।[1] वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्याक्रम से पुनः उद्धृत सूत्रों का वर्णन पृथक है क्योंकि ये सूत्र रूपरचना के लिए स्मरणार्थ दिये हैं इन की पूर्ण जानकारी अन्यत्र है यहां केवल सूत्ररूप में उद्धृत हैं।

स्त्रीप्रत्यय प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रथम भाग के अन्त में "कारकप्रकरण" दिया है। वाक्य में उक्त सम्बन्ध बोधक शब्दों को कारक कहते हैं या वाक्य में क्रिया से जिस का सीधा सम्बन्ध होता है उसे कारक कहते हैं। क्रिया का सीधा सम्बन्ध छः स्थानों पर होता है, क्रिया को करने वाले के साथ, क्रिया के कर्म के साथ, क्रिया जिस की सहायता से होती है उस के साथ, क्रिया जिस के लिए होती है उस के साथ,क्रिया जिस से निकले या जिससे दूर हो उसके साथ तथा क्रिया जिस स्थान पर होती है उस के साथ आदि। इन्हें क्रमशः कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान तथा अधिकरण कारक की संज्ञा दी गयी है।

व्याकरण में किस-किस कारक की कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान आदि संज्ञा होती है तथा किन-किन पदों के योग में किन-किन विभक्तियों का प्रयोग होता है आदि जानकारी के लिए विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। इस जानकारी के लिए सूत्रमूलपद्धति में कर्तृ, कर्म, करण आदि संज्ञाविधायकसूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्तिविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। इस पद्धति में यह समस्या है कि कर्तृ, कर्म, करण आदि संज्ञाविध ायक सूत्रों में कर्तृ, कर्म, करण आदि विभक्तिसंज्ञा क्रम नहीं हैं परन्तु अपादान, सम्प्रदान, करण, अधि करण,कर्म और कर्ता आदि विभक्तिसंज्ञा क्रम है। इसी तरह विभक्तिविधायक सूत्रों में प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्तिक्रम नहीं है। उदाहरण जानकारी के लिए कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञाविधायक सूत्रों के उपरान्त विभक्तिविधायक सूत्रों की आवश्यकता पड़ती है। परन्तु सूत्रमूलपद्धति में यह क्रम नहीं है। इन समस्याओं के समाधान हेतु ग्रन्थकार ने कारक से सम्बद्ध सूत्रों को उदाहरण जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी आवश्यकतानुसार सूत्रमूलग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में यथोचित स्थान दिया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में दिये गये उदाहरण लगभग काशिका तथा प्रक्रियाकौमुदी के ही हैं। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी "कारक प्रकरण" की यह विशेषता है कि इसमें पूर्वप्रक्रियाग्रन्थों से उदाहरणों और अष्टाध्यायी से उद्धृत सूत्रों की संख्या अधि क है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त कारकों से सम्बद्ध सभी सूत्रों और वार्तिकों का उल्लेख है। इस ग्रन्थ में पूर्वग्रन्थों के समान सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को नहीं छोड़ा है परन्तु पाणिनीयव्याकरण की पूर्ण जानकारी है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने 115 सूत्रों और 35 वार्तिकों द्वारा पूर्ण किया है।[2]

---

1 वै0 सि0 कौ0 स्त्रीप्रत्यय प्रकरण।

2 वै0 सि0 कौ0 कारक प्रकरण।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी द्वितीय भाग में समास और तद्धित प्रकरण हैं। द्वितीय भाग की शुरुआत समासप्रकरण से होती है। अनेक पदों का मिलकर एक हो जाना समास कहलाता है। इसे संक्षेप भी कहते हैं अर्थात दो या दो से अधिक पदों को इस प्रकार साथ रख देना कि उनके आकार में भी कुछ कमी आ जाये तथा अर्थ भी पूर्ण विदित हो।

व्याकरण में दो या दो से अधिक पदों को एक साथ रखने के लिए वर्णन प्राप्त होता है। इस वर्णन को समास कहते हैं। समासविधायकसूत्र सूत्रमूलकपद्धति में द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीय पाद में प्राप्त होते हैं। परन्तु ये सूत्र समास करने तक ही सीमित हैं। समास करने के उपरान्त समस्तपदों की रूपरचना के लिए इस पद्धति में एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। काशिका तक पाठक समास करने के उपरान्त इस सारी प्रक्रिया सामग्री को जुटा लेते थे परन्तु काशिका के कुछ समय बाद पाठक सम्पर्णू प्रक्रिया को एक प्रकरण में चाहने लगे क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति से कम से कम छः अध्याय पढ़ने पर ही समास ज्ञान प्राप्त होता है। इसलिए पाठकों को समास ज्ञान के लिए कम से कम छः अध्यायों की जानकारी जरूरी है। अतः भट्टोजिदीक्षित ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान इस समस्या समाधान के लिए समासप्रकरण पृथक दिया है। इस प्रकरण में समास ज्ञान की पूर्ण जानकारी के लिए समासकार्यों से सम्बन्धित सूत्रों को विभिन्न रूपरचना जानकारी हेतु सम्पूर्ण अष्टाध्यायी से चुनकर वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के समास प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन्होंने अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि तथा द्वन्द्व आदि समास से सम्बन्धित सूत्रों को वर्गीकृत करने पर ''अव्ययीभाव समास'' आदि प्रकरणों में उदाहरणों की विभिन्न जानकारी के लिए उद्धृत किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से व्याकरण पढ़ने से पाठकों को यह सुविधा हुई कि मात्र समासप्रकरण को पढ़ने से ही वे समास प्रक्रिया की पूर्ण जानकारी करने लगे । सूत्रमूलकग्रन्थों के समान इसमें अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता।

यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्पत्ति वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से काफी समय पूर्व हो गयी थी तथा समास सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं का उल्लेख भी इस ग्रन्थ से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में किया गया है परन्तु उस में अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने पर भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में समास ज्ञान हेतु विस्तार से उल्लेख किया है। इन्होंने समास कार्यों से सम्बन्धित सब प्रकार के उदाहरणों के लिए समास सम्बन्धित सभी सूत्रों का उल्लेख किया है। समास कार्यों से सम्बद्ध किसी भी सूत्र और वार्तिक को नहीं छोड़ा है। इस ग्रन्थ से विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इस ग्रन्थ से सरल प्रक्रिया द्वारा पाणिनीयव्याकरण की पूर्ण जानकारी होती है। इस से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों की यह विशेषता नहीं है तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से केवल पाणिनीय ज्ञान ही प्राप्त होता है क्योंकि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पाणिनीयेत्तर सूत्रों का उल्लेख नहीं है जैसे कि प्रक्रियाकौमुदी में प्राप्त होता है। रूपावतार, रूपमाला आदि के समान भट्टोजिदीक्षित ने अत्यावश्यक उदाहरणों और सूत्रों का उल्लेख भी नहीं किया है इन्होंने पूर्ण जानकारी के लिए ग्रन्थ रचा है। इसी कारण इन द्वारा रचित वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियाग्रन्थ प्रक्रियापद्धति में प्रसिद्धता को प्राप्त हुआ है।

व्याकरणसिन्द्धातकौमूदी समासप्रकरण ''अव्ययीभावसमास'' भाग से शुरू होता है यद्यपि सूत्रमूलकग्रन्थों में भी अव्ययीभावसमास सम्बन्धित सूत्र दूसरे समासविधायक सूत्रों से पूर्व दिये हैं तथा एक ही क्रम में हैं परन्तु वे पाठकों की समस्या का समाधान नहीं कर पा रहे थे। भट्टोजिदीक्षित ने अव्ययीभावसमास विधायक सभी 16 सूत्रों का प्रयोग किया है। इस प्रकरण में 36 सूत्र हैं परन्तु समास केवल 16 सूत्र करते हैं। 7 सूत्रसमासान्त टच् प्रत्यय करते हैं। इन सूत्रों को समास प्रक्रिया में सहायक होने के कारण भट्टाजिदीक्ष्नित ने पञ्चम अध्याय चतुर्थपाद से उठाकर यथाक्रम वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के अव्ययीभावसमास प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में समास से सम्बद्ध तथा समासान्तप्रत्ययविधायक सूत्रों की संख्या 26 है। शेष 10 सूत्र आवश्यकतानुसार भट्टोजिदीक्षित ने रूपरचना के लिए विभिन्न अध्यायों से चुनकर यथोचित स्थानों पर दिये हैं।[1] इस प्रकरण में समास प्रक्रिया में सहायक 2 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है। इस प्रकरण में 74 उदाहरणों की जानकारी है जो प्रक्रियाकौमुदी से 9 अधिक है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा प्रक्रियाकौमुदी में लगभग उदाहरण काशिका के ही हैं रूपरचना के लिए कुछ उदाहरण भिन्न हैं। काशिका में इन दोनों ग्रन्थों से उदाहरणों की संख्या अधिक है।[2] अतः स्पष्ट है कि समयानुकूल उदाहरणों का वर्णन करना ही इन प्रक्रियाग्रन्थों का लक्ष्य है। इसलिए ही इन ग्रन्थकारों ने काशिक के अनेक उदाहरणों का वर्णन नहीं किया है।

अव्ययीभावसमास प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''तत्पुरुषसमास'' प्रकरण दिया है। इस समास के कर्मधारय और द्विगु भेदोपभेद है। अतः समासों में तत्पुरुष समासप्रकरण दूसरे प्रकरणों से बड़ा है।[3] तत्पुरुष समास के आदि में द्वितीयान्त, तृतीयान्त आदि विभक्त्यान्त पदों का समर्थ सुबन्तपदों के साथ समास होने या समास निषेध का वर्णन किया गया है। तदुपरान्त तत्पुरुषभेद का उल्लेख है इसी प्रकरण में नञ तत्पुरुष का वर्णन तथा कु, गति सञ्ज्ञक एवम् प्रादि शब्दों का समर्थ सुबन्त के साथ समास का वर्णन है। कर्मधारय तथा कर्मधारय के भेद द्विगु का वर्णन मिश्रित रूप में प्राप्त होता है।[4] सूत्रमूलकग्रन्थों में भी इन का मिश्रित वर्णन है।[5]

तत्पुरुषसमास को प्रक्रियारूप में पूर्ण करने के लिए भट्टोजिदीक्षित ने समासान्त टच्, अच् आदि प्रत्ययविधायकसूत्र पञ्चम अध्याय तृतीय पाद से, अकार अन्तादेश करने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से तथा विभिन्न लिङ्गों में समास होने पर लिङ्ग पूर्व पद के समान हो या पर पद के समान या अनेक पदों में पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. या नपुंस्कलिङ्ग. विधान हेतु सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर रूपरचना हेतु प्रक्रियाक्रम में दिये हैं। इन कार्यो के उपरान्त आवश्यकता पड़ने पर विभिन्न समस्त पदों की रूपरचना

---

1 वै0सि0कौ0 अव्ययीभाव समास प्रकरण।

2 काशिका

3 वै0 सि0 कौ0 तत्पुरुषसमास प्रकरण।

4 वै0 सि0 कौ0 तत्पुरुषसमास प्रकरण।

5 (क) अष्टाध्यायी
(ख) काशिका

के लिए अन्य सम्बद्ध सूत्रों को भी सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। केवल तत्पुरुषसमास प्रकरण पढ़ने पर ही पाठकों को इस समास की पूर्ण जानकारी हो जाती है। सूत्रमूलकपद्धति के समान सम्पूर्ण ग्रन्थ का अध्ययन आवश्यक नहीं है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पूर्ण सामग्री उसी प्रकरण में एकत्रित है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तत्पुरुषसमास प्रकरण में उदाहरणों की संख्या काशिका से कम तथा प्रक्रियाकौमुदी से काफी अधिक है। सूत्र संख्या भी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी ''तत्पुरुषसमास'' प्रकरण में प्रक्रियाकौमुदी से अधिक है क्योंकि इस ग्रन्थ में पूर्ण जानकारी का वर्णन है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में तत्पुरुषसमास प्रकरण को पूर्ण करने के लए 255 पाणिनीय सूत्रों का उपयोग किया गया है। तथा इस प्रकरण में 39 वार्तिकों का वर्णन है।[1]

तत्पुरुषसमास प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने बहुव्रीहि समास प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए 78 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है तथा इस प्रकरण में 33 वार्तिक हैं।[2] व्याकरण में मात्र 5 सूत्र बहुव्रीहि समास करते हैं भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों के साथ 73 अन्य सूत्रों का वर्णन भी किया है। क्योंकि समास करने के उपरान्त समस्त पदों की जानकारी के लिए एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है।

बहुव्रीहि समास विधायक सूत्रों से पूर्ण रूपरचना जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती। सूत्रमूलकपद्धति से कम से कम छ: अध्यायों की जानकारी आवश्यक है। अत: भट्टोजिदीक्श्रित ने समासन्त प्रत्ययविधाय सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलक ग्रन्थों के पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर, पुम्वदभाव या स्त्रीवदभाव विधाननार्थ सूत्रों और वार्तिकों को षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से चुनकर तथा बहुव्रीहि समास में पदान्त को आदेश करने वाले सूत्रों को पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रिया क्रम से दिया है। इन के उपरान्त अन्य उपयोगी सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में यथोचित स्थानों पर दिया है। इस प्रकार बहुव्रीहि समास की पूर्ण जानकारी इस प्रकरण को पढ़ने पर एक साथ एक क्रम से इकट्ठी प्राप्त हो जाती है।

समासों में बहुव्रीहि समास के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''द्वन्द्वसमास प्रकरण'' दिया है। द्वन्द्वसमास के सभी उदाहरणों में ''चार्थे द्वन्द्वः''[3] सूत्र से ही समास होता है। समासविधायकसूत्र के उपरान्त अष्टाध्यायी में अनेक पदों को पूर्व या पर प्रयोगार्थ विधान किया गया है। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों का क्रम आवश्यकतानुसार सूत्रमूलकपद्धति क्रमानुसार ही रखा है। रूपरचना के लिए अनेक सूत्रों को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में विहित संख्या क्रम से अन्य उपयोगी सूत्रों के साथ पुन: उद्धृत किया है।

इस प्रकरण में आवश्यकतानुसार एकवदभाव विधायक सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों के द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर तथा द्वन्द्व समास में पूर्वपद के अन्त में आदेश या सम्पूर्ण पद के स्थान

---

1 वै० सि० कौ० तत्पुरुषसमास प्रकरण।

2 वै० सि० कौ० बहुव्रीहिसमास प्रकरण।

3 अष्टा० 2-2-29

पर आदेश करने वाले सूत्रों और वार्तिकों को षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 30 सूत्रों और 12 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[1]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''द्वन्द्वसमासप्रकरण'' के उपरान्त ''एकशेष'' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने उन उदाहरणों की जानकारी दी है जिन में दो पदों में से सूत्रों द्वारा एक पद हट जाता है तथा दूसरा शेष रहता है। इस प्रकरण में ''चार्थे द्वन्द्वः''[2] सूत्र से समास होने पर दो पदों में से एक पद को हटाने वाले सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों के प्रथम अध्याय द्वितीय पाद से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है।

सूत्रमूलकपद्धति के ग्रन्थों में एक शेष विधायकसूत्र और वार्तिक प्रथम अध्याय में दिये हैं तथा समासविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय में हैं। अतः विना समास ज्ञान से इन सूत्रों और वार्तिकों की उपयोगिता ही पाठकों को समझ नहीं आ रही थी। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों और वार्तिकों को इस क्रम से दिया है कि पाठक इन की उपयोगिता से परिचित हो जायें। ''एक शेष'' प्रकरण में क्रम से 9 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[3]

एकशेष प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''सर्वसमास'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में पञ्चवृत्ति की जानकारी के उपरान्त समास प्रक्रिया में प्रयुक्त लौकिक और अलौकिक विग्रह की जानकारी है। समास के चार प्रकार के होने का उल्लेख, पूर्वपदार्थ प्रधान में अव्ययीभाव, उत्तरपदार्थ प्रधान में तत्पुरूष, अन्य पदार्थ प्रधान में बहुव्रीहि, दोनों पदार्थ प्रधानता में द्वन्द्व मानना भट्टोजिदीक्षित ने ''प्राचांप्रवादः'' प्रायोवाद ही कहा है।[4] अन्त में ''सुपां सुपां तिङ् नाम्ना''[5] आदि कारिका में समास के छः प्रकार मानते हुए इन के उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''सर्वसामासान्त प्रकरण'' दिया है। इस में सभी समासों के अन्त में होने वाले प्रत्ययों तथा प्रत्ययों का निषेध करने वाले सूत्रों का वर्णन किया है। ये सूत्र एवम् वार्तिक सूत्रमूलकग्रन्थों के पञ्चम अध्याय के चतुर्थ पाद में दिये हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को रूपरचना जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। प्रत्येक समासप्रकरण में उपयोगितानुसार समासान्त प्रत्ययों का वर्णन भी है। परन्तु कुछ उदाहरणों की जानकारी के लिए भट्टोजिदीक्षित ने पृथक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न अध्यायों के 18 सूत्रों और 6 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[6] सभी समासों से सम्बन्धित होने के कारण ग्रन्थकार ने इसे सर्वसमासान्त प्रकरण संज्ञा दी है।

---

1 वै० सि० कौ० द्वन्द्वसमास प्रकरण।
2 अष्टा० 2-2-29
3 वै० सि० कौ० एकशेष प्रकरण।
4 वै० सि० कौ० सर्वसमासन्त प्रकरण पृष्ठ 156
5 कारिका वै० सि० कौ० सर्वसमासान्त प्रकरण पृष्ठ 157
6 वै०सि० कौ० सर्वसमासान्त प्रकरण।

इस प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी द्वितीय भाग में ''अलुक्समासप्रकरण'' दिया है। समस्त पदों में कुछ ऐसे उदाहरण भी हैं जिन में विभक्ति का लोप नहीं होता है जबकि विभक्तिकार्य करने पर समस्त पद सिद्ध होते हैं। यद्यपि समास इसी का नाम है जहां दो या तीन पदों का समास होने पर इन पदों में प्राप्त विभक्तियों का लोप होने के उपरान्त संक्षिप्त पद शेष रहे उसे समास कहते हैं। परन्तु समास में अनेक उदाहरण ऐसे भी हैं जहां विभक्तियों का लोप नहीं होता। इन उदाहरणों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के षष्ठ अध्याय तृतीय पाद में सूत्र दिये हैं जो समास के उपरानत प्राप्त विभक्ति के लोप का निषेध करते हैं। ये उदाहरण विभिन्न समास प्रकरणों में भी दिये जा सकते थे। परन्तु भट्टोजिदीक्षित ने इस ज्ञान को गहन करवाने हेतु अलग प्रकरण दिया है तथा इस प्रकरण को ''अलुक्समास'' प्रकरण संज्ञा दी है क्योंकि समास सम्बन्धित इस जानकारी में विभक्ति का अलुक् होता है। अतः यह अलुक् समास प्रकरण है। इस प्रकरण में विभक्ति अलुक् विधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रम से 27 तथा 11 हैं।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''समासाश्रयविधिप्रकरण'' दिया है। इन से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में इन उदाहरणों की जानकारी अन्य प्रकरणों में ही करा दी गई है। भट्टोजिदीक्षित ने स्वतन्त्र जानकारी के लिए इस प्रकरण को अपने प्रक्रियाग्रन्थ में पृथक स्थान दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में ''घ-रूप-क्लप-चेलड्-ब्रुव-गोत्र-गत-हतेषु ङ्योऽनेकांचो ह्रस्वः''[2] सूत्र से लेकर ''मित्रे चर्षौ''[3] सूत्र तक सभी सूत्र उत्तरपद परे रहते पूर्वपद को विभिन्न आदेश या पूर्व पदान्त को ह्रस्व करते हैं। ''वाहनमाहितात्''[4] सूत्र से लेकर ''पदव्यपायेऽपि''[5] सूत्र तक सूत्र समास में पर पद में स्थित नकार को णकारादेश तथा णकारादेश का निषेध करते हैं। ''कुस्तुम्बुरूणि जातिः''[6] सूत्र से लेकर ''पास्करप्रभृतीनि च सञ्ज्ञायाम्''[7] सूत्र तक सभी सूत्र सुट् आगम तथा सकार को निपातन से षत्व आदेश का विधान करते हैं। इन सूत्रों में से अनेक सूत्रों का वर्णन अनेक प्रकरणों में आ गया है। शेष सूत्रों की जानकारी के लिए भट्टोजिदीक्षित ने अलग प्रकरण दिया है। इन्होंने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार इन सूत्रों को षष्ठ अध्याय प्रथम और तृतीय पाद से तथा अष्टम अध्याय के चतुर्थ पाद से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त अन्य सम्बद्ध सूत्र भी हैं। ये सभी सूत्र उत्तरपद परे रहते पूर्वपद के स्थान पर आदेश करते हैं। ये सभी आदेश समास कार्यों के उपरान्त होते हैं अर्थात् समास आश्रय में होते हैं। इसी कारण भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''समासाश्रयविधि प्रकरण'' की संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 87 सूत्रों तथा 31 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख हुआ है।

---

1 वै0 सि0 कौ0 अलुक्समास प्रकरण।

2 अष्टा0 6-3-43

3 अष्टा0 6-3-130

4 अष्टा0 8-4-8

5 अष्टा0 8-4-38

6 अष्टा0 6-1-143

7 अष्टा0 6-1-157

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी द्वितीय भाग में समासप्रकरण के उपरान्त ''तद्धिताधिकार'' प्रकरण दिया है। तद्धित प्रत्यय वे प्रत्यय हैं जो विभिन्न प्रयोगों की रूपरचना में काम आते हैं। संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम आदि शब्दों से आवश्यकतानुसार अपत्य, उत्पन्न होना, वाला या युक्त आदि अनेक अर्थ निकालने के लिए उक्त शब्दों से अण्, इञ्, ढक् आदि तद्धितप्रत्ययों का प्रयोग करने पर तद्धितान्त पदों की रूपरचना की जाती है। व्याकरण में अनेक प्रत्यय हैं जो संज्ञा, विशेषण तथा सर्वनाम आदि शब्दों से प्रयुक्त होकर अनेक अर्थ निकालते हैं। इन प्रत्ययों को तद्धितप्रत्यय कहते हैं। सूत्रमूलकपद्धति में इन प्रत्ययों का उल्लेख चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में दिया है। काशिका आदि वृत्ति ग्रन्थों के उपरानत पाठक रूप रचना करने में कठिनाई समझने लगे। इस समस्यासमाधान हेतु प्रक्रियाग्रन्थकारों ने अनेक प्रक्रियाग्रन्थ रचे। यद्यपि भट्टोजिदीक्षित से पूर्व रचित प्रक्रियाग्रन्थों में तद्धितों से सम्बन्धित जानकारी है। परन्तु भट्टोजिदीक्षित ने इन में अनेक त्रुटियों का अवलोकन करने पर समाधान हेतु सरल प्रक्रिया में तद्धितों का वर्णन किया है। इन्होंने उपयुक्त विषयवार प्रकरण विभाजन तथा अधिक और उपयोगी उदाहरणों द्वारा तद्धित प्रकरण को पूर्ण किया है। भट्टोजिदीक्षित ने तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को विभिन्न प्रकरणों में विभक्त करके प्रक्रिया क्रम से दिया है। बड़े प्रकरण को छोटे प्रकरणों में विभक्त करने से पाठकों की भावना में अन्तर आता है। अत: भट्टोजिदीक्षित ने भी तद्धितान्तपदों की जानकारी के लिए तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से छोटे - छोटे प्रकरणों में दिया है। इन के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। भट्टोजिदीक्षित ने विभिन्न प्रत्ययों और सूत्र कार्यो के आधार पर तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को छोटे - छोटे प्रकरणों में विभक्त किया है।

भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''तद्धिताधिकार''भाग के विभिन्न छोटे प्रकरणों की शुरुआत ''अपत्यादिविकारान्तार्थसाधारणप्रत्यय'' प्रकरण से की है। तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित उल्लेख अष्टाध्यायी के चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने ''प्राग्दिव्यतोऽण्''[1] सूत्र से लेकर ''उत्सादिभ्योऽञ्''[2] सूत्र तक विभिन्न प्रत्ययों को साधारण प्रत्यय माना है। इन साधारण प्रत्ययों द्वारा सिद्ध होने वाले उदाहरणों की रूपरचना के लिए अपत्य अर्थक इन 4 सूत्रों के उपरान्त तद्धित प्रक्रिया में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन भी किया है। अत: इन 4 सूत्रों के साथ इस प्रकरण की सूत्र संख्या 7 हो गयी है इस प्रकरण में 9 वार्तिकों का वर्णन है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त तद्धिताधिकार भाग में ''अपत्याधिकार प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न शब्दों से अपत्यर्थ प्रकट करने के लिए अनेक सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है। अष्टाध्यायी के ''प्राग्दिव्यतोऽण्''[4] सूत्र से लेकर पाद के अन्त तक सभी सूत्र अपत्यर्थ अर्थ में विभिन्न प्रयत्ययों का उल्लेख करते हैं। भट्टोजिदीक्षित ने उदाहरणों की जानकारी के लिए इन सूत्रों में से

1 अष्टा0 4 - 1 - 83
2 अष्टा0 4 - 1 - 86
3 वै0सि0 कौ0 अपत्यादिविकारान्तार्थ साधारण प्रत्यया:।
4 अष्टा0 4 - 1 - 83

आवश्यकतानुसार चुनाव किया है तथा रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रमपूर्वक वर्णन किया है। इस प्रकरण में 123 सूत्र और 15 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[1]

तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी के चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में प्राप्त होते हैं तथा एक ही क्रम से विभिन्न पादों में विभक्त हैं। परन्तु अष्टाध्यायी पद्धति वर्णन विधि अनुसार इन पादों में रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन नहीं दिया है।[2]

भट्टोजिदीक्षि ने तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को अत्यधिक छोटे प्रकरणों में विभक्त करके विषयानुसार प्रकरणों का नामकरण किया है। रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। आवश्यकतानुसार विभिन्न सूत्रों को पद्धति परम्परानुसार विभिन्न रूपरचनाओं में पुन: वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी सूत्र संख्या क्रम के साथ उद्धृत किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''रक्ताद्यर्थक प्रकरण'' दिया है। अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय द्वितीय पाद के शुरू में ''तेन रक्तं रागात्''[3] सूत्र दिया है भट्टोजिदीक्षित ने उक्त सूत्र से लेकर ''छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि''[4] सूत्र तक एक प्रकरण बनाया है। इन सूत्रों में अनेक प्रत्ययों का उल्लेख है। इस प्रकरण में रङ्.विशेषवाची प्रतिपदिकों से रंगा गया इस अर्थ में प्रत्यय करने वाला सूत्र ''तेन रक्तं रागात्''[5] प्रकरण के शुरू में दिया है। इस कारण इस प्रकरण को ''रक्ताद्यर्थक प्रकरण'' की संज्ञा दे दी है। इस प्रकरण में 65 सूत्र विभिन्न अर्थो को प्रकट करने के लिए अनेक प्रत्यय करते हैं। रूपरचना में सहायक सूत्र और वातिकों को भी सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से उठाकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 77 और वार्तिक संख्या 33 है।[6]

इस प्रकरण के उपरान्त ''चातुरर्थिक प्रकरण'' है। तद्धित प्रत्ययों के प्रसङ्. में ''तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि''[7] सूत्र से लेकर ''नडादीनाम् कुक च''[8] सूत्र तक कुछ ऐसा प्रसङ्. चलता है जिस का एक प्रकरण बनता है। इस प्रकरण में ''तदस्मिन्नस्तीति देश तन्नाम्नि''[9] "तेन निर्वृत्तम्''[10] ''तस्य निवास:''[11] ''अदूरभवश्च''[12] इन चार सूत्रों का समान रूप से अधिकार जाता है। ये चारों ही सूत्र अपने अधिकार में क्रमश: देश वाच्य, बनाया गया, निवास तथा निकट होना आदि चारों अर्थो में विभिन्न शब्दों से विभिन्न प्रत्ययों का विधान करते हैं। इन चारों सूत्रों का अधिकार ''शेषे''[13] सूत्र तक जाता है। अत: भट्टोजिदीक्षित ने ''शेषे''[14] सूत्र से पूर्व सूत्रों और वार्तिकों को विभिन्न रूपरचनार्थ आवयकतानुसार चुन

---

1 वै0 सि0 कौ0 अपत्याधिकार प्रकरण।
2 (क) अष्टा0
(ख) का0
3 अष्टा0 4-2-1
4 अष्टा0 4-2-66
5 अष्टा0 4-2-1
6 वै0सि0कौ0 रक्ताद्यर्थक प्रकरण।
7 अष्टा0 4-2-67
8 अष्टा0 4-2-91
9 अष्टा0 4-2-67
10 अष्टा0 4-2-68
11 अष्टा0 4-2-69
12 अष्टा0 4-2-70
13 अष्टा0 4-2-92
14 अष्टा0 4-2-92

कर प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा रूपरचना से सम्बद्ध सूत्रों का भी विभिन्न अध्यायों से चुन कर यथावश्यकता वर्णन किया है। इस प्रकरण में 4 प्रकार के अर्थों का उल्लेख होने के कारण इस प्रकरण को चातुरर्थिक संज्ञा दी है। इस प्रकरण में रूपरचनार्थ अधिकतर उदाहरण काशिका से उद्धृत किये हैं । इस प्रकरण में 33 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[1]

चातुरर्थिक प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''शैषिक प्रकरण'' दिया है अपत्यर्थ तथा चातुरर्थ के उपरान्त कुछ जात, भव आदि अर्थ शेष रहते हैं। ये अर्थ ''शेषे''[2] सूत्र के अधिकार में आते हैं। इन अर्थों को प्रकट करने के लिए ''शेष''[3] सूत्र के अधिकार में अनेक सूत्र विभिन्न प्रत्ययों का विधान करते हैं। ''शेषे''[4] सूत्र का अधिकार ''तस्य विकार:''[5] सूत्र से पूर्व है। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को रूपरचनाक्रम से दिया है। प्रत्ययविधायक इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकपद्धति से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 202 पाणिनीय सूत्रों और 33 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[6] प्रक्रियाकौमुदी की तुलना में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में उदाहरण और सूत्र संख्या अधिक है। भट्टोजिदीक्षित ने उपयोगी जानकारी को त्यागकर पूर्ण जानकारी करवाना ही व्याकरण का लक्ष्य माना है।

अनेक स्थानों पर भट्टोजिदीक्षित ने सूत्र के अधिकार में जितने सूत्र आते हैं उन सूत्रों को रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा उस प्रकरण का नाम उस अधिकारी सूत्र के नाम से दे दिया है इस का उदाहरण ''शैणिक प्रकरण'' है। ग्रन्थकार ने सुविधा के लिए छोटे-छोटे प्रकरण दिये हैं। तद्धितों के सम्पूर्ण ज्ञान के लिए इन छोटे प्रकरणों का ज्ञान जरूरी है फिर भी इतनी सुविधा हो जाती है कि छोटे प्रकरणों को क्रम से पढ़ने की इच्छा जाग्रित हो जाती है। बड़े प्रकरणों से आलस पड़ता है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना से सम्बद्ध दूसरे सूत्र भी हैं जो पूर्ण रूपरचना का वर्णन करते हैं। इसलिए ही छात्र प्रक्रियाक्रम से व्याकरण पढ़ने में रूचि रखते हैं। क्योंकि इन ग्रन्थों में हर समस्या का समाधान वहीं वर्णित है।

शैषिक प्रकरण के उपरान्त ''तद्धित अधिकार'' में ''प्रागदीव्यतीय प्रकरण'' दिया है। अपत्यर्थ और चातुर्थक के उपरान्त जात, भव आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए ''शैषिक प्रकरण'' में वर्णन है। ''शेषे''[7] सूत्र का अधिाकार ''रैवतिकादिभ्यश्छ:''[8] सूत्र तक जाता है। इस के उपरान्त ''तस्य विकार:''[9] सूत्र से लेकर ''कंसीयपरशव्ययोर्यञञौ लुक्च''[10] सूत्र तक सभी सूत्र विकार अर्थ में प्रत्यय करते हैं। भट्टोजिदीक्षित से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इन सूत्रों को एक प्रकरण में रूपरचना क्रम से दिया

---

1 वै0सि0कौ0 चातुरर्थिक प्रकरण।
2 अष्टा0 4-2-92
3 अष्टा0 4-2-92
4 अष्टा0 4-2-92
5 अष्टा0 4-3-134
6 वै0सि0कौ0शैषिक प्रकरण।
7 अष्टा0 4-2-92
8 अष्टा0 4-3-130
9 अष्टा0 4-3-134
10 अष्टा0 4-3-168

है तथा प्रकरण का नाम विकारार्थक दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को विकारार्थक संज्ञा नहीं दी है। इन्होंने ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[1] सूत्र के अधिकार तक सूत्रों का वर्णन इस प्रकरण में किया है तथा अधि कारी सूत्र के वर्णन के अनुसार ही प्रकरण का नामकरण दिया है।

अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय तृतीय पाद के अन्त में ''कंसीयपरशव्ययोर्यञञौ लुक्च''[2] है। इस सूत्र के उपरान्त चतुर्थ अध्याय चतुर्थ पाद की शुरुआत ''प्राग्वहतेष्ठंक्''[3] से होती है। इस सूत्र से अगला सूत्र ''तेन दीव्यति खनति जयति जितम्''[4] है। इस सूत्र तक ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[5] सूत्र का अधिकार जाता है। इस के उपरान्त ठक् प्रत्यय का अधिकार है। भट्टोजिदीक्षित ने ''तस्य विकारः''[6] सूत्र से आगे ''तेन दीव्यति खनाति जयति जितम्''[7] सूत्र तक विभिन्न सूत्रों का वर्णन इस प्रकरण में किया है। ''तस्य विकारः''[8] सूत्र से पूर्व ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[9] सूत्र से अगले अनेक सूत्र अपत्याधिकार , रक्ताद्यर्थक, चातुरर्थिक, शैषिक आदि अनेक प्रकरणों में आ गये हैं। भट्टोजिदीक्षित ने अण् प्रत्यय के अधिकार में बचे शेष सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से ''प्राग्दीव्यतीय प्रकरण'' में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में अनेक उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रत्ययविधायकसूत्र और वार्तिकों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर उपयुक्तानुसार दिया है। इस प्रकरण में 34 सूत्र और 2 वार्तिक प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[10]

इस प्रकरण से अगला प्रकरण वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''प्राग्वहतीय प्रकरण'' दिया है। तद्धित प्रत्ययों केअधिकार में कुछ ऐसे प्रसङ्ग हैं जिन्हें प्रकरणों का नाम दिया जा सकता है। वे प्रसङ्ग किसी सूत्र के अधिकार तक या प्रत्ययों के अधिकार तक या विभिन्न सूत्रों में दीव्यति, वहति आदि पदों से पूर्व तक वर्णित हैं। इन प्रसङ्गों के आवश्यकतानुसार छोटे-छोटे प्रकरण बनाये जा सकते हैं।

अष्टाध्यायी के ''प्राग्वहतेषक्''[11] सूत्र का ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्''[12] सूत्र तक अधिकार है क्योंकि प्रसङ्ग वश नियमानुसार वहति से पूर्व ठक् प्रत्यय का अधिकार कहा है। अष्टाध्यायी के इन एकाधि कारी सूत्रों को गन्थकार ने एक प्रकरण में दे दिया है इन सूत्रों के अतिरिक्त रूपरचना में सहायक विभिन्न सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम में दिया है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''प्राग्वहतीय प्रकरण'' संज्ञा दी है। क्योंकि इस प्रकरण में ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम''[13] सूत्र में उक्त वहति से पूर्व सूत्रों की जानकारी है। प्रसङ्गवश ये सूत्र सूत्रमूलकग्रन्थों में भी इकट्ठे प्राप्त हैं। परन्तु ग्रन्थ पद्धति परम्परानुसार वहां रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन

---

1 अष्टा0 4-1-83
2 अष्टा0 4-3-168
3 अष्टा0 4-4-1
4 अष्टा0 4-4-2
5 अष्टा0 4-1-83
6 अष्टा0 4-3-134
7 अष्टा0 4-4-2
8 अष्टा0 4-3-134
9 अष्टा0 4-1-83
10 वै0 सि0 कौ0 प्राग्दीव्यतीय प्रकरण।
11 अष्टा0 4-4-1
12 अष्टा0 4-4-76
13 अष्टा0 4-4-76

प्रत्ययविधायक सूत्रों के बीच नहीं है अर्थात् एक तो इन ग्रन्थों में छोटे प्रकरण नहीं हैं तथा रूपरचना में भी विभिन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। भट्टोजिदीक्षित ने तद्धिताधिकार में विभिन्न छोटे प्रकरण दिये हैं तथा इन में रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों और वार्तिकों के उपरान्त अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इन्हें प्रकरणों में प्रक्रियापद्धति में दिया है। चतुर्थ अध्याय चतुर्थ पाद के सूत्रों को भी अनेक प्रकरणों में विभक्त किया गया है जिन में ''प्राग्वहतीय प्रकरण'' एक है इस में 78 सूत्रों और 11 वार्तिकों का रूपरचनाक्रम से प्रयोग हुआ है।[1]

तदुपरान्त ''प्राग्धितीय प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण में अष्टाध्यायी के सूत्र ''तद्वहतिरथयुगप्रासङ्गम्''[2] सूत्र से लेकर ''तस्मैहितम्''[3] सूत्र में उक्त हितार्थ प्रत्ययों के अधिकार से पूर्व प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों को प्रक्रियाक्रम में दिया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के अतिरिक्त रूपरचना में सहायक सूत्रों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न स्थानों से चुनकर आवश्यकतानुसार स्थानों पर दिया है। रूपरचना के लिए उदाहरण लगभग काशिका से उद्धृत किये गये हैं। इस प्रकरण में 35 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त ''छयद्विधि प्रकरण'' दिया है। सूत्रमूलकमूलकपद्धति में ''प्राक् क्रीताच्छः''[5] तथा ''उगवादिभ्यो यत्''[6] इन दोनों सूत्रों का अधिकार ''तेन क्रीतम्''[7] सूत्र तक समान रूप से जाता है। इस अधिकार में छः और यत् प्रत्ययों का वर्णन है। भट्टोजिदीक्षित ने इस पूर्ण प्रसङ्ग में से ''प्राग्वतेष्ठञ्''[8] सूत्र से पूर्व सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है यद्यपि छः और यत् का अधिकार ''तेन क्रीतम्''[9] सूत्र तक है परन्तु भट्टोजिदीक्षित ने ''प्राग्वतेष्ठञ्''[10] सूत्र से अगला वर्णन दूसरे प्रकरण में किया है। ग्रन्थकार ने सम्बन्धित प्रकरण को ''छयद्विधि प्रकरण'' संज्ञा दी है क्योंकि इस प्रकरण में छः और यत् प्रत्यय से सम्बद्ध विधान है। इस प्रकरण में 17 सूत्र और 9 वार्तिक हैं।[11]

इस प्रकरण के उपरानत वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''तद्धितार्हीय प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी से कुछ ऐसे प्रकरण को अलग किया है जो कि एक अधिकार में आता है। ''आर्हादगोपुच्छसंख्या परिमाणाट्ठक्''[12] सूत्र से आगे अर्हति अर्थ पर्यन्त जितने अर्थ कहे हैं उन सब में ठक् प्रत्यय होता है अर्थात अहर्ति अर्थ पर्यन्त इस सूत्र का अधिकार है। इस सूत्र से पिछले सूत्र ''प्राग्वतेष्ठञ्''[13] का अधि कार ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[14] सूत्र तक है। ''प्राग्वतेष्ठञ्''[15] सूत्र के अधिकार प्रसङ्ग में ही

1 वै0सि0कौ0 प्राग्वहतीय प्रकरण।
2 अष्टा0 4-4-76
3 अष्टा0 5-1-5
4 वै0सि0कौ0 प्राग्घितीय प्रकरण।
5 अष्टा0 5-1-1
6 अष्टा0 5-1-2
7 अष्टा0 5-1-37
8 अष्टा0 5-1-18
9 अष्टा0 5-1-37
10 अष्टा0 5-1-18
11 वै0सि0कौ0 छयद्विधिप्रकरण।
12 अष्टा0 5-1-19
13 अष्टा0 5-1-18
14 अष्टा0 5-1-115
15 अष्टा0 5-1-18

ठक् अधिकार का वर्णन प्रारम्भ हो जाता है क्योंकि ''आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्ठक्''[1] ठक् प्रत्यय विधायक सूत्र ठञ् अधिकार प्रसङ्ग. के बीच आ गया है। अतः ''आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्ठक्''[2] सूत्र ''प्राग्वेतष्ठञ्''[3] का अपवाद सूत्र है। अतः भट्टोजिदीक्षित ने भी इस अपवाद सूत्र के अधिकार अर्हति अर्थ पर्यन्त जितने अर्थ हैं उनके लिए एक प्रकरण दिया है तथा इस का नाम इस के कार्यक्षेत्र के अनुसार ''तद्धितार्हीयप्रकरण'' दिया है। ''आर्हादगोपुच्छसंख्या परिमाणाट्ठक्''[4] सूत्र से लेकर ''यज्ञर्त्विग्भ्यां घखञौ''[5] सूत्र तक अर्हति अर्थ का अधिकार समाप्त होता है। प्रत्यय विधायक इन सूत्रों के साथ भट्टोजिदीक्षित ने विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए अन्य सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 55 पाणिनीय सूत्रों और 12 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[6] तद्धित प्रकरणों में उदाहरण लगभग कशिका से ही उद्धृत किये हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''ठञधिकारे कालाधिकार'' नामक प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी के सूत्र ''प्राग्वतेष्ठञ्''[7] का अधिकार ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[8] तक जाता है। ठञ् प्रत्यय के इस अधिकार को भट्टोजिदीक्षित ने अनेक प्रकरणों में विभक्त करके प्रक्रिया क्रम से दिया है। जिन में ''ठञधिकारे कालाधिकार'' नामक प्रकरण भी एक है। इन्होंने ''परायणतुरायणचान्द्रायणं वर्तयति''[9] सूत्र से लेकर ''तत्र च दीयते कार्यं भववत्''[10] सूत्र तक आये सूत्र और वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है और इस प्रकरण को ''ठञधिकारे कालाधिकार प्रकरण'' संज्ञा दी है क्योंकि प्रसङ्ग.वश ठञ् अधिकार में ''कालात्''[11] सूत्र का अधिकार ''व्युष्टादिभ्योऽण्''[12] सूत्र तक जाता है। ग्रन्थकार ने सम्बन्धित अधिकार का वर्णन करने के कारण इस प्रकरण को सार्थक संज्ञा दी है। इस प्रकरण में भट्टोजिदीक्षित ने 25 पाणिनीय सूत्रों और 6 वार्तिकों का रूपरचनाक्रम में प्रयोग किया है।[13]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''ठञधिकारे कालाधिकार प्रकरण'' के उपरान्त ''ठञ्विधिप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में उदाहरण जानकारी हेतु कालाधिकार के उपरान्त शेष ठञधिकार में आये सूत्रों का प्रक्रियाक्रम में वर्णन किया है। ग्रन्थकार ने ''व्युष्टादिभ्योऽण्''[14] सूत्र से लेकर ''आकालिकडाद्यन्तवचने''[15] तक 18 सूत्रों में से 17 सूत्रों का वर्णन किया है क्योंकि इन सूत्रों में ''छन्दसि घस्''[16] सूत्र वैदिक है। इस का वर्णन वैदिक प्रकरणों में है। अतः इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक 17 सूत्रों की जानकारी है। इस प्रकरण में ठञ् प्रत्यय से सम्बन्धित विधान है। अतः ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''ठञ्विधि प्रकरण''

---

1 अष्टा0 5-1-19
2 अष्टा0 5-1-19
3 अष्टा0 5-1-18
4 अष्टा0 5-1-19
5 अष्टा0 5-1-71
6 वै0सि0कौ0 तद्धितार्हीप्रकरण।
7 अष्टा0 5-1-19
8 अष्टा0 5-1-115
9 अष्टा0 5-1-72
10 अष्टा0 5-1-96
11 अष्टा0 5-1-78
12 अष्टा0 5-1-97
13 वै0 सि0 कौ0 ठञधिकारे कालाधिकार प्रकरणम्।
14 अष्टा0 5-1-97
15 अष्टा0 5-1-114
16 अष्टा0 5-1-106

नामक संज्ञा दी है। इस में 17 पाणिनीय सूत्र और 3 वार्तिक है।[1] इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने रूपरचनार्थ प्रत्ययविधायक सूत्रों के बाद अन्य सूत्रों की आवश्यकता नहीं समझी है। इसलिए ही इन्होने प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ अन्य सूत्रों का वर्णन नहीं किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''भावकर्मथि'' प्रकरण दिया है। सूत्रमूलकपद्धति के पञ्चम् अध्याय प्रथम पाद के ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[2] सूत्र से लेकर पाद के अन्त तक सूत्रों और वार्तिकों का उल्लेख भट्टोदीक्षित ने इस प्रकरण में किया है। अष्टाध्यायी के इन सूत्रों में भाव और कर्म अर्थो में विभिन्न प्रत्ययों का वर्णन है। अतः भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''भावकर्मार्थ'' सार्थक संज्ञा दी है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने सूत्रमूलकग्रन्थों से रूपरचना हेतु 23 सूत्रों और 6 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[3] इस प्रकरण में उदाहरण काशिका से कम परन्तु प्रक्रियाकौमुदी से अधिक हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''पाञ्चमिक प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के ''धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्''[4] सूत्र से लेकर ''उभादुदात्तो नित्यम्''[5] सूत्र तक 44 सूत्रों का वर्णन किया है तथा इस प्रकरण को ''पाञ्चमिक प्रकरण'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण की पूर्ति के लिए ग्रन्थकार ने प्रत्ययविधायक 44 सूत्रों तथा 16 वार्तिकों का सूत्रमूलकपद्धति से चुनाव किया है।[6] रूप रचना के लिए ग्रन्थकार ने प्रत्यायविधायक सूत्रों के बाद अन्य सूत्रों की आवश्यकता नहीं समझी है। अतः इन्होंने रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन नहीं किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''मत्वर्थीय प्रकरण'' दिया है। अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद में ''उभादुदात्तो नित्यम्''[7] सूत्र के उपरान्त पाद के अन्त तक सभी सूत्र मत्वर्थ में विभिन्न प्रत्यय करते हैं। अतः भट्टोजिदीक्षित ने सूत्रमूलकग्रन्थों से सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को चुनकर रूपरचनाक्रम में दिया है तथा प्रकरण का नामकरण सूत्र कार्यानुसार दिया है क्योंकि इस प्रकरण के सभी सूत्र मत्वर्थ में प्रत्यय करते हैं। रूपरचना के लिए उदाहरण काशिका से उद्धृत हैं। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 101 तथा वार्तिक संख्या 33 है।[8]

इस प्रकरण के उपरान्त तद्धिताधिकार में ''प्राग्दिशीय प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के ''प्राग्दिशो विभक्तिः''[9] सूत्र से लेकर ''दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्मीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्ततिः''[10] सूत्र से पूर्व सूत्रों को अष्टाध्यायी से चुनकर एक प्रकरण में दिया है तथा उसका नाम ''प्राग्शिीय प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण का नाम ''प्राग्दिशीय'' इसलिए दिया है कि इस प्रकरण में जितने प्रत्यय कहे गये हैं उन की विभक्तिसंज्ञा होती है और इन विभक्तिसंज्ञक

---

1 वै०सि०कौ० ठञ्विधिप्रकरण।
2 अष्टा० 5-1-115
3 वै० सि० कौ० तद्धितेषु भावकर्मार्थाः।
4 अष्टा० 5-2-1
5 अष्टा० 5-2-44
6 वै० सि० कौ० पाञ्चमिक प्रकरण।
7 अष्टा० 5-2-44
8 वै० सि० कौ० मत्वर्थीय प्रकरण।
9 अष्टा० 5-3-1
10 अष्टा० 5-3-27

प्रत्ययों का अधिकार ''दिक्शब्देभ्य: सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देश कालेष्वस्ताति:''[1] सूत्र में उक्त दिग्शब्द से पूर्व तक है अर्थात् इस सूत्र से पूर्व सूत्र तक है। इस सूत्र में उक्त दिशा से पूर्व का वर्णन करने के कारण ही इस प्रकरण को ''प्रग्दिशीय प्रकरण'' की संज्ञा दी गयी है। इस प्रकरण में 27 सूत्र और 11 वार्तिक हैं।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रागिवीय प्रकरण'' आता है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने सूत्रमूलकपद्धति के ''दिक्शब्देभ्य सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्ताति:''[3] इस सूत्र से लेकर ''इवे प्रतिकृतौ''[4] सूत्र तक विभिन्न सूत्रों और वार्तिकों का उल्लेख किया है। ''इवे प्रतिकृतौ''[5] यह सूत्र इवार्थ अर्थात् अपमान अर्थ में विभिन्न प्रत्ययों का उल्लेख करता है। इस प्रकरण में ''इवे प्रतिकृतौ''[6] सूत्र से पूर्व का वर्णन किया गया है। अत: भट्टोजिदीक्षित ने इसे ''प्रागिवीयप्रकरण'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण की पूर्ति हेतु ग्रन्थकार ने 77 पाणिनीय सूत्रों और 16 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[7]

प्रागिवीय प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''स्वार्थिक प्रकरण'' दिया है। अष्टाध्यायी पंञ्चम अध्याय तृतीय पाद के ''इवे प्रतिकृतौ''[8] सूत्र से लेकर पाद के अन्त तक स्वार्थ में विभिन्न प्रत्ययों का उल्लेख प्राप्त होता है। भट्टोजिदीक्षित ने सूत्रमूलकग्रन्थों के इन सूत्रों और इन से सम्बन्धित वार्तिकों को रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा विषय वर्णन के अनुसार इस प्रकरण का नाम ''स्वार्थिक प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 88 सूत्र तथा 12 वार्तिक है।[9] इसी प्रकरण के साथ ''तद्धिताधिकार प्रकरण'' समाप्त हो जाता है।

तद्धिताधिकार के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पूर्वार्ध के अन्त में ''द्विरुक्त प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के अष्टम अध्याय से दिया है। अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय प्रथम पाद के ''सर्वस्य द्वे''[10] सूत्र से लेकर ''पदस्य''[11] सूत्र तक सूत्र विभिन्न शब्दों से नित्यता, विप्सा, वर्जन आदि अर्थ प्रकट करने के लिए द्वित्व विधान करते हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों में से आवश्यकतानुसार चुन कर रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में द्वित्व विधान किया गया है। अत: भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को दिरुक्त प्रकरण की संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 12 सूत्रों और 9 वार्तिकों का प्रक्रिया का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[12]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पूर्वार्ध में ग्रन्थकार ने विभिन्न सुबन्त पदों का उल्लेख किया है। तदुपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी उतरार्ध तृतीय भाग में तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए विभिन्न सूत्रों और वार्तिकों का विभिन्न प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।

---

1 अष्टा0 5-3-27
2 वै0 सि0 कौ0 प्रग्दिशीय प्रकरण।
3 अष्टा0 5-3-27
4 अष्टा0 5-3-96
5 अष्टा0 5-3-96
6 अष्टा0 5-3-96
7 वै0 सि0 कौ0 प्रागिवीय प्रकरण।
8 अष्टा0 5-3-96
9 वै0 सि0 कौ0 स्वार्थिक प्रकरण।
10 अष्टा0 8-1-1
11 अष्टा0 8-1-16
12 वै0 सि0 कौ0 द्विरुक्त प्रकरण।

तिङन्त पदों के विना वाक्य अधुरा होता है। अत: व्याकरण में तिङन्त पदों की जानकारी हेतु वर्णन किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति में तिङन्त पदों से सम्बन्धित वर्णन विखरा है। अत: भाषा में प्रयुक्त तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए समयानुसार इस पद्धति से अनेक समस्याएँ आती गयीं। इस कारण इस पद्धति से व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। इस समस्या समाधान हेतु पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो ने पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन करके विभिन्न प्रक्रियामूलक ग्रन्थों में वर्णन किया है। इन वैयाकरणों में धर्मकीर्ति विमलसरस्वती और रामचन्द्राचार्य के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित भी एक है। भट्टोजिदीक्षित ने पूर्व आचार्यो से तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न सूत्रों और वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से अनेक प्रकरणों में रूचिकर वर्णन किया है। इन से पूर्व वैयाकरणों ने तिङन्त पदों की जानकारी अपने- अपने ढंग से करवायी है। कुछ ने सार्वधातुक लकारों के वर्णन के उपरान्त अन्य प्रकरण देकर आर्धधातुक लकारों का वर्णन दिया है। कुछ आचार्यो ने सार्वधातुक तथा आर्धधातुक लकारों का वर्णन तो एक साथ किया है परन्तु इस पर्णन में लकारों का क्रम लट्, लिट्, लुट् आदि क्रम से नहीं दिया है। कुछ आचार्यो ने पाणिनीय धातुपाठ के क्रमानुसार भ्वादि, अदादि, जुहुत्यादि आदि प्रकरणों में क्रिया रूपों की जानकारी दी है अर्थात् क्रियाओं से तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए विभिन्न विषयवार प्रकरणों में वर्णन किया है परन्तु भट्टाजिदीक्षित द्वारा तिङन्त पदों की जानकारी के लिए दिया गया वर्णन इन सब के वर्णन से श्रेष्ठ है।

भट्टोजिदीक्षित ने क्रियाओं से तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तृतीय भाग में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्र चुनकर भ्वादि प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इन की यह विशेषता रही है कि इन्होंने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के तृतीय भाग के शुरू में वर्णित लट्, लिट्, लुट्, लृट् आदि लकारों के क्रम से क्रियारूपों का वर्णन पाणिनीय धातुपाठ क्रमानुसार भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में रुचिकर वर्णन किया है। इन्होंने सार्वधातुक लकारों की रूपरचना दिखाकर आर्धधातुकलकारों का वर्णन नहीं किया है तथा परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी क्रियाओं की रूपरचना के लिए पृथक-पृथक प्रकरण भी नहीं बनाये हैं। इन्होंने पाणिनीय धातुपाठ क्रमानुसार मिश्रित वर्णन किया है और समान कार्य से सम्बन्धित अनेक धातुओं को एक साथ किसी एक उदाहरण से ही प्रदर्शित किया है। इस प्रकार पाणिनीय धातुपाठ की सभी क्रियारूपों का वर्णन हम इस प्रक्रियाग्रन्थ द्वारा सरल प्रक्रिया में ही प्राप्त कर सकते हैं। पाणिनीय धातुपाठानुसार ही इन्होंने क्रियारूपों का वर्णन किया है तथा भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि गणों के नाम से प्रकरणों की संज्ञा दी है।

सूत्रमूलकपद्धति से पाठकों को यह समस्या आ रही थी कि ये किसी भी रूपरचना के लिए एक साथ तत्क्षण सूत्र जुटा पाने में असमर्थ थे। क्योंकि उन्हें अष्टाध्यायी के सूत्र स्मरण नहीं होते थे यदि होते भी थे तो वे उन्हें तत्क्षण स्मरण नहीं कर पाते थे। इस प्रकार वे तिङन्त पदों का ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थ थे। विना तिङन्त पदों के वाक्य अधुरा होता है तथा ''अपदम् न प्रयुञ्जीत'' नियमानुसार जो पद नहीं है उसे संस्कृत में प्रयोग नहीं किया जा सकता। अत: तिङन्त पदों की जानकारी आवश्यक है। इसलिए

भट्टोजिदीक्षित ने क्रिया पदों के ज्ञान हेतु सरल प्रक्रियार्थ व्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति को बदल कर प्रक्रियाक्रम से दिया है। यद्यपि इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने भी क्रिया पदों के ज्ञान के लिए अपने ग्रन्थों में रुचिकर वर्णन किया है परन्तु उन के ग्रन्थों में समयानुसार अनेक त्रुटियां जानकर भट्टोजिदीक्षित ने क्रियापदों के ज्ञान के लिए सर्वश्रेष्ठ वर्णन किया है।

भट्टोजिदीक्षित द्वारा रचित वैयाकरणसिद्धान्तकोमुदी तृतीय भाग के आदि में ''भ्वादि प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीय धातुपाठ में वर्णित सभी भ्वादि गणीय धातुओं से सम्बद्ध तिङन्त पदों की रूपरचना के लिए वर्णन किया है। इन्होंने इस प्रकरण में सार्वधातुक और आर्धतुक लकारों के प्रकरणों में रूपरचना नहीं दी है। इन्होंने तिङन्त् पदों की जानकारी के लिए लट्, लिट्, लुट्, लृट् आदि लकारों के क्रम से भ्वादि प्रकरणों में विभिन्न सूत्रों का रूपरचनाक्रम से वर्णन किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन मिश्रित है। ग्रन्थकार ने पूर्वग्रन्थों के अनुसार पृथक - पृथक वर्णन नहीं किया है। इन्होंने क्रियारूपों की रूपरचना के लिए पाणिनीय धातुपाठ में वर्णित क्रमानुसार धातुओं को उद्धृत किया है। धातुपाठ में ही परस्मैपदी, आत्मनेपदी तथा उभयपदी धातुओं का मिश्रित वर्णन है। अत: वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पाणिनीय धातुपाठ में वर्णित सभी धातुओं की रूपरचना का वर्णन है। इन्होंने पूर्व ग्रन्थकारों के समान केवल उपयोगी धातुओं की रूपरचना का वर्णन नहीं किया है। समान कार्य से सम्बन्धित अनेक धातुओं को एक साथ किसी एक उदाहरण से ही प्रदर्शित किया है। इस प्रकार पाणिनीय धातुपाठ की सभी धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन हम इस प्रक्रियाग्रन्थ द्वारा सरल प्रक्रिया में प्राप्त कर सकते हैं। पाणिनीय धातुपाठानुसार ही इन्होंने क्रियारूपों का वर्णन किया है तथा भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि गणों के नाम से प्रकरणों की संज्ञा दी है। इन प्रकरणों में समान कार्य से सम्बद्ध अनेक धातुओं को अर्थ सहित देने के उपरान्त किसी एक धातु की रूपरचना करके सम्बद्ध धातुओं में समान रूपरचना का निर्देश देकर भट्टोजिदीक्षित ने ''गागर में सागर भरना'' उक्ति के समान कम वर्णन द्वारा अत्यधिक जानकारी करवायी है।

भ्वादि प्रकरण में पाणिनीय धातुपाठ में उक्त सभी 1010 धातुओं को रूपरना के लिए अर्थ सहित दिया गया है। ग्रन्थकार ने परस्मैपदी भू धातु के उपरान्त ''एध् वृद्धौ'' आत्मनेपदी धातु का वर्णन किया गया है। इन दोनों धातुओं के क्रियारूपों की जानकारी ग्रन्थकार ने पूर्णप्रक्रिया से प्रदर्शित की है। इन दोनों धातुओं की विभिन्न रूपरचनाओं के वास्तविक अध्ययन से सम्पूर्ण क्रियारूपों का दिशा निर्देश हो जाता है। इन के उपरान्त सम्पूर्ण ग्रन्थ में केवल कठिन क्रियारूपों का ही वर्णन किया गया है। सरल पदों की जानकारी पाठक पूर्व वर्णन के अनुसार सुलझा लेते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति से क्रियारूपों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए समस्त अष्टाध्यायी का ज्ञान जरूरी है क्योंकि सूत्रमूलकग्रन्थों में क्रियारूपों से सम्बन्धित सूत्र विखरे हैं। परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में इन सूत्रों का संग्रह प्रक्रियाक्रम से दिया है जिस कारण सम्बन्धित प्रकरणों में केवल तिङन्त पदों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार विभिन्न तिङन्त पदों की जानकारी भ्वादि प्रकरणों में ही प्राप्त हो जाती है सम्पूर्ण

प्रक्रियाग्रन्थ अध्ययन की आवश्यकता नहीं है। भट्टोजिदीक्षित ने भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में विभिन्न क्रिया रूपों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों को चुनकर इन प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से दिया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी भ्वादि प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के 272 सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[1] यह प्रकरण उदाहरणों और सूत्रों की अपेक्षा अन्य शेष अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों से बड़ा है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की यह विशेषता है कि इस में पाणिनीय धातुपाठ का अनुकरण किया गया है। पाणिनीय धातुपाठ में जिस क्रम से धातुओं का पाठ किया गया है उसी क्रम से भट्टोजिदीक्षित ने क्रियाओं की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी से सूत्रों का संग्रह किया है। धातुपाठ में परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी धातुओं का पाठ मिश्रित है। अतः वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में क्रियारूपों का वर्णन भी मिश्रित है तथा एक ही अर्थ प्रकट करने वाली अनेक धातुओं का वर्णन भी इकट्ठा प्राप्त होता है।

भ्वादि प्रकरण के उपरान्त तृतीय भाग में ''अदादि प्रकरण'' दिया है। पाणिनीय धातुपाठ का अनुकरण करते हुए भट्टोजिदीक्षित ने अदादिगण में पठित्त धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से 66 पाणिनीय सूत्रों और 10 वार्तिकों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2] इन सूत्रों के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार अनेक सूत्रों को रूपरचना के लिए पुनः उद्धृत किया है परन्तु इन की गणना मुख्य सूत्रों में नहीं है क्योंकि ये सूत्र रूपरचना में कार्य स्मरणार्थ पुनः उद्धृत हैं इन की विस्तृत व्याख्या ग्रन्थ में अन्यत्र है। इस प्रकरण में पाणिनीय 72 धातुओं की विभिन्न लकारों में रूपरचना जानकारी है।[3]

इस प्रकरण के उपरानत ''जुहुत्यादि प्रकरण'' प्राप्त होता है। इस प्रकरण में धातुपाठ में उक्त 24 धातुओं को अर्थ सहित रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। तथा इस में 14 पाणिनीय सूत्रों का व्याख्या सहित वर्णन किया गया है।[4] ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से उद्धृत सूत्रों का वर्णन पृथक है। भट्टोजिदीक्षित ने प्रकरणों का नामकरण धातुपाठानुसार ही दिया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान इस प्रक्रियाग्रन्थ में अधूरी जानकारी नहीं है। इस द्वारा प्राप्त जानकारी पाणिनीयव्याकरण की पूर्ण जानकारी है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''दिवादि प्रकरण'' दिया है। दिवादिगणीय 106 धातुओं के विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुन कर 18 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकरण में 1 वार्तिक है। इस प्रकरण में भट्टाजिदीक्षित ने पाणिनीयसूत्र

---

1 वै0 सि0 कौ0 भ्वादि प्रकरण।

2 वै0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण।

3 वै0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण।

4 वै0 सि0 कौ0 जुहुत्यादि प्रकरण।

''श्लिषआलिङ्गने''[1] को दो भागों में विभक्त करके व्याख्या की है। भट्टोजिदीक्षित ने ''श्लिषः'' और ''आलिङ्गने'' को (क) और (ख) क्रम देकर इन की व्याख्या की है।[2] व्याख्या तो पाणिनीयपरम्परानुसार ही है परन्तु सूत्र के दो भाग पृथक-पृथक हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''स्वादिप्रकरण'' है। इस में पाणिनीय धातुपाठ में उक्त स्वादिगणीय 34 धातुओं के विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से 11 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''तुदादि प्रकरण'' है। इस प्रकरण में 157 धातुओं के विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए विभिन्न अध्यायों से 9 सूत्र और 4 वार्तिकों का संग्रह किया है।[4] इस प्रकरण के उपरान्त रूधादि प्रकरण है। इस में पाणिनीय 25 धातुओं की विभिन्न रूपरचनार्थ केवल 4 सूत्रों का संग्रह किया गया है।[5] अनेक सूत्रों को पद्धति परम्परानुसार सूत्ररूप में या सूत्रार्ध रूप में पुनः उद्धृत किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''तनादि प्रकरण'' है इस प्रकरण में धातुपाठ में उक्त तनादिगणीय 10 धातुओं के विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण से 7 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से संग्रह किया है।[6] इस प्रकरण के उपरान्त ''क्र्यादि प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 62 धातुओं के विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ पाणिनीयव्याकरण से 9 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[7] वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तृतीय भाग के अन्त में ''चुरादिप्रकरण'' है। चुरादीगणीय 409 धातुओं के विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ 11 सूत्र और 3 वार्तिकों का संग्रह किया गया है।[8]

समान कार्य वाली अनेक धातुओं का वर्णन किसी एक धातु के उदाहरण द्वारा करा देना प्रक्रियाक्रम की विशेषता है। प्रक्रियाक्रम से पूर्व क्रियारूप सूत्रमूलकव्याकरण के सम्पूर्ण ग्रन्थों में बिखरे थे। अतः सूत्रमूलकपद्धति से किया रूपों का ज्ञान एक प्रकरण से प्राप्त नहीं किया जा सकता था। इसलिए भट्टोजिदीक्षित ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान प्रक्रियाग्रन्थ रचकर इस समस्या का समाधान किया। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की यह विशेषता है कि इस ग्रन्थ द्वारा पाणिनीय धातुपाठ में उल्लिखित सभी धातुओं के विभिन्न क्रियारूपों का ज्ञान सहज में प्राप्त किया जा सकता है। इस ग्रन्थ के उद्भव से विभिन्न क्रियारूपों का वर्णन पाणिनीय धातुपाठ क्रमानुसार भ्वादिगणों में प्राप्त हो गया जिस में पूर्ण व्याख्या सहित सभी धातुओं को उद्धृत किया गया है।

पूर्ववर्णनानुसार ग्रन्थकार ने सुबन्त और तिङन्त पदों को विभक्त करके पृथक-पृथक वर्णन किया है सुबन्त पदों का ज्ञान वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रथम और द्वितीय भाग में दिया गया है। तदुपरान्त तृतीय और चतुर्थ भाग में तिङन्त पदों की जानकारी के उपरान्त शेष वर्णन है। प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना

---

1 अष्टा० 3-1-46
2 वै० सि० कौ० तृतीय भाग पृष्ठ 226
3 वै० सि० कौ० स्वादि प्रकरण।
4 वै० सि० कौ० तुदादि प्रकरण।
5 वै० सि० कौ० रुधादि प्रकरण।
6 वै० सि० कौ० तनादि प्रकरण।
7 वै० सि० कौ० क्र्यादि प्रकरण।
8 वै० सि० कौ० चुरादि प्रकरण।

आदि अर्थ प्रकट करने वाले पद भी तिङन्त है। इन की पूर्ण जानकारी के लिए भट्टाजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी चतुर्थ भाग में वर्णन किया है। इस भाग में विभिन्न प्रक्रियाओं के उपरान्त, कृदन्त, उणादि, स्वर एवम् वैदिक प्रक्रिया, लिङ्गानुशासन तथा फिट् सूत्रों का वर्णन दिया गया है।[1]

प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना, चाहना, आचार तथा भाव और कर्म आदि अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं तथा अनेक प्रातिपदिकों से णिच्, सन्, यङ्, क्यच् आदि अनेक प्रत्यय किये जाते हैं। तदुपरान्त "सनाद्यन्ता धातव:"[2] सूत्र से धातु संज्ञा करने पर ये तिङन्त प्रक्रिया में सिद्ध होते हैं। प्रेरणा आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में प्रत्ययों का उल्लेख दिया है। समयानुसार सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं का सामना हुआ जिस कारण व्याकरण को प्रक्रियामूल पद्धति अर्थात् रूपरचनाक्रम से प्रकरणों में बदला गया। प्रेरणा आदि अर्थो से सम्बन्धित पदों की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने णिच्, सन् आदि प्रत्ययों के आधार पर सूत्रों को अनेक भागों में विभक्त किया तथा णिजन्त, सन्नत आदि प्रकरणों द्वारा अनेक तिङन्त पदों की जानकारी करवायी। इन प्रकरणों में अनेक उदाहरणों की रूपरचना के लिये प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है ताकि छात्र कोई समस्या न समझें।

भट्टोजिदीक्षित से पूर्ण रचित प्रक्रियाग्रन्थों में भी इन प्रकरणों को रुचिकर ढंग से दिया है परन्तु इन का प्रयास श्रेष्ठ है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों में से विमल सरस्वती ने केवल "सन्नन्त प्रकरण" ही दिया है। उन्होंने सन्, णिच्, यङ्, क्यच्, आदि सभी प्रत्ययों से सम्बन्धित जानकारी एक ही प्रकण में दी है। क्योंकि इच्छा आदि अर्थो को प्रकट करने वाले प्रत्ययों में सन् प्रत्ययविधायकसूत्र अष्टाध्यायी में दूसरे सूत्रों से शुरू में होने के कारण कुछ गन्थकारों ने इस प्रकरण का नाम सन्नन्त प्रकरण दिया है तथा सभी प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों का वर्णन इस प्रकरण में किया है। भट्टोजिदीक्षित ने प्रत्येक अर्थ से सम्बन्धित प्रत्ययविधायक सूत्रों को पृथक प्रकरण दिया है तथा उदाहरणों की सिद्धि के लिए अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम में इसी प्रकरण में दिये हैं।

भट्टोजिदीक्षित से पूर्व सभी प्रक्रियाग्रन्थों में अनेक त्रुटियों के कारण भट्टोजिदीक्षित ने समयानुकूल वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की रचना की तथा इस में प्रेरणा आदि अर्थो को प्रकट करने वाले विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए रोचक वर्णन किया है।

भट्टोजिदीक्षित ने सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, यङ्, णिच् आदि प्रत्ययों से सम्बद्ध उदाहरणों की रूपरचना में सर्वप्रथम यह जाना कि इन प्रत्ययों से सम्बन्धित रूपरचना में किस प्रत्यय से सम्बद्ध रूपरचना दूसरे प्रत्ययों से सम्बन्धित रूपरचना से सरल है। अत: उन्होंने उस प्रत्यय से सम्बद्ध प्रकरण को दूसरे प्रत्ययों से सम्बद्ध प्रकरणों से पूर्व दिया है। यही कारण है णिच् प्रत्यय से सम्बन्धित प्रकरण "णिच् प्रकरण" दूसरे

---

1 वै० सि० कौ० चतुर्थ भाग।

2 अष्टा० 3-1-32

प्रकरणों से पूर्व है क्योंकि इस प्रकरण में रूपरचना दूसरे प्रकरणों की रूपरचना से सरल है। जबकि अष्टाध्यायी में सन् प्रत्ययों से सम्बन्धित वर्णन णिच् प्रत्ययविधायक वर्णन से पूर्व है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी चतुर्थ भाग के शुरू में ''णिच् प्रकरण'' है। इस प्रकरण में इच्छा अर्थ प्रकट करने के लिए अनेक उदाहरणों से णिच् प्रत्यय का विधान किया गया है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिए भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी के विभिन्न सूत्रों को व्याख्या सहित दिया है तथा ''णिचश्च'' आदि 19 सूत्र वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से रूपरचना के लिए पुनः उद्धृत किये हैं।[1] इस प्रकरण में 9 वार्तिक हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण द्वारा प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए सभी धातुओं से णिजन्त पदों की सिद्धि का सांकेतिक उल्लेख किया है। इस प्रकरण का अध्ययन करने के उपरान्त पाठक आवश्यकतानुसार किसी भी धातु से इच्छा अर्थ में णिजन्त पद की जानकारी कर सकता है।

इस प्रकरण के उपरान्त तिङन्तप्रक्रिया में ''सन्प्रकरण'' है। इस प्रकरण में अनेक उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 21 सूत्र और 5 वार्तिक व्याख्या सहित चुनकर रूपरचना क्रम से दिये हैं[2] तथा रूपरचना में सहायक ''सन्यतः'' आदि 35 सूत्र वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार पुनः उद्धृत किये हैं। अनेक स्थानों पर आवश्यकतानुसार केवल सूत्रकार्यो का ही वर्णन है। इस प्रकरण में उदाहरण कम है परन्तु ये सभी सांकेतिक रूप में सभी धातुओं से सनन्त पदों का ज्ञान करवाते हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''यङ्प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से 21 सूत्रों और 4 वार्तिकों को व्याख्या सहित प्रक्रिया क्रम से दिया है। बीच-बीच में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से पुनः उद्धृत सूत्र भी प्राप्त होते हैं जो पद्धति परम्परानुसार स्वभाविक हैं इन की संख्या 11 है।[3] बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने के लिए सभी धातुओं से यङन्त पदों की रूपरचना का वर्णन इस प्रकरण में प्राप्त होता है।

यङ्प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में भट्टोजिदीक्षित ने ''यङ्लुक्प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने रूपरचना ज्ञानार्थ कुछ ऐसे प्रकरण को यङ्प्रकरण से अलग किया है जिस में बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने के लिए धातु से ''धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमविहारे यङ्''[4] सूत्र से यङ् प्रत्यय होता है परन्तु ''यङोऽचि च''[5] सूत्र से उस यङ् का लोप हो जाता है। धातुसंज्ञा करने पर पूर्ण प्रक्रिया के बाद बोभवीति, बोभोति आदि रूप सिद्ध होते हैं। इस प्रकरण में यङ् होने के उपरान्त इस का लोप हो जाता है इसलिए ही भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण का नाम ''यङ्लुक्प्रकरण'' दिया है। इस

1 वै० सि० कौ० णिच् प्रकरण।
2 वै० सि० कौ० सन्प्रकरण।
3 वै० सि० कौ० यङ् प्रकरण।
4 अष्टा० 3-1-22
5 अष्टा० 2-4-74

प्रकरण में व्याख्या सहित दिये गये सूत्रों की संख्या मात्र 7 है।[1] रूपरचना में सहायक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से उद्धृत सूत्रों की संख्या 50 है। इस प्रकरण में अनेक उदाहरण हैं जो समान कार्य से सम्बन्धि त रूपरचनाओं का उल्लेख करते हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''नामधातु'' प्रकरण दिया है इच्छा, आचार, उत्साह आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए इच्छा आदि के कर्म और कर्ता के सम्बन्धी वाचक सुबन्त से इच्छा आदि अर्थों में क्यच्, काम्यच्, क्यङ् आदि प्रत्यय किये जाते हैं। इन का उल्लेख अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय प्रथम पाद में है परन्तु वहां केवल प्रत्ययों का ही उल्लेख है। प्रत्यय के बाद पूर्ण रूपरचना का वर्णन सूत्रमूलकपद्धति में नहीं है। समयानुसार अल्पमति छात्र पूर्णरूप रचना जानकारी एक साथ चाहने लगे थे। अतः भट्टोजिदीक्षित ने पूर्ण रूपरचना जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों का चुनाव किया है तथा इन्हें एक प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है।

रूपरचना दृष्टि से इच्छा आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए विभिन्न सुबन्त पदों से क्यच् आदि प्रत्यय करने के उपरान्त ''सनाद्यन्ता धातवः''[2] सूत्र से धातु संज्ञा करने पर तिङादि प्रत्ययों का आगमन होता है और ये रूपरचना के उपरान्त तिङत पद सिद्ध होते हैं। इसी कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''नामधातु प्रकरण" संज्ञा दी है क्योंकि इस में सुबन्त पदों की रूपरचनार्थ बाद में धातु संज्ञा की जाती है इसलिए इस प्रकरण के उदाहरण नाम भी है तथा धातु भी है इसलिए यह प्रकरण ''नामधातु प्रकरण'' से प्रसिद्ध है। इस प्रकरण के प्रत्येक उदाहरण द्वारा समान कार्य से सम्बद्ध उदाहरणों का उल्लेख प्राप्त होता है जिस कारण इन अर्थों को प्रकट करने के लिए सभी सुबन्त पदों की रूपरचना जानकारी का इस प्रकरण में सांकेतिक वर्णन प्राप्त होता है। इस प्रकरण में प्रतययविधायक सूत्रों के साथ पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से रूपरचना के लिए 21 सूत्रों और 23 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[3] विभिन्न स्थानों पर आवश्यकता पड़ने पर अन्य सूत्रों का सूत्र या सूत्रार्ध रूप में भी उल्लेख प्राप्त होता है जो पुनः उद्धृत हैं इन की पूर्ण जानकारी अन्यत्र है ये संख्या में 36 हैं।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में नामधातु प्रकरण के उपरान्त ''कण्ड्वादि प्रकरण'' दिया है। व्याकरण में कण्डूञ् आदि 49 धातुएँ हैं। इन से स्वार्थ प्रकट करने के लिए "कण्ड्वादिभ्योयक्''[4] सूत्र से यक् प्रत्यय का विधान किया गया है। भट्टोजिदीक्षित ने इन सभी धातुओं की रूपरचना के लिए एक प्रकरण दिया है जिस की व्याख्या भी साथ है। अन्य ''हलि च'' आदि सूत्र भी वैयाकरणसिद्धान्त संख्या क्रम से पुनः उद्धृत है ये सूत्र मात्र रूपरचना का वर्णन करते हैं।[5] इस प्रकरण के उपरानत ''प्रत्यय माला'' नामक

---

1 वै० सि० कौ० यङ्लुक्प्रकरण।
2 अष्टा० 3-1-32
3 वै० सि० कौ० नामधातुप्रकरण।
4 अष्टा 3-1-27
5 वै० सि० कौ० कण्डवादि प्रकरण।

प्रकरण है। इस प्रकरण में विभिन्न धातुओं से सन्, यङ् आदि प्रत्ययों का विधान करके विभिन्न रूपरचनाओं का उल्लेख है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''आत्मनेपद प्रकरण'' दिया है। वैसे तो धातुओं को आत्मनेपद्, परस्मैपद और उभयपद व्यवस्था पाणिनि ने धातुपाठ में ही कर दी है। परन्तु विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए या अनेक उपसर्गों के योग में भी धातुओं को आत्मनेपद या परस्मैपद होने की व्यवस्था अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय के तृतीय पाद में दी गयी है। इन सूत्रों का वर्गीकरण करके भट्टोजिदीक्षित ने इन्हें रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस वर्णन को गन्थकार ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी चतुर्थ भाग में दिया है। भट्टाजिदीक्षित ने पहले आत्मनेपद व्यवस्था का वर्णन किया है तदुपरान्त परस्मैपद प्रकरण दिया है।

आत्मनेपद प्रकरण में पाणिनीय 66 सूत्र हैं। जिन में से मात्र 3 सूत्र आदेश आदि कार्य करते हैं। शेष 63 सूत्र आत्मनेपद व्यवस्था से सम्बद्ध है। 63 सूत्रों के साथ इस प्रकरण में 22 वार्तिक भी आत्मनेपद व्यवस्था का उल्लेख करते हैं।[2] इस प्रकरण में रूपरचना के लिए पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार अनेक सूत्र सूत्ररूप में या सूत्रार्ध रूप में पुनः उद्धृत किये हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त परस्मैपदप्रकरण है। इस प्रकरण में विभिन्न धातुओं से अनेक उपसर्गों के साथ प्रयुक्त होने पर या विभिन्न धातुओं से विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए परस्मैपद व्यवस्था की गयी है। इस प्रकरण में रूपरचना के लिए 11 पाणिनीयसूत्र और 3 वार्तिकों का प्रक्रिया क्रम से वर्णन किया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने "भावकर्मतिङ् प्रकरण'' दिया है। वाच्यपरिवर्तन के लिए क्रियापरिवर्तन आवश्यक है। कर्तृवाच्य की क्रिया यदि सकर्मक हो तो कर्मवाच्य में और यदि अकर्मक हो तो क्रिया भाववाच्य में बदल दी जाती है अर्थात सकर्मक धातुओं के रूप दो वाच्यों में होते हैं कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में तथा अकर्मक धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं कर्तृवाच्य और भावाच्य में।

विभिन्न धातुओं की कर्मवाच्य और भाववाच्य में क्या-क्या रूपरचना होगी इस विषय का ज्ञान करवाने के लिए भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''भावकर्मतिङ् प्रकरण'' दिया है। पाणिनीयव्याकरण में धातु से भाव और कर्म वाच्य की रूपरचना के लिए प्रत्यय, आदेश और आगम सम्बन्धित सूत्र तृतीय अध्याय प्रथम पाद में दिये हैं। परन्तु अष्टाध्यायी मे एक क्रम से केवल ये ही सूत्र हैं रूपरचना में सहायक ''सार्वधातुके यक्''[4] ''स्यसिच्सीयुट् तासिषु भावकर्मणोरूपदेशेऽज्झनग्रहदृशां वा चिण्वदिट् च''[5] आदि सूत्र विभिन्न अध्यायों में है। भट्टोजिदीक्षित ने इन सभी सूत्रों को रूपरचना की दृष्टि

1 वै० सि० कौ० प्रत्ययमाला प्रकरण।
2 वै० सि० कौ० आत्मनेपद प्रकरण।
3 वै० सि० कौ० परस्मैपद प्रकरण।
4 अष्टा 3-1-67
5 अष्टा 6-4-62

से प्रक्रियाक्रम में दिया है। इस प्रकरण में 10 पाणिनीय सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[1] इस प्रकरण में 5 वार्तिकों का अर्थ ''गौणे कर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नीहृकृष्वहाम'' आदि कारिका में दिया है तथा उन द्वारा सिद्ध उदाहरणों का उल्लेख भी किया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में "कर्मकर्तृतिङ् प्रकरण" दिया है। अनेक स्थानों पर आवश्यकतानुसार जब कर्म को ही कर्ता कहना इष्ट होता है तो वहां अत्यन्त सरलता बताने के लिए कर्म ही कर्ता बना दिया जाता है क्योंकि कर्म की ही कर्तृत्व विवक्षा होती है जैसे :- "काष्ठं विधयते स्वयमेव''। इस अवस्था में सकर्मक धातु अकर्मक हो जाते हैं और उन में भाव और कर्ता में लकार किये जाते हैं। इस उल्लेख के लिए भट्टोजिदीक्षित ने कर्मकर्तृतिङ् प्रकरण दिया है।

इस प्रकरण में कर्तृत्व की अविवक्षा करके कर्म को ही कर्ता बनाकर धातु से लट् आदि लकार किये जाते हैं तथा पूर्णप्रक्रिया के उपरान्त अनेक उदाहरण सिद्ध किये जाते हैं। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचनाओं के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से 7 सूत्र और 7 वार्तिकों को चुनकर रूपरचना क्रम दे दिया है।[3] वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से उद्धृत सूत्रों का वर्णन पृथक है।

इस प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी मैं ''लकारार्थ निर्णय'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में लट्, लिट्, लुट्, लृट् आदि 10 लकारों के क्या-क्या अर्थ हैं ? अर्थात किन-किन अर्थो में ये लकार होते हैं तथा धातु से विभिन्न उपपदों के योग में विशिष्ट लकारों का उल्लेख तृतीय अध्याय द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पादों में किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति में सम्बन्धित सूत्र और वार्तिक विखरे हैं। भट्टोजिदीक्षित ने विभिन्न उदाहरणों के ज्ञानार्थ सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिको को सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर ''लकारार्थ निर्णय'' प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन भी है। इस प्रकरण में 56 पाणिनीय सूत्रों तथा 5 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[4] इस प्रकरण के साथ ही तिङन्त प्रक्रियाप्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने कृदन्त पदों की जानकारी के लिए ''कृत्यप्रकरण'' से शुरुआत की है। धातु से जिस प्रत्यय को जोड़कर, संज्ञा, विशेषण तथा अव्यय बनता है उस प्रत्यय को कृतप्रत्यय कहते हैं। धातु के अधिकार में तिङ् से भिन्न प्रत्यय की कृत्संज्ञा होती है। धातु तथा कृत् प्रत्यय के योग से बने पद को कृदन्त पद कहते हैं।

अष्टाध्यायी में कृत् प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र संख्या में अधिक है तथा प्रत्ययविधायक इन सूत्रों के उपरान्त कृदन्त पदों की रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र अष्टाध्यायी में विखरे हैं। अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में केवल कृत् प्रत्ययविधायक सूत्रों का ही एक क्रम से वर्णन प्राप्त होता है। सूत्रमूलकपद्धति में

---

1 वै0 सि0 कौ0 भावकर्मतिङ् प्रकरण।

2 कारिका वै0 सि0 कौ0 भावकर्मतिङ् प्रकरण। पृष्ठ 411

3 वै0 सि0 कौ0 कर्मकर्तृतिङ् प्रकरण।

4 वै0 सि0 कौ0 लकारार्थ निर्णय।

कृत् प्रत्ययों से सम्बद्ध प्रकरण भी सूत्रों की दृष्टि से काफी बड़ा है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को कृत्य प्रकरण, कृदन्त प्रकरण तथा उत्तर कृदन्त प्रकरणों में विभक्त करके रूपरचनाक्रम से छोटे प्रकरण दिये हैं। कृदन्त पद धातु तथा कृत् प्रत्यय के योग से बनते हैं । अत: ग्रन्थकार ने कृदन्त पदों की जानकारी धातु के अधिकार में क्रियारूपों की जानकारी के उपरान्त दी है। कृदन्त पद सुबन्त पदों में आते हैं परन्तु इन का वर्णन ग्रन्थकार ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रथम तथा द्वितीय भाग में नहीं किया है। इन भागों में विभिन्न सुबन्त पदों की ही जानकारी है तदुपरान्त तृतीय तथा चतुर्थ भाग में तिङन्त पदों की जानकारी के उपरान्त सुबन्त पदों से सम्बन्धित कृदन्त पदों की जानकारी है। ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को तिङन्त जानकारी के बाद इसलिए दिया है ताकि पाठक विभिन्न धातुओं का ज्ञान करके कृदन्त पदों की जानकारी की वास्तविकता को समझ सकें क्योंकि कृत् प्रत्यय धातुओं से होते हैं।

विभिन्न कृदन्तपदों की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने कृदनतों में ''कृत्यप्रकरण'' दूसरे प्रकरणों से पूर्व दिया है। ''कृत्या:''[1] सूत्र के अधिकार में वर्णित ''ण्वुल् तृचौ''[2] सूत्र से पूर्व जो प्रत्यय हैं वे कृत्संज्ञकों से जाने जाते हैं।[3] ग्रन्थकार ने इन कृत्यसंज्ञक प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार एक प्रकरण में दिया है तथा विषयानुसार इस प्रकरण का ''कृत्यप्रकरण'' नाम दिया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त उदाहरण रूपरचना से सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को ग्रन्थकार ने सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर प्रक्रियाक्रम पूर्वक दिया है जिन की संख्या क्रम से 40 और 15 है।[4] 19 सूत्र पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार सूत्ररूप या सूत्रार्थरूप में पुन: उद्धृत किये हैं।

अष्टाध्यायी में ''तव्यत्तव्यानीयर:''[5] सूत्र से लेकर ''क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्य:''[6] सूत्र तक लगभग 495 सूत्र विभिन्न कृदन्त प्रत्ययों का उल्लेख करते हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को तीन भागों में विभक्त किया है तथा इन द्वारा सिद्ध होने वाले उदाहरणों की सिद्धि के लिए उन्हें प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों में से ''ण्वुल् तृचौ''[7] सूत्र से पूर्व तक का वर्णन ''कृत्यप्रकरण'' में आ गया है। प्रकृत सूत्र से आगे तृतीय अध्याय द्वितीय पाद तक सूत्रों का वर्णन भट्टोजिदीक्षित ने कृन्दत प्रकरण में किया है। तृतीय अध्याय तृतीय पाद से लेकर चतुर्थ पाद के ''क्तोऽधिकरणे च धौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्य:''[8] सूत्र तक सभी सूत्रों का वर्णन प्रक्रियाक्रम से ''उत्तर कृदन्त'' प्रकरण में किया है। इस प्रकार पाठकों को यह सुविधा हुई कि एक तो उन्हें कृदन्त प्रत्ययों का उल्लेख छोटे प्रकरणों में प्राप्त हो गया तथा उस में प्रक्रिया पद्धति परम्परानुसार रूपरचना जानकारी के सभी सूत्र इन प्रकरणों में ही प्राप्त हो गये। ग्रन्थकार ने ''उत्तर कृदन्त प्रकरण'' से पूर्व उणादि प्रत्ययों से सम्बन्धित जानकारी

---

1 अष्टा० 3-1-95

2 अष्टा 3-1-133

3 प्रागेतस्माण्ण्वुल संशब्दनात् यानित उर्ध्वमनुक्रमिष्याम: कृत्य सञ्ज्ञकास्ते वेदितव्या:। का० 3-1-95

4 वै० सि० कौ० कृत्य प्रकरण।

5 अष्टा० 3-1-96

6 अष्टा० 3-4-76

7 अष्टा० 3--1-133

8 अष्टा० 3-4-76

दी है। भट्टोजिदीक्षित उणादि सूत्रों को व्याकरण में प्रमुखता देते हैं। यद्यपि पाणिनि ने व्याकरण में उणादि सूत्रों का उल्लेख नहीं किया है परन्तु ''उणादयो बहुलम्''[1] सूत्र की जानकारी से स्पष्ट होता है कि पाणिनि को भी उणादि सूत्र अभिष्ट हैं। परन्तु उनकी संख्या में अधिकता के कारण उनका उल्लेख पाणिनि ने एक सूत्र द्वारा ही कर दिया है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''कृत्य प्रकरण''के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने ''कृदन्त प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के 273 सूत्रों और 70 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायता के लिए नमोल्लेख मात्र से वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से भी सूत्र उद्धृत हैं।

कृदन्तप्रकरण के उपरान्त और उत्तर कृदन्त प्रकरण से पूर्व भट्टोजिदीक्षित ने पाणिनीयपरम्परा में अभिमत उणादि सूत्रों के वर्णन के लिए ''उणादि प्रकरण'' दिया है। भट्टोजिदीक्षित ''उणादयो बहुलम्''[3] सूत्र से पूर्व उणादि सूत्रों का वर्णन करना उचित समझते थे। अत: उनहोंने इस सूत्र से पूर्व उणादि प्रकरण का उल्लेख किया है तथा इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने कृदन्त प्रकरण के प्रसङ्ग. में इसलिए भी दिया है कि किसी समय ये कृदन्त प्रकरण में ही थे। इन सूत्रों के उदाहरणों की रूपरचना कृदन्त पदों के समान ही होती है। उणादि सूत्रों का वर्णन उत्तर कृदन्त से पूर्ण करना ''उणादयो बहुलम्''[4] सूत्र में छिपी पाणिनीय भावना का आदर करना है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से पूर्ववर्ती प्रक्रियाग्रन्थों में उणादि सूत्रों का वर्णन नहीं दिया गया है तथा काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों में भी उणादियों का वर्णन नहीं है। मात्र प्रक्रियाकौमुदी से प्रसङ्ग. मात्र वर्णन है। उणादि सूत्र पाणिनीयव्याकरण के चतुर्थ अङ्ग. स्वीकार किये गये हैं। ''पाणिनीयपरम्परायाम् यद् मतम् तदापि पाणिनीयम्'' इस उक्ति के अनुसार भट्टोजिदीक्षित आदि द्वारा मत उणादि सूत्र भी पाणिनीय सूत्र हैं। पाणिनि ने उणादियों का एक सूत्र ''उणादयो बहुलम्''[5] द्वारा निर्देश किया है कि उणादि भी बहुलता से सिद्ध होते हैं अर्थात् आचार्य पाणिनि उणादियों से परिचित हैं तथा वे व्याकरण में इन्हें मान्यता देते हैं यह उक्त सूत्र से सिद्ध होता है।

भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकणसिद्धान्तकौमुदी में उणादि सूत्रों को पृथक प्रकरण दिया है तथा इन सूत्रों को सूत्रसंख्याक्रम भी अलग दिया है। ग्रन्थकार ने उत्तर कृदन्त से पूर्व उणादियों का वर्णन किया है क्योंकि उत्तरकृदन्त में सर्वप्रथम सूत्र ''उणादयो बहुलम''[6] है। अत: उणादि सूत्रों का इस से पूर्व उल्लेख करना तर्कसंगत है। भट्टोजिदीक्षित का उणादि उल्लेख पञ्चपादी है। वैसे व्याकरणपरम्परा में उणादि पञ्चपादी और दसपादी उभयविध प्राप्त होते हैं। पाणिनि ने अष्टाध्यायी में उणादियों का वर्णन इसलिए नहीं किया है कि उस समय पाठक इन का ज्ञान सरलता से अपने आप कर लेते थे।

---

1 अष्टा0 3-3-1
2 वै0सि0कौ0 कृदन्त प्रकरण।
3 अष्टा0 3-3-1
4 अष्टा0 3-3-1
5 अष्टा0 3-3-1
6 अष्टा0 3-3-1

प्राचीनकाल में सम्पूर्ण नाम शब्द और निपात एक स्वर से योगिक माने जाते थे उस समय उणादि सूत्र शब्दानुशासन के कृदन्त प्रकरण के अन्तर्गत ही थे परन्तु उत्तरकाल में मनुष्यों की धारणाशक्ति और मेधा ह्रास के कारण वैयाकरणों द्वारा भी सहस्त्रों शब्द रूढ मान लिये गये।[1] वैयाकरणों द्वारा सहस्त्रों शब्दों को रूढ मान लेने पर भी योगिकत्व प्राचीन पक्ष की रक्षा के लिए रूढ शब्दों के धातु-प्रत्यय निदर्शक के लिए अनेक सूत्रों की रचना की। इन सूत्रों में उण् प्रत्ययविधायकसूत्र ''कृपावाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्''[2] आदि में होने के कारण इन सूत्रों को उणादि सूत्रों की संज्ञा दी गयी है। इन सूत्रों की रचना से व्याकरण में यह प्रभाव पड़ा कि यह प्रकरण कृदन्त प्रकरण से पृथक हो गया क्योंकि इन सूत्रों के उदाहरण कृदन्तप्रकरण में आते थे, जो बाद में उणादि सूत्रों में वर्णित होने लगे।

आचार्य पाणिनि भी उणादि सूत्रों से परिचित थे। इन से पूर्व उणादियों का प्रचलन शुरू था इस कथन का प्रमाण ''उणादयो बहुलम्''[3] सूत्र से प्राप्त होता है। यद्यपि पाणिनि ने उणादियों का साक्षात् वर्णन अपने व्याकरण में नहीं किया है परन्तु उणादियों की आवश्यकता को जरूर समझा है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पञ्चपादी उणादि सूत्रों का वर्णन है। यह वर्णन प्रक्रियामूलक वर्णन है। इस वर्णन में भट्टोजिदीक्षित ने विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए उणादि सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार उदाहरणों की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न सूत्रों का वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से वर्णन किया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने किसी भी पाणिनीयसूत्र को व्याख्यासहित नहीं दिया है रूपरचनार्थ केवल सूत्र या सूत्रार्ध रूप में उद्धृत किया है। उणादि सूत्रों से सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना अति सरल है। उणादिसूत्रों का वर्णन भट्टोजिदीक्षित ने स्वतन्त्र प्रकरण में दिया है तथा इन सूत्रों को संख्याक्रम भी उणादि सूत्र संख्याक्रम दिया है। उणादि प्रकरण के प्रथम पाद में 157, द्वितीय पाद में 123, तृतीय पाद में 160, चतुर्थ पाद में 228 तथा पञ्चम पाद में 70 सूत्र हैं।[4] इस प्रकार सभी उणादि सूत्रों की संख्या 748 है।[5]

इस प्रकरण के उपरान्त ''उत्तर कृदन्त'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में सूत्रमूलकग्रन्थों के शेष कृदन्तप्रकरण से सम्बद्ध सूत्रों और वार्तिकों का उल्लेख विभिन्न रूपरचनार्थ रूपरचनाक्रम से किया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियामूलक क्रम से दिया है। इस प्रकरण में 220 सूत्र और 32 वार्तिक हैं।[6] वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पद्धति वर्णन विधि अनुसार वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से पुनः उद्धृत सूत्रों का वर्णन पृथक है क्योंकि इन की पूर्ण जानकारी अन्यत्र है। ये सूत्र तो मात्र रूपरचनार्थ सूत्र रूप में वर्णित है।

---

1 सं० व्या० शा० का इति० द्वितीय भाग पृष्ठ 202
2 उणादि सूत्र 1
3 अष्टा० 3--3-1
4 वै० सि० कौ० उणादि प्रकरण।
4 वै० सि० कौ० उणादि प्रकरण।
6 वै० सि० कौ० उत्तरकृदन्त प्रकरण।

इस प्रकरण के उपरान्त भट्टोजिदीक्षित ने वैदिकपदों की जानकारी के लिए वैदिकी प्रक्रिया का वर्णन किया है। इन से पूर्व ग्रन्थकारों में मात्र रामचन्द्र ने केवल प्रसङ्ग. मात्र वैदिक वर्णन किया है परन्तु भट्टोजिदीक्षित ने पाणिनीयव्याकरण में प्राप्त वैदिक जानकारी को पूर्ण रूप में प्रदर्शित किया है। वैदिक प्रक्रिया से सम्बद्ध सूत्र सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरे हैं। क्योंकि सन्धि, समास, इट्, नुमादि आगम तथा अनेक आदेश करने वाले सूत्र प्रसङ्ग.वश अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में हैं। क्योंकि लौकिक पदों की मीमांसा के साथ ही पाणिनि ने छान्दसपदों की मीमांसा की है। वैदिक प्रक्रिया से सम्बन्धित सूत्र वहां संख्या में भी कम हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को चुनकर उदाहरणों की रूपरचना के लिए रूपरचनाक्रम से दिया है तथा वैदिकी प्रक्रिया में उन्हें अध्यायों में विभक्त किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से पूर्व पाठक वैदिक पदों की जानकारी से वंचित हो रहे थे क्योंकि एक तो वैदिक पदों की रूपरचना लौकिक पदों से कठिन होती है तथा इन पदों से सम्बन्धित सूत्र सम्पूर्ण ग्रन्थों में विखरे हैं। इसलिए पाठक इनको रूपरचना के लिए नहीं जुटा पा रहे थे। अत: भट्टोजिदीक्षित ने वैदिक पदों की रूपरचना जानकारी के लिए वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में वैदिकी प्रक्रिया प्रकरण में विभिन्न अध्यायों में वर्णन किया है।

वैदिकप्रकरण ''प्रथम अध्याय'' में ''छन्दसि पुनर्वस्वोरेकवचनम्''[1] आदि 2 सूत्र दो पदों में एकवचन का विधान करते हैं जो प्रथम अध्याय द्वितीय पाद से लिए हैं। तदुपरान्त घि, भ और पद संज्ञा विधायक 4 सूत्र और 3 वार्तिक प्रथम अध्याय चतुर्थ पद से चुनकर विभिन्न रूपरचनार्थ इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिये हैं। इन सूत्रों के उपरान्त ''इन्धिभवतिभ्यां च''[2] आदि लौकिक सूत्रों का चयन भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से किया गया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पद्धतिपरम्परानुसार अनेक सूत्र मात्र रूपरचना के लिए सूत्र या सूत्रार्ध रूप में वर्णित है। इस प्रकरण में मुख्य रूप से व्याख्या सहित वर्णित सूत्रों और वार्तिकों की संख्या 7 और 2 है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त वैदिकी प्रकरण ''द्वितीय अध्याय'' है। इस में सर्वप्रथम कारकादेश करने वाले ''तृतीया च होश्छन्दसि''[4] आदि 4 सूत्र और 1 वार्तिक सूत्रमूलकग्रन्थों के द्वितीय अध्याय तृतीय पाद से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिये हैं। ये सूत्र तृतीय अध्याय में विखरे हैं जो वैदिकी प्रकरण में रूपरचनार्थ इकट्ठे दिये हैं । तदुपरान्त धातु के स्थान पर आदेश तथा शप् और च्लि को आदेश करने वाले सूत्र अष्टाध्यायी के द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर इस अध्याय में रूपरचना जानकारी क्रम से दिये हैं। वैदिकप्रक्रिया सम्बन्धित सूत्रों को चुनकर एक अध्याय में इकट्ठा कर दिया है ताकि पाठक किसी समस्या में न रहें। रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी उद्धृत हैं। इस प्रकरण में 9 सूत्र तथा 1 वार्तिक है।[5]

---

1 अष्टा0 1-2-61

2 अष्टा0 1-2-6

3 वै0 सि0 कौ0 वैदिकी प्रकरण प्रथम अध्याय।

4 अष्टा0 2-3-3

5 वै0 सि0 कौ0 वैदिकी प्रकरण द्वितीय अध्याय।

वैदिकी प्रकरण ''तृतीय अध्याय'' की पूर्ति हेतु भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी में प्राप्त वैदिकप्रक्रिया से सम्बद्ध सूत्रों को रूपरचनार्थ चुनकर इस अध्याय में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम वैदिक पदों में तिङन्त पद ज्ञानार्थ लुङ् लकार में आदेश आगम सम्बन्धित सूत्रों को दिया है तदुपरान्त वेद विषय में कृदन्त पदों की जानकारी के लिए कृत् प्रत्यय विधायक सूत्रों का चुनाव किया है ये सूत्र अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में प्रथम, द्वितीय और तृतीय पादों में बहुत अन्तर के उपरान्त प्राप्त होते हैं परन्तु इस अध्याय में एक क्रम में दिये हैं। तदुपरान्त ''छन्दासि लुङ् लङ् लिट्''[1] तथा ''लिङर्थे लेट्''[2] दो सूत्र वेद विषय में लकारार्थ स्पष्ट करते हैं। लेट् लकार के प्रसङ्ग. में लेट् लकार में विभिन्न रूपरचना में सहायक आदेश आगमादि करने वाले सूत्रों को भी रूपरचनाक्रम से दिया है। इसके बाद वेद विषय में इच्छा अर्थ प्रकट करने के लिए प्रत्ययों का विधान है। तदुपरान्त चतुर्थ पाद में विहित तुमन् के स्थान पर अनेक आदेश करने वाले सूत्रों का विधान है। इन सूत्रों और वार्तिकों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी उद्धृत हैं। इस प्रकरण में 42 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[3]

तृतीय अध्याय के बाद वैदिकी प्रकरण ''चतुर्थ अध्याय'' में स्त्रीप्रत्ययों और तद्धितप्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों और उदाहरणों का उल्लेख है। सूत्रमूलकपद्धति में ये सूत्र चतुर्थ अध्याय के चारों पादों में बिखरे हैं। वैदिक प्रक्रिया से सम्बन्धित इन सूत्रों को चुनकर इस अध्याय में रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर आवश्यकतानुसार इस अध्याय में स्थान दिया है। इस अध्याय में सूत्रों की संख्या 46 और वार्तिक संख्या 4 है।[4]

इस अध्याय के बाद वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी वैदिकीप्रकरण पञ्चम अध्याय में विभिन्न वैदिक उदाहरणों की जानकारी के लिए शेष तद्धित प्रत्ययों और समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों का उल्लेख है। ये सूत्र प्रसङ्ग. वश सूत्रमूलकपद्धति के पञ्चम अध्याय में बिखरे हैं। इन्हें इस प्रकरण में एक क्रम से इकट्ठा कर दिया है। इस प्रकरण में 18 सूत्र और 5 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[5] इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचनार्थ अनेक सूत्रों का वर्णन मात्र सूत्ररूप में प्राप्त होता है जो वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की पद्धति वर्णन विधि परम्परा है।

इस प्रकरण के उपरान्त वैदिकीप्रकरण में ''षष्ठ अध्याय'' दिया है। इस अध्याय में कुछ धातु रूपों, कुछ वैदिक नामपदों तथा वेद विषय में प्रकृतिभाव के उदाहरणों से सम्बन्धित सूत्रों का उल्लेख किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति से वैदिक उदाहरणों में ह्रस्व के स्थान पर दीर्घादेश विधायक, अट् और आट् आगम विधायक, यणादेश विधायक तथा हि को धि आदेश करने वाले सूत्र एवम् अन्य आगम आदेश

---

1 अष्टा0 3-4-6

2 अष्टा0 3-4-7

3 वै0 सि0 कौ0 वैदिकी प्रकरण तृतीय अध्याय।

4 वै0 सि0 कौ0 वैदिकी प्रकरण चतुर्थ अध्याय।

5 वै0 सि0 कौ0 वैदिकी प्रकरण पञ्चम अध्याय।

विधायकसूत्र अष्टाध्यायी षष्ठ अध्याय में विखरे हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को विभिन्न वैदिक उदाहरणों की जानकारी हेतु प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस अध्याय में 48 सूत्र तथा 7 वार्तिक हैं।[1]

षष्ठ अध्याय के उपरान्त सूत्रमूलकपद्धति में वेद विषय से सम्बन्धित सूत्र सप्तम अध्याय में भी प्राप्त होते हैं। ये सूत्र प्रातिपदिक तथा धातु से होने वाले प्रत्ययों को आदेश, नुट् आगम, धातु तथा प्रातिपदिक के स्थान पर आदेश, क्यच् प्रत्यय परे रहते पूर्व पद में अनेक आदेश तथा अनेक पदों को निपातन से सिद्ध करने का वर्णन करते हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम से वैदिकी प्रकरण ''सप्तम् अध्याय'' में दिया है। इन के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस अध्याय में सूत्रों की संख्या 90 और वार्तिक संख्या 8 है।[2]

अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पाद में, पाद पूर्ति हेतु द्वित्व, नुटागम, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित्त, वैदिक सान्धियों में नकारान्त पद के नकार को रूकारादेश, विसर्ग को सकारादेश तथा सकार को षकारादेश विधायकसूत्र प्रसङ्गवश विखरे हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को अष्टम अध्याय के चारों पादों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से उदाहरणों की रूपरचना प्रसङ्ग में एक क्रम से दिया है। इस प्रकरण में सूत्रसंख्या 51 तथा वार्तिक संख्या 5 है।[3]

भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम तथा अष्टम अध्यायों में प्राप्त वैदिक सूत्रों का वर्णन वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी वैदिकी प्रकरण प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंञ्चम, षष्ठ, स्पतम तथा अष्टम अध्यायों में प्रक्रिमूलकक्रम से दिया है। इन्होंने इस प्रकरण में प्रकरणों की कोई अन्य संज्ञा नहीं दी है परन्तु अष्टाध्यायी के समान ही वैदिक पदों की जानकारी के लिए अध्यायों में वर्णन किया है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में वैदिकी प्रकरण के उपरान्त ''स्वर प्रक्रिया'' प्रकरण है। उदात्त, अनुदात्त, स्वरित्त तथा एकश्रुति विधायकसूत्र सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में प्रसङ्गवश विखरे हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को आवश्यकतानुसार उदाहरणों की रूपरचना के लिए चुनकर यथाक्रम एक प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में 21 सूत्र तथा 10 वार्तिक हैं।[4]

व्याकरण में धातु के आदि या अन्तिम अच् को अदात्त का विधान किया गया है। इस प्रकार के सूत्र अष्टाध्यायी में षष्ठ अध्याय प्रथम पाद में प्राप्त होते हैं। इन सूत्रों को भट्टोजिदीक्षित ने एक प्रकरण में रूपरचना क्रम से इकट्ठा किया है तथा धातु सम्बन्धित प्रक्रिया होने के कारण इस प्रकरण को ''धातुस्वर'' संज्ञा दी है। इस में मात्र 9 सूत्र हैं।[5]

---

1 वै० सि० कौ० वैदिकी प्रकरण षष्ठ अध्याय।

2 वै० सि० कौ० वैदिकी प्रकरण सप्तम अध्याय।

3 वै० सि० कौ० वैदिकी प्रकरण अष्टम अध्याय।

4 वै० सि० कौ० स्वर प्रकरण।

5 वै० सि० कौ० धातु स्वराः।

व्याकरण में धातु के समान प्रातिपदिक के आदि या अन्तिम अच् को उदात्त का विधान किया गया है। इस प्रकार के सूत्र भी षष्ठ अध्याय प्रथम पाद में प्राप्त होते हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन्हें चुनकर एक क्रम में दिया है तथा प्रातिपदिकों से सम्बद्ध प्रक्रिया के कारण इस प्रकरण को ''प्रातिपदिक स्वर'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 27 सूत्र हैं।[1]

वैदिक प्रक्रिया और स्वर प्रक्रिया का यद्यपि पाणिनीयव्याकरण में अभाव नहीं है फिर भी भट्टोजिदीक्षित और स्वामी दयानन्द सरस्वती को छोड़कर किसी भी प्रक्रियाग्रन्थकार ने इन का उल्लेख, अपने प्रक्रियाग्रन्था में खुलकर नहीं किया है। रामचन्द्र का उल्लेख वैदिक प्रक्रिया पर जरूर है परन्तु वह भी आंशिक है।

स्वरप्रक्रिया के उपरान्त ग्रन्थकार ने फिट् सूत्र प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में 4 पाद हैं। चारों पादों में उदाहरणों में आदि, द्वितीय तथा अन्तिम अच् को उदात्त का विधान किया गया है। ये सभी सूत्र अपाणिनीय हैं परन्तु व्याकरणपरम्परा में फिट् सूत्रों का वर्णन भी प्राप्त होता है। अत: भट्टोजिदीक्षित ने परम्परानुसार इन का वर्णन करना भी उचित समझा है। इन सूत्रों को स्वतन्त्र सत्ता प्रदान की गयी है। इनका सूत्र संख्या क्रम भी पृथक है। भट्टोजिदीक्षित ने प्रसङ्ग. में इनका वर्णन भी कर दिया है । ये सूत्र स्वर प्रकिया के सामान वर्णन करते हैं। अत: ग्रन्थकार ने इन्हें स्वरप्रक्रिया के उपरान्त स्थान दिया है। इस प्रकरण में 4 पाद हैं प्रत्येक पाद में क्रमश: 23, 26 तथा 19, 19 सूत्र हैं इन की पूर्ण संख्या 87 है।[2]

फिट् सूत्रों के बाद ''स्वरप्रकरण शेष'' नामक प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में प्रत्ययों, प्रातिपदिकों, विभक्तियों तथा लकारोदेशों को अन्तोदात्त या उदात्त का विधान किया गया है। इस प्रकरण में अनेक सुबन्त तथा तिङन्त पदों को उदाहरण देकर अन्तोदात्त तथा उदात्त को प्रदर्शित किया है। इस प्रकार के सूत्र सूत्रमूलकग्रन्थों में षष्ठ अध्याय प्रथम पाद में प्राप्त होते हैं। ग्रन्थकार ने इन्हें आवश्यकतानुसार चुनकर स्वरशेष प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इसके बाद ''समासस्वर'' प्रकरण है। अष्टाध्यायी षष्ठ अध्याय द्वितीय पाद में विभिन्न समास सम्बन्धित उदाहरणों में समास कार्य के उपरान्त प्रकृतिस्वर, पूर्वपद को उदात्त एवम् अन्तोदात्त, उत्तरपद को आद्युदात्त तथा अन्तोदात्त करने वाले सूत्रों का वर्णन किया है। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को उदाहरणों की जानकारी हेतु प्रक्रियाक्रम में दिया है। इन के उपरान्त रूपरचना के लिए अन्य सूत्रों को भी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम में पुन: उद्धृत किया है जो इस ग्रन्थ पद्धति की वर्णन विधि है। इस प्रकरण में पाणिनीय 200 सूत्रों और 9 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है तथा इस प्रकरण को विषयानुसार ''समास स्वर'' संज्ञा दी है।[3]

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''समास स्वर'' प्रकरण के उपरान्त ''तिङन्त स्वर'' नामक प्रकरण शुरू होता है। इस प्रकरण में तिङन्त पदों के योग में अन्य पदों को या अनेक पदों के योग में तिङन्तपदों

---

1 वै० सि० कौ० प्रातिपदिक स्वरा:।

2 वै० सि० कौ० फिट् सूत्राणि।

3 वै० सि० कौ० समासस्वरा:।

को उदात्त, अनुदात्त, अन्तोदात्त होने या निषेध का उल्लेख किया है। इस प्रकार के सूत्र अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय प्रथम पाद में दिये हैं। भट्टोजिदीक्षित ने इन सूत्रों को चुनकर इस प्रकरण में उदाहरण जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा तिङन्त पदों से सम्बद्ध होने के कारण इस प्रकरण को तिङन्त स्वर संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 45 सूत्र और 4 वार्तिक हैं।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''स्वरसञ्चार'' नामक प्रकरण है। इस में व्याकरण विधि से वैदिक वाक्यों में स्वर सञ्चार का प्रकार कहा गया है। इस प्रकरण के साथ ही भट्टोजिदीक्षित द्वारा रचित वैदिक एवम् स्वर प्रक्रिया प्रकरण भी समाप्त हो जाता है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में संज्ञा, परिभाषा, अच्सन्धि, प्रकृतिभाव, हल्सन्धि, विसर्गसन्धि, स्वादिसन्धि, अजन्तपुंलिङ्ग., आदि 79 प्रकरण हैं। इन में लिङ्ग.ानुशासन प्रकरण अन्तिम प्रकरण है। भट्टोजिदीक्षित ने पाणिनीयव्याकरण के पञ्चम अङ्ग. को भी अपने प्रक्रिया ग्रन्थ में स्थान दिया है तथा सम्बन्धित सूत्रों का उदाहरणों सहित वर्णन किया है। पाणिनीय लिङ्ग.ानुशासन के इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी पद्धति वर्णन विधि अनुसार वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी संख्या क्रम से विभिन्न सूत्रों का पुनः वर्णन किया है। भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में लिङ्ग.ानुशासन प्रकरण में सूत्रों और प्रकरणों को उसी तरह रखा है जिस क्रम में पाणिनि ने उन्हें अपने लिङ्ग.सनुशासन में दिया है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी लिङ्ग.ानुशासन प्रकरण में सर्वप्रंथम ''स्त्री अधिकार'' है। इस में स्त्रीलिङ्ग. से सम्बद्ध 34 सूत्रों को उदाहरणों सहित वर्णित किया है तदुपरान्त "पुलिङ्ग. अधिकार'' है। इस में पुलिङ्ग. से सम्बन्धित 83 सूत्रों को उदाहरणों सहित प्रस्तुत किया है। ''नपुंस्काधिकार'' में नपुंस्कालिङ्ग. से सम्बन्धि त 53 सूत्रों को उदाहरणों सहित प्रस्तुत किया है। इसके उपरान्त ''स्त्रीपुंसाधिकार'' है। इस में एक ही शब्द में स्त्रीलिङ्ग. और पुलिङ्ग. दोनों की जानकारी के लिए वर्णन है इस में 5 सूत्र हैं। इस अधिकार के बाद वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ''पुंनपुंसकाधिकार'' है इस में एक ही पद में पुलिङ्ग. और नपुंस्कलिङ्ग. जानकारी के लिए वर्णन किया गया है, इस में 7 सूत्र हैं। तदुपरान्त ''अविशिष्टलिङ्ग.ाधिकार'' प्रकरण है। इस प्रकरण में अनेक पदों के योग में संख्या वाचक गुणवाचक आदि शब्दों को भी वही लिङ्ग. होता है जिस के साथ वे प्रयुक्त किये जा रहे हों, इस ज्ञान के लिए ''अविशिष्टलिङ्ग.धिकार प्रकरण'' उदाहरणों सहित दिया है इस में 7 सूत्र हैं। इस प्रकार लिङ्ग.ानुशासन प्रकरण में सभी अधिकारों में सम्मिलित सूत्रों की संख्या 189 है।[2]

इस प्रकरण के साथ वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियाग्रन्थ सम्पूर्ण हो जाता है। इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इस में पाणिनीयव्याकरण की पूर्ण जानकारी सरल प्रक्रिया द्वारा प्रदर्शित है जिस कारण यह

---

1 वै0 सि0 कौ0 तिङन्तस्वराः।

2 वै0 सि0 कौ0 लिङ्गानुशासनम् प्रकरणम्।

प्रक्रियाग्रन्थ अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है तथा इस का अध्यापन अब तक सम्पूर्ण भारत में एक मत से हो रहा है।

6 **प्रक्रियासर्वस्व ग्रन्थकार नारायण भट्ट :–**

प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रक्रियासर्वस्व की अपनी विशेषता है। इस प्रक्रियाग्रन्थ के रचयिता केरल देशवासी नारायण भट्ट हैं। व्याकरणपरम्परा में इन का काल विक्रम सम्वत् 1617 से 1733 तक स्वीकार किया जाता है। इन के पिता मातृदत्त थे।[1] मातृदत्त भी उच्च कोटि के विद्वान थे। नारायण भट्ट ने इन से पूर्वमीमांसा का अध्ययन किया था। विभिन्न विषयों की जानकारी हेतु नारायण भट्ट ने विभिन्न आचार्यो से अध्ययन किया है। परन्तु व्याकरण अध्ययन में इन के गुरु अच्युत नामक आचार्य रहे हैं।[2] प्रक्रियासर्वस्व के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नारायण भट्ट ने किसी देवनारायण नामक भूपति की आज्ञा से इस ग्रन्थ की रचना की है।[3] नारायण भट्ट उच्च कोटी के विद्वान थे इन्होंने इस ग्रन्थ की रचना 60 दिनों में कर दी थी।[4] प्रक्रियासर्वस्व मङ्गलाचरण से प्रतीत होता है कि नारायण भट्ट श्री कृष्ण के परम् भक्त थे।[5]

प्रक्रियासर्वस्व में संज्ञा, परिभाषा, सन्धि, कृदन्त, तद्धित, समास, स्त्रीप्रत्यय, सुबर्थ, सुप विधि, आत्मनेपद विभाग, तिङन्त, लकरार्थ, सन्नन्त, यङन्त, यङ्लुक्, सुब्धातु, न्याय, धातुपाठ, उणादि तथा छान्दस आदि 20 खण्ड हैं।[6] इस प्रक्रियाग्रन्थ में सभी पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग हुआ है। पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थों में वैयाकंरणसिद्धान्तकौमुदी और प्रक्रियासर्वस्व ही ऐसे प्रक्रियाग्रन्थ हैं जिन में अष्टाध्यायी के समस्त सूत्रों की विस्तृत जानकारी है। प्रक्रियासर्वस्व की यह विशेषता है कि इस में सभी प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण अधिक है। इस में प्रकरणों का विषयवार विभाजन और वर्णनक्रम भी सभी प्रक्रियाग्रन्थों

---

1 सोऽथ कदाचन राजास्वगुणैराकृष्य सन्निधिं नीतम्।
श्री मातृदत्तसूनुं नारायणसंज्ञामशिषदवनिसुरम् ।। प्र0 स0 प्रा0 श्लो0 - 4

2 सं0 व्या0 शा0 का इति0 प्र0 भा0 पृ0 606

3 सोऽयं निःशेषशास्त्रश्रुतिनिवहकलानाटकेष्वद्वितीयो।
भाति श्री देव नारायण धरणिपतिर्मग्रचेता मुकुन्दे ।। - 2
सोऽथ कदाचन राजा स्वगुणैराकृष्य सन्निधिं नीतम्।
श्री मातृदत्तसूनुं नारायणसंज्ञमशिषदवनिसुरम् ।। - प्र0स0प्रा0श्लो - 2, 4

4 प्रक्रियासर्वस्वं स मनीषीणामचरमः षष्टिदिनैर्निर्ममे। प्र0 स0 टीका भा0 2 पृ0 2

5 रासविलास लोलं स्मरत मुरारेर्मनोरमम् रूपम्।
प्रकृतिषु यत् प्रत्ययवत प्रत्येकं गोपिकासु सम्मिलितम् ।। मङ्गलाचरण प्र0 स0
यो बृन्दावनवासिनो नियमिनः साक्षात्कृताधोक्षजाद्।
दुष्प्रायं श्वलुनारद धुब इव प्रापोदेशम् परम ।। प्र0 स0 प्रा0 श्लो0 3

6 इह संज्ञा परिभाष सन्धिः कृत् तद्धिताः समासाश्च।
स्त्रीप्रत्यय सुबर्थाः सुपाविधिश्चात्मनेपदविभागः ।। 6 ।।
तिङपि च लार्थविशेषाः सनन्तयङ्यङ्लुकश्चसुब्धातुः।
नयायो धातुरूणादिश्छान्दसमिति सन्तु विंशतिः खण्डाः ।। 7 ।। प्र0 स0 प्रा0 श्लो0 6,7

की अपेक्षा भिन्न है। यद्यपि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व एक ही काल की रचना हैं परन्तु इन में विषयवार प्रकरण विभाजन और वर्णनक्रम में काफी अन्तर है। समकालीन किसी भी समस्या का निरवारण दो व्यक्तियों द्वारा किया जा रहा हो तो उस में कुछ न कुछ समानता होती है परन्तु समान समस्या निवारक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी और प्रक्रियासर्वस्व में काफी भिन्नता है। इस का यह कारण है कि नारायण भट्ट पर पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रभाव अधिक रहा है। इसलिए नारायण भट्ट ने पाणिनीयेत्तर व्याकरणपरम्परा का अनुकरण भी किया है। इसकी अपेक्षा भट्टोजिदीक्षित ने पाणिनीयपरम्परा में पद्धति विकास प्रस्तुत किया है जिस कारण ऐसा हुआ है।

प्रक्रियासर्वस्व में सर्वाधिक उदाहरण है जिन में अनेक उदाहरण चान्द्र, सरस्वतीकण्ठाभरण तथा मुग्धबोध आदि व्याकरणों से दिये गये हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में इन व्याकरणों के सूत्रों का उल्लेख भी पाणिनीय सूत्रों के साथ रोचक वर्णन से प्रस्तुत किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में सूत्रों की वृत्ति अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से सरल और स्पष्ट कर दी है। इस ग्रन्थ में अनेक सूत्रों की जानकारी पद्यात्मक वर्णन से करायी गयी है। इसलिए ही इस प्रक्रियाग्रन्थ में पद्यात्मक वर्णन अधिक है। इस में अनेक उदाहरण भी अनेक पद्यों में प्रस्तुत किये हैं। इसके उपरान्त यदि प्रक्रियासर्वस्व की वर्णन विधि पर विचार किया जाये तो इस में उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रत्येक सूत्र में सम्बन्धित उदाहरणों को सूत्रकार्य सहित प्रदर्शित किया है ताकि पाठक हर क्षेत्र में सरलता से प्रबुद्ध हो जायें। उदाहरणों की रूपरचनार्थ नारायण भट्ट ने भी सूत्रों को सूत्र रूप या सूत्रार्ध रूप से अनेक बार उद्धृत किया है। ऐसे स्थानों पर ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी सूत्रक्रम ही दिया है वैसे भी नारायण भट्ट ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान अपने संख्या क्रम से सूत्रों को वर्णित नहीं किया है। इन्होंने अष्टाध्यायी सूत्र संख्या क्रम से ही वर्णित किया है। नारायण भट्ट ने वार्तिकों को भी अपना कोई संख्या क्रम नहीं दिया है। इन्होंने वार्तिकों को महाभाष्य में उक्त सूत्र में वर्णित क्रम से ही उद्धृत कियां है ताकि पाठक उस वार्तिक को पूर्ण जानकारी के लिए महाभाष्य के उस सूत्र में प्राप्त कर सकें। प्रक्रिया सर्वस्व में 20 खण्ड हैं। प्रक्रियासर्वस्व की वर्णन जानकारी के लिए इनका क्रमपूर्वक वर्णन इस प्रकार है।

प्रक्रियासर्वस्व में नारायण भट्ट ने भी शेष प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान ग्रन्थ के शुरू में संज्ञाविधायक सूत्रों का प्रकरण ''संज्ञा खण्ड'' दिया है। इस खण्ड में ग्रन्थकार ने पाणिनीय 56 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इतना ही अन्तर है कि ग्रन्थकार ने ''संज्ञा प्रकरण'' न कह कर ''संज्ञा खण्ड'' कहा है।

इस खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में परिभाषा खण्ड दिया है। इसमें 18 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस खण्ड के उपरान्त ग्रन्थकार ने विभिन्न सन्धियों से सम्बद्ध उदाहरणों की रूपरचना जानकारी के लिए ''संहिता खण्ड'' नामक प्रकरण दिया है। इस खण्ड को ग्रन्थकार ने 7 भागों में विभक्त किया है। इन्होंने इस खण्ड की शुरुआत अच्सन्धि से नहीं की है। जबकि हल सन्धि प्रसङ्ग से व्याकरण की शुरुआत है। प्रक्रियासर्वस्व में हल्सन्धि से सम्बन्धित कुछ उदाहरणों का वर्णन संहिता खण्ड

के प्रारम्भ में दिया है तथा कुछ उदाहरण अच्सन्धि के उपरान्त दिये हैं। ग्रन्थकार ने हल्सन्धि से सम्बन्धित उदाहरणों से कुछ ऐसे उदाहरणों को पृथक किया है जिन में क्रमशः तुक् और सुट् आगम होते हैं। सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी के लिए इन्होंने "संहिताखण्ड" में सर्वप्रथम तुक् आगम सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी दी है तदुपरान्त सुट् आगम सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी है प्रकरणों का नामकरण भी कार्यानुसार "तुक् सन्धि" तथा "सुट् सुन्धि" दिया है। इसके उपरान्त अच् सन्धि सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी है। प्रक्रियासर्वस्व का यह विषयवार प्रकरण विभाजन अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न है। एक तो अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों ने तुक् तथा सुट् आगम से सम्बद्ध उदाहरणों को हल् सन्धि से पृथक नहीं दिया है तथा हल् सन्धि से पूर्व अच् सन्धि का वर्णन है परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में अच् सन्धि से पूर्ण हल्सन्धि का प्रसङ्ग. है। नारायण भट्ट को छोड़कर सभी प्रक्रियाग्रन्थकारों ने सन्धि से सम्बन्धित प्रकरण सन्धि प्रकरण से ही सम्बोधित किया है परन्तु नारायण भट्ट ने इसे संहिता खण्ड कहा है। समानार्थ होने पर भी नामकरण में भेद है।

तुक्सन्धि प्रकरण में ग्रन्थकार ने 8 पाणिनीय सूत्रों तथा "सुट् सन्धि" प्रकरण में 24 सूत्रों और 4 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] सुट् के उपरान्त अच् सन्धि खण्ड है। इस खण्ड में ग्रन्थकार ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के सामन ही वर्णन किया है सिर्फ इतना अन्तर है कि उदाहरणों की जानकारी प्रत्येक सूत्र में उदाहरण सहित घटाकर प्रदर्शित की है जिस से पाठकों को उदाहरण कार्य स्पष्ट हो जाता है। इसके उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में दिये गये अनेक उदाहरण न काशिका और न ही रूपवतार, रूपमाला, प्रक्रियाकौमुदी और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से मेल रखते हैं प्रक्रियासर्वस्व में दिये उदाहरण लगभग इन ग्रन्थों में दिये उदाहरणों से भिन्न हैं। प्रक्रियासर्वस्व में वार्तिकों को उनके कार्योनुसार स्पष्ट किया है ताकि पाठक सरलता से जान सकें। अच् सन्धि खण्ड को नारायण भट्ट ने 33 पाणिनीय सूत्रों और 10 कात्यायनीय वार्तिकों द्वारा पूर्ण किया है जो विभिन्न अध्यायों से चुनकर यहां प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[2]

अच् सन्धि के उपरानत "प्रकृति सन्धि" खण्ड है। नारांयण भट्ट ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान अच् सन्धि के कुछ ऐसे प्रकरण को पृथक किया है जिस में सन्धि युक्त दोनों पदों में प्रकृति भाव हो जाता है जो सन्धि का एक अङ्ग. है। ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को सम्बद्ध कार्यानुसार "प्रकृति सन्धि" संज्ञा दी है। प्रक्रियाकौमुदी में इस प्रकरण को अच् सन्धि में ही दिया है। इतना जरूर है कि सम्बन्धित उदाहरण एक क्रम से इकट्ठे प्राप्त होते हैं। इस प्रकरण में भी उदाहरण अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न हैं। इस सन्धि में 24 पाणिनीय सूत्रों और 1 वार्तिक को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से दिया है।[3]

---

1 प्र०स० तुक् तथा सुट् सन्धि खण्ड।

2 प्र० स० अच् सन्धि खण्ड।

3 प्र० स० प्रकृति सन्धि खण्ड।

इस सन्धि के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''हल्सन्धि'' खण्ड है जो कि अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में दिये प्रकरणों के क्रमानुसार ही है। इस में भी श्चुत्व, ष्टुत्व सम्बन्धित उदाहरणों से प्रकरण की शुरुआत है। इन्होंने प्रक्रियाकौमुदी का अनुकरण किया है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिए ग्रन्थकार ने 99 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[1] इस प्रकरण में तुक् और सुट् आगम से सम्बन्धित उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। ये उदाहरण भी हल्सन्धि से सम्बन्धित हैं परन्तु ग्रन्थकार ने इन का वर्णन तुक् और सुट् सन्धि नामक प्रकरणों में अच्सन्धि से पूर्व किया है। इस कारण यह प्रकरण आकार में घट गया है। इस प्रकरण में दिये उदाहरण भी सभी प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न हैं।

प्रक्रियासर्वस्व में इस सन्धि के उपरान्त विसर्गसन्धि की जानकारी के लिए ''विसर्गसन्धि'' खण्ड दिया है। इस में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए 13 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2]

विसर्गसन्धि के उपरान्त ''स्वादिसन्धि'' खण्ड दिया है। नारायण भट्ट ने भी रामचन्द्र के समान सु प्रत्यय या सु प्रत्ययान्त से सम्बद्ध उदाहरणों को चुनकर उनकी रूपरचनार्थ स्वादि सन्धि पृथक प्रकरण दिया है। यह प्रकरण विसर्ग सन्धि का ही एक भाग है क्योंकि सु प्रत्यय को भी विसर्ग प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। अत: यह विसर्ग सन्धि से ही सम्बन्धित है। परन्तु ग्रन्थकार ने इसे सुविधार्थ पृथक खण्ड दिया है। इस खण्ड में लगभग वर्णन प्रक्रियाकौमुदी के समान ही है सिर्फ भेद उदाहरणों में है अर्थात् प्रक्रियाकौमुदी में दिये उदाहरणों के स्थान पर इस प्रक्रियाग्रन्थ में अन्य उदाहरण दिये हैं। इस प्रकरण की पूर्ति हेतु नारायण भट्ट ने 11 सूत्रों और 4 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] इस सन्धि के साथ संहिता खण्ड समाप्त हो जाता है।

इस खण्ड के उपरान्त नारायण भट्ट ने कृदन्त पदों की जानकारी के लिए ''कृत्खण्ड'' दिया है। केवल नारायण भट्ट ने ही सन्धियों के उपरान्त कृदन्तों का वर्णन किया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों ने कृदन्तों का वर्णन क्रियारूपों की जानकारी के उपरान्त दिया है। प्रक्रियासर्वस्व में कृदन्त पदों की जानकारी के लिए कृत्खण्ड में प्राप्त विषयवार प्रकरण विभाजन में दिया गया वर्णन ग्रन्थकार का अपना पृथक वर्णन है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में इस तरह का प्रकरण विभाजन नहीं है। रूपमाला में कृदन्तों की जानकारी एक प्रकरण में ही दी है। प्रक्रियाकौमुदी तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में कृदन्तों को कृत्य प्रकरण, कृदन्त तथा उत्तरकृदन्त आदि तीन भागों में विभक्त किया है, परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में ग्रन्थकार ने पाठकों की सुविधा के लिए कृदन्त पदों की जानकारी अनेक छोटे-छोटे खण्डों में दी है। रूपवतार में कृदन्तों का वर्णन दो प्रकरणों में है।

---

1 प्र0 स0 हल्सन्धि खण्ड।

2 प्र0 स0 विसर्ग सन्धि खण्ड।

3 प्र0 स0 स्वादि सन्धि खण्ड।

अष्टाध्यायी में कृत् प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्र तृतीय अध्याय में दिये हैं। नारायण भट्ट ने इन सूत्रों को विभिन्न कृदन्त पदों की जानकारी के लिए अनेक अधिकारों में विभक्त करके छोटे - छोटे प्रकरणों में दिया है। रूपरचना में सहायक सूत्रों को दूसरे अध्यायों से भी चुना है। इन प्रकरणों में ''कृत्य प्रत्यय'' खण्ड शुरू में है। नारायण भट्ट ने ''कृत्याः''[1] सूत्र के अधिकार में आये सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में 97 सूत्र तथा 11 वार्तिक हैं।[2] कृत्यप्रत्यय में ही ''ण्यदन्ता'' एक छोटा सा प्रकरण दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''कृत्खण्ड'' में ''कर्त्रर्थाकृत्'' खण्ड दिया है। इस खण्ड में कर्तृ अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न उदाहरणों की जानकारी हेतु सूत्रों को अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस खण्ड को ग्रन्थकार ने ''विकल्पितेट'', ''भूतार्था'', ''वर्तमानाधिकार'' आदि अनेक भागों में विभक्त किया है। इन्होंने समान रूपरचना जानकारी के लिए समान कार्य सम्बन्धित उदाहरणों को तथा एकाधिकार में आने वाले उदाहरणों को एक प्रकरण में इकट्ठा करके क्रम से रूप रचनार्थ सूत्रों और वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण विभाग से यह ज्ञान हो जाता है कि अमुक् उदाहरण भूतार्थ, वर्तमानार्थ या भविष्यदर्थ बोधक है।

कर्त्रर्थाकृत्'' खण्ड के शुरू में साधारण उदाहरणों की जानकारी है। इस खण्ड में अनेक रूपरचनार्थ 28 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] इन उदाहरणों के उपरान्त ''विकल्पितेट'' भाग शुरू हो जाता है। इस भाग में कुछ ऐसे उदाहरणों का वर्णन है जिनमें विकल्प से इट् आगम होता है। इस भाग में पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 167 पाणिनीय सूत्रों और 40 कात्यायनीय वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[4] इस खण्ड के साथ ही प्रक्रियासर्वस्व प्रथम भाग समाप्त हो जाता है।

तदुपरान्त प्रक्रियासर्वस्व द्वितीय भाग के शुरू में भूत में कर्तार्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं से प्रत्ययों का विधान किया गया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है। इस खण्ड में 122 सूत्र और 9 वार्तिक हैं।[5] खण्ड में वर्णित वर्णन के अनुसार ग्रन्थकार ने इस खण्ड का नाम भी ''भूतार्थ'' दिया है।

---

1 अष्टा० 3-1-95
2 प्र०स० कृत्य प्रत्यय
3 प्र० स० कर्त्रर्था कृत्।
4 प्र० स० विकल्पितेट्।
5 प्र० स० भूतार्थाः।

इसके उपरान्त ''वर्तमानाधिकार'' है। इस अधिकार में वर्तमान में कर्ता अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं से प्रत्ययों का विधान किया गया है। रूपरचनार्थ अन्य सूत्रों का वर्णन भी है। प्रत्यय विधायक सूत्रों सहित इस प्रकरण में 73 सूत्र और 6 वार्तिक हैं।[1]

रामचन्द्र और भट्टोजिदीक्षित ने अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय तृतीय पाद के ''उणादयो बहुलम्''[2] सूत्र से पूर्व सूत्रों को पूर्वकृदन्त तथा उक्त सूत्र के बाद वाले सूत्रों को उत्तरकृदन्त प्रकरणों में दिया है। परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में ग्रन्थकार का अपना प्रकरण विभाजन है। नारायण भट्ट ने पूर्वकृदन्त और उत्तरकृदन्त प्रकरणों से प्रक्रियासर्वस्व में खण्डों का विभाजन नहीं किया है। नारायण भट्ट ने अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय तृतीय पाद के ''उणादयो बहुलम्''[3] तथा ''भूतेऽपि दृश्यन्ते''[4] सूत्रों का वर्णन वर्तमानाधिकार में किया है। इन सूत्रों से अगला सूत्र ''भविष्यति गम्यादय:''[5] है। नारायण भट्ट ने प्रकृत सूत्र से आगे का वर्णन एक खण्ड में दिया है तथा इस खण्ड का नाम ''भविष्यदधिकार'' दिया है। इस सूत्र का अधिकार शेष सभी कृत् प्रत्ययों पर है क्योंकि यहां से आगे जो प्रत्यय विधान है वह भविष्यत काल से सम्बन्धित है। अत: नारायण भट्ट ने इस सम्पूर्ण भाग को ''भविष्यदधिकार'' संज्ञा दी है। यद्यपि यह अप्विधि, स्त्रीलिङ्गा, इटकथा, पूर्वकालेकत्वाविधि तथा भविष्यदर्थस्तुमुन आदि अनेक छोटे-छोटे भागों में विभक्त है।

भविष्यदधिकार में सर्वप्रथम घञ् प्रत्यय से सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी दी है। इस भाग में अष्टाध्यायी के ''परौ भुवोऽवज्ञाने''[6] सूत्र तक सूत्रों का आवश्यकतानुसार वर्णन किया गया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक सूत्रों को भी पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुना गया है। इस खण्ड में 62 सूत्र और 6 वार्तिक हैं। तदुपरान्त ''अप् विधि'' का प्रसङ्ग. शुरू होता है। इस में भविष्यदधिकार में अप् प्रत्यय से सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी के लिए तथा अन्य प्रत्ययों से सम्बद्ध उदाहरणों की जानकारी हेतु अष्टाध्यायी के ''उपसर्गेऽद:''[7] सूत्र से लेकर ''कर्मण्यधिकरणे च''[8] सूत्र तक आवश्यकतानुसार वर्णन किया गया है। आवश्यकतानुसार तृतीय अध्याय चतुर्थ पाद में से तथा ''उपसर्गेऽद:''[9] सूत्र से पूर्ण सूत्रों में से भी कुछ सूत्रों का वर्णन किया गया है। इस खण्ड में 44 पाणिनीय सूत्रों और 1 कात्यायनीय वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।

अपविधि के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''स्त्रीलिङ्गा:'' नामक खण्ड है। इस खण्ड में नारायण भट्ट ने कुछ ऐसे उदाहरणों का वर्णन किया है जिन में स्त्रीलिङ्ग. भाव में प्रत्यय होते हैं। अष्टाध्यायी में सम्बन्धि त प्रत्ययों का वर्णन तृतीय अध्याय तृतीय पाद के ''स्त्रियां क्तिन्''[10] सूत्र से लेकर ''आक्रोशे नञ्यनि:''[11]

---

1 प्र0 स0 वर्तमानाधिकार:।
2 अष्टा0 3-3-1
3 अष्टा0 3-3-1
4 अष्टा0 3-3-2
5 अष्टा0 3-3-3
6 अष्टा0 3-3-55
7 अष्टा0 3-3-59
8 अष्टा0 3-3-93
9 अष्टा0 3-3-59
10 अष्टा0 3-3-94
11 अष्टा0 3-3-112

सूत्र तक है। नारायण भट्ट ने इन सूत्रों में से आवश्यकतानुसार चयन किया है। इनके उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस खण्ड में सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रम से 25 और 10 हैं।

इस के उपरान्त विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए कुछ नपुंस्कलिङ्ग. और पुलिङ्ग. भाव में प्रत्ययविधायक सूत्रों का चयन किया गया है। इस भाग में ''ल्युट् च''[1] आदि 30 सूत्र हैं ।

इस भाग के उपरान्त "इट्कथा" नामक भाग है। इस भाग में ग्रन्थकार ने कुछ ऐसे उदाहरणों की जानकारी दी है जिन में कृत् प्रत्यय करने के उपरान्त इट् या ईट् आगम होता है। ग्रन्थकार ने इन उदाहरणों का ज्ञान एक प्रकरण में इसलिए दिया है ताकि पाठक समान जानकारी प्राप्त करके उन्हें चिरकाल तक स्मरण रखें। समान रूपरचना में पाठकों को वैसे भी सुविधा रहती है। इस खण्ड में 19 सूत्र हैं जो सभी अष्टाध्यायी के षष्ठ तथा सप्तम अध्यायों के विभिन्न पादों से चुने गये हैं जो क्रमशः इट्, नुम तथा दीर्घादि आदेश का विधान करते हैं।[2] रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन भी है जो ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार पुनः उद्धृत है इन की व्याख्या अन्यत्र है। यहां केवल सूत्र या सूत्रार्ध रूप से उद्ध ृत है। अन्य खण्डों के समान इस भाग में भी अनेक उदाहरण पद्यात्मक में प्रदर्शित हैं।

इस भाग के उपरान्त ''कृत्खण्ड'' में ''पूर्वकालेकत्वाविधि'' एक छोटा सा भाग दिया है। इस में उदाहरण जानकारी हेतु कत्वा और ण्वुल प्रत्ययों का विधान है। इस के अन्त में ''इति ण्वुलविधि'' देकर इस भाग का अन्त किया है। इस भाग में पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 51 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर आवश्यकतानुसार प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[3] इस भाग में भी अनेक उदाहरण अनेक पद्यों में वर्णित हैं। उदाहरण पद्यों में दिये हैं इन की जानकारी सूत्रों द्वारा प्रदर्शित की है। प्रक्रियासर्वस्व की विशेषतानुसार इस प्रकरण में भी उदाहरणों की संख्या अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा अधिक है।

इस खण्ड के उपरान्त ''कृत्खण्ड'' के अन्त में "भविष्यदर्थस्तुमुन्" नामक एक छोटा सा भाग है। भविष्यदधिकार में यह अन्तिम प्रकरण है। इस भाग में भविष्यदर्थ भाव में मात्र तुमुन् प्रत्यय से सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण से सूत्रों और वार्तिकों का चुनाव किया है। इस में ''समानकर्त्तृकेषु तुमुन्''[4] तथा ''कालसमयवेलासु तुमुन्''[5] सूत्र तृतीय अध्याय तृतीय पाद से और ''शकधृषज्ञाग्ला घटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन्''[6] तथा ''पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु''[7] सूत्र तृतीय अध्याय चतुर्थ पाद से दिये हैं। ये सूत्र तुमुन प्रत्ययविधायक हैं। प्रक्रियासर्वस्व कृतखण्ड की यह विशेषता है कि इसमें समान प्रत्ययविधायक सूत्रों को चुनकर एक खण्ड में इकट्ठा करके प्रक्रियाक्रम से

---

1 अष्टा0 3-3-115
2 प्र0स0 इट्कथा।
3 प्र0 स0 पूर्वकालेकत्वाविधि।
4 अष्टा0 3-3-158
5 अष्टा0 3-3-167
6 अष्टा0 3-4-65
7 अष्टा0 3-4-66

दिया है। इस से पूर्व खण्डों में भी क्त् और क्तवतु आदि प्रत्यय विधायक सूत्रों को इकट्ठा करके प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है प्रसङ्ग.वश अष्टाध्यायी में ये सूत्र बिखरे हैं। ग्रन्थकार ने सुविधार्थ इन्हें इकट्ठा कर दिया है।

प्रक्रियाकौमुदी तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकारों ने कृदन्त प्रकरण में उणादि सूत्रों का वर्णन भी किया है। क्योंकि समान रूपरचना के कारण इनका एकसाथ वर्णन करना उचित भी है। परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में ''उणादयो बहुलम्''[1] सूत्र में उणादि सूत्रों का मात्र प्रसङ्ग. है इन्होंने उणादि सूत्रों का वर्णन कृदन्त खण्ड के साथ नहीं किया है। इन्होंने उणादियों को लौकिक वर्णन के उपरान्त तथा वैदिक वर्णन से पूर्व स्थान दिया है।

प्रक्रियासर्वस्व तृतीय भाग में तद्धितान्त पदों की जानकारी हेतु तद्धित खण्ड दिया है। इस खण्ड को ग्रन्थकार ने सुविधार्थ अनेक भागों में विभक्त किया है। अष्टाध्यायी में तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र संख्या में अधिक है। नारायण भट्ट ने इन सूत्रों को अधिकार क्षेत्र या सूत्र कार्य वर्णन के आधार पर अनेक छोटे-छोटे भागों में विभक्त किया है। इन भागों में उदाहरण रूपरचनार्थ प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ अन्य सूत्रों का वर्णन भी है। तद्धितखण्ड में अष्टाध्यायी के सूत्रक्रम में कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया है इनको केवल प्रकरणों में विभक्त किया है। किसी बड़े प्रकरण को छोटे भागों में विभक्त करके सूत्रों की संख्या में कमी तो नहीं आती है परन्तु पाठकों की भावना में अन्तर आता है क्योंकि पाठक छोटे प्रकरणों के अध्ययन में रूचि लेते हैं बड़े प्रकरणों से उब जाते हैं। काशिका के कुछ समय बाद पाठक छोटे प्रकरण चाह रहे थे तथा उदाहरणों की जानकारी प्रक्रियाक्रम से चाहने लगे थे। अत: नारायण भट्ट ने पाठकों की भावनानुरूप वर्णन किया है।

नारायण भट्ट ने ''तद्धित खण्ड'' की शुरुआत ''अपत्याधिकार'' भाग से की है। इस भाग में ग्रन्थकार ने अपत्यर्थ में होने वाले विभिन्न प्रत्ययों का उल्लेख किया है। इसमें तद्धितान्त पदों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों का चयन किया है। नारायण भट्ट ने तद्धितान्त पदों की जानकारी अन्य जानकारी को छोड़कर पूर्व दी है। रामचन्द्र तथा भट्टोजिदीक्षित ने तद्धित पदों का वर्णन षड्लिङ्ग., कारक, स्त्रीप्रत्यय, तथा समास जानकारी के बाद दिया है परन्तु नारायण भट्ट ने इन का वर्णन बाद में किया है इन से पूर्व कृदन्त तथा तद्धित जानकारी दी है।

नारायण भट्ट ने प्रक्रियासर्वस्व में ''अपत्याधिकार'' को दो भागों में विभक्त किया हे। प्रक्रियासर्वस्व तृतीय भाग पृष्ठ 17 के उपरान्त ''अपत्याधिकार'' प्रसङ्ग. में तद्राजसंज्ञका प्रत्ययों का वर्णन दिया है। अष्टाध्यायी में अपत्यर्थक अञ्, अण्, ञ्यङ् आदि प्रत्ययों की ''ते तद्राजा:''[2] सूत्र से तद्राज संज्ञा का वर्णन है। ग्रन्थकार ने इन सूत्रों का वर्णन पृथक भाग में दिया है तथा इस भाग की संज्ञा एकाधिकार

---

1 अष्टा0 3-3-1

2 अष्टा0 4-1-174

के कारण ''तद्राजसंज्ञक प्रत्यय'' दी है। सम्पूर्ण ''अपत्यधिकार'' में 132 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[1] परन्तु यदि ''तद्राजसंज्ञक प्रत्यय'' भाग का पृथक से वर्णन किया जाये तो इस में 28 सूत्र और 1 वार्तिक है।[2] इनके उपरान्त शेष अपत्यधिकार में 104 सूत्र और 1 कात्यायनीय वार्तिक बचते हैं।

इस खण्ड के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''प्राग्दीव्यतीय साधारणप्रत्यय'' नामक खण्ड दिया है। इस में ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी में उक्त ''दीव्यति'' से पूर्व सूत्रों का वर्णन किया है तथा इन सूत्रों द्वारा विहित प्रत्ययों को साधारण प्रत्यय कहा है। ये प्रत्यय भी अपत्यर्थ प्रकट करते हैं परन्तु ग्रन्थकार ने अनेक स्थानों पर बड़े प्रकरणों को सुविधा और समान जानकारी के लिए छोटे भागों में विभक्त कर दिया है। इस खण्ड में ''दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः''[3] आदि 4 सूत्र प्रत्यय-विधायक हैं तथा ''स्वादिष्वसर्वनामस्थाने''[4] सूत्र रूपरचनार्थ सहायता हेतु उद्धृत किया है। इस भाग में ''वतिप्रत्ययात पूर्व सर्वत्राग्निकलिकाभ्यां ढग् वाच्य''[5] प्रत्ययविधायक एक वार्तिक का उल्लेख है।

प्रक्रियासर्वस्व में अपत्यभाग के उपरान्त ''अपत्यगण'' भाग है। इस भाग में अपत्याधिकार में आने वाले विभिन्न गणों की जानकारी है। इस भाग में गणों का क्रम पूर्वक वर्णन किया गया है तथा इन गणों में विहित पदों को तद्धितान्त पदों का स्वरूप देकर उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। इस तरह का वर्णन प्रक्रियाग्रन्थों में केवल नारायण भट्ट की कृत्ति में ही है। पाणिनीय गणपाठ में इस तरह के गण तो हैं परन्तु इन का पदक्रम नारायण भट्ट के अपत्यगण के अनुसार नहीं है। सम्भवतः यह पाठ अन्य व्याकरणों से भी मेल रखता है। पाणिनीयव्याकरण के गणपाठ से इस का सम्बन्ध कम है तथा न ही पाणिनि ने गणपाठ के उपरान्त उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। पाणिनीयपरम्परा में भी केवल नारायण भट्ट ने ''अपत्यगण'' में विहित विभिन्न गणों के पदों को तद्धितान्त पदों का स्वरूप देकर उदाहरण रूप से प्रस्तुत किया है।

इस भाग के उपरान्त ''रक्ताद्यर्थ'' भाग है। इस भाग में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए विभिन्न अर्थो में प्रत्ययों का उल्लेख है परन्तु उन प्रत्ययों में रागवाची शब्द से रक्त इस अर्थ में प्रत्ययविध ायकसूत्र ''तेन रक्तं रागात्''[6] इस भाग के शुरू में दिया है। इसलिए ग्रन्थकार ने इस भाग को ''रक्ताद्यर्थ'' संज्ञा दी है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त तद्धितान्त पदों की रूपरचना जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। ग्रन्थपद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार केवल सूत्र या सूत्रार्ध रूप से रूपरचनार्थ उद्धृत सूत्रों का वर्णन पृथक है। ये सूत्र मात्र स्मरणार्थ मात्र सूत्र रूप से पुनः उद्धृत हैं इनकी व्याख्या अन्यत्र है। इस प्रकरण

1 प्र0 स0 अपत्याधिकार।
2 प्र0स0 तद्राजसंज्ञक प्रत्यय।
3 अष्टा0 4-1-85
4 अष्टा0 1-4-17
5 मा0 वा0 4-2-8
6 अष्टा0 4-2-1

में सव्याख्या 85 पाणिनीय सूत्रों और 11 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[1] तद्धित खण्ड में उदाहरण लगभग अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान होना स्वभाविक है क्योंकि तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों में सूत्र में उक्त पदों से ही प्रत्यय विधान है। अतः इन पदों से ही उदाहरण जानकारी होती है। इसलिए अन्य खण्डों की अपेक्षा प्रक्रियासर्वस्व तद्धितखण्ड में उदाहरण सभी प्रक्रियाग्रन्थों से मिलते हैं क्योंकि सूत्रों में वर्णित होने के कारण इन्हें बदलना असम्भव था। अतः इस खण्ड में उदाहरण शेष प्रक्रियाग्रन्थों के समान होना स्वभाविक है।

प्रक्रियासर्वस्व ''रक्ताद्यर्थ'' भाग के उपरान्त ''चातुरर्थिक'' भाग है। नारायण भट्ट ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों में से कुछ ऐसे सूत्रों को चुनकर पृथक भाग में प्रस्तुत किया है जिन में समान रूप से कुछ सूत्रों का अधिकार जाता है। अष्टाध्यायी में ''तदास्मिन्नस्तीति देशे तन्नामन्नि''[2], ''तेन निवृत्तम्''[3], ''तस्य निवासः''[4], ''अदूरभवश्च''[5] इन सूत्रों का समान रूप से ''शेषे''[6] सूत्र से पूर्व सूत्रों में समान रूप से अधिकार जाता है। ग्रन्थकार ने इन सूत्रों में से आवश्यकतानुसार चुनाव किया है। ''तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नामन्नि''[7] आदि चारों सूत्र क्रम से देशवाच्य, बनाया गया, निवास, निकट होना आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए अपने अधिकार में विभिन्न प्रत्ययों का विधान करते हैं। ग्रन्थकार ने चार प्रकार के अर्थों का उल्लेख करने के कारण इस प्रकरण को ''चातुरर्थिक प्रकरण" संज्ञा दी है। इस भाग में पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुने 34 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[8] नारायण भट्ट ने इसी तरह अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान तद्धित प्रत्ययों को अनेक अधिकारों या सूत्रकार्यवर्णनानुसार अनेक भागों में विभक्त किया है। इन भागों का नामकरण भी एकाधिकार या सूत्रकार्यवर्णनानुसार ही दिये हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''शैषिक'' खण्ड है। व्याकरण में अपत्यर्थ तथा चातुरर्थ के उपरान्त जात, भव आदि अर्थ शेष रहते हैं। अष्टध्यायी में इन का वर्णन ''शेषे''[9] सूत्र के अधिकार में किया है। ग्रन्थकार ने इन से सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी के लिए इन सूत्रों को अष्टध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस खण्ड का नामकरण भी एकाधिकार के कारण ''शैक्षिक'' प्रकरण दिया है। रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सूत्रों का भी वर्णन है। इस भाग में 206 पाणिनीय सूत्रों और 36 कात्यायनीय वार्तिकों का रूपरचनाक्रम से प्रयोग है।[10] इस भाग में भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण अधिक हैं। नारायण भट्ट ने शैषिकप्रकरण में भी अन्य प्रकरणों के समान सरस्वतीकण्ठभरण व्याकरण के अनेक सूत्रों का उदाहरणों सहित वर्णन किया है। प्रक्रियाकौमुदी में भी पारीनीयेत्तर परम्परा का वर्णन है परन्तु वहां नामोल्लेख नहीं है। नारायण भट्ट ने नामोल्लेख सहित

---

1 प्र0 स0 रक्ताद्यर्थ।
2 अष्टा0 4-2-67
3 अष्टा0 4-2-68
4 अष्टा0 4-2-69
5 अष्टा0 4-2-70
6 अष्टा0 4-2-92
7 अष्टा0 4-2-67
8 प्र0स0 चातुरर्थिक।
9 अष्टा0 4-2-92
10 प्र0स0 शैषिक।

पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के सूत्र उद्धृत किये हैं। पाणिनीयपरम्परा में रामचन्द्र और नारायण भट्ट को छोड़कर किसी भी प्रक्रियाग्रन्थकार ने पाणिनीयत्तर व्याकरणों का उल्लेख अपने प्रक्रियाग्रन्थों में नहीं किया है। नारायण भट्ट ने तो चान्द्रव्याकरण, सरस्वतीकण्ठाभरण, मुग्धबोध आदि व्याकरणों का खुलकर संख्या क्रम सहित उल्लेख किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में उदाहरण भी अधिकत्तर इन ही व्याकरणों के दिये हैं।

प्रक्रियासर्वस्व में ''शैषिक'' भाग के उपरान्त ''विकाराद्यर्थ'' भाग है। इस खण्ड में ग्रन्थकार ने उदाहरणों की जानकारी के लिए विकारर्थक प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। उदाहरणों की रूपरचना जानकारी के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सूत्रों का भी प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। तद्धितों के सम्पूर्ण ज्ञान हेतु प्रक्रियाग्रन्थों के सभी प्रकरणों का ज्ञान जरूरी है फिर भी इतनी सुविधा हो जाती है कि पाठक छोटे प्रकरणों को पढ़ने में रूचि लेते हैं। बड़े प्रकरणों को देखकर उन में आलस छा जाता है। अत: ग्रन्थकार ने समयानुरूप छोटे प्रकरणों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में भी उदाहरण संख्या इत्तर प्रक्रियाग्रन्थों से अधिक है तथा पाणिनीयेत्तर परम्परा के व्याकरण ग्रन्थों का वर्णन भी अधिक है। इस प्रकरण में 34 पाणिनीय सूत्रों और 5 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[1] इन के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को ग्रन्थ पद्धति वर्णनविधि परम्परानुसार सूत्र या सूत्रार्ध रूप से भी उद्धृत किया है इन की व्याख्या ग्रन्थ में कहीं अन्यत्र है यहां केवल सूत्र रूप से ही उद्धृत हैं। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण की संज्ञा दी है। दोनों प्रक्रियाग्रन्थों में वर्णन अपना-अपना है।

विकाराद्यर्थ भाग के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''ठगधिकार'' भाग है। प्रक्रियाकौमुदी में इस प्रकरण को ''प्राग्वहतीय'' प्रकरण की संज्ञा दी है क्योंकि इस प्रकरण में ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्''[2] सूत्र से पूर्व का वर्णन है। प्रक्रियासर्वस्व में भी उक्त सूत्र से पूर्व सूत्रों का वर्णन है परन्तु ग्रन्थकार ने इसे ''ठगधिकार'' भाग की संज्ञा दी है। अष्टाध्यायी में ''प्राग्वहतेष्ठक्''[3] सूत्र का अधिकार ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्''[4] इस सूत्र से पूर्व तक जाता है। ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए इस अधिकार से सम्बन्धित सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है तथा इस भाग को एकाधिकार के कारण ''ठगधिकार'' संज्ञा दी है। इस भाग में ग्रन्थकार ने 73 पाणिनीय सूत्र तथा 9 कात्यायनीय वार्तिकों का पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस भाग में भी अनेक पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख है।

इस भाग के उपरान्त ''तद्धितखण्ड'' में ''प्राग्घितीय'' खण्ड आता है। इस खण्ड को ग्रन्थकार ने ''यद्भाग'' भी कहा है। प्रक्रियाकौमुदी और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में इस प्रकरण को ''प्राग्घितीय'' प्रकरण ही कहा है। ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी से कुछ ऐसे भाग को पृथक किया है जिस

1 प्र०स० विकाराद्यर्थ।

2 अष्टा० 4-4-76

3 अष्टा० 4-4-1

4 अष्टा० 4-4-76

में ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्ग.म्''[1] सूत्र से लेकर ''तस्मैहितम्''[2] सूत्र में उक्त हितार्थ प्रत्ययों के अधिकार से पूर्व सूत्रों का वर्णन किया गया है या इस भाग में ''प्राग्हिताद्यत्''[3] सूत्र के अधिकार में आये ''तस्मैहितम्''[4] सूत्र से पूर्व सूत्रों का विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए रूपरचनाक्रम से वर्णन किया है अर्थात् दो तरह से एक ही बात को कहा गया है। इसलिए ही ग्रन्थकार ने इसे ''प्राग्धितीय'' तथा ''यद् भाग'' से सम्बोधित किया है। इस भाग में 45 पाणिनीय सूत्रों और 3 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[5] इस भाग में अनेक सूत्र सरस्वतीकण्ठभरण व्याकरण के हैं जिन्हें ग्रन्थकार ने सम्बन्धित जानकारी हेतु उद्धृत किया है। नारायण भट्ट ने अपने ग्रन्थ में पाणिनीय व्याकरण के साथ चान्द्रव्याकरण, सरस्वतीकण्ठाभरण, मुग्धबोध आदि व्याकरणों का वर्णन भी किया है जो इन की एक विशेषता है।

इस खण्ड के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''प्राक्क्रीतीय'' खण्ड दिया है। अष्टाध्यायी के ''तस्मैहितम्''[6] सूत्र से आगे ''तेन क्रीतम''[7] सूत्र से पूर्व सूत्रों का इस खण्ड में प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के ''तेन क्रीतम्''[8] सूत्र में उक्त क्रीतम पद से पूर्व का वर्णन करने के कारण इस भाग को ''प्राक्क्रीतीय'' संज्ञा दी है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में भट्टजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''छयद्विधि'' प्रकरण की संज्ञा दी है क्योंकि ''तेन क्रीतम्''[9] सूत्र तक ''प्राक्क्रीताच्छ:''[10] तथा ''उगवादिभ्योयत्''[11] सूत्रों द्वारा विभिन्न अर्थो में छ और यत् प्रत्ययों का अधिकार जाता है। अत: वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में इसे ''छयद् विधि'' प्रकरण कहा है। प्रक्रियाकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व में इसे ''प्राक्क्रीतीय'' प्रकरण से सम्बोधित किया है।

प्रक्रियासर्वस्व विषयानुकुमणी में ''प्राक्क्रीतीय'' प्रकरण तथा ''क्रीताद्यर्थप्रकरण'' का पृथक उल्लेख है। परन्तु ग्रन्थ में ''तस्मै हितम्''[12] सूत्र से आगे ''प्राक्वतेष्ठञ्''[13] सूत्र से पूर्व वर्णन को ''छ भाग'' कहा है। इस से आगे ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वति:''[14] सूत्र से पूर्व भाग को ''ठञ् भाग'' से सम्बोधि त किया है। इस प्रकार विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ ''छ भाग'' में 18 पाणिनीय सूत्रों तथा 4 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है[15] तथा ठञ् भाग में 98 पाणिनीय सूत्रों तथा 21 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[16] प्रक्रियासर्वस्व विषयानुक्रमणी अनुसार प्राक्क्रीतीय प्रकरण में 40 सूत्रों और 9 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम में वर्णन है[17] तथा ''क्रीताद्यर्थ प्रकरण'' में 76 पाणिनीय सूत्रों और 16 वार्तिकों का वर्णन है[18] जो पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों में पाये जाते हैं। क्रीताद्यर्थ प्रकरण में ''तेन क्रीतम्''[19] सूत्र

---

1 अष्टा0 4-4-76
2 अष्टा0 5-1-5
3 अष्टा0 4-4-75
4 अष्टा0 5-1-5
5 प्र0स0 ठगधिकार।
6 अष्टा0 5-1-5
7 अष्टा0 5-1-37
8 अष्टा0 5-1-37
9 अष्टा0 5-1-37
10 अष्टा0 5-1-1
11 अष्टा0 5-1-2
12 अष्टा0 5-1-5
13 अष्टा0 5-1-18
14 अष्टा0 5-1-115
15 प्र0स0 छ भाग।
16 प्र0 स0 ठञ् भाग।
17 प्र0स0 प्राक्क्रीतीय।
18 प्र0स0 क्रीताद्यर्थ प्रकरण।
19 अष्टा0 5-1-37

आदि में है इस के उपरान्त अनेक अर्थो का वर्णन है। परन्तु उन अर्थो में क्रीतार्थ विधायकसूत्र आदि में है। अत: ग्रन्थकार ने इस भाग को क्रीताद्यर्थ प्रकरण संज्ञा दी है। इस से पूर्व भाग को ग्रन्थाकार ने इसलिए ''प्राक्क्रीतीय संज्ञा दी है कि इस में ''तेन क्रीतम्''[1] सूत्र में उक्त क्रीत से पूर्व सूत्रों का वर्णन है। इन दोनों भागों में उदाहरण अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की उपेक्षा अधिक है तथा दोनों में ही ''सरस्वतीकण्ठाभरण'' व्याकरण का उल्लेख प्राप्त है जो उदाहरण जानकारी हेतु दिया गया है।

इस खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''भावकर्मार्थप्रकरण'' है। ग्रन्थकार ने इस प्रकरण में अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय प्रथम पाद के ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वति:''[2] सूत्र से लेकर पाद के अन्त तक सूत्रों का वर्णन किया है। इन सूत्रों में भाव और कर्म अर्थो में विभिन्न प्रत्ययों का उल्लेख है। अत: नारायण भट्ट ने इसे ''भावकमार्थ प्रकरण'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ पाणिनीयव्याकरण के 28 सूत्रों और 3 वार्तिकों को ग्रन्थकार ने रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[3] ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार रूपरचना के लिए अनेक सूत्र सत्र या सूत्रार्ध रूप में पुन: उद्धृत हैं। इस प्रकरण में अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण अधिक हैं तथा सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण के उदाहरण एवम् सूत्रों का वर्णन भी अधिक है। अनेक स्थानों पर पाणिनीय सूत्रों की व्याख्या में अनेक विस्तृत जानकारी हेतु पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख भी प्राप्त है।

इस प्रकरण या भाग के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''पाञ्चमिक प्रकरण'' आता है। प्रक्रियासर्वस्व विषयानुक्रमणी में इस प्रकरण को ''पाञ्चमिक प्रकरण'' कहा है परन्तु ग्रन्थ वर्णन में इसे "खञादि भाग" भी कहा है। क्योंकि इस प्रकरण में ''धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्''[4] सूत्र से लेकर ''तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्''[5] सूत्र से पूर्व सूत्रों का वर्णन है, इन सूत्रों में खञ् प्रत्यय विधायक सूत्र आदि में है इसलिए इस भाग को खञादि प्रकरण कहना उचित है। इस प्रकरण में 93 पाणिनीय सूत्रों और 9 कार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[6] इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद के प्रथम सूत्र से लेकर क्रम से 93 सूत्र तक सूत्र है जो एक क्रम से प्राप्त है। प्रत्ययविधायक इन सूत्रों के उपरान्त इस प्रकरण में व्याख्या सहित अन्य सूत्र प्राप्त नहीं हैं। केवल रूपरचना जानकारी हेतु सूत्र या सूत्रार्ध रूप से सूत्र उद्धृत है जो ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार पुन: उद्धृत हैं। इनकी पूर्ण जानकारी अन्यत्र है यहां केवल सहायतार्थ पुन: उद्धृत हैं।

नारायण भट्ट का प्रकरण विभाजन रामचन्द्र तथा भट्टोजिदीक्षित से अनेक स्थानों पर काफी भिन्नता रखता है। रामचन्द्र ने जिन सूत्रों का वर्णन ''आहीर्यप्रकरण'' मात्र एक प्रकरण में दिया है।

---

1 अष्टा0 5-1-37

2 अष्टा0 5-1-115

3 प्र0स0 भावकमार्थ प्रकरण।

4 अष्टा0 5-2-1

5 अष्टा0 5-2-94

6 प्र0स0 माञ्चमिक प्रकरण।

नारायण भट्ट ने इन सूत्रों को तीन भागों में विभक्त करके ''क्रीताद्यर्थप्रकरण'', ''भावकर्मार्थ प्रकरण'' तथा ''पाञ्चमिक प्रकरण'' नामक तीन भागों में प्रक्रियाक्रम से दिया है। नारायण भट्ट ने जिस प्रकरण को क्रीताद्यर्थ प्रकरण कहा है उस को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में तद्धितार्हीय प्रकरण, कालाधिकार प्रकरण तथा ठञ्विधि प्रकरण तीन भाग हैं।

पाञ्चमिक प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''मत्वर्थीय प्रकरण'' है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के ''तदस्यास्त्यास्मिन्निति मतुप्''[1] सूत्र से लेकर पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद समाप्ति तक सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में 52 पाणिनीय सूत्रों तथा 15 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[2] प्रक्रियाकौमुदी में भी इस भाग को मत्वथीर्य प्रकरण कहा है। प्रक्रियासर्वस्व की अपेक्षा ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' में ''मत्वर्थीयप्रकरण'' की शुरुआत पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद के ''तदस्मिन्नधि कमिति दशान्ताड्ङः''[3] सूत्र से की है। यह वर्णन भी पाद के अन्त तक है। भट्टोजिदीक्षित इस प्रकरण की शुरुआत ''तदस्मिन्नधिकमिति दशान्ताड्ङः''[4] सूत्र से कर देते हैं जबकि प्रक्रियाकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व में इस प्रकरण की शुरुआत ''तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्''[5] सूत्र से की है। इन सूत्रों को ग्रन्थकारों ने जहां जहां भी स्थान दिया है वे सूत्र उस प्रकरण से सम्बद्ध ही हैं क्योंकि ग्रन्थकारों ने उन्हें वहां व्यवस्थित किया है। कहने का भाव यह है कि रामचन्द्राचार्य, भट्टोजिदीक्षित तथा नारायण भट्ट ने अष्टाध्यायी के सूत्रों को अपने- अपने ढंग से प्रकरणों में व्यवस्थित किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''प्राग्दिशीय प्रकरण'' आता है। इस में नारायण भट्ट ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के ''प्राग्दिशोविभक्तिः''[6] सूत्र से लेकर ''दिक्शव्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्तातिः''[7] सूत्र से पूर्व सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। ग्रन्थकार ने इस प्रकरण का नाम प्राग्दिशीय प्रकरण इसलिए दिया है कि इस में अष्टाध्यायी के सूत्र ''दिक्शव्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्तातिः''[8] सूत्र में विहित दिक् अर्थात दिशा वाचक पद से पूर्व सूत्रों का वर्णन किया गया है। अतः ग्रन्थकार ने इस प्रकरण की संज्ञा प्राग्दिशीय दी है। इस प्रकरण में 29 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[9] ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि अनुसार अनेक सूत्र सूत्ररूप या सूत्रार्ध रूप से रूपरचनार्थ पुनः उद्धृत हैं। इन की व्याख्या ग्रन्थ में अन्यय है। यहां केवल सूत्र रूप में पुन उद्धृत हैं। इस भाग में भी उदाहरण इत्तर प्रक्रियाग्रन्थों से अधि क है। अन्य प्रकरणों के समान पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख यहां भी प्राप्त है।

प्रक्रियासर्वस्व में इस प्रकरण के उपरान्त ''अस्ताति भाग'' दिया है। ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के ''दिक्शव्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्तातिः''[10] सूत्र से लेकर

---

1 अष्टा0 5-2-94
2 प्र0स0 मत्वर्थीयप्रकरण।
3 अष्टा0 5-2-45
4 अष्टा0 5-2-45
5 अष्टा0 5-2-94
6 अष्टा0 5-3-1
7 अष्टा0 5-3-27
8 अष्टा0 5-3-27
9 प्र0स0 प्रग्दिशीय प्रकरण।
10 अष्टा0 5-3-27

''विभाषाऽवरस्य''[1] सूत्र तक सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है तथा प्रकरण में वर्णन के अनुसार इस का नाम अस्ताति भाग दिया है। ग्रन्थकार ने इस भाग में 14 सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।

इस प्रकरण से अगले प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''स्वार्थिक प्रकरण'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में ''कविभाग'', ''इवार्थ भाग'' तथा ''तद्राजा'' आदि अनेक छोटे-छोटे भाग हैं। इस भाग में स्वार्थ में प्रत्यय विधायक सूत्रों का वर्णन है। यही कारण है कि ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''स्वार्थिक प्रकरण'' की संज्ञा दी है।

ग्रन्थकार ने ''स्वार्थिकप्रकरण'' में ''संख्याया विधार्थे धा''[2] सूत्र से लेकर ''अवक्षेपणे कन्''[3] सूत्र तक एक भाग दिया है। इन सूत्रों को इस भाग में उदाहरणों की रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस भाग को ग्रन्थकार ने ''कविभाग'' संज्ञा दी है इस भाग में 62 पाणिनीय सूत्र हैं।[4] इस भाग की संज्ञा ग्रन्थकार ने ''कविभाग'' या ''कविधिभाग'' इसलिए दी है कि इस में अन्य वर्णन के उपरान्त ''प्रागिवात्कः''[5] सूत्र के अधिकार में वर्णित ''क'' प्रत्यय का वर्णन है। अतः यह संज्ञा सार्थक सिद्ध होती है। प्रक्रियाकौमुदी में इसे प्रागिवीय प्रकरण कहा है।

इस के उपरान्त ''स्वार्थिक प्रकरण'' प्रकरण में ''इवार्थभाग'' है इस भाग में ''इवे प्रतिकृतौ''[6] सूत्र से लेकर ''कर्कलोहितादीकक्''[7] सूत्र तक अष्टाध्यायी के सूत्रों का उदाहरणों की रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस के 15 पाणिनीय सूत्र और 1 कात्यायनीय वार्तिक है। इस प्रकरण के सूत्र इवार्थ में प्रत्ययों का विधान करते हैं। अतः ग्रन्थकार ने इसे इवार्थ भाग से सम्बोधित किया है क्योंकि इस भाग में इवार्थ में प्रत्ययों की जानकारी है। इस भाग में भी सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण का उल्लेख है।

प्रक्रियासर्वस्व में इस भाग से आगे ''तद्राजा'' भाग दिया है। इस भाग में उदाहरणों की जानकारी के लिए तद्राज संज्ञक प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन है। अष्टाध्यायी में ''पूगाञ्ञ्योऽग्रामणीपूर्वात्''[8] पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के इस सूत्र से आगे पाद की समाप्ति तक जितने प्रत्यय कहे हैं उन्हें तद्राज संज्ञक कहते हैं। अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय तृतीय पाद का ''ञ्यादयस्तद्राजाः''[9] सूत्र यह विधान करता है। तद्राज संज्ञक प्रत्ययों का वर्णन करने के कारण इस प्रकरण को ''तद्रराज भाग'' संज्ञा दी है। इस भाग में 7 पाणिनीय सूत्र हैं।

इस भाग के अन्त में स्वार्थिक प्रत्ययों से सम्बन्धित शेष सूत्रों का वर्णन है। इस में पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद के सूत्र ''पादशतस्य संख्यादेर्वीप्सायां बुन् लोपश्च''[10] से लेकर

---

1 अष्टा0 5-3-41
2 अष्टा0 5-3-42
3 अष्टा0 5-3-95
4 प्र0स0 कवि भाग।
5 अष्टा0 5-3-70
6 अष्टा0 5-3-96
7 अष्टा0 5-3-110
8 अष्टा0 5-3-112
9 अष्टा0 5-3-119
10 अष्टा0 5-4-1

''मद्रात्परिवापणे''[1] सूत्र तक का वर्णन है ये सभी सूत्र तद्धित प्रत्ययविधायक हैं। ''मद्रात्परिवापणे''[2] सूत्र के उपरान्त अष्टाध्यायी में समासान्त प्रत्ययों का वर्णन प्रारम्भ हो जाता है। नारायण भट्ट ने तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना हेतु प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस भाग में 72 पाणिनीय सूत्र हैं।[3] इनमें 67 सूत्र प्रत्ययविधायक हैं जिनका क्रम अष्टाध्यायी के क्रम से आवश्यकतानुसार आगे पीछे किया गया है। शेष 5 सूत्र रूपरचना में सहायक हैं जो अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुने गये हैं। इस भाग में 11 कात्यायनीय वार्तिक प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[4] ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि परम्परानुसार अनेक सूत्रों को रूपरचनार्थ सूत्र या सूत्रार्ध रूप में पुन: उद्धृत किया है। इनकी व्याख्या अन्यत्र है। यहां केवल रूपरचनार्थ पुन: स्मरण कराये गये हैं। इस भाग में भी उदाहरण इत्तर प्रक्रियाग्रन्थों से अधि क है। इस प्रकरण में भी सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण के अनेक सूत्र उदाहरण जानकारी के लिए उद्ध ृत किये हैं। इसी प्रकरण के साथ प्रक्रियासर्वस्व में तद्धितखण्ड समाप्त हो जाता है।

प्रक्रियासर्वस्व तृतीय भाग के उपरान्त चतुर्थ भाग में समास, स्त्रीप्रत्यय, सुबर्थ खण्ड अर्थात् विभक्त्यर्थ, सुबविधि अर्थात् षड्लिङ्ग., अव्यय तथा द्विरूक्त प्रकरण हैं। इस विषयवार प्रकरण विभाजन की अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से तुलना की जाये तो प्रक्रियासर्वस्व प्रकरण क्रम में काफी अन्तर है। समास सम्बन्धि त जानकारी सभी प्रक्रियाग्रन्थों में तद्धित सम्बन्धित वर्णन से पूर्व है। स्त्रीप्रत्यय जानकारी कारक, षडलिङ्ग. तथा अव्यय सम्बन्धित जानकारी से पूर्व आ जाती है परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में यह सब वर्णन समास खण्ड के उपरान्त है। इसके उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में तद्धित सम्बन्धित जानकारी समास खण्ड से पूर्व आ गयी है। नारायण भट्ट का विषयवार विभाजन सभी प्रक्रियाग्रन्थकारों से भिन्न है इन्होंने प्रकरण देने में अपने उपजीव्य प्रक्रियाकौमुदी का अनुकरण भी नहीं किया है।

प्रक्रियासर्वस्व चतुर्थ भाग की शुरुआत ''समासखण्ड'' से होती है। इस खण्ड में सर्वप्रथम ''अव्ययीभाव'' प्रकरण है। अष्टाध्यायी में द्वितीय अध्याय प्रथम पाद के प्रथम 4 सूत्र अन्य समास सम्बन्धि त वर्णन करते हैं तदुपरान्त 17 सूत्र अव्ययीभावसमास विधायक हैं। नारायण भट्ट ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए समयानुसार पाठकों की सुविधा हेतु इन सूत्रों को रूपरचनाक्रम से उद्धृत किया है। नारायण भट्ट पाठकों की समस्या से परिचित थे वे जानते थे कि समास सम्बन्धित सूत्र एवम् वार्तिक पाणिनीयव्याकरण के कम से कम छ: अध्यायों में विखरे हैं। अत: पाठक एक साथ एक क्रम से समास ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। इस समस्या समाधान हेतु नारायण भट्ट ने सम्बन्धित सूत्रों को आवश्यकतानुसार पाणिनीयव्याकरण से चुनकर समास खण्ड में प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है ताकि पाठक समस्या का सामना न करे। अव्ययीभावसमास प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने समास सम्बन्धित रूपरचना जानकारी के लिए पूर्णप्रक्रिया का प्रयोग किया है। सम्बन्धित हर सूत्र को उदाहरण के साथ सूत्र कार्य सहित प्रस्तुत किया

---

1 अष्टा0 5-4-67

2 अष्टा0 5-4-67

3 प्र0स0 स्वार्थिक प्रकरण।

4 प्र0स0 स्वार्थिक प्रकरण।

है ताकि पाठक पूर्ण जानकारी के साथ ज्ञान प्राप्त कर सकें। नारायण भट्ट ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण के अनेक सूत्रों का उल्लेख भी किया है।

समासखण्ड में अव्ययीभाव प्रकरण के उपरान्त ''तत्पुरुषप्रकरण'' है। इस भाग के शुरू में द्वितीयान्त, तृतीयान्त, आदि विभक्त्यान्त पदों का समर्थ सुवन्त के साथ समास होने या समास निषेध का वर्णन है। तदुपरान्त तत्पुरुष भेद कर्मधारय का वर्णन है। इसी में नञ् तत्पुरुष, कु, गति संज्ञक शब्दों एवम् प्रादियों का समर्थ सुबन्त के साथ समास का उल्लेख है। कर्मधारय तथा कर्मधारय के भेद द्विगु का वर्णन मिश्रित रूप से प्राप्त है।

तत्पुरुषसमास में उदाहरणों की पूर्ण जानकारी हेतु नारायण भट्ट ने टच्, अच् आदि प्रत्ययविध ायकसूत्र पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से, अकरान्तादेश करने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से, विभिन्न लिङ्गो में समास होने पर लिङ्ग. पूर्वपद का हो या पर पद का या अनेक पदों में पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. और नपुंस्कालिङ्ग., विधान हेतु द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद से सूत्रों को रूपरचना हेतु चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन कार्यो के उपरान्त विभिन्न समासान्त पदों की रूपरचना के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से आवश्यकतानुसार चुनकर इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। केवल इस प्रकरण को पढ़ने से ही पाठकों को तत्पुरुषसमास ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उन्हें सम्पूर्ण प्रक्रिसर्वस्व का अध्ययन नहीं करना पड़ता क्योंकि इस समास से सम्बन्धित सामग्री छात्रों को इसी प्रकरण में उपलब्ध हो जाती है। इस प्रकरण में भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण संख्या अधिक है। तथा अनेक उदाहरण भिन्न हैं। इस प्रकरण में भी सरस्वतीकण्ठाभरण आदि व्याकरणों का उल्लेख प्राप्त होता है इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 134 पाणिनीय सूत्रों और 9 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1] यह प्रकरण समास खण्ड में सब प्रकरणों से बड़ा है क्योंकि इस में तत्पुरुषसमास के भेदोपभेद कर्मधारय और द्विगु का वर्णन है।

इस प्रकरण के उपरान्त बहुव्रीहिसमास प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में मात्र 5 सूत्र बहुव्रीहिसमास करते हैं। शेष सूत्र रूपरचना में सहायक हैं। इस प्रकरण में स्त्रीवद या पुंवदभाव विधायकसूत्र षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से तथा समासान्त प्रत्ययविधायकसूत्र अष्टाध्यायी के पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। बहुव्रीहिसमास प्रकरण में ग्रन्थकार ने ''समासन्त'' नामक एक भाग पृथक दिया है। इस में मात्र समासन्त प्रत्ययविधायक सूत्रों का ही वर्णन है ये सूत्र ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से चुने हैं। इस भाग को मिलाकर सम्पूर्ण बहुव्रीहिसमास प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 69 सूत्र और 18 वार्तिको का रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। इन सूत्रों का यदि पृथक वर्णन किया जाये तो केवल ''बहुव्रीहिसमास प्रकरण'' में 22 सुत्र और 16 वातिकों का उल्लेख है तथा ''समासन्त भाग'' में

---

1 प्र0स0 तत्पुरुष समासप्रकरण।

47 सूत्र और 2 वार्तिक हैं।[1] इस प्रकरण में भी अनेक स्थानों पर सरस्वतीकण्ठाभरण आदि व्याकरणों का उल्लेख है।

प्रक्रियासर्वस्व में इस प्रकरण के उपरानत ''द्वन्द्वसमास'' प्रकरण है। द्वन्द्व समास के सभी उदाहरणों में ''चार्थे द्वन्द्वः''[2] सूत्र से ही समास होता है। समास करने के उपरान्त अनेक पदों को पूर्व या पर प्रयोगार्थ विधान किया गया है। अष्टाध्यायी में सम्बन्धित सूत्र ''चार्थे द्वन्द्वः''[3] सूत्र के उपरान्त प्राप्त होते हैं। ग्रन्थकार ने इन्हें आवश्यकतानुसार चुना है। अनेक स्थानों पर एकवदभाव करने के लिए सूत्रों की आवश्यकता पड़ती है। ये सूत्र भी अष्टाध्यायी द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त हैं। ग्रन्थकार ने सम्बन्धित सूत्रों को पाणिनीयव्याकरण के द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद से चुनकर ''द्वन्द्वभाग'' में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त द्वन्द्वसमास में कुछ ऐसे सूत्रों की आवश्यकता पड़ती है जो दो पदों में से एक पद शेष का विधान करते हैं। इस प्रकार के सूत्र अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय द्वितीय पाद में प्राप्त होते हैं। नारायण भट्ट ने सम्बद्ध सूत्रों से आवश्यकतानुसार चुनाव करके इन सूत्रों को सम्बन्धित प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकार इस प्रकरण में उद्धृत सभी सूत्रों की संख्या 42 है।[4] इस प्रकरण में भी पाणिनीयेत्तर सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण का वर्णन अधिक है।

इस प्रकरण के उपरान्त समासखण्ड में ''समासान्त प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में अव्ययीभाव आदि सभी समासों के अन्त में होने वाले प्रत्ययों की जानकारी है। अनेक समासान्त प्रत्ययविधायक सूत्र समास खण्ड के सभी प्रकरणों में आ गये हैं शेष सूत्रों का वर्णन विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया गया है। सम्बद्ध सूत्र अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं। इस प्रकरण में उद्धृत पाणिनीय सूत्रों की संख्या 18 है।[5] इन सूत्रों में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। समासन्त भाग में 1 कात्यायनीय वार्तिक का प्रयोग है।

इस प्रकरण के उपरान्त "समास खण्ड'' में ''उत्तरपदाधिकार'' भाग है। प्रक्रियाकौमुदी तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में इस भाग को ''अलुक्समास प्रकरण'' की संज्ञा दी है। समस्त पदों में कुछ ऐसे पद हैं जिन में पूर्व पद की विभक्ति का लोप न होने के कारण पूर्व पद में विभक्तिकार्य होते हैं। ऐसे उदाहरणों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी में विभक्ति अलुक् विधायक सूत्र षष्ठ अध्याय में प्राप्त हैं। इस प्रकार के उदाहरण अव्ययीभाव आदि सभी समास प्रकरणों में सम्मिलित किये जा सकते थे परन्तु ग्रन्थकार ने इन का वर्णन पृथक प्रकरण में किया है ताकि पाठक एक प्रकार के उदाहरणों को एक क्रम से इकट्ठा पढ़कर सम्बन्धित ज्ञान को गहन रख सकें। नारायण भट्ट ने इस प्रकरण को उत्तरपदाधिकार संज्ञा इसलिए दी है कि इसमें ''अलुगुत्तरपदे''[6] सूत्र के अधिकार में उत्तरपद परे पूर्व पद की विभक्तियों

---

1 प्र०स० बहुव्रीहि समास प्रकरण।
2 अष्टा 2-2-29
3 अष्टा० 2-2-29
4 प्र०स० द्वन्द्व समास प्रकरण।
5 प्र०स० समासान्त प्रकरण।
6 अष्टा 6-3-1

के लुक् का विधान है। अत: ग्रन्थकार ने उत्तरपद अधिकार में कार्य होने के कारण इस प्रकरण को ''उत्तरपदाधिकार भाग'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 114 पाणिनीय सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण में अनेक स्थानों पर पद्यात्मक वर्णन में वैयाकरण भागुरि के मतों का वर्णन है। इस प्रकार के वर्णन में मुग्धबोध व्याकरण के मत भी हैं।

प्रक्रियासर्वस्व विषयानुक्रमणी में 66 पृष्ठ से 90 पृष्ठ तक भाग को ''उत्तरपदाधिकार'' भाग कहा है। परन्तु ग्रन्थ वर्णन में 81 पृष्ठ से ''षत्वणत्विक'' भाग की शुरुआत है। प्रक्रियाकौमुदी और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में क्रमश: इस प्रकरण को ''सर्वसमासशेष'' और ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण कहा है। इस भाग में समासाश्रय में विभिन्न उदाहरणों में सकार तथा नकार को क्रमश: षकार और णकारादेश का वर्णन है। ग्रन्थकार ने सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय तृतीय और चतुर्थ पाद से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किये हैं। इस भाग में 46 पाणिनीय सूत्र उद्धृत है। 68 सूत्रों का प्रयोग ''षत्वणत्विक'' भाग से पूर्ण हुआ है। इस प्रकार इस सम्पूर्ण ''उत्तरपदाधिकार'' प्रकरण में जोड़कर 114 पाणिनीय सूत्र हैं। इस प्रकरण में भी अनेक स्थानों पर केचित् रूप से उद्धृत या अन्य स्पष्टकरण से पाणिनीयेतर व्याकरणों का उल्लेख भी प्राप्त है। इस प्रकरण में भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थों या काशिका से अनेक उदाहरण भिन्न हैं।

समासखण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''स्त्रीप्रत्यय'' खण्ड दिया है। यह प्रकरण अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में षड्लिङ्ग. के उपरान्त तथा कारक, समास और तद्धित आदि प्रकरणों से पूर्व दिया है। परन्तु प्रक्रियासर्वस्व में यह प्रकरण तद्धित तथा समास खण्डों के उपरान्त दिया है। षड्लिङ्ग. तथा कारक सम्बन्धित जानकारी इस खण्ड के उपरान्त है जो अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में इस प्रकरण से पूर्व दी गयी है। इस प्रकरण में स्त्रीत्व विवक्षा में विभिन्न पदों से अनेक प्रत्ययों का विधान किया गया है। सूत्रमूलकपद्धति में स्त्रीत्वविवक्षा में विभिन्न पदों से प्रत्ययविधायकसूत्र चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद में दिये हैं तथा ये सूत्र ''अजादयतष्टाप''[1] सूत्र से लेकर ''देवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्ठेविद्धिभ्योऽन्यन्तरस्याम्''[2] तक एक क्रम से प्राप्त है इनकी संख्या 77 है। सूत्रमूलकपद्धति में यह समस्या है कि स्त्रीप्रत्ययान्त पदों की जानकारी के लिए प्रत्ययविधायक इन सूत्रों के बाद रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों में विखरे हैं। काशिका के कुछ समय बाद पाठक व्याकरण जानकारी रूपरचना क्रम से चाह रहे थे। अत: नारायण भट्ट ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान समय का लाभ उठाकर प्रक्रियासर्वस्व नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। इस में ''स्त्रीप्रत्यय'' खण्ड को रूचिकर वर्णन से प्रस्तुत किया है। इस प्रकरण में 81 पाणिनीय सूत्रों और 18 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है[3], जो सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों में पाये जाते हैं। नारायण भट्ट ने अष्टाध्यायी के स्त्रीत्वविवक्षा में प्रत्ययविधायक सूत्रों के क्रम में परिवर्तन नहीं किया है परन्तु बीच में रूपरचना में सहायक सूत्र सम्मिलित

---

1 अष्टा 4-1-4

2 अष्टा 4-1-81

3 प्र0स0 स्त्रीप्रत्यय खण्ड।

किये हैं अर्थात् ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को छोड़कर प्रत्ययविधायक सूत्रों को अष्टाध्यायी क्रम से ही उद्धृत किया है। शेष खण्डों के समान इस खण्ड में भी अनेक सूत्र मात्र सूत्र या सूत्रार्ध रूप से उद्धृत किये हैं। ये सूत्र मात्र स्मरणार्थ उद्धृत हैं इन की जानकारी ग्रन्थ में अन्यत्र है प्रकरण में केवल रूपरचनार्थ पुनः उद्धृत किये हैं। इस खण्ड में अनेक सूत्रों की व्याख्या पद्यात्मक रूप में की है तथा अनेक उदाहरण भी पद्यात्मक वर्णन में प्रस्तुत किये हैं। इस प्रकरण में भी सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण का वर्णन अधिक पाया जाता है।

स्त्रीप्रत्यय खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''सुबर्थ खण्ड'' दिया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में इस प्रकरण को कारक या विभक्त्यर्थ प्रकरण से सम्बोधित किया है। वाक्य में उक्त सम्बन्धबोधक शब्दों को कारक कहते हैं या वाक्य में क्रिया से जिस का सीधा सम्बन्ध होता है उसे कारक कहते हैं। क्रिया का सीधा सम्बन्ध छः स्थानों पर होता है क्रिया को करने वाले के साथ, क्रिया के कर्म के साथ, क्रिया जिसकी सहायता से होती है उसके साथ, क्रिया जिस के लिए होती है उस के साथ, क्रिया जिस से निकले या जिस से दूर हो उस के साथ तथा क्रिया जिस स्थान पर होती है उस के साथ आदि। इन्हें क्रम से कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादन तथा अधिकारण आदि कारक कहते हैं।

व्याकरण में किस-किस कारक की कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादन, अधिकरण आदि संज्ञा होती है तथा किन-किन पदों के योग में किन-किन विभक्तियों का प्रयोग होता है या किस-किस विभक्ति या सबर्थ का क्या-क्या अर्थ होता है ? आदि जानकारी का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। सूत्रमूलकपद्धति में विभक्ति संज्ञा विधायक से सूत्र इस प्रकार का वर्णन प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति विधायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में प्राप्त होते हैं। इस पद्धति में यह समस्या है कि इस में विभक्ति संज्ञाविधायक सूत्रों का क्रम कर्ता, कर्म, करण आदि सूत्र क्रम से नहीं हैं। जबकि अपादान, सम्प्रदान, करण, अधिकरण, कर्म और कर्ता आदि कारकों के क्रम से सूत्र क्रम है इसी तरह विभक्ति विधायक सूत्रों में प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति क्रम नहीं है। उदाहरण जानकारी के लिए कर्ता, कर्म , करण आदि विभक्ति संज्ञाविधायक सूत्रों के उपरान्त प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति विधायक सूत्रों की आवश्यकता होती है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में यह क्रम भी प्राप्त नहीं है। इस समस्या समाधान हेतु नारायण भट्ट ने ''प्रक्रियासर्वस्व'' में सम्बद्ध सूत्रों को सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर अवश्यकतानुसार प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों में विभक्ति संज्ञाविधायकसूत्र और विभक्ति विधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी रूपरचना क्रम से प्राप्त है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के 112 सूत्रों तथा 22 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से उल्लेख किया है।[1] इस खण्ड को ग्रन्थकार ने ''सुबर्थ'' संज्ञा दी है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को ''कारकप्रकरण'' से सम्बोधित किया है। इन्होंने इसे सूबर्थ कहा है जो विभक्त्यर्थ का ही प्रयायवाची है।

---

1 प्र0स0 सुबर्थ खण्ड।

ग्रन्थकार ने इस खण्ड में अनेक सूत्रों की व्याख्या पद्यात्मक रूप में की है तथा अनेक उदाहरण भी पद्यात्मक वर्णन द्वारा प्रस्तुत किये हैं। इस प्रकरण में दो तीन स्थानों पर मुग्धबोध व्याकरण का उल्लेख है तथा इसके उपरान्त सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण का वर्णन तो विभिन्न स्थानों पर उदाहरणों सहित प्रस्तुत है। प्रक्रियासर्वस्व की यह विशेषता है कि इस में पद्यात्मक वर्णन अधिक किया गया है।

प्रक्रियासर्ववस्व चतुर्थ भाग में इस खण्ड के उपरान्त ''सुब्विधि खण्ड'' दिया है। इस प्रकरण का नाम ग्रन्थाकार ने इसलिए सुब्विधि दिया है कि इस में पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग., नपुस्कलिङ्ग. आदि प्रतिपादिकों से सुबन्त पदों की जानकारी के लिए सु आदि प्रत्ययों का विधान किया गया है। अतः यह नामकरण सार्थक है।ग्रन्थकार ने समस्त प्रतिपदिकों को छः भागों में विभक्त किया है। सर्वप्रथम इन्होंने प्रतिपदिकों को अजन्त प्रातिपदिक और हलन्त प्रातिपदिक रूप में दो भागों में विभक्त किया है। संस्कृत में पुलिङ्ग. स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुस्कालिङ्ग. तीन लिङ्ग. होने के कारण स्वभाविक है कि प्रातिपदिक भी तीन लिङ्गो में विभक्त हैं। अतः नारायण भट्ट ने नियमानुसार अजन्त तथा हलन्त प्रतिपदिकों को पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुस्कलिङ्ग. तीन भागों में विभक्त किया है। इस तरह अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग., अजन्तनपुंस्कलिङ्ग., हलन्तपुलिङ्ग. , हलन्तस्त्रीलिङ्ग. तथा हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. आदि छः भाग बने हैं। इतना अन्तर है कि इन्होंने नपुस्कलिङ्ग. के लिए क्लीब पद से सम्बोधित किया है। नारायण भट्ट ने प्रत्येक भाग से सम्बन्धित प्रतिपदिकों को सुबन्त रूपरचनार्थ सम्बन्धित प्रकरण में दिया है तथा प्रत्येक उदाहरण की रूपरचना पूर्ण प्रक्रियानुसार प्रदर्शित की है। प्रक्रियाकौमुदी तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में भी ऐसा ही वर्णन है। फिर भी ग्रन्थकारों का अपना-अपना विशेष वर्णन होता है जो दूसरे ग्रन्थ से उस की पृथकता को प्रदर्शित करता है।

सुब्विधि खण्ड में सर्वप्रथम अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण आता है। इस में अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त आदि क्रम से प्रातिपदिकों को रूपरचनार्थ उद्धृत किया है। अकारान्त प्रातिपदिकों में नारायण भट्ट ने कृष्ण प्रातिपदिक को रूपरचनार्थ चुना है। प्रक्रियाकौमुदी तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में राम प्रातिपदिक की विभिन्न रूपरचनाओं का वर्णन किया गया है। उकारान्त में नारायण भट्ट ने विष्णु प्रातिपदिक का उल्लेख किया है। उदाहरणार्थ इन्होंने कुछ ही प्रातिपदिक भिन्न दिये हैं शेष प्रक्रियाकौमुदी से मिलते-जुलते हैं। ऐसा होना स्वभाविक भी है क्योंकि अनेक सूत्रों में अनेक प्रातिपदिकों का उल्लेख स्पष्ट दिया है जिस कारण उदाहरण वही होना स्वभाविक है। उनके स्थान पर परिवर्तन नहीं किया जा सकता। अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना जानकारी के लिए 64 पाणिनीय सूत्रों का अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[1] ये सूत्र सूत्रमूलकपद्धति में बिखरे हैं।

इस प्रकरण के उपरान्त ''सुब्विधि खण्ड'' में ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' है। इसमें ग्रन्थकार ने आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त आदि क्रम से विभिन्न अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रतिपदिकों को विभिन्न रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। इन उदाहरणों की रूपरचना के लिए ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 21 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] अनेक सूत्रों को

---

1 प्र०स० सुब्विधि खण्ड अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।

2 प्र०स० सुब्विधि खण्ड अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण।

मात्र सूत्र रूप से या सूत्रार्ध रूप से केवल रूपरचनार्थ सहायता के लिए पुन: उद्धृत किया गया है इनकी व्याख्या अन्यत्र है। अनेक प्रतिपदिकों को समान रूपरचना का निर्देश दिया गया है ताकि पाठक हर प्रातिपदिक की जानकारी स्वयमेव भी कर सकें।

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियासर्वस्व'' में ''क्लीबेऽदन्त'' भाग है। नारायण भट्ट ने ''नपुंस्कीलिङ्ग.'' के लिए ''क्लीब'' पद का प्रयोग किया है। इनके अतिरिक्त प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इसे नपुस्कलिङ्ग. पद से ही सम्बोधित किया है। इस प्रकरण में 12 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियासर्वस्व'' में "हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण" है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने ''अ इ उण्'' आदि सूत्रों में उक्त व्यञ्जनों के क्रम से हलन्त प्रातिपदिकों को रूपरचनार्थ उद्धृत किया है। इस प्रकरण की पूर्ति हेतु ग्रन्थकार ने 74 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] इस प्रकरण में भी उदाहरण अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा अधिक है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग.'' प्रकरण है। इस प्रकरण में उदाहरण जानकारी हेतु मात्र ''य: सौ''[3] तथा ''अपो भि''[4] 2 सूत्र व्याख्या सहित उद्धृत हैं। अनेक सूत्रों का वर्णन सूत्र या सूत्राध रूप में रूपरचना जानकारी हेतु किया गया है। ये सूत्र रूपरचना में मात्र सम्बद्ध कायार्थ दिये हैं इनकी पूर्ण जानकारी ग्रन्थ में अन्यत्र है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्त क्लीबा:'' नामक भाग है। इसमें हलन्त नपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों का वर्णन है। इस भाग में ''अ इ उण्'' आदि सूत्रों में उक्त व्यञ्जनों के क्रम से हलन्त प्रातिपदिकों को रूपरचनार्थ उद्धृत किया है। इस भाग में ''अहन्''[5] तथा ''वा नपुंस्कस्य''[6] मात्र 2 सूत्र व्याख्या सहित उद्धृत है। इनके उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व पद्धति वर्णन विधि परम्परा अनुसार अनेक सूत्र मात्र सूत्र रूप से या सूत्रार्ध रूप से पुन: उद्धृत किये हैं ताकि पाठक तत्क्षण सूत्र प्राप्त कर सकें। इस प्रकरण में भी अनेक उदाहरण दूसरे प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न हैं। इसी प्रकरण के साथ सुब्विधि खण्ड समाप्त हो जाता है।

इस खण्ड के उपरान्त ''प्रक्रियासर्वस्व'' में अव्यय प्रकरण दिया है। इस में अव्ययों की जानकारी प्रक्रियाक्रम पूर्वक दी गयी है। इस भाग में अनेक प्रकार की जानकारी पद्यात्मक वर्णन में प्राप्त है। इस प्रकरण में मात्र व्याख्यात्मक वर्णन है सूत्र रूप में सूत्रों का उल्लेख नहीं दिया गया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रक्रियासर्वस्व'' चतुर्थ भाग की समाप्ति ''द्विरुक्त प्रकरण'' से की है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के अष्टम् अध्याय से सूत्रों का चुनाव किया है। अष्टाध्यायी में अष्टम अध्याय प्रथम पाद के ''सर्वस्य द्वे''[7] सूत्र से लेकर ''पदस्य''[8]

---

1 प्र०स० कीवेऽदन्त।

2 प्र०स० हलन्त पुलिङ्ग. प्रकरण।

3 अन्टा० 7-2-110

4 अष्टा० 7-4-48

5 अष्टा० 8-2-67

6 अष्टा० 7-1-79

7 अष्टा० 8-1-1

8 अष्टा० 8-1-16

सूत्र तक सूत्र विभिन्न शब्दों से नित्यता, विप्सा, वर्जन, पाद पूर्ण तथा समीपता आदि अर्थ प्रकट करने के लिए द्वित्व विधान करते हैं। इस वर्णन में विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने इन सूत्रों में से 10 सूत्रों को चुनकर रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है।[1] शेष सूत्र अन्यत्र उद्धृत हैं। इन सूत्रों द्वारा द्वित्व विधान किया जाता है इसी कारण नारायण भट्ट ने इस प्रकरण को द्विरुक्त प्रकरण की संज्ञा दी है। इस प्रकरण के साथ ही प्रक्रियासर्वस्व चतुर्थभाग समाप्त हो जाता है।

प्रक्रियासर्वस्व पञ्चम भाग की शुरुआत ''आत्मनेपद भाग'' से है। इस प्रकरण में विभिन्न धातुओं को अनेक उपसर्गों के साथ प्रयुक्त होने पर या विभिन्न धातुओं से विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए धातुओं से आत्मनेपद और परस्मैपद व्यवस्था का वर्णन किया गया है। इस प्रकरण को नारायण भट्ट ने विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी से पूर्व दिया है। इन के उपरान्त सभी प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के उपरान्त प्रक्रिया प्रकरणों में दिया है। इस प्रकरण के ज्ञान से पाठकों को यह सुविधा होती है कि पाठक इस ज्ञान को प्राप्त करने के उपरान्त विभिन्न क्रियारूपों का वर्णन आसानी से कर सकते हैं। इस सुविधा हेतु ही ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को विभिन्न क्रियारूप जानकारी से पूर्व दिया है। आत्मनेपद भाग में ग्रन्थकार ने धातुओं से आत्मनेपद और परस्मैपद व्यवस्था की जानकारी हेतु पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''तिङन्त खण्ड'' है। इस खण्ड में ग्रन्थकार ने विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों और वार्तिकों को चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण में नारायण भट्ट ने भ्वादि गणीय सभी धातुओं के विभिन्न लकारों में रूपरचना का वर्णन किया है। इस खण्ड में भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की अपेक्षा उदाहरण अधिक हैं तथा पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख भी अधिक मात्रा में किया गया है।

इस खण्ड के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''लार्थविशेष खण्ड'' दिया है। लट्, लिट्, लुट् आदि 10 लकारों के क्या-क्या अर्थ हैं या किन-किन अर्थों में ये लकार होते हैं तथा धातु से विभिन्न उपपदों के योग में विशिष्ट लकारों का उल्लेख अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पाद में किया गया है। ये सूत्र वहां विखरे हैं। नारायण भट्ट ने इन सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी आवश्यकतानुसार स्थान दिया गया है। प्रकरण में पाणिनीयेत्तर वर्णन भी प्राप्त है।

इस खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''सनन्त खण्ड'' दिया है। भाषा में अनेक स्थानों पर इच्छा, प्रेरणा, चाहना आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए अनेक पदों की आवश्यकता होती है। पाणिनि ने इस समस्या के लिए इन अर्थों को प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं से विभिन्न प्रत्ययों का विधान किया है। अष्टाध्यायी में यह उल्लेख प्रक्रियाक्रम से नहीं है। काशिका से कुछ समय बाद पाठक यह वर्णन प्रक्रियाक्रम से चाह रहे थे। अत: नारायण भट्ट ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान प्रक्रियानुसारी वर्णन

---

1 प्र०स० द्विरुक्त प्रकरण।

किया है। नारायण भट्ट ने इच्छा, प्रेरणा आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए विभिन्न पदों की जानकारी हेतु, पाणिनीयव्याकरण से विभिन्न सूत्रों और वार्तिकों का चुनाव किया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने सन् प्रत्यय का वर्णन आदि में किया है। इस कारण इन्होंने इस खण्ड को सनन्त खण्ड कहा है।

प्रक्रियासर्वस्व में इस खण्ड के उपरान्त ''यङ् खण्ड'' है। इस खण्ड में ग्रन्थकार ने बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने वाले पदों की रूपरचना जानकारी दी है। इस प्रकरण में यङ् प्रत्यय का वर्णन होने के कारण इस प्रकरण को यङ् खण्ड की संज्ञा दी है।

इस खण्ड के उपरान्त ''यङ्लुक् खण्ड'' है। इस प्रकरण को नारायण भट्ट ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान सुविधार्थ यङ् प्रकरण से पृथक दिया है। यह प्रकरण यङ् प्रत्यय से सम्बन्धित ही है परन्तु इस में अन्तर इतना है कि इस प्रकरण में ''यङोऽचि च''[1] सूत्र से यङ् प्रत्यय का लोप हो जाता है। अत: ग्रन्थकार ने इसे सुविधार्थ समान रूपरचना जानकारी के लिए पृथक प्रकरण से प्रस्तुत किया है तथा खण्ड का नामकरण भी प्रकरण में वर्णित विषयानुसार यङ्लुक् खण्ड दिया है।

इस खण्ड के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''सुब्धातु खण्ड'' दिया है। व्याकरण में इच्छा, आचार आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए प्रातिपदिक शब्दों से अनेक प्रत्ययों का विधान किया गया है। अष्टाध्यायी में सम्बन्धित सूत्र तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं। इस प्रकरण के उदाहरणों में प्रत्यय करने के उपरान्त ''सनाद्यन्ता धातव:''[2] सूत्र से धातु संज्ञा होती है। धातु संज्ञा करने पर सम्बन्धित उदाहरण तिङन्त प्रक्रिया में रचित होते हैं। इस प्रकरण में नाम शब्दों की बाद में धातु संज्ञा होने के कारण सम्बन्धित उदाहरण सुप् भी है तथा धातु भी है। अत: नारायण भट्ट ने इस प्रकरण को सुब्धातु संज्ञा उचित ही दी है। क्योंकि इस खण्ड में सुप् और धातु सम्बन्धित उदाहरणों का वर्णन है। इस खण्ड में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए नारायण भट्ट ने अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। अनेक स्थानों पर पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख भी किया है।

इस खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में ''न्याय खण्ड'' है। इस में ग्रन्थकार ने रुचिकर वर्णन किया है। न्याय खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व में धातुखण्ड का वर्णन किया है। ग्रन्थकार ने इस खण्ड में ध ातुपाठ का वर्णन किया है। रामचन्द्र तथा भट्टोजिदीक्षित ने धातुपाठ का वर्णन भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के साथ दिया है। नारायण भट्ट ने इस वर्णन के लिए धातु खण्ड नामक पृथक प्रकरण दिया है।

प्रक्रियासर्वस्व में धातु खण्ड के उपरान्त ''उणादि खण्ड'' दिया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में उणादियों का वर्णन कृदन्त प्रकरण के साथ दिया हे। वैसे भी उणादि सूत्रों का सम्बन्ध कृदन्त प्रकरण से अधिक है क्योंकि उदाहरणों की रूपरचना समान होती है। अत: अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को कृदन्त प्रकरण के साथ दिया है। परन्तु नारायण भट्ट ने उणादि जानकारी कृदन्त खण्ड के साथ न देकर वैदिक

1 अष्टा0 2-4-74

2 अष्टा0 3-1-32

जानकारी से पूर्व दी है। यद्यपि नारायण भट्ट ने पाणिनीयेत्तर वर्णन पाणिनीय उल्लेख के साथ मिश्रित दिया है परन्तु इन्होंने पाणिनीयपरम्परा में अभिमत उणादि सूत्रों को कृदन्त प्रकरणों के साथ न देकर इसे लौकिक व्याकरण सम्बद्ध जानकारी के उपरान्त तथा वैदिक व्याकरण सम्बन्धित जानकारी से पूर्व स्थान दिया है।

इस खण्ड के उपरान्त प्रक्रियासर्वस्व के अन्त में विंशवा खण्ड ''छान्दस खण्ड'' है। पाणिनीय अष्टाध्यायी वैदिक पदों की जानकारी से परिपूर्ण है। अष्टाध्यायी में वैदिक पदों से सम्बन्धित वर्णन प्रसङ्ग. वश सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरा है। नारायण भट्ट ने इस वर्णन को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए रूपरचनाक्रम से दिया है। रूपरचना में सहायक वैदिकसूत्रों के साथ अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं। इस खण्ड के साथ ही प्रक्रियासर्वस्व सम्पूर्ण होता है। इस ग्रन्थ को नारायण भट्ट ने प्रक्रियापद्धति में शिरोमणि स्थान देने हेतु रचा था परन्तु तत्काल रचित वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अनेक विशेषताओं का सामना करने में असमर्थता के कारण यह ग्रन्थ व्याकरणपरम्परा में अध्ययन और अध्यापन रूप में प्रचलित नहीं हो सका फिर भी इस ग्रन्थ की अनेक विशेषताएँ हैं जो प्रक्रियाक्रम में अपना स्थान बनाये हुए है।

7. मध्यसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार वरदराज :–

आचार्य भट्टोजिदीक्षित के समकालीन आचार्य वरदराज ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के 25 – 30 वर्ष बाद व्याकरणपरम्परा में पाणिनीयव्याकरण पर मध्यसिद्धान्तकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा है। भट्टोजिदीक्षित इन के गुरु थे। अत: वरदराज और भट्टोजिदीक्षित के काल में लगभग 10 – 15 वर्ष का अन्तराल हो सकता है।

आचार्य वरदराज के संक्षिप्त परिचय में ये दाक्षिणात्य थे, इनके पिता का नाम दुर्गातनय था। भट्टोजिदीक्षित इन के गुरु थे। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में वरदराज ने स्वयं भट्टोजिदीक्षित को गुरु रूप में स्वीकार किया है।[1] वरदराज भट्टोजिदीक्षित के शिष्य होने से इन का सामकालिक होना सिद्ध करता है। आचार्य भट्टोजिदीक्षित का काल 1570 से 1650 विक्रम सम्वत् के मध्य स्वीकार किया गया है। अत: वरदराज इन के 10 – 15 वर्ष बाद के हो सकते हैं।

वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के प्रथम प्रवेशार्थी सुकुमारमति बालकों के सुखबोध के लिए वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अत्यंन्त सरल स्वम् संक्षिप्त संस्करण लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी ज्ञान प्राप्त विद्यार्थियों की ज्ञानवृद्धि के लिए मध्यसिद्धान्तकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचे हैं। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पाणिनीयव्याकरण में सम्पूर्ण एवम् स्मर्थ प्रक्रिग्रन्थ हैं। लघुसिद्धान्तकौमुदी अति संक्षिप्त ग्रन्थ हैं। परन्तु मध्यसिद्धान्तकौमुदी इन दोनों का मध्यवर्ती वर्णन करती है इसी प्रसिद्धता के कारण ग्रन्थकार ने इसे मध्यसिद्धान्तकौमुदी की संज्ञा दी है।

---

1 नत्वा वरदराज: श्रीगुरून् भट्टोजिदीक्षितान् ।
करोति पाणिनीयानां मध्यसिद्धान्तकौमुदीम् ।। मङ्गलाचारण म0 कि0 कौ0।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा मध्यसिद्धान्तकौमुदी में उदाहरण संख्या, सूत्र संख्या तथा प्रकरण संख्या में काफी अन्तर है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पाणिनीय सभी सूत्रों का वर्णन किया गया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में लगभग 4000 पाणिनीय सूत्रों में से 2315 सूत्रों का वर्णन है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा संक्षेप तथा सरल है। इस में प्रकरणों का विभाजन भी भिन्न है। भट्टोजिदीक्षित ने सुबन्त और तिङन्त पदों का विभाजन करके पहले सुबन्त पदों से सम्बन्धित प्रकरणों का उल्लेख किया है तदनन्तर तिङन्त पदों की जानकारी के उपरान्त कृदन्त पदों का उल्लेख है। वरदराज ने प्रकरणों को भट्टोजिदीक्षित क्रमानुसार नहीं दिया है। इन्होंने संज्ञा तथा परिभाषा सम्बन्धित जानकारी मात्र संज्ञा प्रकरण में ही दी है तदुपरान्त सन्धि, षड्लिङ्ग. तथा अव्ययप्रकरण दिये हैं। वरदराज ने इन प्रकरणों के उपरान्त तिङन्त पदों की जानकारी के लिए ''तिङन्त प्रकरण'' दिया है। शेष सुबन्त पदों से सम्बन्धि त समास, तद्धित, कारक, स्त्रीप्रत्यय तथा कृदन्तों की जानकारी तिङन्त पदों के बाद दी है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में तिङन्त पदों का उल्लेख सुबन्त पदों के बाद है।

इस प्रकरण विभाजन से ऐसा प्रतीत होता है कि वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त कुछ ऐसा समय आ गया था कि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से पाणिनीयकव्याकरण से पाठकों की रूचि उठ रही थी। क्योंकि इन व्याकरणों में सूत्रयोजना, प्रकरणविभाजन और सूत्ररचना सरल है। ये व्याकरण पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा लघुकाय और सरल हैं। इतना जरूर है कि भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी रचकर पाणिनीयव्याकरण को प्रभावशाली तो बना दिया परन्तु इस का प्रभाव केवल पाणिनीपरम्परा से व्याकरण पढ़ने और पढ़ाने वालों पर ही पड़ा। जैसे कि पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों के उद्भव से व्याकरणपरम्परा में यह प्रभाव पड़ा था, पाठक पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से पाणिनीयव्याकरण की तरफ आकर्षित हुए थे ठीक इसी तरह वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के प्रभाव से वे पाणिनीयव्याकरण की तरफ और आकर्षित हुए। परन्तु व्याकरण प्रवेशार्थी पाणिनीयव्याकरण से मुंह मोड़ने लगे क्योंकि वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी विस्तृत है तथा इस में प्रकरण विभजन ऐसा नहीं है जैसा कि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के उद्भव से ही पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि पाठक पाणिनीयव्याकरण से मुंह मोड़ने लगे। तात्कालिक पाठक व्याकरण को अतिसरल उपाय द्वारा चाहने लगे थे। भाषापरिवर्तन के कारण भाषा में भी सरलता आ गयी थी। पाठक साधारण वाक्य योजना के लिए सर्वप्रथम सन्धि, षड्लिङ्ग. , अव्यय और तिङन्त पदों की जानकारी चाह रहे थे और इन में भी वे अत्यावश्यक पदों के इच्छुक थे। अतः वरदराज ने भी समयानुकूल भाषा में प्रयुक्त पदों का विभाजन करके सर्वप्रथम सन्धि, षड्लिङ्ग., अव्यय और तिङन्त प्रकरणों का उल्लेख मध्यसिद्धान्तकौमुदी में किया है तदुपरान्त कृदन्त, समास, तद्धित, स्त्रीप्रत्यय और वैदिकप्रक्रिया प्रकरण दिये हैं। इन प्रकरणों में केवल समयानुसार अत्यावश्यक उदाहरणों का वर्णन किया है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी की शुरुआत संज्ञाप्रकरण से की है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने संज्ञा तथा परिभाषा द्विविध सूत्रों का वर्णन किया है। वरदराज ने परिभाषा सूत्रों की जानकारी के लिए पृथक

प्रकरण नहीं दिया है। इस प्रकरण में सूत्रों की संख्या 14 है। वर्णसमाम्नाय व्याख्या में वरदराज ने एक कारिका द्वारा यह प्रदर्शित किया है कि हकार को प्रत्याहार सूत्रों में इसलिए दो बार ग्रहण किया है कि अट् और शल् दोनों प्रत्याहारों में हकार आ सके।[1] इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने हकार के दो बार ग्रहण करने का प्रयोजन नहीं दिया है।

संज्ञाप्रकरण के उपरान्त वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में सन्धिप्रकरण की शुरुआत की है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में परिभाषा प्रकरण नहीं दिया है। सन्धियों में सर्वप्रथम अच् सन्धिप्रकरण है। इस प्रकरण में वरदराज ने विभिन्न उपयोगी उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों से आवश्यकतानुसार 40 सूत्रों और 12 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है।[2] इस प्रकरण में वर्णित सभी सूत्र और वार्तिक सूत्रमूलकपद्धति में बिखरे हैं। मध्यसिद्धान्तकौमुदी की यह विशेषता है कि इस में रूपरचना के लिए सूत्रों का वर्णन इस तरह किया है कि रूपरचना आसानी से समझ आ जाती है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के समान इस ग्रन्थ में सूत्रों को रूपरचना के लिए ग्रन्थ संख्या क्रमानुसार या अन्य क्रमानुसार पुनः उद्धृत नहीं किया है। परन्तु इस ग्रन्थ में रूपरचना के लिए विभिन्न सूत्रों का वर्णन सूत्रकार्य सहित रूपरचना के समय सव्याख्या प्रस्तुत है अर्थात् इस ग्रन्थ में मूल सूत्र को छोड़कर साधारण प्रक्रिया द्वारा रूपरचना के लिए सूत्रकार्य निर्देश दिया गया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रकृतिभाव प्रकरण'' है। वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान अच् सन्धि में से कुछ ऐसे प्रकरण को पृथक किया है जिस में पूर्व पद के अन्त और उत्तर पद के आदि के अचों का ही सम्बन्ध है परन्तु इन अचों में विभिन्न सूत्रों द्वारा प्रकृतिभाव हो जाता है। इस प्रकरण में वरदराज ने केवल 22 उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 15 सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] उदाहरण, सूत्र तथा वार्तिक तीनों ही वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा इस प्रक्रियाग्रन्थ में कम हैं क्योंकि मध्यसिद्धान्तकौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा संक्षिप्त है।

मध्यसिद्धान्तकौमुदी में प्रकृतिभाव के उपरान्त ''हल्सन्धिप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 81 उदाहरणों की रूपरचना का उल्लेख किया है जो तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त थे। यही कारण है कि उपयोगी उदाहरणों की रूपरचना के लिए केवल हल्सन्धि से सम्बद्ध उपयोगी सूत्रों को ही अष्टाध्यायी से चुनकर हल्सन्धि प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 46 सूत्र और 6 वार्तिक हैं।[4] वरदराज ने समयानुसार इतने कम सूत्रों द्वारा हल्सन्धि से सम्बन्धित उपयोगी जानकारी करवाने का प्रयत्न किया है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी हल्सन्धि प्रकरण से मध्यसिद्धान्तकौमुदी हल्सन्धि प्रकरण में

---

1 हकारो द्विरुपात्तोऽयमटि शल्यपि वाञ्छता।
अर्हेणाधुक्षदित्यत्र द्वयं सिद्धं भविष्यति।। कारिका म0 सि0 कौ0 संज्ञा प्रकरण पृष्ठ - 3

2 म0सि0कौ0 अच्सन्धिप्रकरण।

3 म0सि0कौ0 प्रकृतिभाव प्रकरण।

4 म0सि0कौ0 हल्सन्धिप्रकरण।

सूत्रों की संख्या अधिक है। इस का यह कारण है कि भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण में ''झलाम्जशोऽन्ते''[1] ''आदे:परस्य''[2] आदि सूत्रों को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी सूत्र संख्या क्रम से उद्धृत किये हैं। इनकी व्याख्या सहित वर्णन ग्रन्थ में अन्यत्र है परन्तु वरदराज ने इन सूत्रों को आवश्यकतानुसार इसी प्रकरण में व्याख्या सहित वर्णित किया है। वैयाकरणसिद्धानतकौमुदी ग्रन्थ पद्धति वर्णनक्रम कुछ और है इस में पूर्णप्रक्रिया का अनुकरण किया है। एक सूत्र को आवश्यकतानुसार विभिन्न उदाहरणों में उद्धृत किया है। परन्तु मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ऐसा नहीं है वरदराज को जिस भी सूत्र की आवश्यकता पड़ी है उस सूत्र को प्रथम बार व्याख्या सहित दिया है। दूसरी जगह आवश्यकता पड़ने पर उस सूत्र के कार्य का वर्णन किया है ताकि सूत्र कार्य से सूत्र स्मरण किया जा सके।[3]

वरदराज के हल्सन्धि प्रकरण के उपरान्त विसर्गसन्धि प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने केवल 7 उदाहरणों से विसर्गसन्धि ज्ञान करवाने का प्रयत्न किया है। इस प्रकरण में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा उदाहरण और सूत्रसंख्या बहुत कम है। इस में यह कारण रहा है कि वरदराज ने केवल उस समय उपयुक्त उदाहरणों का ही उल्लेख किया है। प्राचीन उदाहरणों का वर्णन करना इन्होंने अच्छा नहीं समझा है। अत: आवश्यक उदाहरणों की रूपरचना के लिए केवल उपयोगी सूत्रों का वर्णन ही इस प्रक्रिया ग्रन्थ में प्राप्त होता है। यदि वरदराज ऐसा नहीं करते तो पाठक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में अधिक परिश्रम को जानकर पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का अध्ययन प्रारम्भ कर लेते । वरदराज ने समयानुकूल मध्यसिद्धान्तकौमुदी की रचना करके पाणिनीयव्याकरण का उद्धार किया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी विसर्ग सन्धि प्रकरण में वरदराज ने पाणिनीय 3 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रयोग किया है।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त ''स्वादिसन्धिप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने सुप्रत्यय से सम्बद्ध या सु प्रत्यमान्त शब्दों का अन्य सन्धि योग्य शब्दों की रूपरचना के लिए वरदराज ने सूत्रकूलक ग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से 14 सूत्रों और 2 वार्तिकों को चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है।[5]

सन्धिप्रकरण के उपरान्त वरदराज ने सुबन्त पदों की रूपरचना के लिए विभिन्न सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। संस्कृतभाषा में प्रयोगार्थ सुबन्त तथा तिङन्त पदों की आवश्यकता होती है। क्योंकि "अपदम् न पुयुञ्जीत्'' नियमानुसार जो पद नहीं हैं उन्हें संस्कृत में प्रयोग नहीं किया जा सकता। अत: वरदराज ने भाषा में प्रयोगार्थ सुबन्त और तिङन्त पदों के ज्ञान के लिए व्याकरण में उल्लेख किया है। इन्होंने सर्वप्रथम अनेक प्रातिपदिकों से सुबन्त पदों की रूपरचनां हेतु वर्णन किया है तदुपरान्त तिङन्तपदों की जानकारी हेतु उल्लेख किया है।

---

1 अष्टा0 8-2-39
2 अष्टा0 1-1-54
3 म0सि0कौ0
4 म0सि0कौ0 विसर्ग सन्धिप्रकरण।
5 म0सि0कौ0 स्वादिसन्धिप्रकरण।

वरदराज ने प्रातिपदिकों को छः भागों में विभक्त किया है तथा सूत्रों का प्रकरणानुसार वर्णन किया है। संस्कृतभाषा में तीन लिङ्ग. स्वीकार किये गये हैं। अतः इस भाषा में प्रयुक्त शब्द भी तीन लिङ्गों में विभक्त हैं। वरदराज ने भी तीनों लिङ्गों से सम्बन्धित प्रातिपदिकों को विभक्त करके इन का पृथक-पृथक वर्णन किया है और पुलिलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों को अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों में वर्गीकृत करके अजन्तपुलिङ्ग., अजन्तस्त्रीलिङ्ग. आदि प्रकरण दिये हैं। अजन्त तथा हलन्त सुबन्त पदों की जानकारी के लिए वरदराज ने सर्वप्रथम अजन्त प्रातिपदिकों की जानकारी का वर्णन किया है, तदुपरान्त हलन्त प्रातिपदिकों का वर्णन है। विभिन्न प्रतिपादिकों से सम्बद्ध इस सम्पूर्ण प्रकरण को षड्लिङ्ग. प्रकरण कहा गया है।

षड्लिङ्ग.प्रकरण में वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित का अनुकरण किया है। इन्होंने भी ''अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण'' से षड्लिङ्ग. प्रकरण की शुरुआत की है। उदाहरण भी रूपरचना के लिए वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से उद्धृत किये हैं। उदाहरण देने का क्रम भी आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त आदि ही है। इतना जरुर है कि वरदराज ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में उक्त सभी उदाहरणों की मीमांसा नहीं की है। इनमें से केवल उपयोगी और तात्कालिक उदाहरणों का चयन किया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 49 प्रतिपादिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए सूत्रमूलकपद्धति से 102 सूत्रों तथा 9 वार्तिकों का चयन करके प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[1] अनेक प्रातिपदिकों को इन की रूपरचना के समान रूपरचना का निर्देश दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त "अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण" दिया है। इस प्रकरण में 31 प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 18 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2] रूपरचना जानकारी बड़े साधारण वर्णन से प्रस्तुत की गयी है। इस प्रकरण में अनेक प्रातिपदिकों को समान रूपरचना के निर्देश दिये गये हैं। तदुपरान्त ''अजन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 19 नपुंस्कलिङ्ग. प्रातीपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 18 सूत्रों और 3 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[3] विभिन्न प्रातिपादिकों की रूपरचना का निर्देश भी इन की रूपरचनानुसार दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त हलन्तप्रातिपदिकों को पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुंस्कलिङ्ग. तीन भागों में विभक्त करके उनकी विभिन्न रूपरचनाओं के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। हलन्त प्रातिपदिकों के प्रकरणों में ''हलन्तपुलिङ्ग.प्रकरण'' सर्वप्रथम दिया है। इस प्रकरण में 68 हलन्त प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचनाओं के लिए वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के 115 सूत्रों और 8 वार्तिकों को रूपरचना क्रम से दिया है।[4] ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि अनुसार ग्रन्थ में समान

1 म0सि0कौ0 अजन्तपुलिङ्ग.प्रकरण।
2 म0सि0कौ0 अजन्तस्त्रीलिङ्ग.प्रकरण।
3 म0सि0कौ0 अजन्तनपुंस्कलिङ्ग.प्रकरण।
4 म0सि0कौ0 हलन्तपुनपुस्कलिङ्ग.प्रकरण।

कार्य सम्बन्धित रूपरचना का निर्देश दिये गये हैं। इस प्रकरण में प्रातिपदिकों को ''अ इ उण्'' आदि प्रत्याहार सूत्रों में उक्त व्यञ्जनों के क्रम से हलन्त प्रातिपदिकों को उद्धृत किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग.प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 17 प्रातिपदिकों की रूपरचना के लिए स्पष्ट निर्देश दिया गया है तथा अनेक प्रातिपदिकों को इन के समान रूपरचना का निर्देश दिया है। इस प्रकरण में मात्र 4 सूत्र दिये हैं।[1] केवल 4 सूत्रों द्वारा इतने प्रातिपदिकों की रूपरचना असम्भव है परन्तु वरदराज का अपना वर्णन क्रम है ये अनेक सूत्रों के कार्यों का रूपरचना क्रम से व्याख्यात्मक वर्णन करते हैं जिस कारण रूपरचना स्पष्ट हो जाती है। ठीक इसी तरह अनेक सूत्रों का वर्णन वरदराज ने इस प्रकरण में सूत्रकार्य से स्पष्ट किया है क्योंकि ये सम्बद्ध सूत्र इस प्रकरण से पूर्व आ गये हैं।

षड्लिङ्ग.प्रकरण में अन्तिम प्रकरण ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग.प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 27 नपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के 4 सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2] ग्रन्थकार का अपना पद्धति वर्णन क्रम भी होता है जिस के कारण वह कम वर्णन द्वारा अधिक परिणाम का सांकेतिक वर्णन कर देता है। वरदराज ने भी अनेक उदाहरणों का कम सूत्रों द्वारा वर्णन किया है। इस वर्णन से अनेक सूत्रों की जानकारी स्वयं हो जाती है। इस प्रकरण में 27 प्रातिपदिकों के उपरान्त अनेक प्रातिपदिकों को इन के समान रूपरचना का निर्देश दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''अव्ययप्रकरण'' दिया है। इस में अव्ययों का क्रमपूर्वक वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में 6 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[3] इस प्रकरण तक ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ का पूर्वार्ध भाग माना है। इस प्रकरण से आगे उत्तरार्धभाग प्रारम्भ होता है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में सुबन्त पदों से सम्बन्धित अन्य कृदन्त, समास, तद्धित आदि प्रकरणों को छोड़कर तिङन्त पदों की जानकारी के लिए षड्लिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त ''तिङन्त प्रकरण'' की शुरुआत की है। इस प्रकार प्रकरण विभाजन से ऐसा प्रतीत होता है कि तत्काल पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का ऐसा प्रभाव पड़ गया था कि पाठक साधारण वाक्य योजना के लिए ही व्याकरण अध्ययन करने लगे थे। इसलिए ही वरदराज ने षड्लिङ्गों के उपरान्त क्रियारूपों की जानकारी करवायी है ताकि पाणिनीयव्याकरण में भी यह परम्परा प्रचलित की जा सके जिस कारण पाठकों का ध्यान पाणिनीयव्याकरण की तरफ आकर्षित हो जाये। समयानुसार उस समय संस्कृतभाषा बोल चाल की भाषा से नीचे उतर कर केवल संस्कारादि कार्यों में प्रयोगार्थ कुछ लोगों द्वारा भाषा सिखने के प्रयास तक नीचे आ गयी थी। क्योंकि उस समय संस्कृत से अनेक प्राकृत तथा आधुनिक भाषायें समाज में आ गयी थीं। अतः वरदराज ने भी समयानुसार साधारण वाक्य योजना के लिए सर्वप्रथम षड्लिङ्ग. तथा क्रियारूपों का ज्ञान करवाने के उपरान्त शेष सुबन्त और तिङन्त पदों की जानकारी करवायी है। समयानुसार यह ग्रन्थ पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के

1 म0सि0कौ0 हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण।
2 म0सि0कौ0 हलन्तनपुस्कलिङ्ग. प्रकरण।
3 म0सि0कौ0 अव्यम प्रकरण।

समान द्वयर्थकरी प्रसिद्ध हुआ क्योंकि इस के अध्ययन से एक साथ साधारण वाक्यों की योजना भी शुरू की जा सकी तथा अधिक जानकारी के लिए दूसरे प्रकरणों का अध्ययन क्रम भी जारी रखा जा सका।

तिङन्त पदों के प्रकरण में सर्वप्रथम वरदराज ने क्रियारूपों के ज्ञान के लिए भ्वादि, अदादि आदि गणीय धातुओं का उल्लेख सर्वप्रथम किया है। तदुपरान्त णिजन्त, सन्नन्त आदि प्रक्रियाओं का वर्णन है।

क्रियारूपों की जानकारी के लिए इन्होंने भी भट्टोजिदीक्षित का अनुकरण किया है। वरदराज ने भी भ्वादि, अदादि आदि पाणिनीय धातुपाठ के अनुसार प्रत्येक गण की धातुओं का वर्णन करने के उपरान्त दूसरे गण की धातुओं का वर्णन किया है।

तिङन्त प्रकरण में सर्वप्रथम ''भ्वादि प्रकरण'' दिया है। वरदराज ने इस प्रकरण में भ्वादिगण में पठित 1010 धातुओं में से 277 धातुओं की रूपरचना का उल्लेख किया है। इन्होंने भ्वादि गणीय धातुओं का परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी धातुओं में वर्गीकृत करके इनमें से केवल उपयोगी धातुओं का चुनाव किया है तदुपरान्त सर्वप्रथम परस्मैपदी फिर आत्मनेपदी और बाद में उभयपदी धातुओं की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से सूत्रों का चुनाव किया है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में तिङन्त पदों की जानकारी के लिए ''भ्वादि प्रकरण'' से शुरुआत की है। भ्वादि प्रकरण में इन्होंने सर्वप्रथम 147 परस्मैपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 269 सूत्रों और 7 वार्तिकों को रूपरचनाक्रम दिया है। ये सूत्र और वार्तिक सूत्रमूलकपद्धति में विखरे हैं लेकिन इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से प्राप्त है। तदुपरान्त आत्मनेपदी ''एध् वृद्धौ'' आदि 100 धातुओं की विभिन्न लकारों में रूपरचना के लिए 42 सूत्रों और 6 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इसके बाद उभयपदी धातुओं का वर्णन है। इस प्रकरण में 30 उभयपदी धातुओं का विभिन्न लकारों में परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों पदों की विभिन्न रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 16 सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त ''अदादि प्रकरण'' है। वरदराज ने अदादिगण की 72 धातुओं में से 57 धातुओं की विभिन्न रूपरचनाओं का वर्णन किया है। सर्वप्रथम 40 परस्मैपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 52 सूत्रों और 8 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। तदुपरान्त आत्मनेपदी धातुओं की रूपरचना के लिए 10 सूत्र प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इस प्रकरण में उभयपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए 12 सूत्र और 1 वार्तिक प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[2] ग्रन्थ पद्धति वर्णन के अनुसार पूर्ण प्रक्रिया जानकारी के लिए अनेक सूत्रों का वर्णन सूत्र कार्य से ही प्रदर्शित कर दिया है। इस वर्णन में सूत्रकार्य पढ़कर ही सूत्र स्मरण आ जाता है।

---

1 म0सि0कौ0 भ्वादि गण।

2 म0सि0कौ0 अदादिगण।

इस प्रकरण के बाद जुहोत्यादि गणीय 15 धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए 20 सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर जहुात्यादिगण प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने इस गण की सभी 24 धातुओं की रूपरचना का वर्णन किया है परन्तु मध्यसिद्धान्तकौमुदी में मात्र 15 धातुओं का वर्णन है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त दिवादिगण है। इस में 81 धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 24 सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] इस प्रकरण में सर्वप्रथम 60 परस्मैपदी धातुओं का उल्लेख है, तदुपरान्त 16 आत्मनेपदी धातुओं का तथा अन्त में 5 उभयपदी धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन है। पाणिनीय धातुपाठ में दिवादिगणीय 140 धातुएँ हैं परन्तु वरदराज ने अपने प्रकरण को पूर्ण करने के लिए केवल 81 धातुओं का चुनाव किया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''स्वादिगण'' नामक प्रकरण दिया है। पाणिनीय धातुपाठ स्वादिगण में 34 धातुएँ हैं। वरदराज ने स्वादिगण को पूर्ण करने के लिए 34 धातुओं में से 17 धातुओं का चुनाव किया है।[4] इन धातुओं के विभिन्न लकारों में विभिन्न रूपरचनार्थ सूत्रमूलक ग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 14 सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[5] इस प्रकरण में उभयपदी धातुओं का वर्णन सर्वप्रथम है क्योंकि इस गण में पठित ''षुञ् अभिषवे'' आदि 9 धातुऐं उभयपदी है। अत: वरदराज ने सर्वप्रथम इन की रूपरचना का वर्णन किया है तदुपरान्त परस्मैपदी और आत्मनेपदी धातुओं का वर्णन है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''तुदादिगण'' नामक प्रकरण है। इस में वरदराज ने तुदादिगण में पठित 157 धातुओं में से 46 धातुओं का रूपरचना हेतु चुनाव किया है।[6] तुद् धातु उभयपदी है। अत: वरदराज ने सर्वप्रथम उभयपदी धातुओं की रूपरचना का वर्णन है तदुपरान्त परस्मैपदी और आत्मनेपदी धातुओं के लिए सूत्रों को रूपरचना क्रम से दिया है। इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के 11 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[7]

रुधादिगण में पठित 25 धातुओं में से वरदराज ने रूपरचना के लिए 21 धातुओं का चुनाव किया है।[8] "रुधिर् आवरणे'' धातु उभयपदी है अत: वरदराज ने उभयपदी धातुओं की रूपरचना से प्रकरण की शुरुआत की है। तदुपरान्त परस्मैपदी और आत्मनेपदी धातुओं से सम्बन्धित जानकारी है। इस प्रकरण की पूर्ति हेतु ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के 5 सूत्रों का प्रयोग किया है।[9]

इस प्रकरण के उपरान्त ''तनादिगण'' नामक प्रकरण है। पाणिनीय धातुपाठ के तनादिगण में 10 धातुएँ हैं जिनमें 8 उभयपदी हैं तथा 2 आत्मनेपदी है।[10] इस गण में परस्मैपदी धातुओं का अभाव है। ग्रन्थकार ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी तनादिगण में 10 में से 8 धातुओं की विभिन्न रूपरचनार्थ 9 पाणिनीय

---

1 म0सि0कौ0 जुहात्यादि गण।
2 म0 सि0 कौ0 दिवादिगण।
3 म0 सि0 कौ0 दिवादिगण।
4 म0 सि0 कौ0 स्वादिगण।
5 म0 सि0 कौ0 स्वादिगण।
6 म0 सि0 कौ0 तुदादिगण।
7 म0 सि0 कौ0 तुदादिगण।
8 म0 सि0 कौ0 रूधादिगण।
9 म0 सि0 कौ0 रूधादिगण।
10 म0 सि0 कौ0 तनादिगण।

सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] इस प्रकरण में सर्वप्रथम उभयपदी धातुओं के क्रिया रूपों की जानकारी है तदुपरान्त ''वनु याचने'', '' मनु अवबोधने'' दोनों आत्मनेपदी धातुओं का उल्लेख है।

इस जानकारी के उपरान्त "क्र्यादिगण" प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में पाणिनीय 71 धातुओं में से ग्रन्थकार ने 29 धातुओं का प्रकरण को पूर्ण करने के लिए चुनाव किया है तथा सर्वप्रथम उभयपदी तदुपरान्त परस्मैपदी और बाद में आत्मनेपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचनार्थ 7 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''चुरादिगण'' नामक प्रकरण आता है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 410 पाणिनीय धातुओं में से केवल 93 धातुओं का चुनाव किया है।[3] तदुपरान्त सर्वप्रथम उभयपदी फिर बाद में परस्मैपदी और प्रकरण के अन्त में आत्मनेपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचनार्थ के पाणिनीयव्याकरण से चुनकर 9 सूत्रों और 1 वार्तिक का इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[4]

भाषा में अनेक स्थानों पर प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना, चाहना आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए विभिन्न पदों की आवश्यकता होती है। इस समस्या का समाधान करना व्याकरण का कार्य है। पाणिनि ने इस समस्या समाधान हेतु प्रेरणा, इच्छा आदि विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए विभिन्न धातुओं तथा प्रतिपादिकों से विभिन्न प्रत्ययों का विधान किया है। इन प्रत्ययो के योग से विभिन्न पदों की रूपरचना होने पर वे पद प्रेरणा आदि अर्थों को प्रकट करते हैं। पाणिनि ने अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में इन प्रत्ययों का उल्लेख किया है। परन्तु यह उल्लेख प्रक्रियाक्रम से नहीं है। पाठक समयानुसार प्रक्रियाक्रम से वर्णन चाह रहे थे। यद्यपि मध्यसिद्धान्त कौमुदी से पूर्व विभिन्न प्रक्रियाग्रन्थ प्राप्त थे परन्तु वे या तो प्रक्रिया की पूर्ण जानकारी नहीं दे पा रहे थे या वे अति विस्तृत थे। अतः वरदराज ने साधारण प्रक्रिया में संक्षिप्त प्रक्रियाग्रन्थ मध्यसिद्धान्तकौमुदी रचकर पूर्वग्रन्थों में प्राप्त समस्याओं का समाधान किया।

वरदराज ने तिङन्त पदों की जानकारी में क्रियापदों से सम्बन्धित भ्वादि, अदादि आदि प्रकरणों के उपरान्त प्रेरणा, इच्छा आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय से सूत्रों को चुनकर यथा स्थान दिया गया है। इन प्रकरणों में ''णिचप्रक्रिया'' सर्वप्रथम है। इस प्रकरण में अनेक धातुओं से विभिन्न लकारों में प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए णिच् प्रत्यय करने का विधान है तथा प्रत्यय आने के बाद पूर्णप्रक्रिया हेतु अन्य जानकारी भी इसी प्रकरण में दी गयी है। इस विवरण में सभी धातुओं से णिच् प्रत्यय करने पर पूरी रूपरचना का साङ्केतिक वर्णन है। इस प्रकरण में 25 पाणिनीय सूत्र तथा 4 वार्तिक प्रक्रियाक्रम में दिये हैं। इस में एक परिभाषा भी है।[5]

---

1 म0 सि0 कौ0 तनादिगण।

2 म0 सि0 कौ0 क्रयादि गण।

3 म0 सि0 कौ0 चुरादि गण।

4 म0 सि0 कौ0 चुरादि गण।

5 म0 सि0 कौ0 णिच्प्रक्रियाप्रकरण।

इस प्रकरण के उपरान्त ''सन्नन्तप्रक्रियाप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय करने वाला सूत्र ''धातो: कर्मण: समानकर्तृकादिच्छायाम् वा''[1] सूत्र प्रकरण के शुरू में दिया है तथा पूरे प्रकरण में विभिन्न धातुओं से सन् प्रत्यय का उल्लेख है। यही कारण है कि ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''सन्नन्तप्रक्रिया'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 25 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा इस प्रकरण में 3 वार्तिक है।[2] इस प्रकरण में अनेक धातुओं से सन्नन्त प्रक्रिया का उल्लेख किया है तथा सभी धातुओं से सन्नन्त प्रक्रिया हेतु साङ्केतिक वर्णन किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त यङन्त प्रकरण है। इस प्रकरण में बार-बार या अधिक अर्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए यङ् प्रत्यय का विधान किया है तथा रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का वर्णन भी है। यङ् प्रत्यय से सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में हैं। इस प्रकरण में वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 22 सूत्रों और 2 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''यङ्लुगन्त प्रक्रिया'' प्रकरण प्रारम्भ होता है। इस प्रकरण में ''ध ातोरेकाचो हलादे: क्रियासमविहारे यङ्''[4] सूत्र से बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने के लिए यङ् प्रत्यय होता है परन्तु ''यङोऽचि च''[5] सूत्र से उस यङ् प्रत्यय का लोप हो जाता है। अत: ग्रन्थकार ने इस प्रकरण का नाम ''यङ्लुगन्तप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान इस प्रकरण को ''यङन्तप्रक्रिया'' प्रकरण से पृथक करके अलग प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचनाओं के लिए पाणिनीयव्याकरण के 4 सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''नामधातु प्रक्रिया'' नामक प्रकरण दिया है इच्छा, आचार आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए विभिन्न प्रातिपदिक शब्दों से व्याकरण में अनेक प्रत्ययों का विधान किया गया है। ये सूत्र अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं। वरदराज ने इन्हें उपयोगी उदाहरणों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार चुनकर नामधातु प्रकरण में दिया है। रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सूत्रों का वर्णन भी रूपरचना क्रम से दिया गया है। विभिन्न प्रतिदिकों से इच्छा आदि अर्थो में क्यच् प्रत्यय करने के उपरान्त ''सनाद्यन्ता धातव:''[6] सूत्र से धातु संज्ञा करने पर तिङन्त पद सिद्ध होते हैं। नाम शब्दों की बाद में धातुसंज्ञा होने के कारण इस प्रकरण की संज्ञा ''नामधातुप्रक्रिया'' सार्थक दी है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से 19 सूत्रों और 20 वार्तिकों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[7]

---

1 अष्टा0 3-1-7
2 म0 सि0 कौ0 सन्नन्तप्रक्रिया प्रकरण।
3 म0 सि0 कौ0 यङ्प्रक्रिया।
4 अष्टा0 3-1-22
5 अष्टा0 2-4-74
6 अष्टा0 3-1-32
7 म0 सि0 कौ0 नामधातुप्रक्रिया।

इस प्रकरण के उपरान्त ''कण्डवादि'' नामक प्रकरण दिया है। व्याकरण में ''कण्डञ्'' आदि 49 धातुएँ हैं। इन से स्वार्थ में ''कण्ड्वादिभ्यो यक्''[1] सूत्र से यक् प्रत्यय का विधान किया गया है। वरदराज ने इस प्रकरण में ''कण्ड्ञ्'' धातु के उदाहरण देकर सार्वधातुओं की रूपरचना का निर्देश दिया है। इस प्रकरण में मात्र 1 सूत्र है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''आत्मनेपदप्रक्रिया'' प्रकरण आता है। वैसे तो ध ातुपाठ में ही आत्मनेपद और परस्मैपद व्यवस्था से ही धातुओं का वर्णन किया गया है। परन्तु अनेक स्थानों पर विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए या अनेक उपसर्गों के योग में धातुओं से आत्मनेपद या परस्मैपद का वर्णन भी व्याकरण में प्राप्त होता है। अष्टाध्यायी में इस तरह के सूत्र प्रथम अध्याय तृतीय पाद में दिये हैं। वरदराज ने इन सूत्रों का उदाहरणों की जानकारी के लिए आत्मनेपदविधायक तथा परस्मैपदविधायक दो भागों में वर्गीकरण करके पहले आत्मनेपद सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना के लिए आत्मनेपद विध ायक सूत्रों को रूपरचना क्रम से दिया है। तदुपरान्त परस्मैपद सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी के लिए परस्मैपदविधायक सूत्रों को रूपरचना क्रम से दिया है। आत्मनेपद प्रक्रिया प्रकरण में ग्रन्थकार ने 40 पाणिनीय सूत्रों और 14 वार्तिकों का प्रयोग किया है।[3]

आत्मनेपदप्रक्रिया के उपरान्त वरदराज ने ''परस्मैपद प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में भी विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए या अनेक उपसर्गों के योग में धातुओं से परस्मैपद व्यवस्था की गयी है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों के लिए 15 पाणिनीय सूत्रों तथा 3 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त ''भवकर्म प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। वाच्यपरिवर्तन के लिए क्रियापरिवर्तन किया जाता है। कर्तृवाच्य की सर्कमकक्रिया को कर्मवाच्य में और अकर्मकक्रिया को भाववाच्य में बदला जाता है। व्याकरण नियमानुसार सकर्मक धातुओं के रूप दो वाच्यों में होते है कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में तथा अकर्मक धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं कर्तृवाच्य और भाववाच्य में।

वाच्यपरिवर्तन एक श्रेष्ठ विद्वान की निपुणता है। वाच्यपरिवर्तन के लिए विभिन्न धातुओं की भाव और कर्म में क्या-क्या रूपरचना होगी इस विषय का ज्ञान करवाने के लिए वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''भावकर्मप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। पाणिनीयव्याकरण में धातु से भाव और कर्म की रूपरचनार्थ प्रत्यय, आदेश और आगम सम्बद्ध सूत्र तृतीय अध्याय प्रथम पाद में दिये हैं। परन्तु इस अध्याय में केवल प्रत्यय, आदेश और आगम विधायकसूत्र ही हैं। रूपरचना में सहायक ''भावकर्मणो:''[5]

---

1 अष्टा० 3-1-27
2 मं० सि० कौ० कण्डवादिप्रक्रिया।
3 म० सि० कौ० आत्मनेपदप्रक्रिया।
4 म० सि० कौ० परस्मैपदप्रक्रिया।
5 अष्टा० 1-3-13

''सार्वधातुके यक्''[1] आदि सूत्र विभिन्न अध्ययों में हैं। वरदराज ने इन सूत्रों को रूपरचना की दृष्टि से पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियामूलक क्रम से दिया है। इस प्रकरण में प्रयुक्त सूत्रों की संख्या 11 तथा वार्तिक संख्या 1 है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''कर्मकर्तृ प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। अनेक स्थानों पर जब आवश्यकतानुसार कर्म को ही कर्ता कहना इष्ट होता है तो वहां अत्यन्त सरलता बताने के लिए कर्म ही कर्ता बना दिया जाता है। क्योंकि कर्म की कर्तृत्वविवक्षा होती है जैसे :-''काष्ठम् भिद्यते स्वयमेव'' इस अवस्था में सकर्मकधातु अर्कमक हो जाते हैं और उन में भाव और कर्म में लकार किये जाते हैं। इस उल्लेख के लिए वरदराज ने ''कर्मकर्तृतिङ्प्रकरण'' दिया है।

इस प्रकरण में कर्तृत्व की अविवक्षा करके कर्म को ही कर्ता बनाकर धातु से लट् आदि लकार किये जाते हैं तथा पूर्णप्रक्रिया के उपरान्त अनेक उदाहरण सिद्ध किये जाते हैं। इस प्रकरण में 6 सूत्र और 4 वार्तिक हैं।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त "लकारार्थ प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में लट्, लिट्, लुट्, लृट् आदि दस लकारों के क्या-क्या अर्थ हैं अर्थात् किन-किन अर्थों में लकार होते हैं तथा धातु से विभिन्न उपपदों के योग में विशिष्ट लकारों का उल्लेख तृतीय अध्याय द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पाद में किया गया है। ये सूत्र विखरे हैं वरदराज ने इन सूत्रों को चुनकर उदाहरणों के ज्ञानार्थ ''लकारार्थ प्रक्रिया'' प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम में दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 32 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है तथा इस में 3 वार्तिक हैं।[4] इसी प्रकरण के साथ तिङन्तप्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरान्त कृदन्त प्रकरण शुरू होता है। धातु से जिस प्रत्यय को जोड़कर, संज्ञा, विशेषण तथा अव्यय बनता है उस प्रत्यय को कृत् प्रत्यय कहते हैं। धातु के अधिकार में तिङ् से भिन्न प्रत्यय की कृत् संज्ञा होती है।[5] कृतसंज्ञक प्रत्यय जिन शब्दों के अन्त में होते हैं उन्हें कृदन्त कहते हैं।

वरदराज ने कृदन्त सम्बन्धित सूत्रों को कृत्यप्रक्रिया, पूर्वकृदन्त तथा उत्तरकृदन्त आदि तीन प्रकरणों में विभक्त किया है तथा ''कृत्यप्रक्रिया'' प्रकरण से कृदन्त प्रकरण की शुरुआत की है। अष्टाध्यायी में ''कृत्याः''[6] सूत्र के अधिकार में वर्णित ''ण्वुल् तृचौ''[7] सूत्र से पूर्व जो प्रत्यय कहे गये

---

1 अष्टा0 3-1-67
2 म0 सि0 कौ0 भावकर्मप्रक्रिया
3 म0 सि0 कौ0 कर्मकर्तृप्रक्रिया
4 म0 सि0 कौ0 लकारार्थप्रक्रिया
5 अस्मिन धात्वाधिकारेतिङ्वर्जितः प्रत्ययाः कृतसंज्ञको भवति। का0 3-1-93
6 अष्टा0 3-1-95
7 अष्टा0 3-1-133

हैं उनकी कृत्य संज्ञा होती है।[1] वरदराज ने विभिन्न रूपरचनाओं के लिए इन प्रत्ययविधायक सूत्रों से उपयोगी को चुनकर ''कृत्यप्रक्रिया'' प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस प्रकरण में कृत्य संज्ञक प्रत्ययों का वर्णन होने के कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को कृत्यप्रक्रिया प्रकरण की संज्ञा दी है। कृत्य प्रत्यय विधायक सूत्रों के साथ रूपरचना से सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों का चुनाव भी सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से किया गया है। इस प्रकरण में 50 सूत्र और 7 वार्तिक हैं।[2]

इस प्रकरण के बाद मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''पूर्वकृदन्त'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में कृदन्त प्रत्ययों से सम्बन्धित लगभग 495 सूत्र हैं। वरदराज ने इन सभी का वर्णन मध्यसिद्धान्तकौमुदी में नहीं किया है। ग्रन्थकार ने इन सूत्रों को तीन भागों में विभक्त किया है। ''ण्वुल् तृचौ''[3] सूत्र से पूर्व सूत्रों का वर्णन कृत्यप्रक्रिया प्रकरण में आ गया है। प्रकृत सूत्र से लेकर तृतीय अध्याय द्वितीय पाद के अन्त तक मुख्य सूत्रों का उल्लेख ग्रन्थकार ने ''पूर्वकृदन्त प्रकरण'' में दिया है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिये वरदराज ने मुख्य उदाहरणों की रूपरचना के लिये सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 205 सूत्रों और 37 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[4] इन सूत्रों में प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। ग्रन्थपद्धति वर्णन विधि के अनुसार ग्रन्थकार अनेक सहायक सूत्रों का वर्णन सूत्रकार्य द्वारा स्पष्ट करके सूत्र स्मरण करवा देते हैं अर्थात् वरदराज प्रत्येक उदाहरण में सूत्रों का बार-बार नामोल्लेख नहीं करते हैं, ये सूत्रकार्य के वर्णन से ही वर्णन करवा देते हैं।

वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान उत्तर कृदन्त से पूर्व ''उणादिप्रकरण'' दिया है। उणादि किसी समय कृदन्त प्रकरण का अङ्ग. था। अत: वरदराज ने इनका वर्णन कृदन्त प्रकरण के बीच में किया है। इन सूत्रों के उदाहरणों की रूपरचना कृदन्त पदों के सामन होती है। वरदराज ने उणादि सूत्रों को सूत्र संख्या क्रम भी पृथक दिया है। भट्टोजिदीक्षित के समान वरदराज ने उणादियों का वर्णन करना उपयुक्त समझा है क्योंकि ये व्याकरणपरम्परा में प्रचलित थे तथा पाणिनि द्वारा भी अभिमत हैं।

भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में पांच पादों में 748 उणादि सूत्रों का वर्णन किया है।[5] परन्तु वरदराज ने इन में से 156 सूत्रों का वर्णन किया है क्योंकि वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में केवल उपयोगी जानकारी ही दी है।[6] ग्रन्थकार ने उणादि प्रकरण को पांच पादों में भी प्रदर्शित नहीं किया है, जबकि एक ही प्रकरण में उणादियों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में उदाहरणों की जानकारी रूपरचना क्रम से दी गयी है।

---

1 प्रागेतस्माण्ण्वुल् संशब्दनाद् यानित उर्ध्वमनुक्रमिष्याम:, कृत्यसंज्ञाकास्ते वेदितव्या: । का0 3-1-95

2 म0 सि0 कौ0 कृत्यप्रक्रिया

3 अष्टा0 3-1-95

4 म0 सि0 कौ0 पूर्वकृदन्त प्रकरण

5 म0 सि0 कौ0 उणादिप्रकरण

6 म0 सि0 कौ0 उणादिप्रकरण

मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''उणादि प्रकरण'' के उपरान्त ''उत्तरकृदन्त'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में कृदन्त प्रत्यय करने वाले शेष सूत्रों में से वरदराज ने केवल मुख्य उदाहरणों के लिए मुख्य सूत्रों का चयन करके प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के साथ रूपरचना से सम्बन्धित अन्य सूत्रों का वर्णन भी रूपरचना क्रम से प्राप्त है। इस प्रकरण को पूर्ण करने के लिए वरदराज ने सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न ग्रन्थों से 62 पाणिनीय सूत्रों और 10 वार्तिकों को प्रक्रियामूलकपद्धति से उद्धृत किया है।[1] इसी प्रकरण के साथ कृदन्त प्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''विभक्त्यर्थ'' प्रकरण दिया है। इन से पूर्व ग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को ''कारक प्रकरण'' की संज्ञा दी है तथा इस प्रकरण को ''स्त्रीप्रत्यय'' प्रकरण के उपरान्त स्थान दिया है। परन्तु मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''स्त्रीप्रत्यय" प्रकरण ''तद्धित प्रकरण'' के उपरान्त तथा वैदिकप्रक्रिया से पूर्व दिया है। वरदराज का प्रकरण विभाजन पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों से विचित्र है।

कृदन्त प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में विभक्त्यर्थ प्रकरण दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञाविधायकसूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं तथा प्रथमा, द्वितीया आदि विभक्तिविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय तृतीय पाद में दिये हैं।[2] सूत्रमूलकपद्धति में कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञाविधायकसूत्र तथा प्रथमा, द्वितीया,तृतीया आदि विभक्तिविधायकसूत्र क्रम नहीं हैं। समयानुसार पाठक संज्ञाविधायक सूत्रों के साथ उसी विभक्ति से सम्बन्धित विभक्तिविधायकसूत्र चाह रहे थे परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में यह क्रम नहीं है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस समस्या का समाधान इन से पूर्व कर दिया है परन्तु पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों में सरल प्रक्रिया का स्वरूप नहीं है। अत: वरदराज ने सरल प्रक्रिया का स्वरूप प्रदर्शित करते हुए उपयोगी और संक्षिप्त वर्णन किया है।

वरदराज ने केवल मुख्य उदाहरणों की रूरचना के लिए केवल मुख्य सूत्रों और वार्तिकों का रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है। ग्रन्थकार ने विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्रों तथा विभक्तिविधायक सूत्रों को कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञा तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति क्रम से दिया है। वरदराज ने प्रक्रियाक्रमानुसार प्रत्येक विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र के उपरान्त विभक्तिविधायकसूत्र का वर्णन किया है। इस कारण पाठक को पढ़ते ही कारकों का ज्ञान साधारण प्रक्रिया द्वारा प्राप्त हो जाता है। इस प्रकरण में 77 सूत्रों तथा 24 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम में उपयोग हुआ है।[3] वरदराज ने अनेक उदाहरण कारिकाओं में प्रदर्शित किये हैं तथा अनेक सूत्र एवम् वार्तिकों का उल्लेख भी कारिका द्वारा प्रदर्शित किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में समास प्रकरण दिया है। अनेक पदों का मिलकर एक हो जाना समास कहलाता है। इसे संक्षेप भी कहते हैं क्योंकि इस में दो या दो से अधिक पदों को इस प्रकार रख दिया जाता है कि उनके आकार में कुछ कमी आ जाती है तथा अर्थ भी पूर्ण विदित होता है।

---

1 म0 सि0 कौ0 उत्तरकृदन्त प्रकरण

2 क. अष्टाध्यायी
ख. काशिका

3 म0 सि0 कौ0 विभक्त्यर्थ प्रकरण

समासविधायकसूत्र अष्टाध्यायी द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीय पाद में दिये हैं। समास के उपरान्त समस्त सुबन्त पदों की रचना तक एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। सम्पूर्ण प्रक्रिया सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी में कम से कम छ: अध्यायों में प्राप्त होते हैं। वरदराज ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान इन सूत्रों को चुनकर समास प्रकरण में रूपरचना क्रम से दिया है ताकि पाठकों को अत्याधिक सुविधा प्रदान की जा सके।

इन्होंने सर्वप्रथम अव्ययीभाव, तत्पुरुष, वहुव्रीहि तथा द्वन्द्व समास के सूत्रों को वर्गीकृत किया है तदुपरान्त अव्ययीभाव, तत्पुरुष आदि प्रकरणों में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए समासविधायक सूत्रों के उपरान्त अन्य सहायक सूत्रों को भी रूपरचना क्रम से दिया।

इन से पूर्व ग्रन्थकारों ने समास प्रकरण के आरम्भ में अव्ययीभावसमास प्रकरण देकर प्रकरण की शुरुआत की है परन्तु वरदराज ने अव्ययीभावसमास प्रकरण को बाद में दिया है। इस से पूर्व समास के भेद, परिभाषा, विभिन्न समासों में कौन पद प्रधान होता है, समासाधिकार, विभिन्न पदों में समासविधान आदि विवरण समास प्रकरण के शुरू में दिया है तदुपरान्त विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अव्ययीभाव आदि प्रकरणों को क्रमपूर्वक दिया है। व्याकरण प्रवेशार्थी छात्रों के लिए समास प्रकरण के शुरू में इस प्रकार का वर्णन उपयुक्त है। इस विवरण में ग्रन्थकार ने 3 पाणिनीय सूत्र और 1 वार्तिक का प्रयोग किया है।

इस विवरण के उपरान्त ''अव्ययीभावसमास'' प्रकरण है। इस प्रकरण में अव्ययीभाव से सम्बन्धित विभिन्न रूपरचना के लिए 26 सूत्रों और 2 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर दिया है।[1] इन्होंने सम्बन्धित प्रकरण के सभी समासविधायक सूत्रों का वर्णन नहीं किया है क्योंकि उपयोगी उदाहरणों की जानकारी देना ही इन का लक्ष्य था। प्रकरण में प्रयुक्त 26 सूत्रों में अन्य समास सम्बन्धित समासान्त टच् आदि कार्य करने वाले सूत्र भी हैं।

अव्ययीभावसमास प्रकरण के उपरान्त ''तत्पुरुषसमास'' प्रकरण है। इस समास के कर्मधारय और द्विगु भेदापभेद हैं। अत: समास प्रकरण में तत्पुरुष समास दूसरे प्रकरणों से बड़ा है। तत्पुरुष समास के आदि में द्वितीयान्त, तृतीयान्त आदि विभक्त्यान्त पदों का समर्थ सुबन्त पदों के साथ समास होने या समास निषेध का वर्णन है। तदुपरान्त कर्मधारय और द्विगु का मिश्रित वर्णन दिया है। वरदराज ने तत्पुरुषसमास प्रकरण में समासान्त प्रत्ययविधायकसूत्र पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से, अ़कारान्तादेश विधायकसूत्र षष्ट अध्याय से तथा समास में पूर्ववत या परवत लिङ्ग ज्ञान के लिए सूत्रों को अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय से चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों से 107 पाणिनीय सूत्रों और 24 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''बहुव्रीहिसमास'' प्रकरण दिया है अष्टाध्यायी में केवल 5 सूत्र बहुव्रीहिसमास विधान करते हैं। वरदराज ने इन पांचों का उल्लेख किया है। उदाहरण जानकारी के लिए

---

1 म0 सि0 कौ0 अव्ययीभावसमास प्रकरण

2 म0 सि0 कौ0 तत्पुरूषसमास प्रकरण

समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्र पञ्चम अध्याय से, पुंवदभाव एवम् स्त्रीवदभावार्थ सूत्र षष्ठ अध्याय से तथा पदान्तादेश करने वाले सूत्र पञ्चम अध्याय से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इस प्रकार मिलाकर इस प्रकरण में 60 पाणिनीयव्याकरण के सूत्रों और 26 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त ''द्वन्द्वसमास'' प्रकरण आता है। व्याकरण में द्वन्द्वसमास के सभी उदाहरणों में ''चार्थे द्वन्द्वः''[2] मात्र एक सूत्र से ही समास होता है। इस के उपरानत अष्टाध्यायी में समास में पूर्व या पर पदों में से एकपदशेषार्थ सूत्रों का वर्णन है। वरदराज ने मुख्य उदाहरणों के लिए इन सूत्रों में से आवश्यकतानुसार मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है तथा एकवदभाव के लिए सूत्रों का द्वितीय अध्याय से चुनाव किया है। अनेक उदाहरणों में पदान्त में आदेश या सम्पूर्ण पद के स्थान पर आदेश करने वाले सूत्र षष्ठ अध्याय तृतीय पाद से चुनकर द्वन्द्वसमास प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इस प्रकरण में 23 पाणिनीय सूत्रों और 9 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''एकशेष'' प्रकरण दिया है। व्याकरण में समास विधान में दो पदों में से एक पद शेषार्थ सूत्र भी प्राप्त होते हैं। एक शेष प्रकरण से सम्बन्धित सूत्र प्रथम अध्याय में हैं। सूत्रमूलकपद्धति में समासविधायकसूत्र द्वितीय अध्याय में हैं। जबकि एक शेष विधायक सूत्र प्रथम अध्याय में है अर्थात् इस पद्धति से पाठकों को इन का प्रयोजन ही समझ नहीं आता है। अतः वरदराज ने इन सूत्रों को चुनकर समास ज्ञान करवाने के उपरान्त रूपरचना ज्ञानार्थ एकशेष प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। इस प्रकरण में 9 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों का रूप रचनाक्रम से प्रयोग हुआ है।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''समासन्त'' प्रकरण दिया है। समास होने के उपरान्त कुछ उदाहरणों में अ, अच् आदि प्रत्यय होते हैं। समासान्त प्रत्यय विधायकसूत्र अष्टाध्यायी में पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। अनेक उदाहरणों में समासकार्य के उपरान्त समासान्त प्रत्ययों की आवश्यकता पड़ती है। समासविधायकसूत्र सूत्रमूलकपद्धति में द्वितीय अध्याय में हैं, जबकि समासान्त प्रत्ययविधायक सूत्र पञ्चम अध्याय में हैं। अर्थात् इन सूत्रों का प्रयोजन ही समझ नहीं आता है। अतः वरदराज ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान समासविधायक प्रकरणों के उपरान्त शेष समासन्त प्रत्ययों के लिए स्वतन्त्र प्रकरण दिया है। अनेक समासान्त प्रत्ययों का वर्णन विभिन्न समास प्रकरणों में आ गया है। अतः वरदराज ने शेष वर्णन को इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। इस में 16 पाणिनीय सूत्र और 7 वार्तिक हैं।[5]

---

1 म0 सि0 कौ0 बहुव्रीहिसमास प्रकरण

2 अष्टा0 2-2-29

3 म0 सि0 कौ0 द्वन्द्वसमास प्रकरण

4 म0 सि0 कौ0 एकशेष प्रकरण

5 म0 सि0 कौ0 समासान्त प्रकरण

इस प्रकरण के उपरान्त ''अलुक्समास'' प्रकरण दिया है। समस्त पदों में कुछ ऐसे पद हैं जिन में पूर्व पद में विहित विभक्ति का लोप नहीं होता जबकि उस पद में विभक्ति कार्य होते हैं। इन पदों के ज्ञान के लिए पाणिनीयव्याकरण में विभक्ति अलुक् सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी के षष्ठ अध्याय में प्राप्त हैं। वरदराज ने इन सूत्रों को चुनकर समास प्रकरण में स्थान दिया है क्योंकि ये सूत्र समास कार्यो से सम्बद्ध हैं। इस प्रकरण को वरदराज ने ''अलुक्समास'' प्रकरण की संज्ञा दी है क्योंकि इस प्रकरण में विभक्ति के अलुक् सम्बन्धित उदाहरण और सूत्र हैं। इस प्रकरण की पूर्ति हेतु वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के 15 सूत्रों और 10 वार्तिकों का विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त समासप्रकरण के अन्त में ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण दिया है। पाणिनीयव्याकरण में षष्ठ अध्याय तृतीय पाद में कुछ ऐसे सूत्र प्राप्त होते हैं जो उत्तरपद परे रहते पूर्वपद के स्थान पर आदेश करते हैं। यह सभी आदेश समासकार्यों के बाद होते हैं अर्थात् समासाश्रम में होते हैं इसी कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण का नाम ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त षकारादेश तथा णकारादेशविधायक सूत्रों को ग्रन्थकार ने षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 43 पाणिनीय सूत्रों तथा 12 वार्तिकों को सूत्रमूलक ग्रन्थों से चुनकर रूपरचनाक्रम से उद्धृत किया है।[2]

समास प्रकरण के बाद मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''तद्धितप्रकरण'' दिया है। तद्धितप्रत्यय वे प्रत्यय है जो विभिन्न प्रयोगों की रूपरचना में काम आते हैं। संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम आदि शब्दों से आवश्यकतानुसार अपत्य, उत्पन्न होना, बाला या युक्त आदि अनेक अर्थ निकालने के लिए उक्त शब्दों से अण्, इञ्, ढक् आदि तद्धित प्रत्ययों का प्रयोग करने पर तद्धितान्त पदों की रूपरचना की जाती है। सूत्रमूलकपद्धति में तद्धित प्रत्ययों का उल्लेख चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में दिया गया है। परन्तु इन अध्यायों में तद्धितान्त पदों की पूर्ण जानकारी नहीं है। वरदराज ने अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान तद्धितान्त पदों की पूर्ण जानकारी के लिए सम्बन्धित सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है।

तद्धितप्रकरण में वरदराज ने सर्वप्रथम अपत्यादिविकारान्तार्थ प्रत्ययों का वर्णन किया है। इस वर्णन में 7 सूत्र तथा 5 वार्तिक प्रक्रिया क्रम से उदाहरणों के ज्ञानार्थ दिये हैं।[3] तदुपरान्त ''अपत्याधिकार प्रकरण'' दिया है।

अपत्याधिकार प्रकरण में अपत्यर्थ को प्रकट करने के लिए विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से संग्रह किया है। इस प्रकरण में 63 सूत्र और 8 वार्तिक हैं।[4]

---

1 म0 सि0 कौ0 अलुक्समास प्रकरण

2 म0 सि0 कौ0 समासाश्रयविधि प्रकरण

3 म0 सि0 कौ0 अपत्यादिविकारान्तार्थ प्रकरण

4 म0 सि0 कौ0 अपत्याधिकार

इस प्रकरण के उपरान्त ''रक्ताद्यर्थक'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय द्वितीय पाद के सूत्र ''तेन रक्तं रागात्''[1] से लेकर ''क्रमादिभ्यो वुन्''[2] सूत्र तक मुख्य सूत्रों का चुनाव किया है। इस प्रकरण में अनेक अर्थ प्रकट करने वाले सूत्र हैं परन्तु प्रकरण के शुरू में रङ्. विशेषवाची शब्दों से रंगा गया इस अर्थ में प्रत्यय करने वाला सूत्र ''तेन रक्तं रागात्''[3] दिया है। इसी कारण इस प्रकरण को ''रक्ताद्यर्थक'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचना जानकारी के लिए प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ अन्य सूत्रों और वार्तिकों को भी आवश्यकतानुसार सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में 45 सूत्र और 14 वार्तिक हैं।[4]

इस प्रकरण के बाद मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''चातुरर्थिक'' प्रकरण दिया है। वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान अष्टाध्यायी के कुछ ऐसे सूत्रों को चुना है जिन में इसमें, उसने बनाया, निवास तथा अद्रभव इन चार अर्थो के लिए प्रत्ययों का विधान है। इस कारण ही वरदराज ने इस प्रकरण की संज्ञा चातुरार्थिक दी है। अष्टाध्यायी के ''तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि''[5], ''तेन निर्वृत्तम्''[6] ''तस्यनिवासः''[7] ''अदूरभवश्च''[8] इन चार सूत्रों का अधिकार ''शेषे''[9] सूत्र से पूर्व तक समान रूप से जाता है। वरदराज ने अपने प्रकरण की पूर्ति हेतु मुख्य उदाहरणों की रूपरचना के लिए इन सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का उल्लेख किया है। इन सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में प्रयुक्त सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रमशः 18 और 3 है।[10]

वरदराज ने इस प्रकरण के उपरान्त ''शैषिक'' प्रकरण दिया है अपत्यार्थ तथा चातुरर्थ के उपरान्त कुछ जात, भव आदि अर्थ शेष रहते हैं। ये अर्थ ''शेषे''[11] सूत्र के अधिकार में आते हैं। इस सूत्र का अधि कार अष्टाध्यायी में ''तस्य विकारः''[12] सूत्र से पूर्व है। वरदराज ने ''शेषे''[13] सूत्र के अधिकार में आने वाले सूत्रों में से रूपरचनार्थ केवल मुख्य सूत्रों का उल्लेख किया है। इन सूत्रों के उपरानत रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का उल्लेख भी है। इस प्रकरण में वरदराज ने 77 पाणिनीय सूत्रों और 20 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है[14] तथा ''शेषे''[15] सूत्र के अधिकार में होने के कारण इस प्रकरण को ''शैषिक'' संज्ञा दी है।

शैषिक प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण दिया है। वरदराज ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान इस प्रकरण का नाम ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण दिया है। भट्टोजिदीक्षित से

---

1 अष्टा० 4-2-1
2 अष्टा० 4-2-61
3 अष्टा० 4-2-1
4 म० सि० कौ० रक्ताद्यर्थक
5 अष्टा० 4-2-67
6 अष्टा० 4-2-68
7 अष्टा० 4-2-69
8 अष्टा० 4-2-70
9 अष्टा० 4-2-92
10 म० सि० कौ० चातुरर्थिक प्रकरण
11 अष्टा० 4-2-92
12 अष्टा० 4-3-134
13 अष्टा० 4-2-92
14 म० सि० कौ० शैषिक प्रकरण
15 अष्टा० 4-2-92

पूर्व ग्रन्थकारों ने इसे विकारार्थक प्रकरण संज्ञा दी है। अष्टाध्यायी चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद में ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[1] सूत्र है। इस सूत्र का अधिकार ''तेन दीव्यति खनति जयति जितम्''[2] सूत्र तक जाता है। वरदराज ने ''तस्य विकार:''[3] सूत्र से आगे ''तेन दीव्यति खनति जयति जितम्''[4] सूत्र तक मुख्य सूत्रों का चुनाव करके इस प्रकरण में रूपरचनाक्रम से दिया है। ''तस्य विकार:''[5] सूत्र से पूर्व ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[6] सूत्र से आगे अनेक सूत्र अपत्याधिकार, रक्ताद्यर्थक, चातुरर्थक, शैषिक आदि प्रकरणों में आ गये हैं। ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण ''तस्य विकार:''[7] सूत्र से आगे प्रारम्भ होता है। वरदराज ने इस प्रकरण में 19 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है[8] तथा ''प्राग्दीव्यतोऽण्''[9] सूत्र के अधिकार से सम्बन्धित वर्णन के कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण की संज्ञा दी है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''ठगधिकार'' प्रकरण है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''प्राग्वहतीयप्रकरण'' संज्ञा दी है। ''प्राग्वहतेष्ठक्''[10] सूत्र से लेकर ''तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्''[11] सूत्र तक ठक् प्रत्यय का अधिकार जाता है। वरदराज ने इन सूत्रों में से उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है तथा ठक् प्रत्यय के अधिकार से सम्बद्ध होने के कारण इस प्रकरण को ''ठगधिकार'' प्रकरण संज्ञा दी है। अष्टाध्यायी में भी प्रसङ्ग. वश ये सूत्र इकट्ठे हैं परन्तु पद्धति वर्णन विधि क्रमानुसार रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का उल्लेख विभिन्न अध्यायों में है। वरदराज ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों से चुनकर 33 सूत्रों और 6 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से इस प्रकरण में प्रयोग किया है।[12]

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''यदधिकार'' प्रकरण दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''प्राग्वहतीय प्रकरण'' संज्ञा दी है। अष्टाध्यायी में ''प्राग्धिताद्यत्''[13] सूत्र से लेकर ''तस्मै हितम्''[14] सूत्र से पूर्व यत् प्रत्यय का अधिकार है। वरदराज ने इन सूत्रों में से उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए मुख्य सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। इस प्रकरण में 8 पाणिनीय सूत्र हैं।[15]

इस प्रकरण के उपरान्त ''छयतोरधिकार'' प्रकरण दिया है। इस में 'छ' और 'यत्' प्रत्ययविधायक सूत्रों का वर्णन है। अष्टाध्यायी में ''प्राक्क्रीताच्छ:''[16] सूत्र से लेकर ''तेन क्रीतम्''[17] सूत्र तक छ: प्रत्यय

---

1 अष्टा0 4-1-83
2 अष्टा0 4-4-2
3 अष्टा0 4-3-134
4 अष्टा0 4-4-2
5 अष्टा0 4-3-134
6 अष्टा0 4-1-83
7 अष्टा0 4-3-134
8 म0 सि0 कौ0 प्राग्दीव्यतीय
9 अष्टा0 4-1-83
10 अष्टा0 4-4-1
11 अष्टा0 4-4-76
12 म0 सि0 कौ0 प्राग्वहतीय
13 अष्टा 4-4-75
14 अष्टा0 5-1-5
15 म0 सि0 कौ0 यदधिकार
16 अष्टा0 5-1-1
17 अष्टा0 5-1-37

का अधिकार जाता है तथा ''उ गवादिभ्यो यत्''[1] सूत्र भी ''तेन क्रीतम्''[2] सूत्र तक यत् प्रत्यय का विध ान करता है, अर्थात ''प्राक्क्रीताच्छः''[3] तथा ''उ गवादिभ्यो यत्''[4] इन दोनों सूत्रों का वर्णन एक साथ चलता है। वरदराज ने छ और यत् प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन एक साथ किया है तथा प्रकरण का नाम भी ''छयतोरधिकार'' दिया है। इन्होंने इस प्रकरण में ''प्राग्वतेष्ठञ्''[5] सूत्र से पूर्व सूत्रों का वर्णन किया है। यद्यपि छ और यत् प्रत्यय का अधिकार ''तेन क्रीतम्''[6] सूत्र तक जाता है परन्तु वरदराज ने ''प्राग्वतेष्ठञ्''[7] सूत्र से लेकर शेष सूत्रों का वर्णन दूसरे प्रकरण में किया है। इस प्रकरण में 9 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[8]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''ठञधिकार'' प्रकरण दिया है। भट्टोजिदीक्षित ने इस प्रकरण को ''अर्हीयप्रकरण'' कहा है। अष्टाध्यायी में ''प्राग्वतेष्ठञ्''[9] सूत्र से लेकर ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[10] सूत्र तक ठञ् प्रत्यय का अधिकार जाता है। भट्टोजिदीक्षित ने ठञ् अधिकार से सम्बन्धित सूत्रों को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में अर्हीयप्रकरण, ठञधिकारे कालाधिकार प्रकरण तथा ''ठञ्विधि प्रकरण'' आदि तीन प्रकरणों में विभक्त करके प्रक्रियाक्रम से दिया है। परन्तु वरदराज ने इन सूत्रों से सम्बद्ध जानकारी के लिए ''ठञाधिकार'' मात्र एक ही प्रकरण दिया है इतना जरुर है कि इन्होंने सभी सूत्रों का वर्णन नहीं किया है ''तेन निवृत्तम्''[11] सूत्र से लेकर ''आकालिकडाद्यन्तवचने''[12] सूत्र तक 36 सूत्रों का मध्यासिद्धान्तकौमुदी में बिल्कुल वर्णन नहीं किया है। वैसे भी वरदराज ने केवल उपयोगी वर्णन ही किया है, इन्होंने ''प्राग्वतेष्ठञ्''[13] सूत्र से लेकर ''तेन निवृत्तम्''[14] सूत्र तक 62 सूत्रों में से केवल 15 सूत्रों का ही वर्णन किया है। इस प्रकरण में 16 सूत्र और 2 वार्तिक हैं।[15]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''भावकर्मार्थ'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में भाव और कर्म अर्थों को प्रकट करने के लिए विभिन्न तद्धित प्रत्ययों का वर्णन है। इस तरह के सूत्र ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[16] सूत्र से लेकर पाद के अन्त तक प्राप्त होते हैं। वरदराज ने इन सूत्रों में से केवल 2 सूत्रों को छोड़कर विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है तथा भाव और कर्म अर्थों में विभिन्न प्रत्ययों से सम्बन्धित होने के कारण इस प्रकरण को ''भवकर्मार्थ'' प्रकरण नाम दिया है। इस प्रकरण में 18 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[17]

---

1 अष्टा0 5-1-2
2 अष्टा0 5-1-37
3 अष्टा0 5-1-1
4 अष्टा0 5-1-2
5 अष्टा0 5-1-17
6 अष्टा0 5-1-37
7 अष्टा0 5-1-17
8 म0 सि0 कौ0 छयतोदधिकार
9 अष्टा0 5-1-17
10 अष्टा0 5-1-115
11 अष्टा0 5-1-79
12 अष्टा0 5-1-114
13 अष्टा0 5-1-17
14 अष्टा0 5-1-79
15 म0 सि0 कौ0 ठञधिकार
16 अष्टा0 5-1-115
17 म0 सि0 कौ0 भावकर्मार्थ प्रकरण

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''पाञ्चमिकेषु भवनाद्यर्थक'' नामक प्रकरण दिया है। इस में पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद के 44 सूत्रों में से 25 सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए रूपरचना क्रम से दिया है। इस प्रकरण में भवन आदि अर्थक प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 25 पाणिनीय सूत्रों और 7 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त ''मत्वर्थीय'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में ''उभादुदात्तो नित्यम्''[2] सूत्र के उपरान्त पञ्चम अध्याय द्वितीय पाद के सभी 96 सूत्र मत्वर्थ में विभिन्न प्रत्यय करते हैं। वरदराज ने 96 सूत्रों में से केवल 56 सूत्रों का विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। इस प्रकरण में मत्वर्थ में प्रत्यय सम्बन्धित सूत्रों के वर्णन के कारण वरदराज ने इस प्रकरण को ''मत्वर्थीय'' प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 56 सूत्रों के साथ 22 वार्तिक प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्राग्दिशीय'' प्रकरण दिया है। वरदराज ने अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के ''प्राग्दिशोविभक्तिः''[4] सूत्र से लेकर ''दिक्शव्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभयो दिग्देंशकालेष्वस्तातिः''[5] सूत्र से पूर्व 26 सूत्रों में से 24 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में ''क्वाति''[6] सूत्र सप्तम अध्याय से रूपरचना में सहायता के लिए दिया है। इस प्रकरण में पाणिनीय 25 सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[7]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''प्रागिवीय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ''दिक्शव्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्तातिः''[8] सूत्र से लेकर ''इवे प्रतिकृतौ''[9] सूत्र से पूर्व सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का उल्लेख किया है। ''इवे प्रतिकृतौ''[10] यह सूत्र इवार्थ अर्थात् उपमान अर्थ में प्रत्ययों का उल्लेख करता है। इस प्रकरण में वरदराज ने इवार्थ प्रत्ययविधायकसूत्र से पूर्व सूत्रों का वर्णन किया है। इसी कारण वरदारज ने इस प्रकरण को प्रागिवीय प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 55 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रयोग हुआ है।[11]

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''सवार्थिक'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी में स्वार्थ में विभिन्न प्रत्ययविधायक सूत्रों का वर्णन है। यह वर्णन पञ्चम अध्याय तृतीय पाद के अन्त में और चतुर्थ पाद में प्राप्त होता है। वरदराज ने इन सूत्रों में से मुख्य सूत्रों को उदाहरण जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में सूत्रमूलकग्रन्थों के 42 सूत्रों और 12 वार्तिकों का रूपरचना क्रम से प्रयोग हुआ है।[12]

---

1 म० सि० कौ० पाञ्च० भव०
2 अष्टा० 5-2-44
3 म० सि० कौ० मत्वर्थीय
4 अष्टा० 5-3-1
5 अष्टा० 5-3-27
6 अष्टा० 6-2-105
7 म० सि० कौ० प्राग्दिशीय प्रकरण
8 अष्टा० 5-3-27
9 अष्टा० 5-3-96
10 अष्टा० 5-3-96
11 म० सि० कौ० प्रागिवीय प्रकरण
12 म० सि० कौ० स्वार्थिक प्रकरण

इस प्रकरण के उपरान्त मधसिद्धान्तकौमुदी में ''द्विरूक्तप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। अष्टाध्यायी अष्टम अध्याय प्रथम पाद के ''सर्वस्य द्वे''[1] सूत्र से लेकर ''पदस्य''[2] सूत्र तक सभी सूत्र द्वित्व का विध ान करते हैं। इन सूत्रों में से वरदारज ने केवल 7 सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में 5 वार्तिक हैं।[3] इस प्रकरण में सूत्रों द्वारा द्वित्व का विधान किया गया है इसी कारण वरदराज ने इस प्रकरण को अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान ''द्विरूक्तप्रक्रिया'' प्रकरण संज्ञा दी है।

इस प्रकरण के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''स्त्रीप्रत्यय'' प्रकरण दिया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में स्त्रीप्रत्यय प्रकरण को वैदिक प्रक्रिया से पूर्व दिया है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को अव्ययप्रकरण के उपरान्त दिया है परन्तु वरदराज ने स्त्रीप्रत्यय प्रकरण को मध्यसिद्धान्तकौमुदी के लगभग अन्त में दिया है। विभिन्न सुबन्त तथा तिङन्त पदों की जानकारी इस प्रकरण से पूर्व रह जाती है। यह प्रकरण अन्त में है इस के बाद वैदिक पदों से सम्बन्धित जानकारी के लिए ''वैदिकप्रक्रिया'' का वर्णन है।

इस प्रकरण में स्त्रीत्व विवक्षा में अनेक प्रत्ययों का वर्णन किया गया है। अष्टाध्यायी में स्त्रीत्वविवक्षा में प्रत्ययविधायक सूत्र चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद में प्राप्त होते हैं। ये सूत्र एक क्रम से इक्ट्ठे प्राप्त हैं। इन सूत्रों की संख्या ''अजाद्यतष्टाप्''[4] सूत्र से लेकर ''दैवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्ठेविद्धिभ्यौऽन्यन्तरस्याम्''[5] सूत्र तक 77 हैं। वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए इन सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का उल्लेख किया है तथा अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से भी रूपरचना में सहायक सूत्रों का रूपरचना क्रम से वर्णन किया है। इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के 64 सूत्रों और 42 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[6]

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी में इस प्रकरण के उपरान्त वैदिक पदों की जानकारी के लिए ''वैदिक प्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इन से पूर्व ग्रन्थकारों में से केवल भट्टोजिदीक्षित ने ही वैदिकप्रक्रिया और स्वरप्रक्रिया का पूर्ण वर्णन किया है। रामचन्द्र का प्रक्रियाकौमुदी में प्राप्त वैदिकप्रक्रिया सम्बन्धित वर्णन संक्षिप्त मात्र वर्णन है। वरदराज ने भट्टोजिदीक्षित के समान अपने ग्रन्थ में वैदिकप्रक्रिया और स्वरप्रक्रिया को स्थान दिया है परन्तु इन द्वारा वैदिकप्रक्रिया और स्वरप्रक्रिया का वर्णन मात्र सार रूप है।

भट्टोजिदीक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में वैदिकप्रक्रिया प्रकरण को आठ अध्यायों में दिया है तथा इन अध्यायों में 263 पाणिनीय सूत्रों और 39 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम पूर्वक वर्णन किया है[7], परन्तु

---

1 अष्टा0 8-1-1
2 अष्टा0 8-1-16
3 म0 सि0 कौ0 द्विरूक्तप्रक्रिया
4 अष्टा0 4-1-4
5 अष्टा0 4-1-81
6 म0 सि0 कौ0 स्त्रीप्रत्यय प्रकरण
7 वै0 सि0 कौ0 वैदिकप्रक्रिया

वरदराज ने वैदिक प्रक्रिया प्रकरण में कोई अध्याय या अन्य प्रकार का प्रकरण विभाजन नहीं किया है। ग्रन्थकार ने इस प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 31 सूत्रों और 6 वार्तिकों को विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है।[1] वैदिकप्रक्रिया सम्बन्धित संज्ञा, कारक, तिङन्त, स्त्रीप्रत्यय तद्धित, समास, नामपद, कृदन्त तथा सन्धिविधायकसूत्र प्रसङ्ग.वश सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरे हैं क्योंकि इन का वर्णन लौकिक उदाहरणों से सम्बन्धित वर्णन के साथ है। वरदराज ने प्रत्येक प्रकरण से सम्बन्धित सूत्रों में से उपयोगी उदाहरणों के लिए केवल मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है। इन द्वारा दिये गये वर्णन से यह संकेत प्राप्त होता है कि पाठक आवश्यकता पड़ने पर मुख्य उदाहरणों के समान अन्य उदाहरणों की जानकारी प्राप्त कर सकें।

मध्यसिद्धान्तकौमुदी में वैदिकप्रक्रिया प्रकरण के उपरान्त ''स्वरप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित विधायकसूत्र सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरे हैं जो धातु प्रातिपादिक, समास तथा तिङन्त पदों में उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित का विधान करते हैं। वरदराज ने इन सूत्रों में से केवल धातु तथा प्रातिपादिक स्वरों से सम्बद्ध सूत्रों का ही वर्णन किया है। इनमें भी मुख्य वर्णन है। शेष तिङन्त तथा समास स्वरों से सम्बन्धित वर्णन वरदराज ने अपने प्रक्रियाग्रन्थ में नहीं किया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 14 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रयोग किया है।[2]

मध्यसिद्धान्तकौमुदी संज्ञा, अच्सन्धि, प्रकृतिभाव, हल्सन्धि, स्वादिसन्धि, अजन्तपुलिङ्ग. आदि 68 प्रकरण हैं। इन में ''लिङ्ग.ानुशासन प्रकरण'' अन्तिम प्रकरण है। वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के पञ्चम अङ्ग. लिङ्ग.ानुशासन को भी अपने प्रक्रियाग्रन्थ मध्यसिद्धान्तकौमुदी में स्थान दिया है। इस प्रकरण में पाणिनीय लिङ्ग.ानुशासन के सूत्रों को उदाहरणों की जानकारी के लिए उद्धृत किया है। रूपरचना में सहायक पाणिनीय सूत्रों का वर्णन भी मध्यसिद्धान्तकौमुदी के वर्णन विधि क्रमानुसार सूत्रकार्य रूप में अनेक स्थानों पर प्रदर्शित है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम स्त्रीलिङ्ग.ाधिकार भाग दिया है, इस में पाणिनीय लिङ्ग. ानुशासन के 34 सूत्रों में से 16 सूत्रों का वर्णन है। तदुपरान्त पुलिङ्ग.ाधिकार में 83 सूत्रों में से 63 सूत्रों का तथा नपुंस्काधिकार में 53 सूत्रों में से 27 मुख्य सूत्रों का वर्णन है। इसके बाद स्त्रीपुंसाधिकार, पुंनपुंसकाकिार तथा अविशिष्टलिङ्ग.ाधिकार में मुख्य-मुख्य सूत्रों का वर्णन है।[3] इस प्रकरण की समाप्ति के साथ ही मध्यसिद्धान्तकौमुदी भी समाप्त हो जाती हैं। वरदराज ने भट्टोजिदीक्षित के समान फिट् सूत्रों का वर्णन मध्यसिद्धान्तकौमुदी में नहीं किया है बाकि लगभग सभी प्रकरणों का वर्णन किया है इतना जरूर है कि वरदराज का वर्णन वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा सरल है।

---

1 म0 सि0 कौ0 वैदिकप्रक्रिया

2 म0 सि0 कौ0 स्वरप्रक्रिया

3 म0 सि0 कौ0 लिङ्ग.ानुशासनम्

8. लघुसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार वरदराज :–

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी की रचना की है। भट्टोजिदीक्षित इन के गुरु थे। अत: वरदराज और भट्टोजिदीक्षित के काल में लगभग 10 – 15 वर्ष का अन्तराल हो सकता है। भट्टोजिदीक्षित का काल 1570 से 1650 विक्रम सम्वत् के मध्य स्वीकार किया जाता है। वरदराज इन से 10 – 15 वर्ष बाद के हैं। भट्टोजिदीक्षित के सामकालिक आचार्य वरदराज ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के 25 – 30 वर्ष बाद व्याकरण परम्परा में पाणिनीयव्याकरण पर मध्यसिद्धान्तकौमुदी लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा सारसिद्धान्तकौमुदी नामक प्रक्रिया ग्रन्थ रचे हैं।

आचार्य वरदराज का संक्षिप्त जीवनवृत्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी के वर्णन में आ गया है। अत: लघुसिद्धान्तकौमुदी के वर्णन में इनके जीवनवृत्त पर पुन: चर्चा करना उचित नहीं है।

मध्यसिद्धान्तकौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का सार – सर्वस्व है परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी तो मध्यसिद्धान्तकौमुदी का भी सार सर्वस्व है अर्थात् यह वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अत्यन्त सार और सरल प्रारूप है। वस्तुत: इस ग्रन्थ को वरदराज ने पाणिनीयव्याकरण के प्रथम प्रवेशार्थी सुकुमात्मति बालकों के सुखबोध के लिए पाणिनीयव्याकरण रूपी महाप्रसाद में प्रवेशार्थ प्रथम सोपानरूप में प्रस्तुत किया है।[1]

वरदराज द्वारा लघुसिद्धान्तकौमुदी में दिये मङ्गलाचरण और ग्रन्थ के अन्त में दिये गये ''शास्त्रान्तरे प्रविष्टानाम''[2] आदि उल्लेख से स्पष्ट होता है कि उस समय पाणिनीयव्याकरण में प्रवेश के लिए कोई लघुकायग्रन्थ रचना आवश्यक था। क्योंकि पाणिनीयेत्तर सरल व्याकरणों की ओर पाठकों की रुचि बढ़ रही थी। यद्यपि रूपावतार, रूपमाला आदि प्रक्रियाग्रन्थों का प्रचलन पाणिनीयव्याकरणपरम्परा में शुरू था तथा इन में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पाणिनीयव्याकरण की प्रक्रियाक्रम से पूर्ण जानकारी के लिए प्रसिद्ध था। परन्तु इस की प्रसिद्धता केवल व्याकरणज्ञों में ही थी। व्याकरण प्रवेशार्थियों के लिए रूपावतार आदि पूर्व प्रक्रियाग्रन्थ रूचिकर सिद्ध नहीं थे। इस समस्या के समाधान हेतु वरदराज ने पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से बढ़कर पाणिनीयव्याकरण में उपयोगी प्रक्रियाग्रन्थ लघुसिद्धान्तकौमुदी रचा आज भी व्याकरण में इसी ग्रन्थ द्वारा व्याकरण अध्ययन का प्रारम्भ किया जाता है।

रूपावतार आदि प्रक्रियाग्रन्थों में एक से बढ़कर दूसरे के प्रभाव के कारण पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से पाठकों की रूचि उठ गयी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन प्राय: पाणिनीयपरम्परानुसार ही होने लगा। पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का प्रचलन खत्म हो गया। एक तो ये व्याकरण संख्या में बहुत हैं तथा इन में भिन्न – भिन्न वैयाकरणों ने अपने – अपने मत प्रस्तुत किये हैं।

---

1 (क) नत्वा सरस्वतीं देवीं गुरण्यां करोम्यहम।
पाणिनीय प्रवेशाय ललघुसिद्धान्तकौमुदीम ।। मङ्गलाचरण ल0 सि0 कौ0

(ख) शासत्रान्तरे प्रविष्टानां बालानां चोपकारिका।
कृतावरदराजेन लघुसिद्धान्तकौमुदीम ।। कारिका ल0 सि0 कौ0 पृ0 335

2 कारिका ल0 सि0 कौ0 पृ0 335

इसके विपरीत पाणिनीयव्याकरण में एक ही लेखक की कृत्ति को अनेक प्रकार से प्रस्तुत किया गया है। पाठक जिस भी समस्या का निवारण चाहता था उसी समस्या का समाधान उसे किसी एक ग्रन्थ द्वारा हो जाता था। अत: अध्यापकों और अध्येयताओं ने एक मन बनाकर पाणिनीयपरम्परानुसार ही व्याकरण अध्ययन और अध्यापन का मन बना लिया। इस का श्रेय धर्मकीर्ति से लेकर वरदराज तक सभी प्रक्रियाग्रन्थकारों को जाता है यदि इन्होंने रूपावतार आदि प्रक्रियाग्रन्थ न रचे होते तो पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन- अध्यापन ही समाप्त हो जाता। इन प्रक्रियाग्रन्थों में लघुसिद्धान्तकौमुदी का भी विशेष महत्त्व रहा है। लघुसिद्धान्तकौमुदी का प्रकरण विभाजन और केवल सारमात्र का ही सरल रूप में विवेचन करना इस की अपनी विशेषता है। वरदराज ने लगभग 4000 पाणिनीय सूत्रों में से इस प्रक्रियाग्रन्थ में मात्र 1272 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से विभिन्न प्रकरणों में दिया है।

लघुसिद्धान्तकौमुदी में सर्वप्रथम संज्ञाप्रकरण दिया है इस में मङ्गलाचरण के उपरान्त सर्वप्रथम माहेश्वर सूत्रों का वर्णन है तदुपरान्त ''हलन्यम्''[1] आदि 14 सूत्रों को उदाहरणों और विस्तृत व्याख्या सहित प्रस्तुत किया है। पाणिनीयव्याकरण में संज्ञाविधायक अनेक सूत्रों में से वरदराज ने केवल मुख्य सूत्रों का ही वर्णन किया है। वरदराज ने परिभाषा सूत्रों का वर्णन भी संज्ञाप्रकरण में ही किया है इन्होंने अलग प्रकरण नहीं दिया है।

संज्ञाप्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''अच्सन्धि'' प्रकरण दिया है। वरदराज ने मध्यासिद्धान्तकौमुदी में प्रकृतिभाव का पृथक वर्णन किया है, परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्रकृतिभाव प्रकरण पृथक नहीं दिया है। इतना जरुर है कि इन उदाहरणों से सम्बद्ध सूत्रों को अच्सन्धि के अन्त में रखा है। वैसे भी प्रकृतिभाव अच् सन्धि का ही भाग है। इन उदाहरणों में इतना ही अन्तर है कि दो शब्दों के आदि और अन्त के दोनों अचों को प्रकृतिभाव होता है। अत: अचों से सम्बद्ध होने के कारण यह अच्सन्धि ही है। एक समान कार्य के कारण अनेक प्रक्रिया ग्रन्थकारों ने इसे पृथक प्रकरण दिया है। वरदराज ने भी मध्यसिद्धान्तकौमुदी में प्रकृतिभाव को पृथक प्रकरण दिया है। वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी अच् सन्धि तथा प्रकृतिभाव दोनों प्रकरणों में 82 उदाहरणों की रूपरचना के लिए पाणिनीयव्याकरण के 55 सूत्रों और 14 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2] परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी में संयुक्त अच् सन्धि प्रकरण में मात्र 75 उदाहरण हैं तथा इन की रूपरचना के लिए 47 सूत्रों और 7 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] मध्यसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा इस में संक्षिप्त और साधारण स्पष्टीकरण है।

मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी में इतना अन्तर है कि मध्यसिद्धान्तकौमुदी में अनेक स्थानों पर सूत्रकार्यों का निर्देश है ताकि सूत्र स्मरण आ जाये, परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी में सूत्रकार्य निर्देश के साथ लघुसिद्धान्तकौमुदी में उद्धृत उस सूत्र का जो संख्या क्रम है वह भी दिया गया है ताकि पाठक

1 अष्टा० 1-3-3
2 वै० सि० कौ० अच् तथा प्रकृतिभाव प्रकरण
3 ल० सि० कौ० अच्सन्धि प्रकरण

उस संख्याक्रम को पढ़कर सम्बद्ध सूत्रसंख्याक्रम में उद्धृत उस सूत्र को जान सकें। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ऐसा नहीं है। वहां सूत्रकार्य का ही उल्लेख है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी में संख्याक्रम के साथ सूत्र भी निर्दिष्ट हैं परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी में सूत्र नहीं दिया है केवल लघुसिद्धान्तकौमुदी वाला सूत्रसंख्या क्रम ही दिया है।

लघुसिद्धान्तकौमुदी में अच्सन्धि प्रकरण के उपरान्त ''हल्सन्धि प्रकरण'' है। इस में वरदराज ने मुख्य रूप से 59 उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से 41 पाणिनीय सूत्रों और 7 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] इस प्रकार तुलना करने पर मध्यसिद्धान्तकौमुदी के उदाहरण और सूत्र लघुसिद्धान्तकौमुदी से काफी अधिक है।

तदुपरान्त ''विसर्गसन्धि प्रकरण'' है, इस प्रकरण में वरदराज ने 22 उदाहरणों की रूपरचना के लिए 13 पाणिनीय सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है।[2] वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में केवल अच्, हल् तथा विसर्ग आदि तीन ही सन्धि प्रकरण दिये हैं। जबकि मध्यसिद्धान्तकौमुदी में अच्, प्रकृतिभाव, हल्, विसर्ग तथा स्वादिसन्धि पांच प्रकरणों में उदाहरणों को विभक्त करके, अच्सन्धि आदि पांच प्रकरणों में सन्धियों का उल्लेख किया है। परन्तु लघुसिद्धान्तकौमुदी में उदाहरणों और सूत्रों के साथ प्रकरणों को भी घटा दिया है।

संस्कृतभाषा में प्रयोगार्थ सुबन्त तथा तिङन्त पदों की आवश्यकता होती है क्योंकि ''अपदम् न प्रयुञ्जीत'' नियमानुसार जो पद न हो उसे प्रयोग नहीं किया जा सकता। अष्टाध्यायी में सुबन्त पदों का उल्लेख है परन्तु वह एक क्रम में नहीं है। यह अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में क्रमरहित प्राप्त है। वरदराज ने सुबन्त पदों के एक साथ ज्ञानार्थ अष्टाध्यायी से सूत्रों को चुनकर सम्बन्धित वर्णन को एक क्रम में दिया है। ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम अनेक प्रतिपदिकों से सुबन्त पदों की रूपरचना हेतु वर्णन किया है तदुपरान्त अन्य सुबन्त पदों से सम्बद्ध जानकारी है।

वरदराज ने प्रातिपदिकों को वर्णान्त दृष्टि से छः भागों में विभक्त किया है तथा सूत्रों का विभागानुसार वर्णन किया है। संस्कृतभाषा में तीन लिङ्ग. स्वीकार किये गये हैं। अतः इस भाषा में प्रयुक्त शब्द भी तीन लिङ्गों में विभक्त हैं। वरदराज ने भी तीनों लिङ्गों से सम्बन्धित प्रातिपदिकों को विभक्त करके इन का पृथक-पृथक वर्णन किया है। किसी भी लक्ष्यानुसार किसी भी प्रकरण को छोटे-छोटे प्रकरणों में विभक्त करके उस का ज्ञान करवाना पाठकों को अतिसरल प्रतीत होता है क्योंकि एक बड़ा प्रकरण टुकड़ों में बंट जाता है जिस कारण पाठकों की भावना में अन्तर आता है। वरदराज ने भाषा में प्रयुक्त पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों को अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों में विभक्त किया तथा सुबन्त पदों की जानकारी के लिए ''अजन्तपुलिङ्ग.'' प्रकरण से शुरुआत की है। लघुसिद्धान्तकौमुदी

---

1 ल० सि० कौ० हल्सन्धि प्रकरण

2 ल० सि० कौ० विसर्ग सन्धि प्रकरण

अजन्त पुलिङ्ग. प्रकरण में वरदराज ने 42 प्रातिपदिकों का 100 पाणिनीय सूत्रों और 7 वार्तिकों को सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[1] अनेक प्रातिपदिकों को इन की रूपरचना के समान व्रर्णन का उल्लेख किया है। इस प्रकरण में उदाहरणों को अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त आदि क्रम में उद्धृत किया है।

अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' दिया है। इस में आकारान्त, ईकारान्त, ऊकारान्त आदि क्रम से 16 प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से 18 सूत्रों को चुनकर रूपरचनाक्रम से दिया है।[2] अनेक प्रातिपदिकों को इन की रूपरचना के समान निर्देश दिया है।

लघुसिद्धान्त कौमुदी ''अजन्तनपुंस्कलिङ्ग.'' प्रकरण में 13 प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए 17 पाणिनीय सूत्रों और 3 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[3] अनेक प्रातिपदिकों को समान कार्य सम्बन्धित रूपरचना का निर्देश दिया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी में दिये गये अजन्तपुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग. तथा नपुस्कलिङ्ग. प्रकरणों में इतना अन्तर है कि मध्यसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा लघुसिद्धान्तकौमुदी में केवल मुख्य प्रतिपदिकों का उल्लेख है। इसलिए लघुसिद्धान्तकौमुदी में इन प्रकरणों में सूत्र संख्या भी कम है।

अजन्तप्रातिपदिकों की जानकारी के उपरान्त हलन्तप्रतिपदिकों के उल्लेख के लिए लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 70 हलन्त प्रातिपदिकों को ''अ इ उण्'' आदि प्रत्याहार सूत्रों में उक्त व्यञ्जनों के क्रम से हलन्तप्रातिपदिकों को रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। इस प्रकरण में 108 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है।[4] अनेक प्रातिपदिकों को प्रकरण में दिये गये उदाहरणों की रूपरचना के समान रूपरचना का निर्देश दिया गया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' दिया है। इस में मध्यसिद्धान्तकौमुदी के समान जानकारी ही है। इस प्रकरण में मध्यसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त उपानह् आदि प्रतिपदिकों की रूपरचना के लिए 4 अष्टाध्यायी के सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[5] मध्यसिद्धान्तकौमुदी में भी ये 4 ही सूत्र हैं। सिर्फ मध्यसिद्धान्तकौमुदी में स्त्रज् प्रातिपदिक की जानकारी अधिक है। इतने कम सूत्रों द्वारा अधिकाधिक उदाहरणों का बोध करना लघुसिद्धान्तकौमुदी की विशेषता है। क्योंकि इस में ग्रन्थपद्धति के वर्णनक्रमानुसार अनेक सूत्रों का वर्णन रूपरचना में मात्र सूत्रकार्य से निर्दिष्ट कर दिया है। आवश्यकतानुसार सूत्र की पूर्ण

---

1 ल0 सि0 कौ0 अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण
2 ल0 सि0 कौ0 अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण
3 ल0 सि0 कौ0 अजन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण
4 ल0 सि0 कौ0 हलल्तपुलिङ्ग. प्रकरण
5 ल0 सि0 कौ0 हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण

जानकारी के लिए वहां लघुसिद्धान्तकौमुदी सूत्रसंख्या क्रम भी दिया है ताकि सूत्र को ढूण्डकर पाठक जानकारी प्राप्त कर सकें।

षड्लिङ्ग. प्रकरण में अन्तिम प्रकरण ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण'' है। इस प्रकरण में 22 हलन्त नपुंस्कलिङ्ग. प्रातिपदिकों को ''अ इ उण्'' आदि प्रत्याहार सूत्रों में उक्त व्यञ्जनों के क्रम से हलन्तप्रतिपदिकों को रूपरचना के लिए उद्धृत किया है।[1] इस प्रकरण में 4 पाणिनीय सूत्रों तथा 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में 27 प्रातिपदिकों की रूपरचना इन्हीं 4 सूत्रों द्वारा वर्णित है।

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''अव्यय प्रकरण'' दिया है। इस में अव्ययों का क्रम पूर्वक वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में 6 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2] इस प्रकरण तक ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ का पूर्वाध भाग स्वीकार किया है इस से अगले भाग को उत्तरार्ध कहा है।

लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्रकरण विभाजन मध्यसिद्धान्तकौमुदी के समान है। लघुसिद्धान्तकौमुदी में भी अव्यय प्रकरण के उपरान्त तिङन्त पदों की जानकारी प्रथम है तदुपरान्त शेष सुबन्त पदों की जानकारी है। इस में यह एक कारण है कि वरदराज साधारण वाक्यों की योजना के लिए षड्लिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त क्रियारूपों की जानकारी करवाना चाहते थे। वरदराज साधारण वाक्य योजना के साथ पूर्ण जानकारी भी चाहते थे क्योंकि समयानुसार उस समय संस्कृतभाषा बोल चाल की भाषा से नीचे उत्तर कर केवल संस्कार आदि कार्यों में प्रयोगार्थ कुछ लोगों द्वारा भाषा सिखने के प्रयास तक नीचे आ गयी थी। अतः वरदराज ने इस समस्या के समाधान हेतु साधारण वाक्य योजना के लिए षड्लिङ्ग. तथा क्रियारूपों का ज्ञान सर्वप्रथम करवाया है। इसके उपरान्त पूर्ण जानकारी के लिए णिजन्त, कृदन्त, विभकत्यश, समास, तद्धित तथा स्त्री प्रत्ययों के ज्ञानार्थ लघुसिद्धान्तकौमुदी में उल्लेख किया है।

अव्ययप्रकरण के उपरान्त वरदराज ने क्रियारूपों के ज्ञान के लिए भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि गणों की धातुओं के दस लकारों में विभिन्न क्रियारूपों का उल्लेख किया है। लघुसिद्धान्तकौमुदी में सर्वप्रथम ''भ्वादि प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने भ्वादिगणीय 1010 धातुओं में से 50 धातुओं की रूपरचना का वर्णन किया है।[3] इस प्रकरण में इन्होंने सर्वप्रथम भू आदि 20 परस्मैपदी धातुओं की विभिन्न रूपरचना का वर्णन है। इस में 136 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। ये सूत्र और वार्तिक सूत्रमूलकग्रन्थों में विभिन्न अध्यायों में प्राप्त है।[4] परस्मैपदी वर्णन के उपरान्त इन्होंने भ्वादि गण की ''एध् वृद्धौ'' आदि 21 आत्मनेपदी

---

1 ल० सि० कौ० हलन्तपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण
2 ल० सि० कौ० अव्यय प्रकरण
3 ल० सि० कौ० भ्वादि प्रकरण
4 ल० सि० कौ० भ्वादि प्रकरण

धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए 35 पाणिनीय सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[1] तदुपरान्त 9 उभयपदी धातुओं का वर्णन है। इस में अष्टाध्यायी के 8 सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[2] वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी में भ्वादि गणीय धातुओं का परस्मैपदी, आत्मनेपदी तथा उभयपदी धातुओं में वर्गीकृत करके इसी क्रम से रूपरचना के लिए उद्धृत किया है। भ्वादि गण की 1010 धातुओं में से मात्र 50 का वर्णन करना अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन है। यह उस समय संस्कृतभाषा की दूर्दशा को प्रदर्शित करता है। लगता है उस समय भू आदि 1010 धातुओं में से मात्र 50 धातुओं के क्रियारूपों से व्यवहार चलाया जा सकता था।

इस प्रकरण के उपरान्त अदादि प्रकरण है। इस प्रकरण में 25 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन है।[3] जिस में सर्वप्रथम 18 परस्मैपदी धातुओं की रूपरचना के लिए सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों में से 35 सूत्रों को रूपरचना क्रम से दिया है । तदुपरान्त 2 आत्मनेपदी धातुओं की रूपरचना 6 सूत्रों द्वारा दिखाई है। इस के बाद 5 उभयपदी धातुओं की रूपरचना के लिए 15 सूत्रों और 2 वार्तिकों को सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है।[4] इस प्रकरण में 56 सूत्रों और 2 वार्तिकों को रूपरचनार्थ सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायायों से चुनकर रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[5] वरदराज ने इस प्रकरण में अदादि गण की 72 धातुओं में से मात्र 25 की रूपरचना जानकारी दी है।[6]

इस प्रकरण के उपरान्त "जुहोत्यादि प्रकरण" है। इस प्रकरण की 24 धातुओं में से वरदराज ने मात्र 11 की रूपरचना का वर्णन किया है।[7] मध्यसिद्धान्तकौमुदी में 15 धातुओं की विभिन्न रूपरचना का वर्णन है। इन रूपरचनाओं की जानकारी के लिए वरदराज ने 26 पाणिनीय सूत्रों का विभिन्न अध्यायों से चुनाव किया है तथा इस में 1 वार्तिक है।[8]

लघुसिद्धान्तकौमुदी में जुहोत्यादि प्रकरण के उपरान्त "दिवादि प्रकरण" है। इस प्रकरण में 17 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन है। इस प्रकरण में विभिन्न रूपरचना के लिए 17 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[9] वरदराज ने 140 दिवादि गण की धातुओं में से मात्र 17 की रूपरचना का वर्णन किया है।[10] मध्यसिद्धान्तकौमुदी में इस प्रकरण में 81 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन है। इस वर्णन से स्पष्ट है कि लघुसिद्धान्तकौमुदी में मध्यसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा भी अति संक्षिप्त है।

इस प्रकरण के उपरान्त स्वादिगणीय 34 धातुओं में से वरदराज ने मात्र 4 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में अष्टाध्यायी के 6 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[11] इस प्रकरण के

1 ल0 सि0 कौ0 भ्वादि प्रकरण
2 ल0 सि0 कौ0 भ्वादि प्रकरण
3 ल0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण
4 ल0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण
5 ल0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण
6 ल0 सि0 कौ0 अदादि प्रकरण
7 ल0 सि0 कौ0 जुहोत्यादि प्रकरण
8 ल0 सि0 कौ0 जुहोत्यादि प्रकरण
9 ल0 सि0 कौ0 दिवादि प्रकरण
10 ल0 सि0 कौ0 दिवादि प्रकरण
11 ल0 सि0 कौ0 स्वादि प्रकरण

उपरान्त तुदादि प्रकरण है। वरदराज ने इस गण की 157 धातुओं में से केवल 45 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन किया है।[1] इस प्रकरण की ''तुद् व्यथने'' धातु उभयपदी है। अतः इस प्रकरण में सर्वप्रथम उभयपदी फिर आत्मनेपदी और बाद में परस्मैपदी धातुओं का वर्णन है। इस प्रकरण में 15 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[2]

इस के उपरान्त ''रूधादि प्रकरण'' है। वरदराज ने इस गण की 25 धातुओं में से 21 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन किया है।[3] इस प्रकरण में भी सर्वप्रथम उभयपदी तदुपरान्त आत्मनेपदी और बाद में परस्मैपदी धातुओं के विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी है। इस प्रकरण में मात्र 7 सूत्र हैं।[4]

लघुसिद्धानतकौमुदी ''तनादि प्रकरण'' में वरदराज ने इस गण की 10 धातुओं में से 8 धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन किया है।[5] इस में परस्मैपदी क्रियारूपों का अभाव है। क्योंकि इस गण में 8 धातुएँ उभयपदी हैं। 2 धातुएँ आत्मनेपदी हैं।[6] अतः परस्मैपदी क्रियारूपों का अभाव है। इस प्रकरण में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 11 सूत्रों को रूपरचनाक्रम से प्रयोग किया है।[7]

इस प्रकरण के उपरान्त ''क्रयादि प्रकरण'' दिया है। पाणिनीय धातुपाठ में क्रयादिगण में 71 धातुयें हैं।[8] वरदराज ने इन में से 22 धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए 10 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[9] इस प्रकरण में सर्वप्रथम उभयपदी तदुपरान्त परस्मैपदी और बाद में आत्मनेपदी धातुओं के क्रियारूपों की जानकारी है।[10]

इस प्रकरण के उपरान्त ''चुरादि प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने 410 चुरादि गण की धातुओं में से मात्र 3 धातुओं के क्रियारूपों की जानकारी के लिए 4 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है।[11]

इसी प्रकरण के साथ विभिन्न धातुओं से सम्बन्धित विभिन्न क्रियारूपों का प्रकरण तिङन्त प्रकरण समाप्त हो जाता है। इस के उपरान्त णिजन्त, सनन्त आदि प्रक्रियाओं के प्रकरण प्रारम्भ होते हैं।

अनेक स्थानों पर इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना, चाहना, प्रेरणा, आचार आदि अर्थो को प्रकट करने के लिए अनेक पदों की आवश्यकता होती है। अष्टाध्यायी में इस समस्या समाधान हेतु विभिन्न धातुओं और अनेक सुबन्त पदों से अनेक प्रत्ययों का विधान किया गया है। इस प्रकार के सूत्र तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं परन्तु वहां विभिन्न पदों की जानकारी रूपरचना क्रम से नहीं दी है। पाठक काशिका आदि प्रमुख वृत्ति ग्रन्थों के उपरान्त णिजन्त, सनन्त आदि पदों की जानकारी

---

1 ल० सि० कौ० तुदादि प्रकरण
2 ल० सि० कौ० तुदादि प्रकरण
3 ल० सि० कौ० रूधादि प्रकरण
4 ल० सि० कौ० रूधादि प्रकरण
5 ल० सि० कौ० तनादि प्रकरण
6 पा० धा० पा०
7 ल० सि० कौ० तनादि प्रकरण
8 ल० सि० कौ० क्रयादि प्रकरण
9 ल० सि० कौ० क्रयादि प्रकरण
10 ल० सि० कौ० क्रयादि प्रकरण
11 ल० सि० कौ० चुरादि प्रकरण

प्रक्रियाक्रम से चाह रहे थे। पाठकों की इच्छानुसार अनेक प्रक्रियाग्रन्थकारों ने पाणिनीयव्याकरण पर अनेक प्रक्रियाग्रन्थ प्रस्तुत किये हैं। यद्यपि वरदराज से पूर्व अनेक प्रक्रियाग्रन्थों का प्रचलन था तथा इन द्वारा रचित मध्यसिद्धान्तकौमुदी का भी व्याकरण परम्परा में अच्छा स्थान था फिर भी वरदराज ने पाठकों की अनेक समस्या समाधान हेतु प्रथम प्रवेशार्थी बालकों के सुखबोधार्थ लघुसिद्धान्तकौमुदी की रचना की। इस में इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना आदि अर्थों को प्रकट करने वाले पदों के निर्माण हेतु ण्यन्त, सन्नन्त आदि प्रक्रिया प्रकरणों में वर्णन किया गया हैं। इन प्रक्रिया प्रकरणों में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों से चुन कर प्रक्रियाक्रम से दिया है।

इन प्रकरणों में ''ण्यन्तप्रक्रिया प्रकरण'' आदि में दिया है। विभिन्न धातुओं से प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय से सूत्रों का उल्लेख किया है। वरदराज ने प्रत्ययविधायक मात्र एक ''हेतुमति च''[1] सूत्र का वर्णन किया है शेष 6 सूत्र अन्य रूपरचना से सम्बद्ध वर्णन करते हैं, जो विभिन्न अध्यायों से चुनकर दिये हैं। इस प्रकरण में 7 सूत्र हैं।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''सन्नन्तप्रक्रिया प्रकरण" है। इस प्रकरण में इच्छा अर्थ प्रकट करने वाले सन् प्रत्यय का उल्लेख है। इस प्रकरण में 6 सूत्र हैं जो सनन्त प्रक्रिया का वर्णन करते हैं तथा सभी क्रियाओं से सन्नन्तप्रक्रिया का उल्लेख करते हैं।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''यङन्तप्रक्रिया प्रकरण'' है। इस प्रकरण में बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने वाले यङ् प्रत्यय का उल्लेख है तथा रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से दिया है जो सभी धातुओं से यङन्त प्रक्रिया का सांकेतिक वर्णन करते हैं। इस प्रकरण में 7 सूत्र हैं।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त ''यङ्लुगन्तप्रक्रिया प्रकरण'' है। यह प्रकरण भी बार-बार होना या अधिक होना अर्थ प्रकट करने वाले पदों की रूप रचना का ही वर्णन करता है। परन्तु इस में इतना अन्तर है कि इस प्रकरण में ''यङोऽचि च''[5] सूत्र से यङ् प्रत्यय का लोप होता है इसी कारण वरदराज ने इस प्रकरण को यङ् प्रकरण से पृथक स्थान दिया है तथा रूपरचनानुसार इस प्रकरण को यङ्लुगन्त प्रक्रिया संज्ञा दी है क्योंकि इन पदों में यङ् प्रत्यय का लोप हो जाता है। इस प्रकरण में मात्र 2 सूत्र हैं।[6]

इस प्रकरण के उपरान्त ''नामधातु'' प्रकरण दिया है। इच्छा, आचार आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए अष्टाध्यायी में प्रत्ययों का विधान किया है। इन प्रत्ययों को वरदराज ने तृतीय अध्याय से चुनकर

---

1 अष्टा0 3-1-26
2 ल0 सि0 कौ0 ण्यन्तप्रक्रिया
3 ल0 सि0 कौ0 सन्नन्त प्रक्रिया
4 ल0 सि0 कौ0 यङन्तप्रक्रिया
5 अष्टा0 2-4-74
6 ल0 सि0 कौ0 यङ्लुगन्तप्रक्रिया

इस प्रकरण में दिया है। अष्टाध्यायी से रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों का चुनाव भी किया है। इस प्रकरण के उदाहरणों में सुबन्त पदों से क्यच्, काम्यच् आदि प्रत्यय करने पर ''सनाद्यन्ता धातवः''[1] सूत्र से धातुसंज्ञा करने पर ये उदाहरण तिङन्त रूप में प्रकट होते हैं। इसी कारण इस प्रकरण को नामधातु संज्ञा दी है क्योंकि इस में सुबन्त अर्थात नाम पदों को बाद में धातु बनाया जाता है। इस प्रकरण में 10 सूत्र तथा 2 वार्तिक हैं।[2]

इस प्रकरण के बाद ''कण्ड्वादि'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में मात्र कण्डूञ् धातु से स्वार्थ में यक् प्रत्यय का विधान है। इस प्रकरण में मात्र ''कण्ड्वादिभ्यो यक्''[3] एक सूत्र है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''आत्मनेपदप्रक्रिया'' प्रकरण है । इस प्रकरण में विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए या अनेक उपपदों के योग में धातुओं से आत्मनेपद व्यवस्था का वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में 14 सूत्र हैं।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त ''परस्मैपदप्रक्रिया'' प्रकरण है । इस प्रकरण में भी विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए तथा अनेक उपपदों के योग में धातुओं से परस्मैपद व्यवस्था का विधान किया गया है। इस प्रकरण से सम्बन्धित अनेक सूत्रों में से वरदराज ने मात्र 6 सूत्रों का प्रयोग किया है।[5]

इस प्रकरण के उपरान्त ''भावकर्मप्रक्रिया'' नामक प्रकरण है। वाच्यपरिवर्तन के लिए अकर्मक और सकर्मक क्रिया का भाववाच्य और कर्मवाच्य रूपरचनार्थ व्याकरण में वर्णन किया गया है। वरदराज ने सम्बन्धित सूत्रों को अष्टध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र भी रूपरचना क्रम से प्रयुक्त हैं। इस प्रकरण में सब सूत्रों की संख्या 9 है।[6]

इस प्रकरण के उपरान्त ''कर्मकर्तृप्रक्रिया'' नामक प्रकरण है। अनेक स्थानों पर जब आवश्यकतानुसार कर्म को ही कर्ता कहना इष्ट होता है। वहां सर्कमकधातु अकर्मक हो जाते हैं। इस अवस्था में भाव और कर्म से लकार होते हैं। इस प्रक्रिया ज्ञानार्थ वरदराज ने ''कर्मकर्तृप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ''कर्मवत्कर्मणा तुल्यक्रियः''[7] मात्र 1 सूत्र है।

लकारार्थ ज्ञान हेतु तथा धातु से विभिन्न उपपदों के योग में किस लकार का प्रयोग किया जाये, इस प्रकार का वर्णन वरदराज ने अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय द्वितीय तथा तृतीय पाद से चुनकर

---

1 अष्टा0 2-4-32
2 ल0 सि0 कौ0 नामधातु प्रकरण
3 अष्टा0 3-1-27
4 ल0 सि0 कौ0 आत्मपदप्रक्रिया
5 ल0 सि0 कौ0 परस्मैपद प्रक्रिया
6 ल0 सि0 कौ0 भवकर्मप्रक्रिया
7 अष्टा0 3-1-87

''लकारार्थप्रक्रिया'' प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने मात्र 5 पाणिनीय सूत्रों का प्रयोग किया है।[1] इसी प्रकरण के साथ तिङन्त प्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरानत वरदराज ने कृदन्त प्रकरण दिया है। वरदराज ने भी कृदन्तों को तीन भागों में विभक्त किया है। वे हैं कृत्यप्रक्रिया, पूर्वकृदन्त तथा उत्तर कृदन्त। वरदराज ने सर्वप्रथम कृत्य संज्ञक प्रत्ययों में से मुख्य प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का चुनाव किया है तथा विभिन्न उदाहरणों के लिए उन सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है। रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ दूसरे सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रम से 18 और 1 है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''पूर्वकृदन्त'' प्रकरण है। इस प्रकरण में वरदराज ने ''ण्वुल् तृचौ''[3] सूत्र से लेकर तृतीय अध्याय द्वितीय पाद के अन्त तक प्रत्यय विधायक सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है। प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 62 सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[4]

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''उणादि'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने ''कृ-वा-या-जि-मि-स्वादि-साध्यशूभ्य उण''[5] मात्र एक उणादि सूत्र का वर्णन है तथा ''उणादयो बहुलम्''[6] एक पाणिनीय सूत्र का वर्णन है। लघुसिद्धान्तकौमुदी को छोड़कर अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में इस सूत्र को ''उतरकृदन्त'' प्रकरण के आदि में दिया है। वरदराज ने उणादि वर्णन मात्र प्रसङ्ग. किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने ''उत्तरकृदन्त'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में शेष कृदन्त प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का चुनाव करके उदाहरणों की जानकारी के लिए रूपरचनाक्रम से दिया है। रूपरचना में सहायक दूसरे सूत्र भी हैं। ''उतरकृदन्त'' प्रकरण में 40 सूत्र और 2 वार्तिक हैं।[7] इसी प्रकरण के साथ कृदन्त प्रकरण समाप्त हो जाता है।

इस प्रकरण के उपरान्त वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''विभक्त्यर्थ'' प्रकरण दिया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी को छोड़कर सभी प्रक्रियाग्रन्थों में यह प्रकरण षड्लिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त दिया है इस के बाद स्त्रीप्रत्यय प्रकरण है परन्तु इन दोनों प्रक्रियाग्रन्थों में ''स्त्रीप्रत्यय प्रकरण'' ग्रन्थ के अन्त में दिया है। अष्टाध्यायी में विभक्तिसंज्ञाविधायकसूत्र तथा विभक्तिविधायकसूत्र क्रमरहित

---

1 ल0 सि0 कौ0 लकारार्थप्रक्रिया

2 ल0 सि0 कौ0 कृत्यप्रकरण

3 अष्टा0 3-1-133

4 ल0 सि0 कौ0 पूर्वकृदन्त प्रकरण

5 उणादि प्रथम पाद प्रथम सूत्र

5 अष्टा0 3-3-1

6 ल0 सि0 कौ0 उतरकृदन्त प्रकरण

है और एक दूसरे से काफी अन्तर में स्थित है। वरदराज ने इन सूत्रों को प्रथम अध्यय चतुर्थ पाद और द्वितीय अध्याय तृतीय पाद से चुनकर इस प्रकरण में उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण में मात्र मुख्य सूत्रों का वर्णन है। प्रकरण में 17 सूत्र और 1 वार्तिक है।[1] वरदराज ने इस प्रकरण को विभक्त्यर्थ की संज्ञा दी है। इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इस प्रकरण को ''कारक प्रकरण'' से सम्बोधित किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''समास प्रकरण'' आता है। अष्टाध्यायी में समास विधायकसूत्र द्वितीय अध्याय प्रथम तथा द्वितीय पाद में हैं। समास के उपरान्त समस्त पदों की रूपरचना तक एक लम्बी प्रक्रिया से सम्बन्धित सूत्र पड़ता है। समास सम्बद्ध सम्पूर्ण प्रक्रिया से सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी के कम से कम छ: अध्यायों में विखरे हैं। वरदराज ने भी अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान इन सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में यथावश्यकता प्रक्रियाक्रम से दिया है ताकि पाठकों को सुविधा प्रदान की जा सके। इतना अन्तर जरुर है कि इन्होंने व्याकरण प्रवेशार्थियों के लिए मात्र उपयोगी और सरल जानकारी दी है।

समासप्रकरण में वरदराज ने सर्वप्रथम समास के भेद, परिभाषा, किस समास में कौन पद प्रधान होता है, समासाधिकार का स्पष्टीकरण तथा किन-किन पदों में समास होता है आदि विवरण के उपरान्त ''अव्ययीभावसमास प्रकरण'' आता है। इस विवरण में 3 सूत्र और 1 वार्तिक है।[2] तदुपरान्त ''अव्ययीभाव'' प्रकरण है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए अव्ययीभावसमास विधायक सूत्रों के उपरान्त समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में 15 पाणिनीय सूत्रों को विभिन्न अध्यायों से चुनकर दिया है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''तत्पुरुषसमास प्रकरण'' है। इस प्रकरण में समासविधायक सूत्रों के उपरान्त समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक सूत्रों और वार्तिकों को भी सूत्रमूलकग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण में 43 सूत्र और 9 वार्तिक हैं।[4] यह प्रकरण दूसरे समास प्रकरणों से बड़ा है क्योंकि इसमें समास के भेदापभेद कर्मधारय और द्विगु का वर्णन भी है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''बहुव्रीहिसमास प्रकरण'' है। बहुव्रीहिसमास विधायक 5 सूत्रों में से वरदराज ने केवल 1 सूत्र का ही उल्लेख किया है। रूपरचना में सहायक समासान्त, पुम्वदभाव या स्त्रीवदभाव, विभक्तिलुक् आदि विधायक सूत्र पञ्चम तथा षष्ट अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से दिये हैं इस प्रकरण में सूत्रों और वार्तिकों की संख्या क्रम से 17 और 2 है।[5]

---

1 ल0 सि0 कौ0 विभक्त्यर्थप्रकरण
2 ल0 सि0 कौ0 केवलासमासप्रकरण
3 ल0 सि0 कौ0 अव्ययीभावसमास प्रकरण
4 ल0 सि0 कौ0 तत्पुरूषसमास प्रकरण
5 ल0 सि0 कौ0 बहुव्रीहिसमास प्रकरण

इस प्रकरण के उपरान्त ''द्वन्द्व समास प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में 8 सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] इस प्रकरण के उपरान्त ''समासान्त प्रकरण'' शुरू होता है। अनेक समासन्त प्रत्ययों का वर्णन प्रसङ्ग.वश वरदराज अव्ययीभाव आदि समास प्रकरणों में कर आये हैं। शेष समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों में से वरदराज ने केवल 4 सूत्रों का रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2] इसी प्रकरण के साथ समासप्रकरण समाप्त हो जाता है। वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''अलुक्समास'' तथा ''समासाश्रयविधि'' प्रकरण का उल्लेख नहीं किया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में इन प्रकरणों का वर्णन भी है। लघुसिद्धान्तकौमुदी में इस वर्णन को छोड़ दिया है।

इस प्रकरण के उपरानत तद्धितप्रकरण प्रारम्भ किया है। इस प्रकरण में तद्धितान्त पदों के ज्ञानार्थ तद्धित प्रत्ययविधायक सूत्रों को आवश्यकतानुसार अष्टाध्यायी के चतुर्थ और पञ्चम अध्यायों से चुनकर उन्हें विभिन्न प्रकरणों में विभक्त किया है जिस कारण छोटे-छोटे प्रकरण बन गये हैं। जिन्हें पढ़ने में पाठक रूचि रखते हैं। तद्धित प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों के साथ तद्धितान्त पदों की रूपरचना के लिये अन्य उपयोगी सूत्रों और वार्तिकों को भी प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।

तद्धितप्रकरण में सर्वप्रथम साधारण प्रत्ययों का वर्णन किया गया है। इस प्रकरण में मात्र 3 सूत्र अपत्यादि विकारान्तार्थ में साधारण प्रत्यय करते हैं। शेष सूत्र रूपरचना में सहायक आदि वृद्धि या अन्य कार्यो का विधान करते हैं। इस प्रकरण में कुलमिलाकर 6 सूत्र तथा 4 वार्तिक हैं।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त ''अपत्याधिकार प्रकरण'' है। इस प्रकरण में अपत्यार्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न रूपरचनार्थ सूत्रों का चुनाव किया है। रूपरचना में सहायक दूसरे सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में 30 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[4] इस प्रकरण के उपरान्त ''रक्ताद्यर्थक'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में 24 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है। इस प्रकरण में 'तेन रक्तं रागात्''[5] सूत्र आदि में दिया है इसी कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को रक्ताद्यर्थक संज्ञा दी है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''चातुरर्थिक'' प्रकरण दिया है। उदाहरणों की जानकारी हेतु इस प्रकरण में 12 सूत्रों का रूप रचनाक्रम से प्रयोग किया है।[6] इस प्रकरण में जिसमें, निवृत्त, निवास, अद्रभव आदि चार अर्थो में प्रत्ययों का वर्णन किया गया है इसी कारण इस प्रकरण की चातुरर्थिक संज्ञा दी है। तदुपरान्त जात,भव आदि अर्थ शेष रहते हैं। इनकी जानकारी के लिए वरदराज ने ''शैषिक'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियामूलक ग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 55 पाणिनीय सूत्रों और 5 वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[7]

---

1 ल0 सि0 कौ0 द्वन्द्वसमास प्रकरण
2 ल0 सि0 कौ0 समासान्त प्रकरण
3 ल0 सि0 कौ0 अपत्यादिविकारान्तार्थसाधारणप्रत्यय प्रकरण।
4 ल0 सि0 कौ0 अपत्यत्यधिकार प्रकरण
5 अष्टा0 4-2-1
6 ल0 सि0 कौ0 चातुरर्थिक प्रकरण
7 ल0 सि0 कौ0 शैषिक प्रकरण

इस प्रकरण के उपरान्त ''प्राग्दीव्यतीय प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में वरदराज ने अष्टाध्यायी के सूत्र ''तस्य विकारः''[1] सूत्र से लेकर ''तेन दीव्यति रवनति जयति जितम्''[2] सूत्र तक मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में 6 सूत्र और 1 वार्तिक है।[3] सूत्र में उक्त ''दीव्यति'' से पूर्व का वर्णन करने के कारण ग्रन्थकार ने इस प्रकरण को ''प्राग्दीव्यतीय'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण के उपरान्त ''ठगधिकार'' प्रकरण है। इस में 14 सूत्र और 1 वार्तिक है।[4] ठक् प्रत्यय के वर्णन के कारण इसे ''ठगधिकार'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण के उपरान्त ''यदधिकार'' प्रकरण है। इस प्रकरण में उदाहरणों की रूपरचनार्थ यत् अधिकार से आवश्यकतानुसार सूत्रों का चुनाव किया है। इस प्रकरण में 7 सूत्र हैं।[5]

इस प्रकरण के उपरान्त ''छयतोरधिकार'' प्रकरण है। इस में छ और यत् प्रत्ययों के अधिकार में से मुख्य सूत्रों का रूपरचनाक्रम से वर्णन किया है। इस प्रकरण में 6 सूत्र और 1 वार्तिक है।[6] तदुपरान्त ठञधिकार है इस में 8 पाणिनीय सूत्र है।[7]

छयतोरधिकार प्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''त्वतलधिकार'' प्रकरण है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी में वरदराज ने इस प्रकरण को ''भावकर्मार्थ'' प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 12 पाणिनीय सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[8]

इस प्रकरण के उपरान्त ''भवनार्थक'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण को मध्यसिद्धान्तकौमुदी में ''पाञ्चमिकेषुभवनाद्यर्थक'' नामक प्रकरण संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 21 पाणिनीय सूत्रों को चुनकर प्रयोग किया है।[9] इस प्रकरण के उपरान्त ''मत्वर्थीय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में मतुप अर्थ में विभिन्न प्रत्यय करने वाले सूत्रों में से मुख्य सूत्रों को चुनकर रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है। रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं। इस प्रकरण में 13 पाणिनीय सूत्र तथा 5 वार्तिक हैं।[10] इस प्रकरण के उपरान्त ''प्राग्दिशीय प्रकरण'' दिया है। इस में 22 सूत्र और 1 वार्तिक है।[11] इस प्रकरण के उपरान्त ''प्रागिवीय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए ''इवे प्रतिकृतौ''[12] सूत्र से पूर्व सूत्रों से आवश्यकतानुसार मुख्य सूत्रों का वर्णन किया है। इवार्थ से पूर्व का वर्णन करने के कारण इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने ''प्रागिवीय'' संज्ञा दी है। इस प्रकरण में 20 सूत्र और 1 वार्तिक है।[13] तद्धित प्रकरण में अन्तिम प्रकरण ''स्वार्थिक'' प्रकरण है। इसमें ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए स्वार्थ में विभिन्न प्रत्यय करने वाले विभिन्न सूत्रों में से मुख्य सूत्रों का प्रयोग किया है। ये सूत्र सूत्रमूलकपद्धति के पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। इस प्रकरण में मात्र 10 सूत्र और 5 वार्तिक हैं।[14]

---

1 अष्टा0 4-3-134
2 अष्टा0 4-4-2
3 ल0 सि0 कौ0 प्राग्दीव्यतीय प्रकरण
4 ल0 सि0 कौ0 ठगधिकार प्रकरण
5 ल0 सि0 कौ0 यदधिकार प्रकरण
6 ल0 सि0 कौ0 छयतोरधिकार प्रकरण
7 ल0 सि0 कौ0 ठञधिकार प्रकरण
8 ल0 सि0 कौ0 त्वतलधिकार प्रकरण
9 ल0 सि0 कौ0 भवनाद्यर्थक प्रकरण
10 ल0 सि0 कौ0 मत्वर्थीय प्रकरण
11 अष्टा0 5-3-96
12 ल0 सि0 कौ0 प्राग्दिशीय प्रकरण
13 ल0 सि0 कौ0 प्रागिवीय प्रकरण
14 ल0 सि0 कौ0 स्वार्थिक प्रकरण

इस प्रकरण में अष्टाध्यायी पञ्चम अध्याय चतुर्थ पाद से मात्र 5 सूत्रों का वर्णन करना ग्रन्थ की संक्षिप्तता को सिद्ध करता है। ''द्विरूक्त प्रक्रिया'' का वर्णन लघुसिद्धान्तकौमुदी में वरदराज ने नहीं किया है।

तद्धितप्रकरण के उपरान्त लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''स्त्रीप्रत्यय प्रकरण'' दिया है। यह प्रकरण वरदराज ने ग्रन्थ के अन्त में दिया है। वरदराज से पूर्व सभी प्रक्रियाग्रन्थकारों ने इसे कारक प्रकरण के उपरान्त दिया है। वरदराज ने स्त्रीत्व विवक्षा में प्रत्ययविधायक सूत्रों को अष्टाध्यायी के चतुर्थ अध्याय प्रथम पाद से उठाकर उदाहरणों की रूपरचना के लिए आवश्यकतानुसार चुनकर प्रक्रिया क्रम से दिया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक सम्बन्धित सूत्रों को भी विभिन्न अध्यायों से उठाकर प्रक्रिया क्रम से प्रयुक्त किया है। इस प्रकरण में 29 सूत्र और 16 वार्तिक हैं।[1] इस प्रकरण की समाप्ति के साथ ग्रन्थ भी समाप्त हो जाता है।

वरदराज ने वैदिकप्रक्रिया, स्वरप्रक्रिया तथा लिङ्गानुशासन का लघुसिद्धान्तकौमुदी में वर्णन नहीं किया है। वैदिक पदों की मीमांसा वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों की भान्ति नहीं की है। लघुसिद्धान्तकौमुदी की अनेक विशेषताओं के कारण यह ग्रन्थ प्रथम प्रवेशार्थी पाठकों के लिए अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है। यही कारण है कि आज भी पाणिनीयव्याकरण का प्रारम्भिक अध्ययन इसी ग्रन्थ से प्रारम्भ किया जाता है।

९ सारसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थकार नरदराज :–

आचार्य भट्टोजिदीक्षित के सामकालिक आचार्य वरदराज ने वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के लगभग 25 – 30 वर्ष बाद व्याकरणपरम्परा में पाणिनीयव्याकरण पर ''सारसिद्धान्तकौमुदी'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा है। यह प्रक्रियाग्रन्थ इन द्वारा रचित मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी के बाद रचा गया है। मध्य, लघु तथा सारसिद्धान्तकौमुदी ग्रन्थक्रम ही इस तथ्य में प्रमाण है। भट्टोजिदीक्षित वरदराज के गुरु थे। अतः इन के काल में कम से कभ 10 – 15 वर्ष का अन्तराल सम्भव है।

आचार्य वरदराज का संक्षिप्त जीवन वृत्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी के वर्णन में आ गया है। अतः सारसिद्धान्तकौमुदी के वर्णन में इनके जीवनवृत्त पर पुनः चर्चा करना उचित नहीं है।

वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त बालबोधार्थ सारसिद्धान्तकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की है। इस ग्रन्थ द्वारा ग्रन्थकार का लक्ष्य छोटी आयु के बालकों को वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के सारमात्र का साधारण प्रक्रिया द्वारा ज्ञान प्राप्त करवाना है। वरदराज के उपरान्त भी अनेक प्रक्रियाग्रन्थकारों ने प्रक्रियाग्रन्थ रचे हैं। इनमें वेदाङ्गप्रकाश को छोड़कर शेष ग्रन्थ सारसिद्धान्तकौमुदी के समान व्याकरण का साररूप प्रस्तुत करते हैं, मात्र वेदाङ्गप्रकाश व्याकरण की पूर्ण जानकारी प्रस्तुत करता है। वरदराज के उपरान्त लगभग सभी प्रक्रियाग्रन्थकार कोई नई विशेषता अपने प्रक्रियाग्रन्थों को नहीं दे पाये हैं। प्रयास सभी ने किया है परन्तु रूपावतार से लेकर सारसिद्धान्तकौमुदी तक प्रक्रियापद्धति की

---

1 ल० सि० कौ० स्त्रीप्रत्यय प्रकरण

सभी विशेषताएँ इनमें आ गयी हैं। अतः नवीन वर्णन असंभव है। इतना जरुर है कि नवीन प्रक्रियाग्रन्थों में उदाहरण आधुनिक तथा वेदाङ्गप्रकाश में वर्णन संस्कृत की अपेक्षा हिन्दी में दिया है परन्तु यह सब पद्धति की विशेषता नहीं है।

वरदराज ने सारसिद्धान्तकौमुदी में पाणिनीय 688 सूत्रों का प्रक्रिया क्रम से वर्णन किया है। वर्णनक्रम लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान ही है। इस में इतना ही अन्तर है कि लघुसिद्धान्तकौमुदी के अनेक उदाहरणों का ग्रन्थकार ने सारसिद्धान्तकौमुदी में वर्णन नहीं किया है। सारसिद्धान्तकौमुदी में अत्युपयुक्त उदाहरणों का सरल प्रक्रिया में वर्णन है। ग्रन्थकार ने इस ग्रन्थ की रचना बालकों को आसानी से ज्ञान करवाने के उद्देश्य से की है।[1]

सारसिद्धान्तकौमुदी चार खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में मङ्गलाचरण के उपरान्त संज्ञा प्रकरण है। इस प्रकरण में लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान ही वर्णन है। संज्ञा प्रकरण के उपरान्त सन्धि जानकारी है। सन्धियों में सर्वप्रथम ''अच्सन्धि'' प्रकरण है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में दिये ''उपैति'',''उपैधते'', ''प्रष्ठौहः'', ''अक्षौहिणी'' आदि उदाहरणों का वर्णन नहीं किया है। यह वर्णन लघुसिद्धान्तकौमुदी में ''एत्येधत्यूठ्सु''[2] सूत्र तथा इस के अन्तर गत ''अक्षादूहिन्यामुपसंख्यानम्'' आदि वार्तिकों में प्राप्त है। इसी तरह ''शिवायों नमः'','' शिवेहि'','' अमी इशा'' आदि उदाहरणों की रूपरचना जानकारी भी छोड़ दी है। शेष वर्णन लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान ही है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 38 पाणिनीय सूत्रों और 2 कात्यायनीय वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[3]

अच्सन्धि के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में ''हल् सन्धि'' प्रकरण है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''सम्राट'', ''किमृह्मलयति'', ''किम् ह्मलयति'', किन्ह्नुतः'', ''किंह्नुतः'', ''प्राङ्ख्षष्ठः'', ''प्राङ्क्षष्ठः'','' प्राङ्षष्ठः'' आदि अनेक उदाहरणों का वर्णन छोड़ किया है। इस प्रकरण में भी ''अच् सन्धि'' प्रकरण के समान अत्यावश्यक और सरल उदाहरणों का वर्णन है। सम्पूर्ण सारसिद्धान्तकौमुदी में सरल और अत्यावश्यक उदाहरणों की ही जानकारी है। ''हल्सन्धि प्रकरण'' में ग्रन्थकार ने 25 पाणिनीय सूत्रों और 2 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण के उपरान्त ''विसर्गसन्धि'' प्रकरण है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त अनेक उदाहरणों की जानकारी नहीं दी है। इस प्रकरण में 15 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[4]

सारसिद्धान्तकौमुदी में दो तरह से पाणिनीय सूत्रों का वर्णन किया गया है। प्रथम प्रकार में सूत्र व्याख्यासहित दिये हैं जिस में सारसिद्धान्तकौमुदी में दिये संख्याक्रम के साथ अष्टाध्यायी सूत्र संख्याक्रम भी

---

1 नत्वा वरदराजः श्री पाणिन्यादिमुनित्रयम्।
करोति बालबोधाय सारसिद्धान्तकौमुदीम्।। मङ्गलाचरण सा0सि0कौ0

2 अष्टा0 6-1-89

3 सा0 सि0 कौ0 अच्सन्धिः।

4 सा0 सि0 कौ0 विसर्गसन्धिः।

दिया है। दूसरे प्रकार में पाणिनीय सूत्रों को रूपरचनार्थ सूत्र या सूत्रार्थ रूप में उद्धृत किया है ऐसे स्थानों पर कोई भी सूत्र संख्या क्रम नहीं दिया है। इन सूत्रों को भावप्रदर्शक प्रकोष्ठक चिह्न में बन्द किया है। अनेक स्थानों पर स्मरणार्थ सूत्र कार्यों का ही वर्णन है। सारसिद्धान्तकौमुदी में रूपरचनार्थ पूर्ण एवम् सरल प्रक्रिया में वर्णन किया गया है ताकि बालकों को कठिनाई का सामना न करना पड़े।

सन्धि प्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में षड्लिङ्ग. प्रकरण है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम ग्रन्थकार ने ''अजन्तपुलिङ्ग.'' भाग दिया है। इस भाग में ग्रन्थकार ने रूपरचनार्थ विभिन्न प्रातिपदिकों को अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त आदि क्रम से चुना है। अनेक प्रतिपदिकों को ग्रन्थ में समान रूपरचनार्थ निर्देश प्राप्त हैं। इस प्रकार के वर्णन से पाठक किसी भी प्रातिपदिक की सभी विभक्तियों में रूपरचना करने की सामर्थ्य रखता है। लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा सारसिद्धान्तकौमुदी में इतना अन्तर है कि सारसिद्धान्तकौमुदी में बहुश्रेयसी मात्र एक प्रातिपदिक की जानकारी नहीं दी है। शेष वर्णन समान है। इस भाग में 94 पाणिनीय सूत्रों और 6 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया गया है।[1]

इस भाग के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' आता है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने आकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त क्रम से रूपरचनार्थ प्रातिपदिकों को दिया है। मध्यसिद्धान्तकौमुदी एवम् लघुसिद्धान्तकौमुदी में आकारान्त प्रातिपदिक की जानकारी के लिए रमा प्रातिपदिक की रूपरचना जानकारी दी है। परन्तु सारसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकार ने अजा प्रातिपदिक रूपरचनार्थ चुना है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त उत्तरपूर्वा, द्वितीया, तृतीया आदि 3 प्रातिपदिकों की रूपरचना का वर्णन छोड़ दिया है। इस प्रकरण में पाणिनीय अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 25 सूत्रों का रूपरचना क्रम से वर्णन किया गया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''अजन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण'' है। इस प्रकरण में भी ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त कत्तर, कतम, इत्तर, अन्य, एकत्तर आदि 5 प्रातिपदिकों की रूपरचना जानकारी का वर्णन छोड़ दिया है। इस भाग में 14 पाणिनीय सूत्रों और 4 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[3]

अजन्त प्रातिपदिकों की जानकारी के उपरान्त क्रमानुसार हलन्त प्रातिपदिकों की जानकारी के लिये ग्रन्थकार ने षड्लिङ्ग. भाग में ''हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण'' से शुरुआत की है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ददत्, जक्षत् आदि 9 प्रातिपदिकों की रूपरचना जानकारी छोड़ दी है, क्योंकि मात्र सार वर्णन करना ग्रन्थकार का लक्ष्य है इस में सरल और उपयोगी वर्णन ही अपेक्षित है। इस भाग में रूपरचनार्थ पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 196 सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[4] इसी तरह ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग.'' और ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग.'' प्रकरणों में कुछ

---

1 सा0 सि0 कौ0 अजन्तपुलिङ्गाः।

2 सा0 सि0 कौ0 अजन्तस्त्रीलिङ्गाः।

3 सा0 सि0 कौ0 अजन्तपुस्कलिङ्गाः।

4 सा0 सि0 कौ0 हलन्तपुलिङ्गाः।

प्रातिपदिकों की रूपरचना जानकारी सारसिद्धान्तकौमुदी में छोड़ दी है जो लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त है। इन प्रकरणों में क्रमशः 4, 4 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया गया है।[1] षड्लिङ्ग. प्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी द्वितीय खण्ड के अन्त में अव्ययों की जानकारी हेतु अव्यय प्रकरण दिया है।

अव्ययप्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी तृतीय खण्ड में विभिन्न क्रियारूपों की रूपरचना जानकारी का वर्णन किया गया है। वरदराज ने पाणिनीय धातुपाठ में पठित लगभग 1950 धातुओं में से मात्र 19 धातुओं के क्रियारूपों की जानकारी दी है। कुछ धातुओं को समान रूपरचनार्थ निर्देश दिया है।ग्रन्थकार ने क्रिया रूपों के इस वर्णन में रूपरचनार्थ धातुओं को धातुपाठ में वर्णित क्रमानुसार नहीं चुना है। वरदराज ने सर्वप्रथम परस्मैपदी तदुपरान्त आत्मनेपदी और अन्त में उभयपदी धातुओं के क्रियारूपों का वर्णन किया है। इस वर्णन में सर्वप्रथम ''भ्वादि प्रकरण'' से शुरुआत है। इस भाग में ग्रन्थकार ने पाणिनीय धातुपाठ में पठित भ्वादि गण की 1010 धातुओं में से मात्र 8 धातुओं की विभिन्न रूपरचना का वर्णन किया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 119 सूत्रों और 1 वार्तिक का रूपरचनार्थ प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2]

इस प्रकरण के उपरान्त ''अदादि प्रकरण'' है। इस में मात्र 3 धातुओं की रूपरचना का 16 पाणिनीय सूत्रों द्वारा वर्णन किया है।[3] तदुपरान्त ''जुहोत्यादि'' प्रकरण में ''हु दानादानयो'' मात्र एक धातु की रूपरचना जानकारी है जो पाणिनीय 7 सूत्रों द्वारा प्रदर्शित की है।[4] जुहोत्यादि प्रकरण के उपरान्त पाणिनीय धातुपाठ में उक्त क्रमानुसार ''दिवादि प्रकरण'' दिया है। इस में भी ''दिवु'' मात्र 1 धातु की रूपरचना जानकारी है। इस प्रकरण में मात्र 2 पाणिनीय सूत्र प्रयुक्त हैं।[5] इसी क्रम से ''स्वादि प्रकरण'' में ''षुञ् अभिषवे'' धातु की रूपरचना जानकारी 5 पाणिनीय सूत्रों द्वारा पूर्ण की है तदुपरान्त ''तुदादि'' प्रकरण है। इस प्रकरण में भी ''तुद् व्यथने'' मात्र 1 धातु की रूपरचना का वर्णन है। तुदादि के उपरान्त ''रूधादि प्रकरण'' आता है इस प्रकरण में ''रुधिर आवरणे'' मात्र 1 धातु की रूपरचना जानकारी के लिए 4 पाणिनीय सूत्रों और 1 वार्तिक को प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया गया है।[6]

सारसिद्धान्तकौमुदी में ''रूधादि प्रकरण'' के बाद क्रमानुसार तनादि धातुओं की रूपरचना जानकारी के लिए ग्रन्थकार ने ''तनादि प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने ''तनुविस्तार'' और ''डू कृञ् करणे'' मात्र 2 धातुओं की रूपरचना जानकारी दी है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 11 सूत्रों का रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है।[7] तदुपरान्त ''क्रयादि प्रकरण'' है। इस में ''डु क्रीञ् द्रव्यविमोचने'' मात्र 1 धातु की रूपरचना जानकारी है। इस भाग में 3 पाणिनीय सूत्र प्रक्रिया क्रम से प्रयुक्त हैं।[8] सारसिद्धान्तकौमुदी तृतीय खण्ड के अन्त में ''चुरादि प्रकरण''

---

1 (क) सा० सि० कौ० हलन्तस्त्रीलिङ्गाः।
(ख) सा० सि० कौ० हलन्तनपुंस्कलिङ्गाः।
2 सा० सि० कौ० भ्वादयः प्रकरणम्।
3 सा० सि० कौ० अदादयः प्रकरणम्।
4 सा० सि० कौ० जुहोत्यादयः प्रकरणम्।
5 सा० सि० कौ० दिवादयः प्रकरणम्।
6 सा० सि० कौ० रूधादयः प्रकरणम्।
7 सा० सि० कौ० तनादयः प्रकरणम्।
8 सा० सि० कौ० क्रयादयः प्रकरणम्।

है। इस प्रकरण में भी चुरादि गण की ''चुर स्तेये'' मात्र 1 धातु की लट्, लिट्, लुट् आदि 10 लकारों में रूपरचना जानकारी दी है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने पाणिनीय 8 सूत्रों द्वारा पूर्ण किया है।[1]

सारसिद्धान्तकौमुदी में चार खण्ड हैं। वरदराज ने चतुर्थ खण्ड में विभिन्न प्रक्रिया, कृदन्त, विभक्त्यर्थ, समास, तद्धित और स्त्री प्रत्ययों से सम्बन्धित जानकारी दी है। इस वर्णन की ''ण्यन्तप्रक्रिया'' प्रकरण से शुरुआत है। इस भाग में प्रेरणा अर्थ प्रकट करने के लिए धातुओं से णिच् प्रत्यय का विधान है इस प्रकरण में मात्र 4 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है। इस प्रकरण के उपरान्त ''सन्नन्तप्रक्रिया'' प्रकरण है।इस में इच्छा अर्थ प्रकट करने के लिए धातुओं से सन् प्रत्यय का विधान है। प्रत्ययविधायकसूत्र के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं। इस भाग में मात्र 3 पाणिनीय सूत्र है। सन्नन्तप्रक्रिया के उपरान्त यङन्तप्रक्रिया प्रकरण है इस में पौन-पुन्य एवम् अतिशय अर्थक पदों की रूपरचना जानकारी है। इस प्रकरण में 2 सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''नामधातु प्रकरण'' है इस प्रकरण में सुबन्तों से इच्छा अर्थ प्रकट करने के लिए क्यच् का विधान है। इस प्रकरण में ''पुत्रीयति'' उदाहरण की रूपरचना जानकारी के लिए 3 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] तदुपरान्त ''कण्डवादि'' प्रकरण है। इस में ''कण्ड्वादिभ्यो यक्''[3] मात्र 1 सूत्र है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''आत्मनेपदप्रक्रिया प्रकरण'' में उदाहरण रूपरचनार्थ ''कर्तरि कर्म व्यतिहारे''[4] मात्र 1 सूत्र का वर्णन है। सारसिद्धान्तकौमुदी में परस्मैपद व्यवस्थार्थ ग्रन्थकार ने वर्णन नहीं किया है।

भाव और कर्मार्थ प्रकट करने के लिए विभिन्न पदों की रूपरचनार्थ सारसिद्धान्तकौमुदी में ''भावकर्मप्रक्रिया'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर ग्रन्थकार ने 4 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[5] इसी प्रकरण के साथ तिङन्त प्रकरण की समाप्ति है। ग्रन्थकार ने सारसिद्धान्तकौमुदी में पृथक् प्रकरण में लकारार्थो से सम्बन्धित वर्णन नहीं किया है। इन्होंने लकारों के विषय में यत्र-तत्र प्राप्त वर्णन ही काफी समझा है।

तिङन्त पदों के वर्णन के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में कृदन्त पदों की जानकारी है। कृदन्त पदों को भी ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान तीन प्रकरणों द्वारा प्रस्तुत किया है। अन्तर सिर्फ इतना है कि ग्रन्थकार ने सारसिद्धान्तकौमुदी में अनेक पदों की जानकारी नहीं दी है जो कि लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त है। लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान सारसिद्धान्तकौमुदी में भी सर्वप्रथम कृत्यप्रक्रिया प्रकरण है। इस

---

1 सा0 सि0 कौ0 चुरादयः प्रकरणम्।

2 सा0 सि0 कौ0 नामधातवः प्रकरणम्।

3 अष्टा0 3-1-27

4 अष्टा0 1-3-14

5 सा0 सि0 कौ0 भवकर्मप्रक्रिया।

प्रकरण में ग्रन्थकार ने ''कृत्याः''[1] सूत्र के अधिकार में वर्णित प्रत्ययों से सम्बन्धित पदों की रूपरचना जानकारी दी है। इस ग्रन्थ में प्राप्त यह जानकारी व्याकरण में मात्र सार जानकारी है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 16 सूत्रों और 1 वार्तिक का रूपरचना क्रम से प्रयोग किया है।[2]

कृत्यप्रक्रिया प्रकरण के उपरान्त ''पूर्वकृदन्त प्रकरण'' है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अष्टाध्यायी के ''ण्वुल् तृचौ''[3] सूत्र से लेकर तृतीय अध्याय द्वितीय पाद के अन्त तक कृत्प्रत्यय विधायक सूत्रों में से रूपरचनार्थ मात्र कुछ सूत्रों का चुनाव किया। अधिक सूत्रों को छोड़ दिया है। इस प्रकरण में रूपरचना में सहायक प्रत्ययविधायक सूत्रों सहित सभी सूत्रों की संख्या 9 है जो इस प्रकरण में रूपरचना क्रम से प्रयुक्त हैं।[4]

ग्रन्थकार ने सारसिद्धान्तकौमुदी में उणादि जानकारी हेतु ''कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्''[5] मात्र 1 सूत्र द्वारा ''कारुः'', ''वायुः'','' पायुः'' आदि उदाहरण जानकारी दी है। इस प्रकरण में उणादियों के बाहुल्य ज्ञानार्थ ''उणादयो बहुलम्''[6] सूत्र का वर्णन किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त कृदन्त पदों की जानकारी हेतु अष्टाध्यायी तृतीय अध्यय तृतीय तथा चतुर्थ पाद में प्राप्त कृत् प्रत्ययविधायक सूत्रों में से मात्र 6 सूत्रों का वर्णन किया है अत्यधिक सूत्रों को छोड़ दिया है। प्रकरण में ''समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्''[7] तथा ''नित्यवीप्सयोः''[8] सूत्रों का सप्तम तथा अष्टम अध्ययों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। इस प्रकरण में 8 सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[9]

इस प्रकरण के उपरान्त ''विभक्त्यर्थ'' प्रकरण है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने कर्ता, कर्म, करण आदि विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्रों को प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद से तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्तिविधायक सूत्रों को द्वितीय अध्याय तृतीय पाद से उदाहरण रूपरचनार्थ अष्टाध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों में वहां क्रम व्यत्यय है। सूत्रमूलक ग्रन्थों में ये सूत्र बहुत हैं, परन्तु ग्रन्थकार ने वहां से प्रमुख एक-एक विभक्तिसंज्ञाविधायक तथा विभक्तिविधायक सूत्रों का चुनाव किया है। इन का लक्ष्य मात्र सार जानकारी है विस्तृत जानकारी ग्रन्थकार के मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त है।

विभक्त्यर्थ प्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में ''समास प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम समास की परिभाषा, भेद तथा किस समास में कौन पद प्रधान होता है आदि जानकारी व्याख्यात्मक वर्णन में दी है। इस प्रकरण में समास सम्बन्धित अन्य जानकारी के लिए

---

1 अष्टा0 3-1-95
2 सा0 सि0 कौ0 कृत्यप्रक्रिया।
3 अष्टा0 3-1-133
4 सा0 सि0 कौ0 पूर्वकृदन्त प्रकरण
5 उणादि प्रथम पाद प्रथम सूत्र।
6 अष्टा0 3-3-1
7 अष्टा0 7-1-37
8 अष्टा0 8-1-4
9 सा0 सि0 कौ0 उत्तरकृदन्त प्रकरण।

''समर्थः पदविधि''[1] तथा ''प्राक्कडारात् समासः''[2] आदि 2 सूत्र दिये हैं। तदुपरान्त ''केवल समास'' प्रकरण है। इस में सुबन्तों का समर्थसुबन्त के साथ समास का वर्णन है।

केवल समास प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''अव्ययीभाव समास प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में विभक्ति, समीप, समृद्धि, व्यृद्धि आदि अर्थों में अव्यय का समर्थ सुबन्त के साथ समास का वर्णन है। समस्त पदों की रूपरचना हेतु समासविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्रों को भी अष्टाध्यायी से चुनकर इस प्रकरण में प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया गया है जो अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में पाये जाते हैं। इस प्रकरण में 14 सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त क्रमानुसार ''तत्पुरुषसमास प्रकरण'' है। इस में सर्वप्रथम द्वितीयान्त, तृतीयान्त आदि विभक्तयान्त पदों का विभिन्न पदों के साथ समास का वर्णन है तदुपरान्त तत्पुरुष के भदोपभेद कर्मधारय और द्विगु समास से सम्बन्धित उदाहरणों की रूपरचना जानकारी है। इस प्रकरण में पाणिनीय 32 सूत्रों और 5 वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया गया है।[4]

तत्पुरुषसमास प्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में क्रमानुसार ''बहुव्रीहिसमास प्रकरण'' है। इस प्रकरण में ''प्राप्तोदकः'', ''उढरथः'' आदि उदाहरणों की जानकारी हेतु ''अनेकमन्यपदार्थे''[5] आदि 8 सूत्रों का अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनाव करके रूपरचनाक्रम से वर्णन किया है। तदुपरान्त ''द्वन्द्वसमास प्रकरण'' है। इस में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना जानकारी हेतु 6 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।[6]

सारसिद्धान्तकौमुदी समासप्रकरण के अन्त में ''समासान्त प्रकरण'' है। इस भाग में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए समासान्त प्रत्ययों से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन है। इस भाग में 3 सूत्र हैं।[7]

समासप्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में तद्धितान्त पदों की जानकारी के लिए वरदराज ने ''तद्धित प्रकरण'' दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में तद्धित प्रत्ययविधायकसूत्र चतुर्थ तथा पंचम अध्यायों से प्राप्त हैं। वरदराज ने उपयोगी उदाहरणों की जानकारी के लिए इन सूत्रों में से सम्बन्धित सूत्रों का चुनाव किया है अत्यधिक सूत्रों को छोड़ दिया है। सारसिद्धान्तकौमुदी वर्णन विधि अनुसार प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ उदाहरण रूपरचना में सहायक सम्बन्धित अन्य सूत्रों को भी अष्टाध्यायी से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है। ग्रन्थकार ने बालकों की सुविधार्थ इस प्रकरण को अनेक छोटे-छोटे भागों में विभक्त करके दिया है। जिन में ''साधारण प्रत्यय'' प्रथम भाग है। इस प्रकरण में 5 सूत्र और 3 वार्तिक प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं।[8] इस के उपरान्त ''अत्याधिकार'' भाग है। इस भाग में ग्रन्थकार ने उदाहरणों की जानकारी

1 अष्टा0 2-1-1
2 अष्टा0 2-1-3
3 सा0 सि0 कौ0 अव्ययीभाव प्रकरण।
4 सा0 सि0 कौ0 तत्पुरुष प्रकरण ।
5 अष्टा0 2-2-24
6 सा0 सि0 कौ0 द्वन्द्व प्रकरण।
7 सा0 सि0 कौ0 समासान्त प्रकरण।
8 सा0 सि0 कौ0 साधारण प्रत्यय प्रकरण।

के लिए अष्टाध्यायी के अपत्यर्थक प्रत्ययविधायक सूत्रों में से कुछ सूत्रों को चुनकर एक प्रकरण में दिया है। अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है। इस प्रकरण में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त हैं जो अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों में पाये जाते हैं। इस प्रकरण में मिलकर सभी सूत्र और वार्तिक क्रम से 14 और 1 हैं।[1]

इस प्रकरण के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान यथाक्रम चातुरर्थिक, शैषिक और प्राग्दीव्यतीय प्रकरण हैं। परन्तु इन में इतना अन्तर है कि सारसिद्धान्तकौमुदी में लघुसिद्धान्तकौमुदी की अपेक्षा वर्णन कम है क्योंकि सारसिद्धान्तकौमुदी में स्वल्प जानकारी है। इन प्रकरणों के उपरान्त सारसिद्धान्तकौमुदी में लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''ठगधिकार'' भाग का वर्णन नहीं है। सारसिद्धान्तकौमुदी में ''प्राग्दीव्यतीय'' प्रकरण के उपरान्त ''प्राग्धितीय'' प्रकरण है। इस में सामान्यः, अग्रयः, कर्मण्यः, शरण्यः आदि उदाहरणों की जानकारी हेतु ''तत्र साधुः''[2] मात्र 1 सूत्र का वर्णन किया है। लघुसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकार ने सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी ''यदधिकार'' में दी है। सारसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकार ने इस प्रकरण से स्वल्प जानकारी दी है तथा प्रकरण को ''प्राग्धितीय'' संज्ञा दी है। वरदराज ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''छयतोरधिकार'' तथा''ठञधिकार'' नामक प्रकरणों में प्राप्त जानकारी सारसिद्धान्तकौमुदी में नहीं दी है।

सारसिद्धान्तकौमुदी में ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''त्वतलधिकार'' में से उदाहरणों की जानकारी के लिए ''तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः''[3] तथा ''तस्य भावस्त्वतलौ''[4] मात्र 2 सूत्रों की जानकारी दी है तथा प्रकरण को ''नञ्स्नञधिकार'' संज्ञा दी है। सारसिद्धान्तकौमुदी में लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''भवनार्थक'' प्रकरण में से ''उरूद्वयसम्'', ''उरूदघ्नम्'',''उरूमात्रम'' आदि उदाहरणों की जानकारी के लिए ''प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः''[5] मात्र 1 ही सूत्र का वर्णन किया है तथा इसे ''पाञ्चमिक'' प्रकरण संज्ञा दी है। सारसिद्धान्तकौमुदी में लघुसिद्धान्तकौमुदी में प्राप्त ''मत्वर्थीय'', ''प्रागिवीय'' तथा ''स्वार्थिक'' प्रकरणों में से मात्र प्रसङ्ग. जानकारी दी है।

तद्धित प्रकरण के उपरान्त सिरसिद्धान्तकौमुदी के अन्त में ''स्त्रीप्रत्यय प्रकरण'' है। इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने लघुसिद्धान्तकौमुदी के समान ग्रन्थ के अन्त में दिया है। सिर्फ भेद इतना है कि इस में भी अन्य प्रकरणों के समान अति संक्षिप्त वर्णन है। इस प्रकरण में उदाहरण रूपरचनार्थ ग्रन्थकार ने मात्र 5 सूत्रों और 3 वार्तिकों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है। इसी प्रकरण के साथ ग्रन्थ की समाप्ति है।

---

1 सा0 सि0 कौ0 अपत्यधिकार प्रकरण।

2 अष्टा0 4-4-98

3 अष्टा0 5-1-115

4 अष्टा0 5-1-119

5 अष्टा0 5-2-37

10. वेदाङ्ग.प्रकाश ग्रन्थकार स्वामी दयानन्द सरस्वती :–

व्याकरणपरम्परा में सारसिद्धान्तकौमुदी के उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति में वेदाङ्ग.प्रकाश की रचना हुई है। इस ग्रन्थ के लेखक स्वामी दयानन्द सरस्वती हैं। इन का जन्म काल 1824 ई0 तथा देहावसान 1883 ई0 माना जाता है। विद्वान इन का ग्रन्थरचना काल 1869 ई0 से लेकर आयुपर्यन्त मानते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती गुजरात के टंकारा नामक नगर के निवासी थे। स्वामी दयानन्द सरस्वती आर्य समाज के संस्थापक रूप में सुप्रसिद्ध हैं। इन की मान्यतानुसार व्याकरण की पूर्ण जानकारी के विना वेदों का समझना कठिन है। वैसे भी यह एक सच्चाई है। अत: स्वामी दयानन्द सरस्वती पाणिनीय अष्टाध्यायी का समग्र हृदय से आदर करते थे। क्योंकि अष्टाध्यायी संस्कृत व्याकरण की पूर्ण जानकारी के लिए एक अतुल्य ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में लौकिक और वैदिक उभयविध पदों की पूर्ण जानकारी दी गयी है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने विशेषत: वैदिकपदों के ज्ञानार्थ पाणिनीयव्याकरण को समय की मांग के अनुरूप प्रक्रियाक्रम से सम्पादित किया है। इनका लक्ष्य तो वेद और वैदिक संस्कृति में प्रयुक्त पदों की जानकारी था परन्तु व्याकरण की पूर्ण जानकारी के विना वेदों की समग्र जानकारी कठिन है। अत: इन्होंने वेदाङ्ग.प्रकाश में लौकिक और वैदिक उभयविध पदों की जानकारी समान रूप से दी है ताकि पाठक इन पदों को जानकर वेदों की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकें।

यह प्रक्रियाग्रन्थ ''वर्णोच्चारण शिक्षा'', ''सन्धि नियम'', ''नामिक'', ''आख्यातिक'' आदि से लेकर ''गणपाठ'' तक 14 भागों में विभक्त है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में इन भागों में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना जानकारी के लिए पाणिनीयव्याकरण के समस्त सूत्रों और वार्तिकों को विभिन्न प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से इस प्रक्रियाग्रन्थ में यह भिन्नता है कि इस में विषयवार प्रकरण विभाजन एवम् वर्णनक्रम दूसरे प्रक्रियाग्रन्थों से भिन्न है। वेदाङ्ग.प्रकाश में सूत्र एवम् वार्तिक ही मूलरूप में उद्धृत हैं शेष वर्णन हिन्दी में दिया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में उदाहरणों की जानकारी हेतु सरलता से वर्णन किया गया है। ग्रन्थकार को इस विषय में जिस भी सूत्र की आवश्यकता पड़ी है इन्होंने उसे उस स्थान पर उद्धृत किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान सूत्र एवम् वार्तिकों को पूर्णजानकारी के साथ एक बार ही उद्धृत किया है। इनकी पुन: आवश्यकता पड़ने पर ग्रन्थ में इन्हें मात्र वेदाङ्ग.प्रकाश सूत्र संख्याक्रम से दिया है ताकि पाठक इन्हें ग्रन्थ में प्राप्त करके आवश्यकतानुसार जानकारी प्राप्त कर सकें। ग्रन्थकार ने सूत्र या सूत्रार्ध रूप से सूत्रों तथा वार्तिकों को पुन: उद्धृत नहीं किया है, मात्र वेदाङ्ग.प्रकाश में प्राप्त सूत्र संख्याक्रम उद्धृत किया है। अनेक स्थानों पर सूत्रकार्य के वर्णन से ही सूत्र स्पष्ट करवा दिया है ताकि पाठक को वर्णन पढ़कर सूत्र स्मरण आ जाये। इस प्रक्रियाग्रन्थ में विभिन्न उदाहरणों की जानकारी पूर्णप्रक्रिया द्वारा करवायी गयी है ताकि पाठकों को किसी कठिनाई का सामना न करना पड़े।

वेदाङ्ग.प्रकाश प्रथम भाग में वर्णोच्चारण शिक्षा पर विचार है। वेदाङ्ग.प्रकाश का द्वितीय भाग ''सन्धि विषय'' है। इस भाग में तीन प्रकरण हैं। प्रथम प्रकरण में अष्टाध्यायी से संज्ञाविधायक सूत्रों को चुनकर

उदाहरणों सहित प्रस्तुत किया है तथा विषयानुसार इस प्रकरण को ग्रन्थकार ने संज्ञाप्रकरण संज्ञा दी है। द्वितीय प्रकरण में पाणिनीयव्याकरण के परिभाषा सम्बन्धित सूत्रों और वार्तिकों को उदाहरणों सहित दिया। प्रकरण को विषयानुसार परिभाषा प्रकरण संज्ञा दी है। इन संज्ञा तथा परिभाषा प्रकरणों में उदाहरणों की जानकारी प्रक्रियाक्रम से दी गयी है। इन प्रकरणों के उपरान्त सन्धियों की जानकारी हेतु ''साधन प्रकरण'' में विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना का वर्णन किया है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम ''स्वरसन्धि'' भाग है इस में स्वरों का स्वरों के साथ सन्धि का उल्लेख है। इस भाग में ग्रन्थकार ने सरलता के लिए सर्वप्रथम पूर्व तथा पर स्थानों में दीर्घ एकादेश का वर्णन किया है। तदुपरान्त गुण, वृद्धि, पररूप, पूर्व रूप, प्रकृतिभाव, यणादेश तथा अन्त में एचों के स्थान पर अय, अव, आय, अवादेश का वर्णन है।[1] ग्रन्थकार ने पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों के क्रमानुसार उदाहरणों को नहीं दिया है इन्होंने सरलता के लिए सर्वप्रथम दीर्घादेश तदुपरान्त गुणादेश तदुपरान्त वृद्धिविधायक आदि क्रम से रूपरचनार्थ सूत्रों का वर्णन किया है।

स्वर सन्धि के उपरान्त वेदाङ्ग.प्रकाश में ''हलूस्वर सन्धि प्रकरण'' है इस प्रकरण में हलों का स्वरों के साथ सन्धि का वर्णन है। तदुपरान्त ''हल् सन्धि'' प्रकरण है। इस प्रकरण की शुरुआत ग्रन्थकार ने विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए नकार, मकार आदि वर्णों को अनुस्वार एवम् अनुनासिकादेश विधायक सूत्रों से की है।[2] ग्रन्थकार ने श्चुत्व, ष्टुत्व विधायक सूत्रों का वर्णन प्रकरण के मध्य में किया है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में लगभग दो तीन को छोड़ कर हल सन्धि प्रकरण की शुरुआत श्चुत्व, ष्टुत्व विध ायक सूत्रों से की गयी है। इस प्रकरण के उपरान्त ''अयोगवाह सन्धि प्रकरण'' है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने विसर्ग सन्धि से सम्बन्धित जानकारी दी है। सभी प्रकार की सन्धियों में ग्रन्थकार ने प्राचीन उदाहरणों के साथ तात्कालिक उदाहरणों की जानकारी भी समान रूप से दी है।

सन्धि विषय के उपरान्त नामिक भाग है। सन्धियों.के समान ही इस प्रकरण में भी अति सरलता से विभिन्न प्रातिपदिकों को सुबन्त पदों की रूपरचनार्थ उपयुक्त वर्णन किया गया है। नामिक भाग में भी ग्रन्थकार का लक्ष्य रहा है कि पाठक सरलता से सुबन्त पदों की रूपरचना जानकारी प्राप्त कर सकें।

नामिक भाग के उपरान्त वेदाङ्ग.प्रकाश में ''आख्यातिक भाग'' है। इस भाग में ग्रन्थकार ने विभिन्न क्रियारूपों, विभिन्नप्रक्रियाओं और कृदन्त पदों की ज़ानकारी दी है। क्रियारूपों की जानकारी ग्रन्थकार ने ''भ्वादि प्रकरणों '' में दी है जो अन्य प्रक्रियाग्रन्थों के समान ही है। इस में इतना अन्तर है कि ग्रन्थकार ने ''लेट् लकार'' की रूपरचना जानकारी भी लट्, लिट्, लुट्, आदि लकारों की जानकारी के साथ दी है। प्रक्रियाकौमुदी, वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व आदि अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में यह जानकारी छान्दस प्रकरणों में दी है।

---

1 वेदाङ्ग.प्रकाश स्वरसन्धि प्रकरण।

2 वेदाङ्ग.प्रकाश हल्सन्धि प्रकरण।

ग्रन्थकार ने भ्वादि सभी गणों की धातुओं की रूपरचना का वर्णन क्रम से भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में दिया है। पाणिनीय धातुपाठ की कोई भी धातु ग्रन्थकार ने रूपरचना जानकारी विना नहीं छोड़ी है। ग्रन्थकार ने धातुओं को रूपरचना जानकारी हेतु वैयाकरणसिद्धानतकौमुदी में उद्धृत क्रमानुसार ही उद्धृत किया है पाणिनीय धातुपाठ में पठित क्रमानुसार उद्धृत नहीं किया है।

वेदाङ्ग.प्रकाश में विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के उपरान्त प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना आदि अर्थो को प्रकट करने वाले पदों की जानकारी के लिए णिजन्त, सन्नन्त, नामधातु आदि प्रक्रिया प्रकरणों में विभिन्न तिङन्त पदों का वर्णन किया गया है।

इस वर्णन के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''*आख्यातिक भाग*'' के अन्त में कृदन्त पदों की जानकारी का वर्णन किया है। कृदन्तप्रकरण में ''कृत्यप्रक्रिया'' तथा ''कृदन्त प्रक्रिया'' नामक दो प्रकरण हैं। कृत्यप्रक्रिया नामक प्रकरण में ग्रन्थकार ने कृत्य संज्ञक प्रत्ययों से सम्बन्धित उदाहरणों की जानकारी दी है। तदुपरान्त ''कृदन्तप्रक्रिया'' प्रकरण में शेष कृदन्त पदों की रूपरचनार्थ पाणिनीय सूत्रों और वार्तिकों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1]

वेदाङ्ग. प्रकाश के शेष भागों में समास, तद्धित, कारक, स्त्रीप्रत्यय, वैदिक तथा स्वर प्रक्रिया आदि से सम्बद्ध वर्णन है। इस वर्णन में भी अन्य प्रकरणों के समान विभिन्न उदाहरणों की रूपरचनार्थ पाणिनीय सूत्रों और वार्तिकों को पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। वेदाङ्ग.प्रकाश में अन्तिम भाग गणपाठ है।

11 प्रारम्भिक पाणिनीयम् ग्रन्थकार विश्वनाथशास्त्री :-

सम्वत् 2000 के उपरान्त श्री विश्वनाथ शास्त्री ने व्याकरणपरम्परा में ''प्रारम्भिक पाणिनीयम्'' (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी) नामक अति सुक्ष्म प्रक्रियाग्रन्थ रचकर आधुनिक युग में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। यह प्रक्रियाग्रन्थ समयानुकूल अतिप्रसिद्ध एवम् महत्त्वपूर्ण है। ग्रन्थकार ने इस प्रक्रियाग्रन्थ के वर्णन क्रम में वेदाङ्ग.प्रकाश का अनुकरण नहीं किया है जबकि रूपावतार आदि अन्य प्रक्रियाग्रन्थों की वर्णन विधि परम्परा का अनुकरण किया है।

श्री विश्वनाथ शास्त्री के पिता श्री रामनारायण शर्मा थे। इनका प्राप्त पंजाब, मण्डल होशियारपुर तथा नगर का नाम जेजों है। पुस्तक रचनाकाल समय श्री विश्वनाथ शास्त्री श्रीसरस्वती संस्कृत महाविद्यालय खन्ना, लुधियाना पंजाब के प्राचार्य पद पर पीठासीन थे। इन द्वारा रचित ''प्रारम्भिक पाणिनीयम्'' प्रक्रियाग्रन्थ यह सिद्ध करता है कि ये उच्च कोटी के विद्वान होने पर भी पाठकों की अन्तरात्मनी भावना से परिचित थे। ग्रन्थनाम से ही प्रतीत होता है कि इनका यह प्रक्रियाग्रन्थ पाणिनीयव्याकरण ज्ञानार्थ प्रारम्भिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में समयानुरुप वर्णन किया गया है ताकि पाठक इस ग्रन्थ से व्याकरण अध्ययन का प्रारम्भ करके व्याकरण का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त कर सकें। तदुपरान्त

---

1 वेदाङ्ग.प्रकाश कृत्य तथा कृदन्त प्रक्रिया प्रकरण।

अधिक जानकारी के लिए वे लघुसिद्धान्तकौमुदी से लेकर वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तक आसानी से अध्ययन कर सकते हैं क्योंकि व्याकरण के प्रारम्भिक ज्ञान उन्हें वहां सहायता देगा।

इस प्रक्रियाग्रन्थ में उतना ही वर्णन है जिससे समायानुसार संस्कृतभाषा में प्रयुक्त पदों की मीमांसा की जा सके तथा इस वर्णन में उदाहरण भी अत्यधिक आधुनिक दिये गये हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में प्रकरणों का विभाजन भी आधुनिक है तथा उदाहरणों की संख्या भी समयानुरूप काफी कम है जैसे यदि क्रियाओं से सम्बन्धित प्रकरण ही लिया जाये तो किसी भी प्रकरण में 3 से अधिक धातुओं की रूपरचना का वर्णन नहीं किया गया है अर्थात् यह एक प्रारम्भिक ज्ञान है। इस प्रक्रियाग्रन्थ का क्रमपूर्वक संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है।

प्रारम्भिक पाणिनीयम् में विश्वनाथ शास्त्री ने सर्वप्रथम संज्ञाप्रकरण दिया है। इस में शिव सूत्रों के उपरान्त 16 संज्ञाविधायक सूत्रों का वर्णन है तथा प्रत्येक सूत्र की व्याख्या समयानुसार आधुनिक वर्णन में दी गयी है। अनेक स्थानों पर सूत्र व्याख्या को भावादि प्रदर्शक प्रकोष्ठक चिह्न में बन्द करके स्पष्ट किया है जो कि विश्वनाथ का अपना स्पष्टीकरण है।[1] इस प्रकरण में ''ऋ - लृ - वर्णयोर्मिथ: सावर्ण्यं वाच्यम्'' मात्र 1 वार्तिक है। ग्रन्थकार ने ग्रन्थादि में मङ्गलाचरण नहीं दिया है। ग्रन्थ के अन्त में अपना स्वल्प मात्र परिचय दिया है।

संज्ञाप्रकरण के उपरान्त सन्धियों में ''अच्सन्धि'' प्रकरण है। इस में आधुनिक उदाहरणों की रूपरचना के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण सूत्रों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में विश्वनाथ ने पाणिनीयव्याकरण के विभिन्न अध्यायों से चुनकर 14 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है।[2]

प्रारम्भिकपाणिनीयम् में सूत्र वृत्ति यद्यपि मध्यसिद्धान्त कौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा सारसिद्धान्तकौमुदी से मिलती है फिर भी प्रारम्भिक पाणिनीयम् में संक्षेप और आधुनिक वर्णन किया गया है। अच् सन्धि प्रकरण के उपरान्त हल्सन्धि प्रकरण है। इस में 9 सूत्रों द्वारा अत्यधिक आधुनिक उदाहरणों की रूपरचना दिखाई गयी है।[3] उदाहरणों में एक प्रकार के अनेक उदाहरण दिये गये हैं। तदुपरान्त ''विसर्गसन्धि'' प्रकरण है। इस प्रकरण में भी प्रारम्भिक ज्ञानार्थ वर्णन है दुरूह उदाहरणों का वर्णन नहीं है। इस प्रकरण में सम्बन्धित 10 सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर रूपरचना क्रम से दिया है।[4]

सन्धि प्रकरण के उपरान्त ''षड्लिङ्ग. प्रकरण'' है। इस प्रकरण में सर्वप्रथम अजन्त प्रातिपदिकों से सम्बन्धित जानकारी के लिए इन्होंने अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में राम, सर्व, हरि, त्रि, द्वि, भानु, धातृ, पितृ और गो प्रातिपदिकों से निर्मित विभिन्न पदों की जानकारी है। इस प्रकरण में

1 प्रा0 पा0 संज्ञाप्रकरण।

2 प्रा0 पा0 अच्सन्धि .प्रकरण।

3 प्रा0 पा0 हल्सन्धि प्रकरण।

4 प्रा0 पा0 विसर्ग सन्धि प्रकरण।

पाणिनीय 60 सूत्रों का प्रयोग हुआ है।[1] तदुपरान्त ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' है। इस में रमा, सर्वा, मति, त्रि, द्वि, गौरी, लक्ष्मी, स्त्री, धेनु और द्यौ प्रातिपदिकों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में इन प्रातिपदिकों से निर्मित सुबन्त पदों की जानकारी के लिए 14 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[2] प्रारम्भिक पाणिनीयम (परमलधुसिद्धान्तकौमुदी) की यह विशेषता है कि इस में रूपरचना में सहायक सभी सूत्रों को पुनः सूत्रनाम से उद्धृत किया है वरदराज के समान सूत्र संख्या देकर संङ्केत नहीं किया है।

इस ग्रन्थ में ''अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' के उपरान्त ''अजन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण'' दिया है। इस में ज्ञान द्वि और वारि मात्र तीन प्रातिपदिकों की विभिन्न रूपरचना के लिए मात्र 8 सूत्रों और 1 वार्तिक का प्रक्रियाक्रम से वर्णन है।[3]

इस प्रकरण के उपरान्त हलन्त प्रातिपदिकों से सम्बन्धित जानकारी के लिए ''हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण'' से शुरुआत की है। इस प्रकरण में षड् संज्ञक और सर्वनाम शब्दों का ही वर्णन है। इन में से भी मात्र उपयोगी जानकारी है। इस प्रकरण में मुख्य उदाहरणों की जानकारी के लिए 44 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[4] इतना जरुर है कि प्रारम्भिक पाणिनीयम् प्रक्रियाग्रन्थ में दूसरे प्रक्रियाग्रन्थों से सरल वर्णन है। इस प्रकरण के उपरान्त ''हलन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण'' में चतुर्, किम्, इदम्, तद् और एतद् प्रातिपदिकों का वर्णन किया है। इस में ''यः सौ''[5] मात्र 1 सूत्र व्याख्या सहित प्रयुक्त हैं। ''किमः कः''[6] आदि अनेक सूत्रों को रूपरचना के लिए पुनः उद्धृत किया है। तदुपरान्त ''हलन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण'' है। इस में चतुर्, किम्, इदम्, दाण्डिन्, तद्, यद् और पयस् प्रातिपदिकों का वर्णन है। इस प्रकरण में व्याख्या सहित सूत्रों का वर्णन नहीं है। ''चतुरनडुहोरामुदातः''[7] आदि सूत्रों को रूपरचनार्थ पुनः उद्धृत किया है।

षड्लिङ्ग.प्रकरण के उपरान्त ''अव्यय प्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ''स्वरादिनिपातमव्ययम्''[8] मात्र 1 सूत्र द्वारा 101 अव्ययों का वर्णन किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ग्रन्थकार ने ''विभक्त्यर्थ प्रकरण'' दिया है। विश्वनाथशास्त्री ने वरदराज के समान अव्यय प्रकरण के उपरान्त तिङन्त पदों से सम्बन्धित जानकारी नहीं दी है। इस प्रकरण में आवश्यकतानुसार ग्रन्थकार ने प्रत्येक विभक्ति से सम्बद्ध एक-एक विभक्तिसंज्ञा विधायक और एक-एक विभक्तिविधायक सूत्रों के क्रम से सभी विभक्तियों का वर्णन किया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने 15 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से प्रयुक्त किया है[9] अष्टाध्यायी में ये सूत्र प्रक्रियाक्रम से प्राप्त नहीं हैं।

विश्वनाथ शास्त्री ने इस प्रकरण के उपरान्त ''समासप्रकरण'' दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने अव्ययीभाव समास का वर्णन नहीं किया है। समासप्रकरण में सर्वप्रथम ''तत्पुरुषसमास'' प्रकरण है। इस

---

1 प्रा० पा० अजन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।
2 प्रा० पा० अजन्तस्त्रीलिङ्ग. प्रकरण।
3 प्रा० पा० अजन्तनपुंस्कलिङ्ग. प्रकरण।
4 प्रा० पा० हलन्तपुलिङ्ग. प्रकरण।
5 अष्टा० 7-2-110
6 अष्टा० 7-2-103
7 अष्टा० 7-1-98
8 अष्टा० 1-1-37
9 प्रा० पा० विभक्त्यर्थ प्रकरण।

प्रकरण में सर्वप्रथम समास की परिभाषा तथा किस समास में कौन पद प्रधान होता है। इस वर्णन के उपरान्त समासाधिकार आदि वर्णन है। तत्पुरुष में द्वितीयान्त, तृतीयान्त आदि विभक्त्यान्त पदों का समर्थ सुबन्त पदों के साथ समास के वर्णन के उपरान्त 2 सूत्र कर्मधारय समास का वर्णन करते हैं।[1] विश्वनाथ ने द्विगुसमास का वर्णन भी नहीं किया है। बहुव्रीहिसमास में मात्र 3 सूत्रों द्वारा 3 आधुनिक उदाहरणों का ही वर्णन है।[2] तदुपरान्त द्वन्द्वसमास का वर्णन है। इस प्रकरण में ''चार्थे द्वन्द्वः''[3] एक ही सूत्र समास विधान करता है। शेष सूत्र रूपरचना में सहायता के लिए प्रक्रियाक्रम से दिये हैं। इस प्रकरण में 6 सूत्र हैं।[4] अन्य प्रक्रियाग्रन्थकारों के समान इन्होंने ''एक शेष'' आदि प्रकरणों का उल्लेख नहीं किया है।

समासप्रकरण के उपरान्त प्रारम्भिक पाणिनीयम् (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी) में तद्धित ज्ञानार्थ ''तद्धित प्रकरण'' की शुरुआत की है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने छोटे-छोटे प्रकरण नहीं दिये हैं जैसे इन से पूर्व प्रक्रियाग्रन्थकारों ने, साधारण प्रत्यय, अपत्याधिकार आदि प्रकरण दिये हैं परन्तु ग्रन्थकार ने मुख्य प्रकरणों के एक दो-दो सूत्रों को चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इस प्रकरण में अष्टाध्यायी के चतुर्थ और पञ्चम अध्यायों से मात्र 81 सूत्रों को चुनकर विभिन्न उदाहरणों की जानकारी के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है।[5] अनेक सूत्रों को रूपरचनार्थ पुनः उद्धृत किया है।

इस प्रकरण के उपरान्त ''स्त्रीप्रत्यय'' प्रकरण दिया है। इस प्रकरण में भी लगभग आधुनिक उदाहरणों का वर्णन किया गया है। अष्टाध्यायी में स्त्रीप्रत्यय विधायक 77 सूत्र हैं। विश्वनाथ ने मुख्य उदाहरणों की रूपरचनार्थ इन में से मात्र 14 सूत्रों का प्रयोग किया है।[6] इस प्रकरण में ''नृनरयोवृद्धिश्च'' मात्र 1 वार्तिक तथा 15 सूत्र हैं।[7]

इस प्रकरण के उपरान्त प्रारम्भिक पाणिनीयम् में तिङन्तपदों की जानकारी के लिए तिङन्तप्रकरण दिया है। इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने विभिन्न तिङन्त पदों का भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि आदि प्रकरणों में वर्णन किया है। तिङन्त प्रकरण में सर्वप्रथम विभिन्न क्रियारूपों की जानकारी के लिए ''भ्वादि प्रकरण'' से शुरुआत की है। ''भ्वादि प्रकरण'' में विश्वनाथ ने 1010 पाणिनीय धातुओं में से भू तथा गमलृ परस्मैपदी और ''एध् वृद्धौ'' धातु आत्मनेपदी की रूपरचना का ही वर्णन किया है। इस प्रकरण में मात्र 3 धातुओं की विभिन्न रूपरचना के लिए 91 पाणिनीय सूत्रों को अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[8] इस प्रकरण के उपरान्त ''अदादि'' प्रकरण है। अद् अस् और शीङ् मात्र 3 धातुओं की रूपरचना का 15 पाणिनीय सूत्रों का वर्णन किया है।[9] ''जुहोत्यादि प्रकरण'' में ''हु दानादनयो'' मात्र 1 ही धातु की रूपरचना का 7 सूत्रों द्वारा वर्णन किया है।[10]

---

1 प्रा० पा० तत्पुरुष समास।
2 प्रा० पा० बहुव्रीहि समास।
3 अष्टा. 2-2-29
4 प्रा० पा० द्वन्द्व समास।
5 प्रा० पा० तद्धित प्रकरण।
6 प्रा० पा० स्त्रीप्रत्यय प्रकरण।
7 प्रा० पा० स्त्रीप्रत्यय प्रकरण।
8 प्रा० पा० तिङन्ते भ्वादि प्रकरणम्।
9 प्रा० पा० तिङन्ते अदादि प्रकरणम्।
10 प्रा० पा० तिङन्ते जुहोत्यादि प्रकरणम्

इस प्रकरण के उपरान्त ''दिवादि'' प्रकरण है इस में दिवु, जानी तथा पद् गतो 3 धातुओं की विभिन्न रूपरचना का 7 सूत्रों द्वारा प्रक्रियाक्रम में वर्णन किया है।[1] इस प्रकरण के उपरान्त ''स्वादि प्रकरण'' में केवल षुञ्धातु की रूपरचना का 3 सूत्रों द्वारा प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।[2] ''तुदादि प्रकरण'' में ''तुद् व्यथने'' धातु की रूपरचना का ही वर्णन है। इस में मात्र 3 सूत्र हैं।[3] ''रूधादि प्रकरण'' में रूधिर आवरणे धातु की रूपरचना का ही वर्णन है। इस में विभिन्न अध्यायों से चुनकर 5 सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है।[4] इस ग्रन्थ के ''तनादि प्रकरण'' में ''तनु विस्तारे'' धातु की रूपरचना का ही वर्णन है। इस में 3 सूत्र हैं।[5] इस ग्रन्थ के ''क्रयादि प्रकरण'' में भी ''डु क्रीञ् द्रव्यविनिमये'' मात्र 1 ही धातु की रूपरचना का वर्णन है। इस में 5 सूत्रों का चुनकर प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया गया है।[6] ''चुरादि प्रकरण'' में भी चुर स्तेये धातु की रूपरचना का वर्णन है इस में 9 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[7]

विभिन्न स्थानों पर प्रेरणा, इच्छा, बार-बार होना या अधिक होना आदि अर्थो को प्रकट करने वाले पदों की आवश्यकता होती है। इन पदों की रूपरचना विभिन्न धातुओं तथा नामपदों से विभिन्न प्रत्ययों के योग से होती है। इच्छा आदि अर्थो को प्रकट करने वाले सनादि प्रत्ययविधायक सूत्र अष्टाध्यायी तृतीय अध्याय में प्राप्त होते हैं। विश्वनाथ शास्त्री ने इन पदों की जानकारी के लिए प्रत्यय विधायक सूत्रों को आवश्यकतानुसार चुनकर ण्यन्त आदि प्रक्रिया प्रकरणों में दिया है। इन प्रकरणों में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ रूपरचना सम्बन्धित अन्य सूत्रों को भी अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन प्रकरणों में ''ण्यन्तप्रक्रिया प्रकरण'' दूसरे प्रकरणों से आदि में है। इस प्रकरण में प्रेरणार्थ प्रकट करने के लिए भू ,स्था और ज्ञप आदि 3 धातुओं से ण्यन्त रूपरचना का वर्णन किया है। इस प्रकरण में 8 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग हुआ है।[8]

इस प्रकरण के उपरान्त ''सन्नन्त प्रक्रिया प्रकरण'' है इस प्रकरण में इच्छा अर्थ प्रकट करने के लिए पठ, अद् और भू धातु से सनन्त रूपरचनार्थ 7 सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[9] तदुपरान्त भाव और कर्मार्थ प्रकट करने के लिए भावकर्मप्रक्रिया का वर्णन है। इस में 9 पाणिनीय सूत्रों का रूपरचनाक्रम से वर्णन है।[10] विश्वनाथ शास्त्री ने प्रारम्भिक पाणिनीयम् में आत्मनेपद, परस्मैपद, लकारार्थ प्रक्रिया के उपरान्त अन्य उपयोगी वर्णन भी छोड़ दिया है। क्योंकि यह प्रक्रियाग्रन्थ केवल प्रारम्भिक वर्णन करता है। इस में सर्वसाधारण प्रकरणों का वर्णन ही आपेक्षित है।

तिङन्त प्रक्रिया प्रकरण के उपरान्त प्रारम्भिक पाणिनीयम् में कृदन्त प्रकरण है। विश्वनाथ ने कृदन्त प्रकरण में दो ही प्रकरण दिये हैं। इन्होंने वरदराज के समान कृत्य प्रकरण, पूर्वकृदन्त तथा

---

1 प्रा0 पा0 तिङन्ते दिवादि प्रकरणम्।
2 प्रा0 पा0 तिङन्ते स्वादि प्रकरणम्।
3 प्रा0 पा0 तिङन्ते तुदादि प्रकरणम्।
4 प्रा0 पा0 तिङन्ते रूधादि प्रकरणम्।
5 प्रा0 पा0 तिङन्ते तनादि प्रकरणम्।
6 प्रा0 पा0 तिङन्ते क्रयादि प्रकरणम्।
7 प्रा0 पा0 तिङन्ते चुरादि प्रकरणम्।
8 प्रा0 पा0 ण्यन्तप्रक्रिया।
9 प्रा0 पा0 सन्नन्तप्रक्रिया।
10 प्रा0 पा0 भावकर्मप्रक्रिया।

उत्तरकृदन्त आदि तीन प्रकरणों में कृदन्तों को विभक्त नहीं किया है। विश्वनाथ शास्त्री ने कृत्यप्रकरण तथा पूर्वकृदन्त प्रकरणों से सम्बन्धित मुख्य सूत्रों का वर्णन मात्र ''कृदन्त प्रकरण'' में किया है। इस में 13 पाणिनीय सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है।[1] इन में प्रत्ययविधायक सूत्रों के साथ अन्य रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र भी हैं। तदुपरान्त उत्तरकृदन्त प्रकरण है। इस में शेष प्रत्ययविधायक सूत्रों में से प्रारम्भिक ज्ञानार्थ मुख्य सूत्रों को विभिन्न उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। इन सूत्रों के उपरान्त रूपरचना में सहायक अन्य सूत्र भी हैं जिन्हें अष्टाध्यायी के विभिन्न अध्यायों से चुनकर इस प्रकरण में दिया है। इस प्रकरण में 10 सूत्र हैं।[2] इसी प्रकरण के साथ ग्रन्थ समाप्त हो जाता है। इस ग्रन्थ के अध्ययन से प्रतीत होता हैं कि वास्तव में यह ग्रन्थ पाणिनीयव्याकरण के ज्ञानार्थ प्रारम्भिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में मात्र 455 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग है।

12. पाणिनीय प्रबोध ग्रन्थकार गोपाल शास्त्री नेने :–

आधुनिक युग में गोपाल शास्त्री ने पाणिनीयव्याकरण पर ''पाणिनीय प्रबोध'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में पाणिनीय सूत्रों को आधुनिक उदाहरणों की जानकारी हेतु विभिन्न प्रकरणों में प्रक्रियाक्रम से प्रस्तुत किया है। ग्रन्थकार ने पाणिनीयव्याकरण के सभी सूत्रों और वार्तिकों की जानकारी आवश्यक नहीं समझी है। इन्होंने समयानुकूल पदों की जानकारी के लिए आवश्यकतानुसार सूत्रों का चुनाव किया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में उदाहरणों की जानकारी पूर्ण रूपरचना सहित प्रस्तुत की है ताकि पाठक कठिनाई का सामना न कर सकें। यह प्रक्रियाग्रन्थ छात्रों को समयानुकूल बहुत उपयुक्त सिद्ध हुआ है।

पाणिनीय प्रबोध पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दो भागों में विभक्त है। इस ग्रन्थ के पूर्वार्द्ध भाग में सन्धि, पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग, अव्यय, स्त्रीप्रत्यय, समास और तद्धित आदि प्रकरणों में सुबन्त पदों से सम्बन्धित जानकारी है। तदुपरान्त ग्रन्थ के द्वितीय भाग में धातु तथा प्रत्ययों के योग से निर्मित होने वाले तिङन्त पदों तथा कृदन्त पदों की जानकारी है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में विषयवार प्रकरण विभाजन एवम् वर्णन रूपावतार एवम् रूपमाला के समान है तथा प्रक्रियाकौमुदी, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी आदि ग्रन्थों से भिन्न है।

इस प्रक्रियाग्रन्थ में 1112 पाणिनीय सूत्रों का प्रक्रियाक्रम से प्रयोग किया है तथा इस में संज्ञा, अच् सन्धि, हल् सन्धि, विसर्ग सन्धि, पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग आदि 70 प्रकरण हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में अन्य प्रक्रियाग्रन्थों से यह भिन्नता है कि इस में विभिन्न प्रातिपदिकों से सुबन्त [illegible] पदों की रूपरचना को पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग आदि प्रकरणों में अजन्त तथा हलन्त प्रातिपदिकों का वर्णन विभाजित किया है तथा क्रिया पदों का वर्णन भ्वादि, अदादि आदि प्रकरणों के परस्मैपद, आत्मनेपद तथा उभयपद नामक प्रकरणों में है अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में यह जानकारी अन्य प्रकार से है।

---

1 प्रा0 पा0 कृदन्त प्रकरण।

2 प्रा0 पा0 उत्तर कृदन्त प्रकरण।

चतुर्थ अध्याय

सूत्रमूलकपद्धति के पारिप्रेक्ष्य में प्रक्रियामूलकपद्धति का समीक्षात्मक अध्ययन

विषय प्रवेश

1. दोनों पद्धतियों का तुलनात्मक विवेचन

(क) सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियापद्धति का परस्पर तुलनात्मक विवेचन

1. सूत्रमूलक पद्धति के गुण दोष।
2. सूत्रमूलक पद्धति की सुगमता और कठिनता।
3. सूत्रमूलकपद्धति में अनेक सन्देह
4. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा सन्देह निवारण
5. सूत्रमूलकपद्धति से अनेक समस्याएँ
6. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण

(ख) प्रक्रियामूलकपद्धति का विवेचन

1. प्रक्रियामूलकपद्धति के गुण दोष
2. प्रक्रियामूलकपद्धति की सुगमता और कठिनता
3. प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक सन्देह
4. प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा सन्देह निवारण
5. प्रक्रियामूलकपद्धति से अनेक समस्याएँ
6. प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण

पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थः एक समीक्षात्मक अध्ययन

चतुर्थ अध्याय

सूत्रमूलकपद्धति के पारिप्रेक्ष्य में प्रक्रियामूलकपद्धति का समीक्षात्मक अध्ययन

विषय प्रवेश

1 दोनों पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन :-

सूत्रमूलकपद्धति व्याकरणपरम्परा में उपयोगी और सरल है फिर भी इस पद्धति में समयानुसार आयीं अनेक समस्याओं के कारण व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति का उद्भव हुआ है। यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक त्रुटियां हैं परन्तु समयानुसार इस पद्धति की उपयोगिता बढ़ गयी है। क्योंकि इस पद्धति को उदाहरणों के क्रम से सन्धि, षड्लिङ्ग., अव्यय, कारक, स्त्रीप्रत्यय, समास आदि विभिन्न प्रकरणों में दिया है। सूत्रमूलकपद्धति से प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है परन्तु इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है। दोनों पद्धतियां तुलनात्मक दृष्टि में एक दूसरी से न्यूनाधिक हैं। इन पद्धतियों के तुलनात्मक अध्ययन की पूर्ण जानकारी हेतु सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियामूलकपद्धति का एक दूसरी के साथ तुलनात्मक विवेचन जरूरी है जो दो विषयों पर किया जा सकता है जो इस प्रकार है :-

क सूत्रमूलकपद्धति का प्रक्रियापद्धति से तुलनात्मक विवेचन।

रव प्रक्रियामूलकपद्धति का विवेचन।

सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियामूलकपद्धति के विवेचन में यथा क्रम सर्वप्रथम सूत्रमूलकपद्धति का प्रक्रियापद्धति से तुलनात्मक विवेचन जरूरी है जो इस प्रकार है :-

क सूत्रमूलकपद्धति का प्रक्रियापद्धति से तुलनात्मक विवेचन :-

सूत्रमूलकपद्धति का प्रक्रियामूलक पद्धति से गुण-दोष, सुगमता और कठिनता, पद्धति में अनेक सन्देह, पद्धति द्वारा सन्देह निवारण, पद्धति में अनेक समस्याएँ, और पद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण, आदि छ: विषयों पर विवेचन किया जा सकता है जो क्रमपूर्वक इस प्रकार है :

1. सूत्रमूलकपद्धति के गुण-दोष :-

सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र संज्ञा, परिभाषा, सर्वनाम, इत् संज्ञा, आत्मनेपद, परस्मैपद्, कारक और विभक्ति आदि प्रकरणों में एक क्रम से दिये हैं। सम्बद्ध क्रम से यह सुविधा होती है कि पाठकों को सूत्र पढ़ते ही सूत्रार्थ स्पष्ट हो जाता है क्योंकि सूत्र अनुवृत्ति सूत्रार्थ स्पष्ट कर देती है। इस पद्धति से सूत्रार्थ

जानकारी में कोई आकांक्षा नहीं होती है। यह इस पद्धति का एक गुण है। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रवृत्ति रटनी पड़ती है। सूत्रवृत्ति रटने पर भी पाठक सूत्र के वास्तविक अर्थ को नहीं समझ पाते तथा कुछ समय बाद सूत्रवृत्ति भी भूल जाते हैं क्योंकि कण्ठस्थ किया हुआ अर्थ चाहते हुए भी विस्मृत हो जाता है।

सूत्रमूलकपद्धति द्वारा व्याकरण ज्ञानोपार्जन करने के लिए परिश्रम अधिक करना पड़ता है क्योंकि इस पद्धति में हर सामग्री प्रयोग रूप में स्वयं तैयार करनी पड़ती है। प्रक्रियामूलकपद्धति में तैयार किया हुआ माल प्राप्त है इसलिए परिश्रम कम करना पड़ता है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति से पाठकों को ज्ञानोपार्जन के लिए स्वयं प्रायोगिक वर्णन करना पड़ता है इसलिए प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है। यह भी इस पद्धति का एक विशेष गुण है।

प्रक्रियामूलकपद्धति से पढ़ा हुआ छात्र इतना बताने में समर्थ होता है कि अमुक सूत्र से यह कार्य हुआ परन्तु यह बताने में असमर्थ होता है कि यह कार्य क्यों हुआ ? क्योंकि उदाहरणों की रूपरचना कराने में तो प्रक्रियामूलकपद्धति प्रसिद्ध है परन्तु व्याकरण का वास्तविक ज्ञान करवाने में असमर्थ है। सूत्रमूलकपद्धति से चाहे परिश्रम अधिक है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति व्याकरण के वास्तविक ज्ञान द्वारा ही उदाहरणों की जानकारी करवाती है यह इस पद्धति का एक अन्य गुण है।

सूत्रमूलकपद्धति से ''पूर्वत्रासिद्धम्''[1] ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[2] ''असिद्धवदत्राभात''[3] ''समर्थानाम् प्रथमाद्वा''[4] ''प्राक्कडारात् समास:''[5] ''कृत्या:''[6] ''धातो:''[7] ''तद्धिता:''[8] आदि अनेक सूत्रों का अधिकार एवम् कार्यक्षेत्र इस पद्धति से एकदम स्पष्ट हो जाता है। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से इन सूत्रों द्वारा उदाहरणों की रूपरचना में सहायता ली जाती है पाठक इन सूत्रों की पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते क्योंकि यह सूत्रमूलकपद्धति पर आश्रित है। अत: सिद्ध होता है कि सूत्रमूलकपद्धति से पाठक पूर्ण जानकारी प्राप्त करते हैं जो इस पद्धति का एक अन्य गुण है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में उद्धृत सूत्र को पाठक उसी उदाहरण से सम्बन्धित समझता है दूसरी जगह प्रयुक्त करने में संकोच करता है कयोंकि उस की ओर से वह सूत्र केवल उसी उदाहरण से सम्बद्ध है। सूत्रमूलकपद्धति से पढ़ा छात्र सूत्र को अन्य स्थान पर निधड़क प्रयोग करता है क्योंकि वह सूत्र के विस्तृत क्षेत्र एवम् पूर्णसामर्थ्य से परिचित होता है। यह इस पद्धति का एक गुण है।

सूत्रमूलकपद्धति से वैदिक पदों की जानकारी लौकिक पदों की जानकारी के साथ समान रूप से होती है। प्रक्रियामूलकपद्धति में केवल वेदाङ्गप्रकाश में ही वैदिक पदों की जानकारी लौकिक पदों की जानकारी के साथ दी है। अन्य प्रक्रियाग्रन्थों में से अधिक में वैदिक वर्णन नहीं है वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी,

---

1 अष्टा0 8-2-1
2 अष्टा0 1-4-2
3 अष्टा0 6-4-22
4 अष्टा0 4-1-82
5 अष्टा0 2-1-3
6 अष्टा0 3-1-95
7 अष्टा0 3-1-91
8 अष्टा0 4-1-76

एवम् प्रक्रियासर्वस्व में वर्णन प्राप्त है परन्तु वह ग्रन्थों के अन्त में दिया है तथा प्रक्रियाकौमुदी और मध्यसिद्धान्तकौमुदी में वैदिक जानकारी नाममात्र है वहां भी यह वर्णन ग्रन्थों के अन्त में है। कोई ही अध्येता ग्रन्थ के अन्त तक अध्ययन करता है अन्य कुछ ज्ञान से ही कार्य चलाते हैं। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति से वैदिक पदों की जानकारी लौकिक जानकारी के साथ समान रूप से होती है। भारतीय संस्कृति में वैदिक जानकारी आवश्यक है। सूत्रमूलकपद्धति इस का समान रूप से वर्णन करती है। अत: यह भी इस पद्धति का एक गुण है।

सूत्रमूलकपद्धति में अनेक गुणों के साथ अनेक दोष भी हैं। यह ठीक है कि सूत्रमूलकपद्धति से सूत्रार्थ स्पष्टीकरण में कोई आकांक्षा नहीं रहती परन्तु उदाहरण रूपरचना जानकारी के लिए आकांक्षा विद्यमान रहती है। इस समस्या समाधान हेतु स्वयं सूत्रों का चयन करना पड़ता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रार्थ जानकारी के लिए आकांक्षा बनी रहती है परन्तु रूपरचना के लिए आकांक्षा का प्रश्न ही नहीं होता है। प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में रूपरचना जानकारी में आकांक्षा हर समय विद्यमान है जो इस पद्धति का एक दोष है।

सूत्रमूलकपद्धति व्याकरण का वास्तविक ज्ञान करवाने में समर्थ है। प्रक्रियामूलकपद्धति के समान अमुक सूत्र से यह कार्य क्योंकि हुआ? किस स्थान पर हुआ? ऐसा बताने में असमर्थ नहीं है। परन्तु यह पद्धति सूत्रव्याख्या तक सीमित है उदाहरणों तथा प्रत्युदाहरणों की पूर्ण रूपरचना जानकारी के लिए इस पद्धति में भी क्यों का प्रश्न विद्यमान है। उदाहरणों का साधारण प्रक्रिया में वर्णन न करना इस पद्धति में एक दोष है।

सूत्रमूलकपद्धति से ''पूर्वत्रासिद्वम्''[1] ''विप्रतिषेधेपरमकार्यम्''[2] ''असिद्धवदत्राभात्''[3] ''समर्थानाम् प्रथमाद्वा''[4] ''कृत्या:''[5] ''प्राक्कडारात् समास:''[6] ''धातो:''[7] ''तद्धिता:''[8] आदि अनेक सूत्रों का अधिकार और कार्यक्षेत्र अध्ययन मात्र से ही स्पष्ट हो जाता है, यह ठीक है परन्तु केवल सूत्र के अधिकार और कार्यक्षेत्र की जानकारी ही आवश्यक नहीं है। सूत्रों की पूर्ण जानकारी के लिए इन सूत्रों का प्रायोगिक वर्णन और भी आवश्यक है। प्रक्रियामूलकपद्धति से इन सूत्रों का अधिकार और कार्यक्षेत्र यद्यपि पूर्णरूप से स्पष्ट नहीं होता है परन्तु इन सूत्रों के प्रायोगिक वर्णन से पाठक इन सूत्रों की पूर्ण जानकारी प्राप्त करते हैं। सूत्रमूलकपद्धति से इन सूत्रों के उदाहरणों में पाठक पूर्व और पर कार्यो को सुलझा पाने में असमर्थ होते हैं। अत: उक्त सूत्रों की जानकारी भी प्राप्त नहीं कर सकते, यह इस पद्धति का एक अन्य दोष है।

प्रक्रियामूलकपद्धति से पाठक रूपरचना में प्रयुक्त सूत्र को उसी उदाहरण से सम्बन्धित समझाता है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति से सीमित जानकारी प्राप्त होती है। सूत्रमूलकपद्धति से पाठक समर्थ सूत्र की

---

1 अष्टा0 8-2-1
2 अष्टा0 1-4-2
3 अष्टा0 6-4-22
4 अष्टा0 4-1-82
5 अष्टा0 3-1-95
6 अष्टा0 2-1-3
7 अष्टा0 3-1-91
8 अष्टा0 4-1-76

विस्तृत जानकारी प्राप्त करता है परन्तु इस पद्धति से परिश्रम अधिक करना पड़ता है जो समयानुसार इस पद्धति में एक दोष बन गया है।

सूत्रमूलकपद्धति का प्रयोजन भी उदाहरणों की रूपरचना जानकारी ही है परन्तु इस पद्धति में प्रत्येक कार्य से सम्बन्धित सूत्र विखरे हैं किसी भी रूपरचना के लिए सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से स्वयं जुटाना पड़ता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में विना प्रयास ही सूत्र रूपरचनाक्रम से प्राप्त हो जाते हैं। अतः उदाहरण रूपरचनार्थ अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है। किसी भी लक्ष्य के लिए दो साधन हों, उन में एक कठिन हो और दूसरा आसान हो तो कौन मुर्ख कठिन साधन का अनुकरण करेगा अर्थात आसान साधन का चुनाव ही हितकारी होता है। अतः सिद्ध होता है कि प्रक्रियामूलकपद्धति रूपरचनार्थ तैयार किया हुआ माल है इस की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति उदाहरण रूपरचनार्थ कठिन साधन है जो इस पद्धति में विशेष दोष बना है।

सूत्रमूलकपद्धति से वैदिक पदों की जानकारी लौकिक पदों की जानकारी के साथ समान रूप से होती है। प्रक्रियामूलकग्रन्थों में दो तीन प्रक्रियाग्रन्थों को छोड़कर शेष प्रक्रियाग्रन्थों में वैदिक पदों का वर्णन नहीं है तथा केवल वेदाङ्गप्रकाश को छोड़ कर प्रक्रियाग्रन्थों में यह वर्णन प्रक्रियाग्रन्थों के अन्त में दिया है। अनेक पाठक इन पदों की जानकारी प्राप्त नहीं करना चाहते। सूत्रमूलकपद्धति में लौकिक जानकारी के साथ वैदिक जानकारी भी मिश्रित है जिसे अनेक पाठक अवाञ्छनीय समझते हैं परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में एक क्रम से अध्ययन करना पड़ता है। पाठकों की भावनानुकूलवर्णन न कर पाना इस पद्धति का दोष है। प्रक्रियामूलकपद्धति में इन पदों की जानकारी ग्रन्थों के अन्त में है तथा एक ही प्रकरण में इकट्ठी दी है पाठक इच्छानुसार अध्ययन कर सकते हैं। अतः सिद्ध होता है कि सूत्रमूलकपद्धति में अनेक गुणों के साथ अनेक दोष भी हैं।

2. सूत्रमूलकपद्धति की सुगमता और कठिनता :-

सूत्रमूलकपद्धति से सूत्र पढ़ते ही सूत्रार्थ स्पष्टीकरण हो जाता है क्योंकि इस पद्धति में समानकार्य विधायक सूत्र एक ही क्रम से प्राप्त हैं जिन से अग्रिम सूत्र को अनुवृत्ति जाने पर सूत्रार्थ स्पष्ट हो जाता है। अतः पाठकों को इस पद्धति से सूत्रार्थ जानकारी में सुगमता रहती है।

उदाहरण रूपरचनार्थ यदि पाठक को सर्वनाम, इत् संज्ञा, आत्मनेपद, परस्मैपद, कारक, विभक्ति, समास आदि कार्यों से सम्बन्धित सूत्र की आवश्यकता पड़ जाये तो वह सूत्र सूत्रमूलकपद्धति से सम्बन्धित सूत्रों में प्राप्त हो जाता है। परन्तु यदि प्रक्रियामूलकपद्धति से इस समस्या का समाधान चाहे तो नहीं हो सकता क्योंकि न जाने ग्रन्थकार ने सम्बन्धित सूत्र को कहां उद्धृत किया है या उद्धृत ही नहीं किया है। सूत्रमूलकपद्धति से इन सूत्रों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। यह इस पद्धति की एक विशेषता है।

सूत्रमूलकपद्धति में दिये गये उदाहरणों में सूत्रकार्य का सुगमता से स्पष्टीकरण हो जाता है। सूत्र पढ़ते ही उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण भी स्पष्ट हो जाते हैं। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से सूत्रों की व्याख्यात्मक जानकारी के लिए सूत्रमूलकपद्धति पर निर्भर रहना पड़ता है। अतः सिद्ध होता है कि व्याख्यानात्मक वर्णन के लिए सूत्रमूलकपद्धति सरल है।

सूत्रमूलकपद्धति से ''कृत्याः''[1] ''धातोः''[2] ''तद्धिताः''[3] ''प्राक्कडारात् समासः''[4] ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[5] ''पूर्वत्रासिद्धम्''[6] ''असिद्धवदत्रान्भात्''[7] आदि अनेक सूत्रों के अधिकार और कार्यक्षेत्रों की जानकारी सुगमता से हो जाती है। क्योंकि यह जानकारी सूत्रक्रम पर निर्भर करती है। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से इस जानकारी में कठिनता आती है क्योंकि इन सूत्रों का अधिकार और कार्य क्षेत्रों का आधार सूत्रक्रम पर आश्रित है प्रक्रियाक्रम पर नहीं। अतः सिद्ध होता है कि सूत्रमूलकपद्धति प्रक्रियापद्धति से अनेक क्षेत्रों में सुगम है।

सूत्रमूलकपद्धति से सुगमता के साथ अनेक स्थानों पर कठिनता का सामना भी करना पड़ता है। सूत्रमूलकपद्धति में उदाहरणों में दिये गये उदाहरणों में सूत्रकार्य तो सुगमता से स्पष्ट हो जाता है परन्तु उदाहरणों की रूपरचनार्थ शेष पूर्व और पर कार्यो से सम्बन्धित सूत्रों को जुटाने में कठिनता का सामना करना पड़ता है क्योंकि सूत्रक्रम में सूत्र रूपरचना क्रम से प्राप्त नहीं है उन्हें स्वपरिश्रम से जुटाना पड़ता है। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरण रूपरचनार्थ तैयार किया हुआ माल प्राप्त है।

यद्यपि सूत्रमूलकपद्धति से सूत्र अनुवृत्ति द्वारा सूत्रार्थ स्पष्ट हो जता है परन्तु इस पद्धति में भी अनेक स्थानों पर अग्रिम सूत्रों की जानकारी के विना पूर्व सूत्रों के अर्थ स्पष्टीकरण में कठिनता का सामना करना पड़ता है। जैसे ''तद्धितश्चासर्वविभक्तिः''[8] सूत्र का अर्थ ''पञ्चम्यास्तसिल्''[9] सूत्र से लेकर ''एधाच्च''[10] सूत्र तक सूत्रों की जानकारी विना स्पष्ट नहीं होता है। प्रकृत् सूत्र प्रथम अध्याय प्रथम पाद में है जबकि सम्बन्धित सूत्र अष्टाध्यायी पंचम अध्याय तृतीय पाद में है। इसी तरह ''कृन्मेजन्तः''[11] ''कत्वातोसुन्कसुनः''[12] ''अव्ययीभावश्च''[13] ''शिसर्वनामस्थानम्''[14] आदि अनेक सूत्र हैं जिनकी जानकारी के लिए कठिनता का सामना करना पड़ता है।

वाक्यार्थ जानकारी के लिए सुबन्त और तिङन्त पदों की जानकारी आवश्यक है। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में सुबन्त और तिङन्त पदों की जानकारी यथा क्रम इकट्ठी प्राप्त है। सूत्रमूलकपद्धति में सुबन्त तथा तिङन्त् पद क्रम रहित हैं जिस कारण पाठक ज्ञानोपार्जन करने के लिए कठिनता महसूस करते हैं क्योंकि वे इन का ज्ञान एक साथ एक क्रम से प्राप्त नहीं कर सकते।

---

1 अष्टा0 3-1-95
2 अष्टा0 3-1-91
3 अष्टा0 4-1-76
4 अष्टा0 2-1-3
5 अष्टा0 1-4-2
6 अष्टा0 8-2-1
7 अष्टा0 6-4-22
8 अष्टा0 1-1-38
9 अष्टा0 5-3-7
10 अष्टा0 5-3-46
11 अष्टा0 1-1-39
12 अष्टा0 1-1-40
13 अष्टा0 1-1-41
14 अष्टा0 1-1-42

सूत्रमूलकपद्धति में अनकाधिकारों में वर्णित होने पर भी तद्धित प्रत्ययों से सम्बद्ध और कृत् प्रत्ययों से सम्बद्ध सूत्रों को छोटे-छोटे प्रकरणों में विभक्त करके नहीं दिया है। इन सूत्रों का बृहद् प्रकरण देखकर अध्ययन में रुचि नहीं लेते हैं। छोटे प्रकरणों से सूत्रों की संख्या में कमी तो नहीं आती है परन्तु छोटे प्रकरणों में समान कार्यों और एकाधिकार सम्बन्धित सूत्रों का अध्ययन सुगम होता है। प्रक्रियामूलकग्रन्थों में इन सूत्रों को समान कार्यो या एकाधिकार के आधार पर छोटे-छोटे भागों में विभक्त कर के दिया है ताकि पाठक सुगमता महसूस कर सकें। सूत्रमूलकपद्धति में इसके विपरित है जिस कारण पाठक कठिनता का सामना करते हैं।

यह ठीक है कि सूत्रमूलकपद्धति से ''कृत्या:''[1] ''धातो:''[2] ''तद्धिता:''[3] ''प्राक्कडरात् समास:''[4] ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[5] ''पूर्वत्रासिद्धम्''[6] आदि अनेक सूत्रों का अधिकार और कार्यक्षेत्र सुगमता से स्पष्ट हो जाता है परन्तु मात्र अधिकार और कार्यक्षेत्र से ही सूत्र की पूर्ण जानकारी नहीं होती है। इन सूत्रों की जानकारी इन के प्रायोगिक वर्णन पर आधारित है। सूत्रमूलकपद्धति से प्रायोगिक वर्णन में कठिनता का सामना करना पड़ता है। क्योंकि उदाहरणों में इन सूत्रों के प्रयोग से पूर्व और पर कार्यो से सम्बन्धित सूत्र रूपरचनाक्रम से प्राप्त नहीं हैं। अत: पाठक उदाहरणों में सम्बन्धित सूत्रों के विवरण तक ही नहीं पहुंचते हैं और सम्बन्धित सूत्र की पूर्ण जानकारी से वंचित रहते हैं। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से पाठक इन सूत्रों की सुगमता से प्रायोगिक जानकारी प्राप्त करते हैं।

3. सूत्रमूलकपद्धति में अनेक सन्देह :-

सूत्रमूलकपद्धति से अनेक सूत्रों के सूत्रार्थ समझते समय सन्देह उत्पन्न होता है कि ये वे सूत्र हैं जिन का अर्थ अग्रिम सूत्रों को पढ़े विना स्पष्ट नहीं होता है ''जैसे - ''स्वरदिनापातमव्ययम्''[7] सूत्र का अर्थ ''प्राग्रीश्वरान्निपाता:''[8] सूत्र से लेकर ''अधिरीश्वरे''[9] सूत्र तक सूत्रों को पढ़े विना स्पष्ट नहीं होता है। प्रकृत सूत्र प्रथम अध्याय प्रथम पाद में है जबकि सम्बद्ध सूत्र अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में प्राप्त होते हैं इसी तरह ''कृन्मेजन्त:''[10] ''कात्वातोसुनूकसुन:''[11] ''शि सर्वनामस्थानम्''[12] आदि अनेक सूत्र है जो सूत्रार्थ समझते समय पाठकों को सन्देह में डालते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में संज्ञा, परिभाषा, विधि, नियम, अतिदेश और अधिकार, आदि सभी प्रकार के सूत्र अपना कार्यक्षेत्र तो स्पष्ट कर देते हैं परन्तु छात्र उदाहरणों में पूर्व एवम् अग्रिम कार्यवाही हेतु सन्देह में पड़ जाते हैं। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में सन्देह का प्रश्न ही नहीं है क्योंकि इस पद्धति में रूपरचनार्थ तैयार सामग्री प्राप्त है।

---

1 अष्टा0 3-1-95
2 अष्टा0 3-1-91
3 अष्टा0 4-1-76
4 अष्टा0 2-1-3
5 अष्टा0 1-4-2
6 अष्टा0 8-2-1
7 अष्टा0 1-1-37
8 अष्टा0 1-1-56
9 अष्टा0 1-1-97
10 अष्टा0 1-1-39
11 अष्टा0 1-1-40
12 अष्टा0 1-1-42

सूत्रमूलकपद्धति से पाठक समान कार्य से सम्बन्धित सूत्रों के एक प्रकरण के उपरान्त जब समान कार्यों से सम्बन्धित दूसरे प्रकरण की शुरुआत करता है तो उसे सन्देह हो जाता है कि यह पद्धति इसी तरह समान कार्य का वर्णन करती रहेगी तथा मैं विभिन्न अर्थों को प्रकट करने वाले पदों की जानकारी से वंचित रह जाऊंगा। यद्यपि मूलग्रन्थों में विभिन्न पदों की जानकारी का ही वर्णन है परन्तु यह जानकारी पाठक सम्पूर्ण ग्रन्थों के अध्ययन कर लेने पर ही कर सकते हैं।

इस पद्धति से पाठक उस स्थिति में भी सन्देह में पड़ जाते हैं जब उन्हें कुछ सुबन्त तथा तिङन्त पदों की जानकारी तो समान कार्यों से सम्बन्धित सूत्रों में प्राप्त हो जाती है। परन्तु शेष पदों की जानकारी के लिए वे संदिग्ध रहते हैं। क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में सुबन्त पदों की जानकारी प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति एवम् पुलिङ्ग., स्त्रीलिङ्ग., नपुंस्कलिङ्ग. आदि क्रम रहित है तथा इसी तरह तिङन्त पदों की जानकारी लट्, लिट्, लुट् आदि लकारों एवम् भ्वादि, अदादि आदि गणों के क्रम से नहीं दी है। इसलिए आवश्यकता पड़ने पर पाठक सम्बन्धित पदों की जानकारी हेतु सन्देह में पड़ जाते हैं कि शायद इन पदों की जानकारी किस सूत्र में प्राप्त हो ? इसकी अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में पदों की जानकारी विभिन्न प्रकरणों में विशेष क्रम से दी है ताकि पाठक सन्देह से मुक्त रहें।

व्याकरण के हर क्षेत्र में इस पद्धति से सन्देह होना स्वभाविक भी है क्योंकि इस पद्धति में प्रसङ्ग. तो यहां है शेष वर्णन का ज्ञात नहीं कहां प्राप्त होगा ? जब तक शेष वर्णन प्राप्त न हो जाये तब तक पाठक संदिग्ध रहता है कि वह भी यदि अध्ययन जारी रखते तो यदि बीच में सन्देह के कारण अध्ययन छोड़ दिया तो पाणिनीयव्याकरण के प्रति वह संदिग्ध अवस्था उस के मस्तिष्क में सदा के लिए स्थान बना लेगी। जिस कारण स्वयं तो क्या औरों पर भी संदेह अवस्था का प्रभाव छोड़ सकता है।

सूत्रमूलकपद्धति से पाठक पढ़ता ही जाता है उसे किसी भी सन्धि, षड्लिङ्ग. आदि प्रकरण का पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं होता है अर्थात् वह अधूरा ज्ञान ही प्राप्त करता जाता है। अभी वह किसी विषय की जानकारी प्राप्त ही कर रहा होता है उतने में अगला प्रसङ्ग. शुरु हो जाता है। अत: हर प्रकरण उसे संदेह ही छोड़ता है। प्रक्रियापद्धति में इस क्रम का अभाव है।

सूत्रमूलकपद्धति में सन्धि विधायक सूत्र षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में हैं। इन से पूर्व व्याकरण के हर क्षेत्र में पाठक सन्धि ज्ञान के अभाव में संदिग्ध अवस्था में रहते हैं। पाठकों को संदेह होना भी स्वभाविक है क्योंकि व्याकरण का प्रारम्भिक ज्ञान सन्धि सम्बद्ध जानकारी सूत्रमूलकपद्धति के अन्तिम अध्यायों में है। अत: सन्धि ज्ञान के अभाव में वे हर क्षेत्र में संदेह में पड़ जाते हैं। प्रक्रियामूलकपद्धति में सन्धियों से सम्बन्धित जानकारी शुरू में दी है जिस कारण पाठक सन्देह मुक्त रहते हैं।

4. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा सन्देह निवारण :–

सूत्रमूलकपद्धति से पाठकों को अनेक सन्देह हो जाते हैं। वास्तविकता में वे सन्देह नहीं हैं। अनेक समस्याओं के निवारण हेतु ही ग्रन्थ रचे जाते हैं। अर्थात ग्रन्थ में सन्देह होते ही नहीं। यह पाठकों की कमी

होती है कि वे किसी भी ग्रन्थ में अनेक स्थानों पर सन्देह महसूस करते हैं। यदि ग्रन्थ को ग्रन्थकर्ता पद्धति वर्णन विधि क्रमानुसार पूर्ण जानकारी से पढ़ा जाये तथा परिश्रम किया जाये तो कोई सन्देह ही उत्पन्न नहीं होगे। ऐसा ही यदि सूत्रमूलकपद्धति में घटित हो तो सन्देह का प्रश्न ही नहीं हो सकता।

सूत्रमूलकपद्धति में अनेक सूत्रों का अर्थ अग्रिम सूत्रों की जानकारी विना स्पष्ट नहीं होता है। अतः अनेक पाठक अग्रिम सूत्रों की जानकारी विना अनेक सूत्रार्थ स्पष्टीकरण के लिए सन्देह में पड़ जाते हैं। इस सन्देह निवारण हेतु पाठकों को आश्रित सूत्रों का अध्ययन भी साथ करना चाहिए। इस तरह पाठकों को दोहरा लाभ होगा।

सूत्रमूलकपद्धति में संज्ञा, परिभाषा, विधि, नियम, आदि छः प्रकार के सूत्र अपना कार्य स्पष्ट कर देते हैं। परन्तु छात्र उदाहरणों में प्रक्रिया के अभाव में अग्रिम कार्यवाही हेतु सन्देह में पड़ जाते हैं। यह ठीक है कि उदाहरण रूपरचना का वर्णन पाठक को तत्क्षण उसी स्थान पर प्राप्त नहीं होता है जिस कारण वह अग्रिम कार्यवाही हेतु सन्देह में पड़ जाता है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति की अपनी विशेषता और अपना पद्धति क्रम है। इस पद्धति से परिश्रम द्वारा अत्यधिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है यदि पाठक को अष्टाध्यायी के सभी सूत्र स्मरण हों तो वह उदाहरण की अग्रिम कार्यवाही पर सन्देह ही नहीं कर सकता उसे तत्क्षण ही सूत्र स्मरण आते रहेंगे तथा वह सन्देह मुक्त रहेगा।

सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्य सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन एक क्रम से दिया है। अल्पमति छात्र एक प्रकार के अनेक सूत्रों को पढ़कर जब समान कार्य सम्बन्धित दूसरे सूत्रों का अध्ययन शुरू करते हैं तो उन्हें सन्देह हो जाता है कि मैं विभिन्न अर्थों को प्रकट करने वाले व्याकरण की जानकारी से वंचित रह जाऊंगा क्योंकि इस पद्धति में समान कार्यों से सम्बन्धित सूत्रों का क्रम है सन्धि, षड्लिंग, समास आदि प्रकरण एक क्रम से नहीं हैं। सूत्रमूलकपद्धति में इन प्रकरणों में सम्बन्धित सूत्र विखरे हैं जिस कारण अनेक पाठकों को सन्देह हो जाता है। सन्देह होना स्वभाविक होता है अकस्मात वह किसी को भी हो सकता है। अधूरा ज्ञान सन्देह का कारण होता है। सन्देह निवारण हेतु ग्रन्थ रचे जाते हैं न की सन्देह प्राप्ति के लिए। ग्रन्थकार का अपना पद्धतिक्रम होता है। अष्टाध्यायी व्याकरण की पूर्ण जानकारी का एक संग्रह है। इस से थोड़ा-थोड़ा ज्ञान उपार्जित करते-करते अन्त में पाठक पूर्ण जानकारी से अवगत हो जाता है। परन्तु इस पद्धति में परिश्रम की आवश्यकता है जिस कारण संन्देह का प्रश्न ही नहीं हो सकता तथा इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है। इस की अपेक्षा प्रक्रियापद्धति में यद्यपि सन्धि, समास आदि प्रकरणों में जानकारी है, परन्तु इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन न होकर पाठकों को हमेशा संदिग्ध अवस्था में रखता है।

जब पाठक समान कार्यो से सम्बन्धित सूत्रों में कुछ सुबन्त और तिङन्त आदि पदों की जानकारी कर लेता है परन्तु इस पद्धति से शेष पदों की जानकारी के लिए वह सन्देह में पड़ जाते हैं क्योंकि प्रसङ्ग. बदल जाता है। सूत्रमूलकपद्धति में निश्चित नहीं है कि शेष पदों की जानकारी कहां प्राप्त होगी। इसलिए पाठक सन्दिग्ध रहते हैं यह ठीक है परन्तु हर ग्रन्थ की अपनी विशेषता होता है। पाणिनीय व्याकरण,

व्याकरण की पूर्ण जानकारी का संग्रह है। इस द्वारा थोड़ा-थोड़ा ज्ञान उपार्जित करते-करते अन्त में पूर्ण जानकारी हो जाती है। यदि हम ग्रन्थ का ग्रन्थ कर्ता पद्धति की पूर्ण जानकारी से अध्ययन करें तो सन्देह का प्रश्न ही नहीं हो सकता। इसी तरह जब पाठक समान कार्यो से सम्बन्धित सूत्रों को पढ़ता-पढ़ता सन्देह में पड़ जाता है कि मैं एक ही प्रकार के सूत्रों को क्यों पढ़ता रहूं। जब वहां भी यह लक्ष्य करके अध्ययन किया जाये कि यह इस पद्धति का विशेष क्रम है। इस में समान कार्यो के सूत्रों को पढ़ते-पढ़ते अन्त में सम्पूर्ण जानकारी हो जाती है। अत: सन्देह निवारण के लिए पाठकों को ग्रन्थ पद्धति अनुरूप वास्तविक अध्ययन का पालन करना चाहिए।

सूत्रमूलकपद्धति में प्रसङ्ग. यहां है तो शेष वर्णन कहीं दूसरी जगह है जिस कारण प्रसङ्ग. मात्र से संदेह ही उत्पन्न होता है तथा इस पद्धति में इतना विखराव है कि पाठक अधुरा ज्ञान ही प्राप्त करता रहता है। अत: सन्देह होना स्वभाविक है। यह ठीक है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति से सम्पूर्णग्रन्थ जानकारी आवश्यक है। यदि ग्रन्थपद्धति क्रमानुसार सम्पूर्ण अष्टाध्यायी के सूत्र स्मरण किये जायें तो इस पद्धति में प्राप्त सन्देह का निवारण हो जायेगा। इस के उपरान्त प्रक्रियापद्धति में प्राप्त अनेक सन्देह निवारण भी सूत्रमूलकपद्धति द्वारा होता है जैसे ''पूर्वत्रासिद्धम्''[1], ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[2], ''कृत्या:''[3], ''धातो:''[4] आदि अनेक सूत्रों की जानकारी भी सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही होती है।

सूत्रमूलकपद्धति में ग्रन्थारम्भ से ही सन्धि ज्ञान के लिए इच्छुक रहता है। हर समय सन्धि ज्ञान के अभाव में वह संदिग्ध रहता है क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में सन्धियों से सम्बन्धित सूत्र षष्ट तथा अष्टम् अध्यायों में विखरे हैं। व्याकरण ज्ञान के लिए सन्धियों का ज्ञान प्रारम्भिक माना जाता है इसके अभाव में छात्रों को सन्देह होना स्वभाविक है। यह ठीक है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति का लक्ष्य प्रकरणानुसार ज्ञान करवाना नहीं है इसका लक्ष्य तो व्याकरण की वास्तविक जानकारी है वह भी सरल क्रमानुसार। यह जरूरी नहीं है कि किसी भी आवश्यकता पूर्ति हेतु ग्रन्थ का प्रारम्भ से अध्ययन शुरू किया जाये। पाठक इच्छानुसार बीच से भी अध्ययन कर सकता है। अत: सन्धि ज्ञान के अभाव में जो सन्देह पाठकों को होता है उसके निवारण हेतु सन्धि सम्बद्ध सूत्रों का अध्ययन कर सकता है। प्रक्रियाग्रन्थकारों ने भी इन्हीं सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से किया है इतना जरूर है कि उन्होंने सन्धियों की जानकारी ग्रन्थ के शुरू में दी है। ये अनेक प्रकार के सन्देह पाठकों की अध्ययन में अनेक त्रुटियों के कारण प्रतीत होते हैं। परिश्रमी पाठक हर सन्देह का निवारण ग्रन्थपद्धति वर्णन विधि के अनुसार अपने आप ही कर लेता है क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में हर सन्देह का निवारण है केवल परिश्रम की आवश्यकता है।

---

1 अष्टा० 8-2-1
2 अष्टा० 1-4-2
3 अष्टा० 3-1-95
4 अष्टा० 3-1-91

5. सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याएँ :-

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति अति प्राचीन और महत्त्वपूर्ण है। परन्तु समय वेग के साथ संसारिक हर कार्य को परिवर्तन की दिशा देखनी पड़ती है क्योंकि समयानुकूल इस में अनेक समस्याएं आती हैं जो विवशता के कारण परिवर्तन की दिशा दिखाती हैं। ऐसा ही कुछ सूत्रमूलकपद्धति के साथ हुआ है जिस कारण व्याकरणपरंम्परा में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति की उत्पत्ति हुई है। सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त इन समस्याओं का वर्णन इस प्रकार है।

सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्य करने वाले सूत्र एक क्रम में दिये हैं। उदाहरणों की रूपरचनाक्रम से इस में वर्णन नहीं किया गया है। यद्यपि पाणिनि ने व्याकरण को उदाहरणों की रूपरचना हेतु ही रचा है परन्तु इस में सूत्रों का क्रम रूपरचनाक्रम नहीं है। सूत्रमूलकपद्धति में आवश्यकतानुसार किसी भी उदाहरण की रूपरचना शुरू करें तो न सम्बन्धित सूत्र से पूर्व सूत्र में और न ही अगले सूत्र सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होती है। इस पद्धति में उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों और वार्तिकों को जुटाना पड़ता है जो कि सूत्रमूलकपद्धति के सम्पूर्ण ग्रन्थों में विखरे हैं।

समूत्रमूलकपद्धति में सूत्रवृत्ति तथा अनुवृत्ति से सूत्रार्थ तत्क्षण स्पष्ट हो जाता है तथा गहन रहता है। प्रक्रियामूलकपद्धति के समान सूत्रार्थ समझने में समस्या नहीं आती है। परन्तु अनेक स्थानों पर इस पद्धति में भी समस्या आती है जैसे :- ''तद्धितश्चासर्वविभक्तिः''[1] सूत्रार्थ ''पञ्चम्यास्तसिल्''[2] सूत्र से लेकर ''एधाच्च''[3] सूत्र तक सूत्रों की जानकारी के विना स्पष्ट नहीं होता है। प्रकृत सूत्र प्रथम अध्याय प्रथम पाद में है तथा सम्बन्धित सूत्र पञ्चम अध्याय तृतीय पाद में हैं। प्रथम बार पढ़ने वाले छात्र को इस सूत्र की जानकारी हेतु समस्या आ जाती है। इस तरह अनेक सूत्र हैं जो पाठकों को समस्या उत्पन्न करते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति से सम्पूर्ण सूत्र जानकारी आवश्यक है क्योंकि किसी भी रूपरचना के लिए तथा किसी भी प्रकरण की जानकारी के लिए समान परिश्रम करना पड़ता है क्योंकि किसी भी समय आकस्मात् किसी भी सूत्र की आवश्यकता पड़ सकती है जो कि पाठक को तत्क्षण स्मरण होना चाहिए। अतः इस पद्धति से हर समय सम्पूर्ण सूत्र जानकारी आवश्यक है। जो पाठक प्रथम बार अध्ययन कर रहा हो उसे समस्या आना स्वभाविक है क्योंकि किसी भी उदाहरण की रूपरचनार्थ सम्पूर्ण सूत्र जानकारी के विना रूपरचना में सहायता आयेगी।

सूत्रमूलकपद्धति से व्याकरण के अतिसरल कारक प्रकरण को ही यदि उदाहरणार्थ लिया जाये तो इस में भी एक तो कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञा तथा प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि विभक्ति विधायक क्रम से सूत्रों का क्रम नहीं है। रूपरचना में विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्र के उपरान्त विभक्तिविधायक सूत्र

---

1 अष्टा० 1-1-37

2 अष्टा० 5-3-7

3 अष्टा० 5-3-46

की आवश्यकता होती है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में विभक्तिसंज्ञाविधायक सूत्र प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद में दिये है तथा विभक्तिविधायक सूत्र द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद में दिये हैं। अत: स्पष्ट होता है कि कारक ज्ञान प्राप्त करने में भी इस पद्धति से अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि एक तो इस पद्धति में सूत्रक्रम सुव्यवस्थित नहीं है तथा संज्ञाविधायक सूत्रों के उपरान्त एक दम विभक्तिविधायक सूत्र नहीं हैं।

सूत्रमूलकपद्धति से केवल समास ज्ञान के लिए ही कम से कम छ: अध्यायों का पाठ जरूरी है क्योंकि इस में भी केवल सम्बन्धित वर्णन की जानकारी होती है। उदाहरणों से सम्बन्धित सूत्र तो सम्पूर्ण अष्टाध्यायी से जुटाने पड़ते हैं। इसकी अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में यह समस्या नहीं आती क्योंकि इस पद्धति में सम्पूर्ण जानकारी एक ही क्रम से केवल समास प्रकरण में ही हो जाती है।

व्याकरण के हर क्षेत्र में सन्धि ज्ञान की आवश्यकता होती है। सूत्रमूलकपद्धति में सन्धियों का अभाव नहीं है परन्तु सन्धियों से सम्बन्धित सूत्र षष्ठ तथा अष्टम् अध्यायों में प्राप्त होते हैं। व्याकरण ज्ञान के लिए सन्धियों का ज्ञान प्रारम्भिक माना जाता है। अत: सन्धि सम्बद्ध जानकारी ग्रन्थारम्भ में होनी चाहिए परन्तु सूत्रमूलकपद्धति में यह जानकारी काफी बाद में दी गयी है। जिस कारण पाठक व्याकरण अध्ययन में सन्धि ज्ञान के अभाव में अनेक समस्याओं का सामना करते हैं प्रक्रियामूलकपद्धति में इस समस्या हेतु सन्धिप्रकरण को ग्रन्थारम्भ में दिया है ताकि पाठक किसी समस्या का सामना न करें।

सूत्रमूलकपद्धति में सुबन्त और तिङन्त रूप विखरे हैं क्योंकि इस पद्धति में समान कार्यो से सम्बन्धित सूत्रों का वर्णन एक क्रम में दिया है। इसलिए प्रत्येक कार्य से सम्बन्धित रूप वहां-वहां उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं। एक साथ एक क्रम में प्राप्त नहीं होते हैं। पाठक चाहते हुए भी इन की एक क्रम से जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते। अत: उन्हें समस्या का सामना करना पड़ता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में इनके लिए अलग-अलग प्रकरण स्थापित किये हैं जिन में इन की पूर्ण जानकारी करवायी गयी है।

सूत्रमूलकपद्धति में तद्धित तथा कृदन्तों का प्रकरणों को छोटे-छोटे भागों में विभक्त नहीं किया है। जिस कारण पाठक बड़े प्रकरणों को देखकर उब जाते हैं। इस पद्धति में यह भी एक समस्या है। पाठक छोटे प्रकरण चाहते हैं छोटे प्रकरणों से सूत्र संख्या में तो कमी नहीं आती है परन्तु पाठकों की भावना में परिवर्तन होता है।

इस वर्णन से स्पष्ट होता है कि सूत्रमूलकपद्धति में प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा अनेक समस्याएँ हमारे सामने आयीं हैं। जिन का समाधान प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा किया गया है।

6. सूत्रमूलकपद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण :-

सूत्रमूलकपद्धति में समायानुकूल अनेक समस्याएँ आयीं जिन का वास्तविक निवारण सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही सम्भव है तथा प्रक्रियामूलकपद्धति में प्राप्त अनेक समस्याओं का निवारण भी इसी पद्धति में प्राप्त

अनेक समस्याओं का निवारण भी इसी पद्धति द्वारा सम्भव है। इतना जरूर है कि इस पद्धति में अधिक परिश्रम की आवश्यकता है परन्तु इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है।

सूत्रमूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में विखरे हैं। उदाहरणों की रूपरचना के लिए ही दी गयी इस पद्धति में यह एक अजीब समस्या आती है कि यह तत्क्षण रूपरचना नहीं करवा सकती तथा किसी एक रूपरचना या किसी एक प्रकरण के लिए भी इस से समान परिश्रम की आवश्यकता है। पाठकों के लिए यह एक समस्या है परन्तु इस पद्धति की यह विशेषता है कि यह ऐसा ही वर्णन करती है। इस समस्या समाधान हेतु पाठकों को अत्यधिक परिश्रम करना चाहिए ताकि उस के सम्मुख समस्या ही न आ सके। इस पद्धति की यह विशेषता है कि यह सम्पूर्ण ग्रन्थ जानकारी के उपरान्त हर समस्या का तत्क्षण वर्णन कर सकती है। अत: पाठकों को सम्पूर्ण अष्टाध्यायी की जानकारी कर लेनी चाहिए ताकि किसी भी रूपरचना के लिए वे तत्क्षण सूत्र जुटा सकें। इस से उन्हें दोहरा लाभ होगा, एक तो उन्हें व्याकरण की पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जायेगी और वह भी गहन रूप में, इतना जरुर है कि इस में परिश्रम अधिक है परन्तु इस द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन होता है। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति से परिश्रम कम करना पड़ता है क्योंकि इस में तो केवल तैयार माल मिलता है परन्तु इस द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन नहीं होता है यह केवल काम चलाऊ होता है। पाठकों को भ्रम है कि प्रक्रियामूलकपद्धति में परिश्रम कम है क्योंकि बार-बार अध्ययन से इस पद्धति में परिश्रम अधिक है। बार-बार के अध्ययन से भी इस द्वारा प्राप्त ज्ञान कुछ समय तक ठहरता है। सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रों का प्रयोग स्वयं करना पड़ता है प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रयोग किया हुआ माल तैयार है। अत: सिद्ध होता है कि पाठकों को तत्क्षरण रूपरचना की जानकारी हेतु सम्पूर्ण ग्रन्थ का क्रम पूर्वक अध्ययन कर लेना चाहिए ताकि वे गहन ज्ञान प्राप्त कर सकें।

सूत्रमूलकपद्धति से ''तद्धितश्चासर्वविभकित:''[1] ''शि सर्वनामस्थानम्''[2] आदि अनेक सूत्रों में सूत्रार्थ स्पष्टीकरण में समस्या आती है क्योंकि इन सूत्रों का अर्थ अग्रिम सूत्रों पर आश्रित है। यह ठीक है परन्तु पूरी लग्न से पढ़ने वाला पाठक इस समसया का निवारण कर सकता है। ऐसे स्थानों पर पाठकों को उन अग्रिम सूत्रों को ढूण्डना चाहिए जिन पर उन का अर्थ आश्रित है। इस से ''एक पंथ दो काज'' वाली उक्ति सिद्ध होगी क्योंकि पूर्व सूत्र की जानकारी के साथ अग्रिम सूत्र की जानकारी भी हो जायेगी। अल्पमति छात्र विना परिश्रम से समस्या में पड़ जाता है।

सूत्रमूलकपद्धति में कारकों का ज्ञान कर्ता, कर्म, करण आदि संज्ञा तथा प्रथमा, द्वितीया आदि विभक्तिविधायक सूत्रों के क्रम से सूत्र नहीं दिये हैं। संज्ञाविधायक सूत्रों के साथ विभक्तिविधायकसूत्र मिश्रित रूप में नहीं दिये हैं। सूत्रमूलकपद्धति में संज्ञा विधायक सूत्रों तथा विभक्तिविधायक सूत्रों के बीच काफी अन्तर है, जो पाठक इस पद्धति से यह समस्या समझते हैं कि इस में प्रक्रियामूलक का अनुकरण

---

1 अष्टा0 1-1-37

2 अष्टा0 1-1-42

होना चाहिए। इस समस्या समाधान हेतु उन छात्रों को चाहिए कि वे इन सूत्रों को ठीक तरह से कण्ठस्थ कर लें ताकि यथा काल उन्हें आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकें। यदि वे ऐसा न कर सकें तो उन्हें सूत्रमूलकपद्धति में भी शेष प्रकरणों को छोड़कर कारक सम्बद्ध सूत्रों की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। यह जरुरी नहीं है कि ग्रन्थ को लगातार क्रम से ही पढ़ा जाये अनेक स्थानों पर आवश्यकतानुसार पढ़ा जा सकता है। सूत्रमूलक व्याकरण का लक्ष्य भी उदाहरण जानकारी है पाठक इनकी जानकारी आवश्यकतानुसार कर सकता है। सूत्र स्पष्टीकरणार्थ सूत्रक्रम से पढ़ना जरूरी है। उदाहरणों की जानकारी के लिए नहीं।

सूत्रमूलकपद्धति से पाठक सन्धि, षड्लिङ्ग. आदि प्रकरणानुसार ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता यद्यपि प्रत्येक प्रकरण की जानकारी इस पद्धति से होती है। परन्तु एक क्रम से नहीं क्योंकि इस में प्रत्येक प्रकरण से सम्बद्ध सूत्र सम्पूर्ण ग्रन्थ में विखरे हैं। प्रत्येक प्रकरण की जानकारी सम्पूर्ण ग्रन्थ के अध्ययनोपरान्त ही होती है। इस पद्धति से केवल समास ज्ञान ही छ: अध्यायों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। वह भी मात्र समास सम्बद्ध वर्णन क्योंकि कम से कम छ: अध्यायों में समास कार्यो के सूत्र विखरे हैं। यह ठीक है परन्तु इस पद्धति को प्रकरणों के क्रम से नहीं दिया है। इस समस्या निवारण हेतु पाठक सम्बद्ध सूत्रों को पढ़कर आवश्यकतानुसार प्रकरणों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है या पाठकों को चाहिए कि वे ग्रन्थ पद्धति वर्णन विधि क्रमानुसार ग्रन्थ को कण्ठस्थ करें ताकि आवश्यकतानुसार वे सम्बन्धित सूत्र को तत्क्षण स्मरण कर सकें। इस अध्ययन से वे गहन ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में सन्धिविधायकसूत्र षष्ठ तथा अष्टम अध्यायों में विखरे हैं जो व्याकरण के प्रारम्भिक ज्ञान से सम्बद्ध है क्योंकि व्याकरण के हर क्षेत्र में सन्धि ज्ञान आवश्यक है। सूत्रमूलकपद्धति में ये सूत्र प्रक्रियापद्धति अनुसार ग्रन्थारम्भ में न देकर अन्त में दिये हैं जिस कारण अनेक स्थानों पर सन्धि ज्ञान के अभाव में पाठक समस्या समझते हैं। इस समस्या समाधान के लिए पाठकों को अन्य जानकारी के साथ सन्धि ज्ञान भी प्राप्त कर लेना चाहिए।

सूत्रमूलकपद्धति में एक समस्या यह है कि इस में सुबन्त और तिङन्त रूप विखरे हैं। पाठक इन की जानकारी एक साथ एक क्रम से नहीं कर सकता। यह ठीक है परन्तु पाठकों को इस समस्या निवारण हेतु ग्रन्थ कर्ता की भावनानुरूप अध्ययन करना चाहिए। सूत्रमूलकपद्धति में ग्रन्थकारों ने इसी तरह का वर्णन किया है। इसमें पद्धति क्रमानुसार थोड़ा - थोड़ा ज्ञान उपार्जित करते रहना चाहिए। जो भी पाठक के सम्मुख आये उसे अध्ययन करते रहना चाहिए अन्त में वह पूर्ण जानकारी से अवगत हो जायेगा तत्काल वह किसी भी सुबन्त और तिङन्त रूप को विखरा नहीं मानेगा क्योंकि वह उस समय हर सुबन्त और तिङन्त पद की रूपरचना यथा काल करने की सामर्थ्य रखेगा।

सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में आयी अनेक समस्याओं का निवारण भी सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही अपेक्षित है जैसे ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[1] ''पूर्वत्रासिद्धम''[2] आदि अनेक सूत्रों

1 अष्टा0 1-4-2

2 अष्टा0 8-2-1

के अधिकार और कार्यक्षेत्र की जानकारी करना चाहे तो प्रक्रियामूलकपद्धति से नहीं हो सकती। इस समस्या का निवारण भी सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही सम्भव है क्योंकि इन सूत्रों का अर्थ ही सूत्रमूलकपद्धति से स्पष्ट हो सकता है प्रक्रियामूलकपद्धति से नहीं।

प्रक्रियामूलकपद्धति में अट्, इट्, नुम आदि विभिन्न आगमादेश आदि सूत्रों की आवश्यकता पड़ने पर उन सूत्रों को प्रक्रियामूलक ग्रन्थों में ढूण्डना असम्भव है क्योंकि शायद उसे कहां उद्धृत किया है यह निश्चित नहीं है। इस समस्या का समाधान सूत्रमूलकपद्धति में दो चार मिन्टों के अध्ययन से किया जा सकता है क्योंकि इस पद्धति में समान कार्यो से सम्बन्धित सूत्र इकट्ठे हैं। अत: उन प्रकरणों में सम्बद्ध सूत्र को प्राप्त किया जा सकता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में ऐसा कोई क्रम नहीं जिस द्वारा ऐसे सूत्रों को प्राप्त किया जा सके।

ख प्रक्रियामूलकपद्धति का विवेचन :-

पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलक और प्रक्रियामूलक दो पद्धतियां हैं जो दोनों ही अपने-अपने स्थान पर उपयोगी और महत्त्वपूर्ण हैं। व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियामूलकपद्धति वह पद्धति है जो प्रकरणानुसार उदाहरणों के क्रम से दी गयी हैं। सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं के कारण पाणिनीयव्याकरण में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति का उद्भव हुआ है। प्रक्रियामूलकपद्धति के गुण-दोष, पद्धति की सुगमता और कठिनता, पद्धति में अनेक सन्देह, पद्धति द्वारा सन्देह निवारण, पद्धति में अनेक समस्याएँ और पद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण आदि छ: विषयों पर विवेचन किया जा सकता है जिनका क्रमपूर्वक वर्णन इस प्रकार है :

1. प्रक्रियामूलकपद्धति के गुण-दोष :-

संसारिक हर व्यवस्था में गुण-दोष संयुक्त रूप में विद्यमान रहते हैं। क्योंकि हर घटना में अच्छाई के साथ बुराई का होना निश्चित है। ठीक यही दशा प्रक्रियामूलकपद्धति की भी है इस में एक तरफ तो गुण ही गुण हैं परन्तु दूसरी तरफ दोष भी काफी हैं। इस पद्धति के गुण और दोषों का क्रम पूर्वक वर्णन इस प्रकार है।

सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं का प्रादुर्भाव हुआ जिन के कारण व्याकरणपरम्परा में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति की उत्पत्ति हुई। इस कथन से यह सिद्ध हो जाता है कि सूत्रमूलकपद्धति में अनेक दोषों के निवारण हेतु ही इस पद्धति का प्रादुर्भाव हुआ है। जब सूत्रमूलकपद्धति में विद्यमान अनेक दोषों के निवारण हेतु यह पद्धति व्याकरणपरम्परा में आयी है तो इस में अनेक गुण होना स्वभाविक है।

इस पद्धति के अनेक गुणों में सब से बड़ा गुण यह है कि इस पद्धति में परिश्रम कम और लाभ अधिक है। क्योंकि इस में आधुनिक और वैज्ञानिक विषयवार प्रकरणों में उदाहरणों का वर्णन किया गया है जिन में सूत्रों को उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। सूत्रमूलकपद्धति में ये सूत्र बिखरे

हैं। इस कारण सूत्रमूलकपद्धति में सम्पूर्ण ग्रन्थ जानकारी के उपरान्त ही व्याकरण की जानकारी होना सम्भव है। परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में जिस भी प्रकरण का अध्ययन किया जायेगा उस प्रकरण का उसी समय ज्ञान हो जायेगा। अत: इस पद्धति में परिश्रम कम और लाभ अधिक है। यह इस पद्धति का एक गुण है जैसे सूत्रमूलकपद्धति से केवल छ: अध्याय पढ़ने पर मात्र समास ज्ञान प्राप्त होता है। वह भी समास सम्बन्धित वर्णन समस्त पदों की रूपरचना के लिए तो सम्पूर्ण ग्रन्थ की जानकारी जरुरी है। इसकी अपेक्षा प्रक्रिया पद्धति में केवल समास प्रकरण में ही समास सम्बन्धित जानकारी भी हो जाती है तथा उदाहरणों की रूपरचना सम्बन्धित जानकारी भी एक साथ रूपरचनाक्रम पूर्वक हो जाती है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति की यह विशेषता है। इस में हर तरह की जानकारी का क्रम पूर्वक वर्णन एक साथ एक क्रम से किया है जिस कारण पाठक को कम परिश्रम द्वारा अनेक प्रकार का ज्ञान हो जाता है जैसे उदाहरण, प्रत्युदाहरण रूपरचना जानकारी के साथ सूत्र और वार्तिकों की व्याख्या सहित पूर्ण जानकारी अर्थात् इस पद्धति से दोहरा लाभ है जो इस का एक गुण है। इसकी अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में केवल सूत्रार्थ जानकारी सम्भव है, रूपरचना जानकारी के लिए इस पद्धति में भटकन प्राप्त है। प्रक्रियामूलक में सूत्र व्याख्या के साथ उदाहरण जानकारी का वर्णन एक साथ है।

सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रार्थ जानकारी में कोई आकांक्षा नहीं रहती है परन्तु उदाहरणों की रूपरचना जानकारी आकांक्षा विद्यमान रहती है क्योंकि सूत्र में दिये गये उदाहरणों की रूपरचना के लिए क्या मालुम किन सूत्रों की आवश्यकता पड़े जो कि इस क्रम में तत्क्षण उसी स्थान पर प्राप्त नहीं होंगे अर्थात सूत्रमूलकपद्धति में वे सूत्र विखरे हैं। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की जानकारी के लिए कोई आकांक्षा नहीं है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति तो उदाहरण रूपरचनार्थ तैयार किया गया माल है जो आकांक्षा का प्रश्न ही नहीं करवा सकता इसलिए यह भी इस पद्धति का एक गुण है।

सूत्रमूलकपद्धति में ''असिद्धवदत्राभात्''[1] ''पूर्वत्रासिद्धम्''[2] ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[3] आदि अनेक अधिकारी सूत्रों की जानकारी तत्क्षण हो जाती है जो प्रक्रियाक्रम से असम्भव है क्योंकि इन की जानकारी इसी क्रम पर आश्रित है। यह ठीक है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति इन सूत्रों का प्रायोगिक वर्णन करती है जिस से इन सूत्रों की अत्यधिक जानकारी का ज्ञान होता है। क्योंकि उदाहरणों में प्रयुक्त इन सूत्रों की विस्तृत जानकारी, इनसे सम्बद्ध सूत्रों के साथ प्रक्रियाक्रम से होती है जिसे हम प्रायोगिक वर्णन कह सकते हैं। अत: सूत्रों का मार्मिक वर्णन करना इस पद्धति का एक विशेष गुण है।

प्रक्रियाग्रन्थों में केवल वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा प्रक्रियासर्वस्व को छोड़कर शेष प्रक्रियाग्रन्थों में केवल उपयोगी वर्णन ही किया गया है। इन ग्रन्थों में केवल समयानुकूल वर्णन है। प्रक्रियाग्रन्थकारों ने उपयोगी जानकारी का वर्णन करना उचित समझा है। इन ग्रन्थकारों ने पाणिनीय होने पर भी उस सूत्र, उदाहरण तथा प्रकरण का वर्णन नहीं किया है जो समयानुसार अनुपयुक्त था। सूत्रमूलकपद्धति में तो

1 अष्टा0 6-4-22
2 अष्टा0 8-2-1
3 अष्टा0 1-4-2

उपयुक्त और अनुपयुक्त का प्रश्न ही नहीं है क्योंकि पाणिनिकाल में जो उपयुक्त था उसी का वर्णन पाणिनि ने किया है। भाषा परिवर्तन के कारण बाद में अनुपयुक्त का प्रश्न हुआ है। प्रक्रियामूलकपद्धति की यह विशेषता है कि यह केवल समयानुसार उपयुक्त जानकारी ही करवाती है। समयानुसार वर्णन ही लाभकारी होता है। केवल समयानुसार वर्णन करना ही इस पद्धति का अन्य गुणों के साथ अपर गुण है।

यह लोक प्रसिद्ध है कि सत्य के साथ असत्य, गुण के साथ दोष आदि संसार में संयुक्त रूप में रहते हैं। इस कथनानुसार इस पद्धति में अनेक गुणों के साथ अनेक दोष होना भी स्वभाविक है। किसी भी रचना में समय के साथ अनेक समस्याओं के प्रादुर्भाव के कारण अनेक दोष आ जाते हैं तथा किसी भी रचना का निर्दोष होना भी असम्भव है क्योंकि हर कार्य में एक तरफ गुण होते हैं और दूसरी तरफ दोष होते हैं। इसके बाद तुलनात्मक वर्णन में तो एक दूसरे की अपेक्षा गुण और दोष होना स्वभाविक ही है। अत: सूत्रमूलकपद्धति और प्रक्रियामूलकपद्धति के तुलनात्मक वर्णन में गुण और दोष होना स्वभाविक है, क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं के कारण प्रक्रियामूलकपद्धति की उत्पत्ति हुई जिस कारण सूत्रमूलकपद्धति का दोष युक्त होना सिद्ध होता है। इसकी अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं के समाधान हेतु व्याकरणपरम्परा में आयी इसलिए इस का गुण युक्त होना सिद्ध होता है। परन्तु इस के विपरीत प्रक्रियामूलकपद्धति सूत्रमूलकपद्धति पर आश्रित है तथा सूत्रमूलकपद्धति की अनेक विशेषताओं का वर्णन करने में असमर्थ है। अत: यह पद्धति गुण युक्त होने के साथ दोषयुक्त भी है।

सूत्रमूलकपद्धति में सूत्र, अनुवृत्ति और व्याकृत्ति आदि नियमों के कारण सूत्रार्थ स्पष्टीकरण में कोई वाधा नहीं है। परन्तु प्रक्रियामूलक में सूत्रवृत्ति रटने पर भी सूत्रार्थ की वास्तविक जानकारी नहीं हो सकती तथा एक प्रकार के सूत्रों की पाठकों को बार-बार सूत्र वृत्ति रटनी पड़ती है। अत: प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रवृत्ति रटने की अपेक्षा अनुवृत्ति और सूत्र व्यावृत्ति से अर्थ स्पष्ट हो जाता है।

यह ठीक है कि प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रकरण आधुनिक और विज्ञानिक आधार पर दिये हैं तथा प्रत्येक प्रकरण में उदाहरणों की जानकारी के साथ सूत्रों की जानकारी भी एक साथ समान रूप से हो जाती है, जिस कारण सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा इस पद्धति में परिश्रम कम करना पड़ता है क्योंकि इस द्वारा प्रायोगिक जानकारी प्राप्त होती है। यह ठीक है परन्तु इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन नहीं रहता है इसे पाठक कुछ समय बाद भूल जाता है क्योंकि इस पद्धति में सूत्रों को रटने का सहारा लिया जाता है, जिस करण व्याकरण का वास्तविक ज्ञान नहीं किया जा सकता। इस पद्धति के अनेक दोषों में यह एक विशेष दोष है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक स्थानों पर पाठकों को आकांक्षा रहती है जिस का निवारण सूत्रमूलकपद्धति द्वारा ही अपेक्षित है जैसे ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[1] ''पूर्वत्रासिद्धम''[2] आदि अनेक सूत्रों की जानकारी के लिए सूत्रमूलकपद्धति का आश्रय लेना पड़ता है। यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति इन सूत्रों का

---

1 अष्टा0 1-4-2

2 अष्टा0 8-2-1

प्रायोगिक वर्णन करती है परन्तु इस वर्णन के लिए सूत्रमूलकपद्धति का सहारा लिया जाता है अर्थात यह पद्धति स्वतन्त्र होने पर भी दूसरे पर आश्रित है। कहने का भाव यह है कि अनेक स्थानों पर प्रक्रियामूलकपद्धति स्वतन्त्र वर्णन नहीं कर सकती। इस पद्धति का अन्य दोषों के साथ यह एक अपर दोष है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में पढ़ा छात्र ऐसा बताने में समर्थ होता है कि अमुक सूत्र से अमुक कार्य हुआ परन्तु ऐसा बताने में असमर्थ होता है कि क्यों हुआ ? वह रूपरचना की सहायता के लिए ही सूत्र की जानकारी करता है। परन्तु व्याकरण के वास्तविक ज्ञान से वह वंचित रहता है। वह सम्बन्धित सूत्र को उसी उदाहरण के लिए समझता है। अन्यत्र सूत्र के प्रयोग में वह सङ्कुचित रहता है क्योंकि वास्तविकता के अभाव में वह सूत्र को सीमित जानता है। इस पद्धति का यह भी एक दोष है।

वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी और प्रक्रियासर्वस्व को छोड़कर सभी प्रक्रियाग्रन्थों में कुछ सूत्रों और अनेक सूत्रों से सम्बन्धित प्रकरणों को छोड़ दिया गया है। व्याकरण का सम्पूर्ण ज्ञान उन के विना असम्भव है। अत: प्रक्रियामूलकपद्धति केवल अधुरी जानकारी करवाती है। इस पद्धति का यह दोष है। इसके उपरान्त अनेक प्रक्रियाग्रन्थों में स्वर प्रक्रिया और वैदिक प्रक्रिया को छोड़ दिया गया है। संस्कृत के आदि ग्रन्थों से सम्बद्ध जानकारी भी जरूरी है। परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति वैदिक जानकारी का परहेज करती है। अत: यह दोष इस पद्धति का मुख्य दोष है।

2. प्रक्रियामूलकपद्धति की सुगमता और कठिनता :-

प्रक्रियामूलकपद्धति सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा सुगम है। सूत्रमूलकपद्धति भी सुगम है परन्तु हर पद्धति में अपने विशेष वर्णन के कारण वह अन्य पद्धति से विशेष होती है। ठीक इसी तरह सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियामूलकपद्धति एक दूसरी की अपेक्षा विशेष है क्योंकि उन की अपनी - अपनी विशेषताएँ हैं। जो पद्धति पूर्व पद्धति में अनेक त्रुटियों के कारण परम्परा में आयी है वह पूर्व पद्धति से अति सुगम होगी यह स्वभाविकता है क्योंकि पूर्व पद्धति में प्राप्त अनेक कठिनाईयों के स्थान पर उसे सुगम बनाना स्वभाविक होता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में भी ठीक इसी तरह घटित है। सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त अनेक कठिनाइयों की सुगमता हेतु पद्धतिक्रम को बदलकर सूत्रों को प्रक्रियाक्रम का रूप दिया है ताकि पाठक व्याकरण के अनेक क्षेत्रों में कठिनता के स्थान पर सुगमता प्राप्त करके व्याकरण अध्ययन जारी रख सकें।

इस का सब से बड़ा उदाहरण हमारे सम्मुख यह है कि सूत्रमूलकपद्धति में पाठक उदाहरणों की जानकारी तत्क्षण नहीं कर सकते जैसे यदि सूत्रमूलकपद्धति के प्रथम सूत्र "वृद्धिरादैच्"[1] के उदाहरणों को ही उदाहरणार्थ ले लिया जाये तो प्रथम सूत्र के अध्ययन के समय ही पाठक समस्या में पड़ जाता है कि इन "ऐतिकायन्", "औपगव:" आदि उदाहरणों की रूपरचना की क्या विधि विधान है ? इन में क्या प्रकृति है ? क्या प्रत्यय है ? यह जानकारी एक साथ असम्भव है। सूत्रमूलकपद्धति में तो सिर्फ पाठक

---

1 अष्टा० 1-1-1

सूत्रार्थ और सूत्रकार्य तक ही सीमित रहता है। उदाहरणों से सम्बद्ध अनेक कार्यों के लिए वह कठिनता समझता है। कठिनता समझना भी ठीक है क्योंकि यह पद्धति की एक कमी है कि वह उदाहरणों की जानकारी सुगमता से नहीं करवाती है। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में सर्वप्रथम उदाहरण की रूपरचना के लिए प्रकृति दी जाती है तदुपरान्त प्रत्यय, आदेश, आगम आदि वर्णन हेतु सूत्रों को प्रक्रियाक्रम से दिया है जोकि सूत्रमूलकपद्धति के विभिन्न अध्यायों में विखरे हैं परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में पाठकों की सुगमता के लिए प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया है।

सूत्रमूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना का वर्णन तो है परन्तु वह अप्रत्यक्ष रूप में है। प्रक्रियापद्धति के समान सीधा वर्णन नहीं है। सीधा वर्णन न होने के कारण इस पद्धति में रूपरचना विधि का अभाव है। पाठकों को उदाहरणों की जानकारी के लिए स्वयं रूपरचना विधि की जानकारी करने के उपरान्त यथाक्रम सूत्रों को सम्पूर्ण ग्रन्थों से चुनकर जुटाना पड़ता है। वह भी तब यदि पाठक को सम्पूर्ण ग्रन्थ की जानकारी हो तो ? यदि ग्रन्थ जानकारी न हो तो वह रूपरचना नहीं कर सकता। प्रथम बार पढ़ने वाला छात्र तो उदाहरणों की रूपरचना को छोड़कर सूत्रकार्य और सूत्रार्थ तक ही सीमित रहता है वह पाणिनीयव्याकरण की वास्तविक जानकारी और उसके प्रयोजन को बहुत समय बाद समझता है। इस की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में इस कठिनाई के लिए ग्रन्थकारों ने पद्धति में परिवर्तन कर के प्रक्रियामूलकपद्धति को उदाहरणों की रूपरचनार्थ रूपरचना क्रम से दिया है। इस पद्धति को सन्धि, षड्लिङ्ग., कारक, स्त्रीप्रत्यय प्रकरण आदि प्रकरणों के क्रम से दिया है। इस पद्धति में समान् कार्य करने वाले सूत्रों जैसे संज्ञा, समास, विभक्ति, इट्, नुम आदि एक कार्य करने वाले सूत्रों का क्रम नहीं है। इस से पाठकों को यह सुगमता होती है कि पाठक सम्बद्ध प्रकरण के उदाहरणों और सूत्रों की जानकारी एक क्रम से एक साथ प्रक्रियाक्रम से करता है। पाठक को सूत्रमूलकपद्धति के समान सम्पूर्ण ग्रन्थ का अध्ययन जरूरी नहीं है। प्रक्रियामूलकपद्धति के समान सम्पूर्ण ग्रन्थ का अध्ययन जरूरी नहीं है। प्रक्रियामूलकपद्धति में जिस भी प्रकरण को पाठक पढ़ना चाहें उसे उस प्रकरण के उदाहरणों और सूत्रों की सम्पूर्ण जानकारी उसी प्रकरण में रूपरचना सहित हो जाती है। इस की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में सम्बन्धित प्रकरणों के सूत्र विखरे हैं पाठकों को अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है। सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा प्रक्रियामूलकपद्धति में यह सुगमता है कि इस में सन्धि, षड्लिङ्ग., समास आदि प्रकरणों से सम्बद्ध सूत्र रूपरचना क्रम से इसी प्रकरण में उद्धृत है। सूत्रमूलकपद्धति के समान सूत्र विखरे नहीं है तथा इस पद्धति में रूपरचना का विशेष ध्यान दिया है जिस भी सूत्र की ग्रन्थकार को आवश्यकता हुई है उस सूत्र को वहीं उद्धृत कर दिया है अर्थात् पाठक की भटकन समाप्त कर दी है। प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रकृति-प्रत्यय पूर्वक वर्णन किया गया है जिस कारण यह पद्धति सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा सुगम सिद्ध हुई है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में सुगमता के साथ कठिनता भी है। यह ठीक है कि सूत्रमूलकपद्धति में परिवर्तन करने पर प्रक्रियामूलक अति सुगम पद्धति का उद्भव हुआ है। परन्तु सूत्रमूलकपद्धति की भी अपनी विशेषताएँ हैं जिनका प्रक्रियामूलकपद्धति समाधान नहीं कर सकी। जिस कारण पाठकों को

कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उदाहरणों की रूपरचना का वर्णन तो प्रक्रियामूलकपद्धति ने अति सरल कर दिया परन्तु सूत्रार्थ स्पष्टीकरण में वह अति सरल वर्णन नहीं कर सकी। इस के विपरीत यह अति कठिन कार्य बन गया। सूत्रमूलकपद्धति की यह विशेषता है कि इस में पूर्व सूत्र से अनुवृत्ति जाने पर अगले समत्र का अर्थ स्पष्ट हो जाता है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में इन सूत्रों को इस क्रम से नहीं दिया है जिस भी सूत्र की आवश्यकता ग्रन्थकार को जहां-जहां पड़ी है ग्रन्थकार ने उन्हें वहां-वहां दिया है अर्थात् कोई सूत्र किसी प्रकरण में उद्धृत है कोई किसी प्रकरण में। इन सूत्रों का अर्थ जानने के लिए वहां-वहां सूत्रवृत्ति स्मरण करनी पड़ती है। इस क्रम से अर्थ जानने के लिए ग्रन्थ में उक्त सभी सूत्रों की सूत्रवृत्ति स्मरण करनी आवश्यक है। अत: सूत्रमूलकपद्धति की अपेक्षा इस पद्धति में सूत्रार्थ जानकारी के लिए कठिनता का सामना करना पड़ता है। सूत्रमूलकपद्धति में यह कठिनता नहीं है वहां समान कार्य करने वाले सूत्र इकट्ठे हैं कुछ अभ्यास से ही सूत्रार्थ जानकारी हो जाती है। ऐसा होना स्वभाविक भी है क्योंकि जिस कठिनता का समाधान पूर्व ग्रन्थकार कर चुके हैं उस क्रम में परिवर्तन करने पर कठिनता बढ़ना स्वभाविक है न की घटना। अत: सिद्ध होता है कि प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक स्थानों पर सुगमता होने के साथ अनेक स्थानों पर कठिनता भी है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में यह कठिनता भी आती है कि यदि इस पद्धति में किसी कार्य के लिए सूत्र की आवश्यकता पड़ जाती है और वह पाठक को स्मरण नहीं है तो पाठक उस सूत्र को प्रक्रियाक्रम में नहीं ढूण्ड सकता क्योंकि पता नहीं ग्रन्थकार ने आवश्यकतानुसार उस सूत्र को कहा दिया है। इस समस्या का समाधान प्रक्रियामूलकपद्धति में नहीं है। अत: पाठकों को ऐसे अनेक स्थानों पर कठिनता का सामना करना पड़ता है। इस की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में पाठक सामान कार्यो से सम्बद्ध सूत्रों में दो चार मिनटों के अध्ययन से उस सूत्र को प्राप्त कर सकता है।

3. प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक सन्देह :-

प्रक्रियामूलकपद्धति का सूत्रमूलकपद्धति में अनेक सन्देह निवारण हेतु उद्भव हुआ है। इसलिए यह सोचा जाये कि इस में सन्देह अभाव होगा क्योंकि यह सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त सन्देहों का निवाण करती है तो यह ठीक नहीं। सूत्रमूलकपद्धति में अनेक विशेषताओं के होते हुए भी समयानुसार इस में अनेक समस्याओं के निवारण हेतु परिवर्तन आया है परन्तु समूत्रमूलकपद्धति की वे विशेषताएँ प्रक्रियामूलकपद्धति में सन्देह बन गयीं। वैसे भी किसी भी पद्धति में सन्देह न होना असम्भव है। यह ठीक है कि प्रक्रियामूलकपद्धति से पाठक उदाहरण रूपरचना हेतु सन्देह मुक्त हैं परन्तु व्याकरण का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने में वे संदिग्ध रहते हैं। क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना के लिए सूत्रों को चुनकर रूपरचना क्रम से दिया है जो पाठक की रूपरचना आकांक्षा पूर्ति करते हैं। यह ठीक है कि इस पद्धति से सूत्रों को रट कर पाठक उदाहरण रूपरचना क्रमपूर्वक कर सकता है परन्तु यदि उस से रटे हुए

सूत्र के बारे में पूछा जाये कि अमुक सूत्र से यह कार्य कैसे हुआ ? इस में क्या कारण है ? जिस के होते यह सूत्र अमुक कार्य करता है तो पाठक इन प्रश्नों के उत्तर देने में सन्देह में पड़ जाता है क्योंकि यहपद्धति केवल रूपरचना कराने में समर्थ है व्याकरण का वास्तविक ज्ञान करवाने में असमर्थ है।

पाठक प्रक्रियामूलकद्धति से एक रूपरचना के लिए प्रयुक्त सूत्रों को तो रट कर बता सकता है परन्तु उन सूत्रों की वास्तविक जानकारी रट कर नहीं बता सकता क्योंकि इस पद्धति की यह विशेषता नहीं है। इस पद्धति में सूत्रमूलकपद्धति जैसा क्रम नहीं है प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना का क्रम है। यही कारण है पाठक प्रक्रियामूलकपद्धति में प्रयुक्त सूत्र को अन्यत्र प्रयोग करने में सन्देह करता है क्योंकि वह सूत्र की वास्तविक जानकारी के अभाव में सन्देह में रहता है तथा अनेक स्थानों पर समान कार्य सम्बन्धित दूसरे सूत्र का प्रयोग कर देता है क्योंकि उदाहरण रूपरचना के लिए उसे तो सिर्फ इट्, नुम आदि आदेश आगम ही करना होता है जिसे वह सम्बन्धित सूत्र के स्थान पर दूसरे सूत्र से दर्शा देता है क्योंकि प्रक्रियामूलपद्धति में प्रत्येक उदाहरण सम्बद्ध सभी सूत्रों का वर्णन नहीं है अनेक स्थानों पर सूत्र कार्यो का ही उल्लेख है। ऐसे स्थानों पर या तो पाठक सन्देह में पड़ जाते हैं या अन्य सूत्र का प्रयोग कर देते हैं।

इसके उपरान्त अनेक स्थानों पर पूर्ण सूत्र न देकर सूत्रार्ध का ही उल्लेख किया है। प्रक्रियापद्धति में सभी सूत्र स्मरण न होने के कारण पाठक पूर्ण सूत्र जानकारी हेतु सन्देह में पड़ जाते हैं तथा पूर्ण सूत्र स्मरण न होने की अवस्था में वे उस सूत्र को सूत्रार्ध रूप में ही प्रयोग करते हैं।

इसके उपरान्त प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक स्थानों पर सूत्र न देकर सूत्र कार्यो द्वारा ही रूपरचना का वर्णन किया है। इन सूत्रों में से कुछ तो पाठक को स्मरण आ जाते हैं लेकिन अनेक स्मरण नहीं होते। इस अवस्था में पाठक सन्देह में पड़ जाते हैं प्रक्रियामूलकपद्धति में इस सन्देह समस्या का निवारण भी असम्भव है। इस की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में इस के समाधान हेतु सम्बन्धित प्रकरण में दो चार मिनटों के अध्ययन से सूत्र ढूण्ड कर कार्य चलाया जा सकता है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में इस सन्देह का निवारण ही नहीं है क्या पता ग्रन्थकार ने सम्बन्धित सूत्र को कहां दिया है ? या दिया ही नहीं है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक सूत्रों का वर्णन ग्रन्थकारों ने नहीं किया है।

4. प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा सन्देह निवारण :–

प्रक्रियामूलकपद्धति से अनेक पाठकों को परिश्रम के अभाव में जो सन्देह उत्पन्न हो जाते हैं उनका निवारण भी प्रक्रियामूलकपद्धति से सम्भव है परन्तु इस के लिए प्रक्रियामूलकपद्धति में विशेष अध्ययन की आवश्यकता होती है। इसके उपरान्त सूत्रमूलकपद्धति में प्राप्त सन्देहों का निवारण तो प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा होता ही है। क्योंकि व्याकरणपरम्परा में अनेक सन्देह निवारण और अनेक समस्या निवारण हेतु ही प्रक्रियामूलकपद्धति एक नयी पद्धति का उदय हुआ है।

यह ठीक है कि प्रक्रियामूलकपद्धति उदाहरणों की रूपरचना सरलता से करवाने में समर्थ है। सूत्रों की जानकारी के लिए इस पद्धति में पाठकों को सूत्रवृत्ति रटने पर विवश होना पड़ता है। क्योंकि पद्धति की अपनी अध्ययन विधि होती है जिस के अनुसार ही पाठक अध्ययन की प्रक्रिया का अनुसरण कर सकता है। सूत्रमूलकपद्धति में भी सूत्रवृत्ति स्मरण करनी पड़ती है। इतना जरूर है कि वहां आसानी से सूत्रवृत्ति स्मरण हो जाती है। अनेक पाठकों को प्रक्रियामूलकपद्धति में परिश्रम के अभाव में सूत्र की वास्तविक जानकारी पर सन्देह होता है यह ठीक है परन्तु इस पद्धति की मौलिक वर्णन विधि का अनुसरण किया जाये तो ये पद्धति ''एक पन्थ दो काज'' वाली उक्ति को सिद्ध करती है। इस पद्धति से परिश्रम और ग्रन्थवर्णन विधि अनुसार वास्तविक अध्ययन की आवश्यकता है ऐसा करने पर इस पद्धति से उदाहरण रूपरचना तथा सूत्र जानकारी एक साथ हो जाती है। अत: सिद्ध होता है कि इस सन्देह निवारण हेतु पाठकों को ग्रन्थ वर्णन विधि का अनुसरण करके परिश्रम करना चाहिए। प्रायोगिक ज्ञान से वास्तविक जानकारी होती है। प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रों का प्रायोगिक वर्णन है।

प्रक्रियामूलकपद्धति का लक्ष्य उदाहरण और सूत्र दोनों का एक साथ ज्ञान करवाना है। यह पाठकों की कमजोरी है जो केवल मात्र सूत्र रट कर कार्य चलाते हैं और समय पड़ने पर सूत्र को दूसरी जगह प्रयोग करने में सन्देह करते हैं या समान कार्य सम्बन्धित दूसरे सूत्र का प्रयोग करते हैं या अमुक सूत्र से ऐसा कार्य क्यों हुआ ? किस स्थान पर कार्य हुआ ? आदि अनेक स्थानों पर उन्हें सन्देह होता है। यह पाठकों की कमजोरी है। पाठकों को इस पद्धति से अध्ययन करते समय इस समस्या निवारण हेतु सम्बन्धित सूत्रों का मार्मिक अध्ययन करना चाहिए।

इस के उपरान्त प्रक्रियामूलपद्धति सूत्रमूलकपद्धति के सभी सन्देहों का निवारण तो करती ही है क्योंकि सन्देह निवारण हेतु ही तो प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव हुआ है यह इस पद्धति की अन्य विशेषता है। सूत्रमूलकपद्धति में प्रत्यक्ष रूप से उदाहरण रूपरचना के अभाव में तथा इस में सूत्रों के विखरेपन से पाठक सार्थक व्याकरण को निरर्थक समझने में विवश होता है तथा समान कार्यो से सम्बन्धि त बड़े प्रकरणों को देखकर सन्देह में पड़ जाता है। इसके बाद इस पद्धति में किसी कार्य से सम्बन्धित प्रसङ्ग. तो यहां है परन्तु शेष वर्णन का क्या पता कहां है ? इस अवस्था में पाठक एक साथ सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता अत: सन्दिग्ध ही रहता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में इन अनेक सन्देहों का निवारण किया गया है जिस कारण पाठक व्याकरण की वास्तविक जानकारी साधारण रीति से कर लेता है। उन्हें किसी भी सन्देह का भाव नहीं रहता वे सन्देह मुक्त हो जाते हैं क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्बन्धित सूत्र रूपरचनाक्रम से दिये हैं, प्रकरण छोटे-छोटे हैं। इस पद्धति में सन्धि, समास आदि प्रकरणों की जानकारी एक साथ हो जाती है अर्थात् इस पद्धति में पसङ्ग. के उपरान्त आकांक्षा नहीं है हर सन्देह का निवारण एक क्रम से हो जाता है।

5. **प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक समस्याएँ :-**

प्रक्रियामूलकपद्धति यद्यपि सूत्रमूलकपद्धति की अनेक समस्याओं का निवारण करती है कोई ऐसा सोचें कि इसमें समस्याओं का अभाव होना चाहिए क्योंकि यह सूत्रमूलकपद्धति की समस्याओं का निवारण ही तो करती है तो यह ठीक नहीं होगा। सूत्रमूलकपद्धति की अपनी विशेषताएँ हैं। समयानुसार इस में अनेक समस्याएँ आयीं जिन का निवारण यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति ने किया है परन्तु सूत्रमूलकपद्धति के क्रम में जो परिवर्तन हुआ उस से समस्याओं का निवारण तो हो गया परन्तु उस परिवर्तन ने प्रक्रियामूलकपद्धति में भी अनेक समस्याओं को उत्पन्न कर दिया क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में अनेक विशेषताएँ थीं जिन के अभाव में अनेक समस्याओं की उत्पत्ति निश्चित है। ये समस्याएँ इस प्रकार हैं :-

प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रों का क्रम उदाहरणों की रूपरचना अनुसार दिया है। इस पद्धति से उदाहरणों की रूपरचना जानकारी तत्क्षण उसी स्थान पर हो जाती है यह ठीक है परन्तु हर उदाहरण में प्रत्येक सूत्र का वर्णन नहीं है लगभग सभी उदाहरणों में केवल मुख्य सूत्रों को दिया है अन्य सूत्रों का वर्णन केवल सूत्रकार्यरूप में प्रदर्शित किया है। ऐसे स्थानों पर पाठकों को अकस्मात सूत्र स्मरण आ जाये तो ठीक है नहीं तो वे सूत्र जानकारी के लिए समस्या में पड़ जाते हैं। प्रक्रियामूलकपद्धति से इन सूत्रों को प्राप्त करना असम्भव है क्योंकि ग्रन्थकार ने शायद उन सूत्रों को कहां दिया है या उद्धृत ही नहीं किया है। सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्यो से सम्बन्धित प्रकरण में सम्बद्ध सूत्र को ढूण्डा जा सकता है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में ऐसे सूत्रों को प्राप्त करने वाली समस्या विद्यमान रहती है।

इसके उपरान्त प्रक्रियामूलक में वास्तविक ज्ञान के अभाव में पाठक अनेक स्थानों पर समान कार्य से सम्बन्धित दूसरे सूत्र का प्रयोग कर देता है क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति के समान इस पद्धति में सूत्र कार्य और कार्यक्षेत्र की वास्तविक जानकारी नहीं होती क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में तो सूत्रवृत्ति के उपरान्त घटित उदाहरणों को दिया है। सूत्रव्याख्या के साथ उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों की जानकारी से पाठक सूत्र के हर क्षेत्र से अवगत हो जाता है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में वह सूत्र कार्यार्थ सूत्र को उद्धृत प्राप्त करता है। अत: सूत्र के वास्तविक ज्ञान से वंचित रहता है। यही कारण है कि वह अनेक स्थानों पर वर्णित कार्यो के लिए समान कार्य सम्बन्धित दूसरे सूत्र का प्रयोग कर लेता है। अत: इस पद्धति से इस समस्या के कारण पाठक सूत्रों का गलत प्रयोग करता है।

तदुपरान्त इस पद्धति से पढ़ा छात्र यह बताने में असमर्थ होता है कि अमुक सूत्र से ऐसा क्यों हुआ? कार्य किस स्थान पर हुआ ? क्योंकि उसे वास्तविक ज्ञान नहीं होता। इसी कारण वह अनेक सूत्रों को दूसरी जगह प्रयोग करने में संकुचित रहता है वह सम्बद्ध सूत्र को उसी उदाहरण से सम्बन्धित समझता है जहां उस ने उसे पढ़ा होता है। वह सूत्र को सीमित जानता है। वास्तविक ज्ञान के अभाव में वह सूत्र के विस्तृत कार्यक्षेत्र की जानकारी से वंचित रहता है क्योंकि प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रमूलकपद्धति के समान व्याख्यात्मक जानकारी नहीं है जिस कारण वह व्याकरण के वास्तविक ज्ञान से वंचित रहता है। अत: सिद्ध होता है कि इस पद्धति की यह अपर समस्या है।

इसके उपरान्त जब पाठक प्रक्रियामूलकपद्धति में ''विप्रतिषेधे परम् कार्यम्''[1] ''असिद्धवदत्राभात्''[2] ''पूर्वत्रासिद्धम्''[3] आदि सूत्रों को पढ़ता है तो वह इस पद्धति से इन के कार्यक्षेत्र को स्पष्ट नहीं कर सकता। इस पद्धति से इस का कार्यक्षेत्र स्पष्ट करने से अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। अत: पाठकों को इन की जानकारी के लिए समस्या का सामना करता है। प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक सूत्रों में यह समस्या आती है जिन का निवारण सूत्रमूलकपद्धति द्वारा करना पड़ता है। सूत्रमूलकपद्धति में ऐसी समस्या का प्रश्न ही नहीं होता है। क्योंकि ऐसे प्रश्नों की जानकारी इस पद्धति से ही सम्भव है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्रवृत्ति, व्यावृत्ति आदि नियम के अभाव में सूत्र जानकारी के लिए सूत्रवृत्ति रटनी पड़ती है जो अल्प समय तक स्मरण रहती है। परिश्रम करने पर भी प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन नहीं होता है। अत: अस्थायी ज्ञान प्राप्त करना एक समस्या ही है।

एक दो प्रक्रियाग्रन्थों को छोड़कर शेष प्रक्रियाग्रन्थों में वैदिक और स्वरप्रक्रिया से सम्बन्धित जानकारी नहीं है। इस के अभाव में हम वैदिक व्याकरण ज्ञान से वंचित रहते हैं यह एक समस्या है। इसके उपरान्त प्रक्रियाग्रन्थों में अनेक पाणिनीय सूत्रों का वर्णन ही नहीं किया गया है। अत: सिद्ध होता है कि हम इस पद्धति से पाणिनीय व्याकरण का अधुरा ज्ञान प्राप्त करते हैं। पाणिनीयव्याकरण का पूर्ण ज्ञान प्राप्त न कर सकना इस पद्धति में एक समस्या है।

6. प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण : –

प्रक्रियामूलकपद्धति से अनेक समस्याओं का निवारण सम्भव है परन्तु इस पद्धति से विशेष अध्यायन की आवश्यकता है। प्रक्रियामूलकपद्धति वह पद्धति है जो रूपरचना जानकारी के के साथ व्याख्या, उदाहरण तथा प्रत्युदाहरणों का वर्णन करती है। यदि पाठक उदाहरणों में प्रयुक्त सूत्रों का व्याख्या सहित अध्ययन करे तो समस्या का प्रश्न ही नहीं होता। इसके उपरान्त यह तो स्पष्ट ही है कि प्रक्रियामूलकपद्धति सूत्रमूलकपद्धति में आयी विभिन्न समस्याओं के निवारण हेतु ही व्याकरणपरम्परा में आयी है। अत: स्पष्ट होता है कि यह उभयविध समस्याओं का निवारण करती है।

प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक पाठक सूत्रवृत्ति रटने पर विवश होते हैं तथा आल्पकालिक ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस समस्या निवारण हेतु पाठकों को रूपरचना में उद्धृत सूत्रों की पूर्ण व्याख्या सहित जानकारी करनी चाहिए। सूत्रवृत्ति रटने की अपेक्षा वे उदाहरणों सहित सूत्रों की व्याख्या जानकारी प्राप्त करे तो वे सूत्रवृत्ति रटने से मुक्त होंगे तथा व्याकरण का गहन ज्ञान प्राप्त करेंगे। परन्तु पाठक प्रक्रियामूलकपद्धति के मौलिक वर्णन विधि का अनुकरण नहीं करते हैं वे उदाहरण हेतु मात्र सूत्र की जानकारी ही करते हैं।

---

1 अष्टा0 1-4-2

2 अष्टा0 6-4-22

3 अष्टा0 8-2-1

प्रक्रियामूलकपद्धति में अनेक स्थानों पर रूपरचनार्थ सूत्रों का वर्णन नहीं है केवल सूत्र कार्यो का निर्देश दिया गया है यह ठीक है कि ऐसे स्थानों पर सूत्र स्मरण न आने के कारण पाठकों को सूत्र लिखने में समस्या आती है। सूत्रमूलकपद्धति से इस समस्या का समाधान दो चार मिनटों के अध्ययन से हो जाता है क्योंकि वहां समान कार्य से सम्बन्धित सूत्रों में सम्बन्धित सूत्र को ढूण्डा जा सकता है परन्तु प्रक्रियामूलकपद्धति में ऐसा करना असम्भव है। ऐसे स्थानों पर प्रक्रियामूलकपद्धति से यदि इस से पूर्व भाग का अच्छी तरह अध्ययन किया जाये तो यह समस्या आ ही नहीं सकती। प्रक्रियामूलकपद्धति की यह विशेषता है कि इस में हर नये सूत्र को सम्बन्धित उदाहरण में दिया है। जिन सूत्रों के लिए कार्य का वर्णन किया है वे सूत्र इस से पूर्व आ चुके होते हैं। इस समस्या के निवारण हेतु पाठकों को चाहिए कि वे उदाहरणों में प्रयुक्त सूत्रों का व्याख्या सहित अध्ययन करें ताकि समय पड़ने पर वे उस कार्य से अवगत होने पर सम्बद्ध सूत्र को स्मरण कर सकें। ऐसा करने पर पाठक समान कार्य से सम्बद्ध सूत्र के स्थान पर दूसरे सूत्र का प्रयोग भी नहीं कर सकता क्योंकि उसे सूत्रों का वास्तविक ज्ञान प्राप्त होगा।

यह ठीक है कि प्रक्रियामूलकपद्धति से पाठक पाणिनीयव्याकरण का अधूरा ज्ञान प्राप्त करता है। क्योंकि इस पद्धति के एक दो प्रक्रियाग्रन्थों को छोड़कर शेष प्रक्रियाग्रन्थों में पाणिनीय अष्टाध्यायी के अनेक सूत्रों का वर्णन नहीं किया है। अत: इन से अधूरा ज्ञान प्राप्त होता है क्योंकि इन में वैदिक और स्वर प्रक्रिया से सम्बद्ध जानकारी नहीं है यह ठीक है परन्तु ग्रन्थकारों ने इस में समयानुसार वर्णन किया है। इन ग्रन्थकारों ने अनेक समस्याओं के कारण अनेक प्रकरणों को हटा दिया है। उपयोगी वर्णन करना लाभकारी होता है अनुपयोगी वर्णन में केवल परिश्रम ही है लाभ नहीं। अत: सिद्ध होता है कि समयानुसार वर्णन करना कोई समस्या नहीं है। यदि पाठक इसे समस्या समझते हों तो इस समस्या निवारण हेतु प्रक्रियामूलकपद्धति में उन्हें वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी प्रक्रियासर्वस्व तथा वेदाङ्गप्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए क्योंकि इन में पाणिनीयव्याकरण के सभी सूत्र और वार्तिक उद्धृत हैं।

सूत्रमूलकपद्धति में तिङन्त तथा सुबन्त पद विखरे हैं। प्रक्रियामूलकपद्धति में इन को यथा क्रम एक प्रकरण में इकट्ठा कर दिया है। प्रक्रियामूलकपद्धति में उदाहरणों की रूपरचना को महत्त्व दिया गया है जो कि समय की मांग थी। सूत्रमूलकपद्धति में समान कार्य सम्बद्ध सूत्रों के बड़े प्रकरणों को प्रक्रियामूलकपद्धति में छोटे-छोटे भागों में विभक्त किया है तथा रूपरचना सम्बन्धित अन्य सूत्रों को भी प्रक्रियाक्रम से उद्धृत किया है ताकि पाठक समस्या का सामना न करें। व्याकरण के प्रारम्भिक ज्ञान सन्धियों से सम्बद्ध जानकारी को प्रक्रियाग्रन्थों के आदि में दिया है ताकि पाठक सन्धि ज्ञान के अभाव में व्याकरण के हर क्षेत्र में समस्या से मुक्त हो सकें।

पाणिनीयव्याकरण के प्रौढ़ ज्ञान के लिये सूत्रक्रमपाठात्मक विधि तथा प्रक्रियाक्रमविधि दोनों वियिां परस्पर सम्पूरक हैं। एक विषय बोध की दो शैलियां हैं। भूल से इन दोनों को परस्पर विरोधी या व्यतिरेकी मान लिया जाता है। संस्कृतभाषा बोध एवं उसके प्रयोग कौशल के लिये इन विधियों की परस्पर एक समन्वित शैली का उपयोग होना चाहिये। सूत्रार्थ बोध एवं पाणिनि के निहितार्थ बोध के लिये जहां सूत्रक्रमपाठ आवश्यक है वहीं आज की स्थिति में सूत्रों के कार्यविनियोग बोध के लिये प्रक्रियाक्रम आवश्यक है।

उपसंहार
सहायक ग्रन्थावली

उपसंहार

भाषा जानकारी के लिए वाक्यार्थ जानकारी आवश्यक है। संरचना की दृष्टि से पद जानकारी के विना वाक्यों का ज्ञान असम्भव होता है। पाणिनीयव्याकरणपरम्परा में विभिन्न पदों की जानकारी के लिए अष्टाध्यायी का सूत्रमूलकपद्धति और प्रक्रियामूलकपद्धति से द्विविध वर्णन प्राप्त होता है। दोनों प्रकार की पद्धतियां अपने-अपने वर्णन क्रम से विभिन्न पदों का बोध करवाती हैं। ये दोनों पद्धतियां एक दूसरी की अपेक्षा न्यूनाधिक हैं क्योंकि इनकी समयानुरूप अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं जिस कारण ये दोनों एक दूसरी की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं।

ये दोनों प्रकार की पद्धतियां पाणिनीयव्याकरण का स्वरूप हैं मात्र इतना भेद है कि इनके अध्ययन और अध्यापन की विधि भिन्न है। इन दोनों से समान ज्ञान प्राप्त होता है सिर्फ अध्ययन और अध्यापन में भिन्नता है। इन दोनों पद्धतियों की पूर्ण जानकारी के लिए व्याकरण की पूर्व पृष्ठभूमि की जानकारी आवश्यक है। क्योंकि क्या कारण रहा होगा जिस कारण पाणिनि ने व्याकरण को सूत्रमूलकपद्धति में रचा तथा कात्यान, पातञ्जलि एवम् वामन जयादित्य आदि ने इस पद्धति का अनुकरण किया। इसके उपरान्त यह जानकारी भी आवश्यक है कि सूत्रमूलक एक उपयोगी पद्धति के होते हुए क्या कारण रहा होगा जिस कारण प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति का उदय हुआ है।

संस्कृत व्याकरण की अति प्राचीन परम्परा है। वैदिक साहित्यकाल से ही व्याकरणपरम्परा का अवलोकन शुरू हो गया था। वैदिक पदपाठों में विभिन्न प्रकृति-प्रत्यय विभाग आदि के अवलोकन से ज्ञात होता है कि व्याकरणपरम्परा पदपाठों से पूर्व शुरू हो गयी थी। रामायण, महाभारत आदि काल में तो व्याकरण को इसी नाम से जाना जाता था। व्याकरण की पूर्व पृष्ठभूमि से यही ज्ञात होता है कि सब विद्याओं के समान व्याकरण का आदि मूल भी वेद है।

संस्कृत व्याकरण की पाणिनि तक पहुंचने की एक लम्बी श्रृंखला है। पाणिनि ने व्याकरण रच कर कोई नया कार्य नहीं किया है जिसे इन की विशेषता के साथ जोड़ा जाये। इन से पूर्व अनेक व्याकरण भाषा के अवलोकनार्थ प्रचलित थे या प्रचलित हो कर लुप्त हो गये थे। इतना जरूर है कि पाणिनि ने भाषा की पूर्ण जानकारी के लिए व्याकरणपरम्परा को जो व्याकरण दिया है वह अपने आप में अनेक विध विशेषताओं के कारण सम्पूर्ण रचना है। यही कारण है कि इन से पूर्व रचित व्याकरणों का आज सिर्फ यत्र-तत्र उदाहरण या नाम मात्र से उल्लेख प्राप्त होता है। ये व्याकरण अष्टाध्यायी की उत्पत्ति के बाद अपने आप ही लुप्त हो गये।

पाणिनि से पूर्व 85 वैयाकरणों द्वारा व्याकरण रचने का उल्लेख, ब्राह्मण, प्रातिशाख्य एवम् व्याकरण आदि अनेक प्राचीन ग्रन्थों में यत्र-तत्र प्राप्त होता है। पाणिनि से पूर्ववर्ती 10 वैयाकरणों का उल्लेख तो अष्टाध्यायी में स्पष्ट प्राप्त होता है। इनके उपरान्त पाणिनीय सूत्रों में प्राचाम्, उदीचाम्,

एकेषाम्, आचार्यणाम् आदि पदों से अनेक अन्य वैयाकरण होने के निर्देश मिलते हैं। महाभाष्य जानकारी से ज्ञात होता है कि व्याकरण परम्परा में पाणिनि से पूर्व अनेक व्याकरण रचे थे जिन का अध्ययन और अध्यापन सुचारु रूप से होता था।

व्याकरणपरम्परा में व्याकरण का आदि प्रवक्ता ब्रह्मा को, द्वितीय प्रवक्ता बृहस्पति को माना जाता है। बृहस्पति ने व्याकरण का उपदेश इन्द्र को दिया, इन्द्र ने सर्व प्रथम प्रकृति-प्रत्यय रूप विभाग द्वारा शब्दोपदेश की कल्पना की है। व्याकरणपरम्परा में इन्द्र को व्याकरण का संस्कर्ता माना जाता है। इन्द्र से पाणिनि तक कितने व्याकरण रचे गये, यह बतलाना कठिन है तो भी महेश्वर, बृहस्पत्ति, इन्द्र आदि 16 व्याकरण प्रवक्ताओं का नामोल्लेख यत्र-तत्र स्पष्ट प्राप्त होता है तथा आपिशलि, गार्ग्य, गालव आदि 10 व्याकरण प्रवक्ताओं का नामोल्लेख अन्य प्राचीन ग्रन्थों के साथ पाणिनीय अष्टाध्यायी में प्राप्त होता है।

पाणिनि से पूर्व रचित व्याकरणों में अपूर्णता के अभाव में अनेक त्रुटियां थीं क्योंकि ये व्याकरण सम्पूर्ण नहीं थे। पाणिनि ने यह जानकर सर्वाङ्ग.पूर्ण व्याकरण की रचना की कि इन से पूर्व रचित व्याकरण भाषा में प्रयुक्त पदों का वर्णन करने में सक्षम नहीं हैं। अत: इन्होंने सम्पूर्ण भारत की यात्रा करके भाषा में प्रयुक्त पदों का संग्रह किया तथा इनकी रचना के लिए पंचाङ्गी व्याकरण की रचना की। इस व्याकरण के पांच अङ्ग. सूत्रपाठ, गणपाठ, धातुपाठ, उणादि सूत्र तथा लिङ्गागानुशासन हैं।

समयपरिवर्तन के साथ भाषा भी परिवर्तशील है। इस में भी नित्य प्रति परिवर्तन होता है। पाणिनि ने तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त पदों की जानकारी के लिए लगभग 4000 सूत्रों की रचना की परन्तु समयानुसार भाषा में नवीन शब्दों का प्रादुर्भाव होता रहा। कुछ काल बाद इन नवीन शब्दों का वर्णन करने में पाणिनीय अष्टाध्यायी असमर्थ होने लगी क्योंकि जो इसमें वर्णित नहीं था उसका वर्णन न करना इस द्वारा असम्भव होना स्वभाविक था। इसके उपरान्त तल्लीनता के कारण अनेक प्रचलित पदों का वर्णन भी छूट सकता है। इन सभी पदों की जानकारी के लिए कात्यायन ने पाणिनीय अष्टाध्यायी पर अनेक वार्तिक रचे। समयानुसार जब कात्यायन के वार्तिकों के होते हुए भी अनेक मार्मिक स्थलों का वर्णन करने में पाणिनीय अष्टाध्यायी तथा कात्यायन के वार्तिक असमर्थ होने लगे तो पतञ्जलि ने कात्यान के वार्तिकों पर समालोचनात्मक वर्णन किया, जिस में पाणिनि के सूत्रों का औचित्य-अनौचित्य गुणतथा दोषों का बड़ी सरल भाषा में वर्णन किया है। पतञ्जलि द्वारा रचि यह ग्रन्थ महाभाष्य संज्ञा से जाना जाता है।

पतञ्जलि तक संस्कृत शिष्ट जनों की भाषा थी, फिर भी इस में अनेक परिवर्तन हुये थे। माभाष्य के कुछ समय बाद पाठक उदाहरणों सहित सूत्रों की विस्तृत जानकारी चाहने लगे। इस समस्या हेतु अनेक ग्रन्थकारों ने वृत्तिग्रन्थ रचे जिन में काशिका प्रमुख है। इन ग्रन्थों की उत्पत्ति से इतना अन्तर आया कि पाठक इस ग्रन्थ की सहायता से सूत्रों की जानकारी उदाहरणों, प्रत्युदाहरणों के साथ पूर्ण व्याख्या के साथ करने लगे। अष्टाध्यायी, महाभाष्य, काशिका आदि ग्रन्थ सूत्रमलकपद्धति के प्रमुख ग्रन्थ हैं। काशिका के कुछ समय बाद एक तो नये शब्दों का प्रादुर्भाव हुआ तथा सूत्रमूलकपद्धति में समस्याओं की गति रूकी नहीं

अपितु बढ़ती रही। इस कारण व्याकरणपरम्परा समयानुसार अध्ययन में कुछ और परिवर्तन दिशा चाहने लगी क्योंकि सूत्रमूलकपद्धति में कुछ ऐसी समस्याएँ आयीं जो परिवर्तन द्वारा ही हल हो सकतीं थी। सूत्रमूलकपद्धति में इन समस्याओं का प्रादुर्भाव इसलिए हुआ कि इस पद्धति में रूपरचना से सम्बन्धित सूत्र विखरे हैं रूपरचनाक्रम से प्राप्त नहीं है क्योंकि इस पद्धति में समान कार्य सम्बन्धित सूत्र एक क्रम में दिये हैं रूपरचनाक्रम का यहां वर्णन नहीं है। काशिका आदि वृत्तिग्रन्थों के उपरान्त अध्ययन स्तर इतना नीचे आ गया था कि पाठक व्याकरण अध्ययन रूपरचनाक्रम से चाह रहे थे क्योंकि सूत्र पद्धति से अधिक परिश्रम की आवश्यकता है। पाठक किसी उपाय द्वारा रूपरचना के साथ व्याकरण जानकारी चाहने लगे थे।

ऐसा जानकर व्याकरणपरम्परा में कातन्त्रव्याकरणकार शर्ववर्मा ने समय का लाभ उठाकर समयानुकूल प्रक्रियामूलक स्वतन्त्र व्याकरण की रचना की। शर्ववर्मा ने जब यह जाना कि पाणिनीयव्याकरण से अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है तथा इस द्वारा दी गयी जानकारी समयानुरूप नहीं है क्योंकि इस में एक तो नवीन पदों का वर्णन नहीं है तथा वैदिक जानकारी का पाठकों पर बोझ बढ़ रहा है क्योंकि तत्काल वैदिक पदों का प्रयोग कम हो गया था। उस समय बौद्ध, जैन आदि सम्प्रदायों का प्रभाव बढ़ रहा था, वैदिक संस्कृत प्रभाव कम पड़ गया था। भाषा में बौद्ध और जैन संस्कृति में प्रयुक्त शब्दों का प्रयोग अधिक हो रहा था। उन का वर्णन पाणिनीयव्याकरण नहीं कर पा रहा था। इसके उपरान्त शववर्मा ने यह जाना कि पाणिनीयव्याकरण में पाठकों को किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, उन का समाधान किस प्रकार किया जाये, ऐसा अध्ययन करके शर्ववर्मा ने स्वतन्त्रव्याकरण की रचना की। इस में इन्होंने पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा सरल सूत्ररचना द्वारा तात्कालिक पदों की जानकारी दी है।

इस व्याकरण में सूत्रों को रूपरचनाक्रम से सन्धि समास, तद्धित आदि प्रकरणों में उदाहरणों की रूपरचना के लिए प्रक्रियाक्रम से दिया है। इसलिए यह व्याकरण पाठकों को पाणिनीयव्याकरण की अपेक्षा सरल प्रतीत हुआ। इस में पाठकों की रूचि इसलिए भी बढ़ी क्योंकि इस में तात्कालिक भाषा में प्रयुक्त पदों का वर्णन है। अतः पाठकों को समयानुरूप अनुपयुक्त जानकारी से राहत मिली इस कारण पाठकों ने पाणिनीय व्याकरण का अध्ययन छोड़कर इस व्याकरण का अध्ययन शुरू कर दिया क्योंकि इस में पाणिनीयव्याकरण में आयी हर समस्या का समाधान है। कातन्त्रव्याकरण की उत्पत्ति से यह पाणिनीय व्याकरण पर प्रभाव पड़ा की पाठकों ने सूत्रमूलकपद्धति को छोड़कर प्रक्रियामूलकपद्धति के इस व्याकरण से अध्ययन में रुचि लेनी शुरू कर दी। इस कारण सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा।

जब व्याकरण में प्रक्रियामूलक एक नयी पद्धति की उद्भव हो ही गया तो उस में विकास भी स्वभाविक था। अतः पाणिनीयेत्तरपरम्परा में कातन्त्रव्याकरण के बाद चान्द्र, जैनेन्द्र आदि अनेक प्रक्रियामूलक व्याकरणों की रचना हुई। कातन्त्रव्याकरण के उपरान्त चान्द्रव्याकरण की उत्पत्ति से प्राक्रियामूलकपद्धति में विकास का क्रम शुरू हो गया। ये सभी व्याकरण क्रम से एक दूसरे में शैलीगत त्रुटि, सूत्रगत त्रुटि,

सत्रक्रमगत त्रुटि, प्रकरणगत त्रुटि, वर्णनगत त्रुटि आदि त्रुटियों का अवलोकन करने पर इन त्रुटियों के निवारण हेतु अनेक विद्वानों ने रचे हैं। इन के लेखकों ने इन्हें लोक प्रसिद्धि हेतु विशिष्ट वर्णन से रचा है।

पाणिनीयेत्तर व्याकरण लोकप्रसिद्ध हो गये क्योंकि ये सूत्रमूलकपद्धति के ग्रन्थों की अपेक्षा सरल और लघुकाय है। इस कारण पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन कम होने लगा। यद्यपि प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान गहन नहीं होता फिर भी पाठकों ने सूत्रमूलकपद्धति में अनेक समस्याओं के कारण इसे अज्ञानतावश अस्वीकार दिया।

पाणिनीयपरम्परा के आचार्य पाणिनीयव्याकरण की महत्ता से भली भान्ति परिचित थे। वे इसी पद्धति परम्परा से व्याकरण अध्ययन चाहते थे। कातन्त्रव्याकरण की उत्पत्ति से ही पाणिनीयव्याकरण पर प्रहार शुरू हो गये थे और कातन्त्रव्याकरण से लेकर बुद्धिसागर (पञ्चग्रन्थी) व्याकरण तक लगातार सूत्रमूलकपद्धति पर प्रहार होते रहे। प्रक्रियामूलक इन व्याकरणों में सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण की अनेक विशेषताओं के कारण बहुत प्रसिद्धि थी। इस व्याकरण का प्रभाव सामान्य व्यक्तियों पर भी पड़ा जिस कारण लकड़हारे भी शुद्ध संस्कृत बोलने लगे थे। कातन्त्र आदि व्याकरणों का पाणिनीयव्याकरण पर यह प्रभाव पड़ा कि इस व्याकरण का अध्ययन और अध्यापन लगभग लुप्त प्राय: हो गया।

यह सब पाणिनीयपरम्परा के कुछ आचार्यों द्वारा सहा नहीं गया। ये आचार्य पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के बढ़ते प्रभाव के कारण पाणिनीयव्याकरण को होने वाली हानि से बचाना चाहते थे। यद्यपि वे जानते थे कि प्रक्रियामूलकपद्धति व्याकरण ज्ञान का सर्वोत्तम उपाय नहीं है परन्तु उन के सम्मुख पाणिनीयव्याकरण की रक्षा तक का समय आ गया था। जब पाणिनीयव्याकरण का अध्ययन और अध्यापन लगभग लुप्त प्राय: ही हो गया तो पाणिनीयपरम्परा के कुछ आचार्य इस व्याकरण की दुर्दशा को सहन नहीं कर सके। अत: इन्होंने सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण को प्रक्रियामूलकपद्धति में सम्पादित करने का निर्णय लिया। इन आचार्यों में आचार्य धर्मकीर्ति (1140 वि0यु0मी0) का स्थान प्रथम है। यद्यपि आचार्य धर्मकीर्ति बौद्ध आचार्य हैं परन्तु इन्होंने सर्वाङ्ग.पूर्ण पाणिनीयव्याकरण की महत्ता को जानते हुए समयानुरूप पाणिनीयव्याकरण का उद्धार चाहा। तत्काल सूत्रमूलक पाणिनीयव्याकरण को पाणिनीयेत्तर व्याकरणों से बहुत हानि हो रही थी जिस कारण पाणिनीयव्याकरण को रक्षा तक का समय देखना पड़ रहा था। यदि आचार्य धर्मकीर्ति तत्काल पाणिनीयव्याकरण को प्रक्रियाक्रम में सम्पादित न करते तो सम्भवत: आज पाणिनीयव्याकरण का नामशेष न होता।

आचार्य धर्मकीर्ति ने उदाहरणों की जानकारी के लिए पाणिनीय सूत्रों में से आवश्यकतानुसार सूत्रों का प्रयोग सन्धि, समास, तद्धित आदि प्रकरणों में रूपरचनाक्रम से किया है। अनेक सूत्रों को छोड़ दिया है। इन्होंने तात्कालिक उदाहरणों की जानकारी के लिए केवल उपयोगी वर्णन किया है। इस कारण यह रचना छात्रों को सुविधाजनक तथा उपयोगी सिद्ध हुई क्योंकि इस में तात्कालिक वर्णन प्राप्त था। इस प्रक्रियाग्रन्थ की रचना के उपरान्त पाणिनीयव्याकरण से हटे पाठकों की पुन: पाणिनीयव्याकरण में रुचि

होने लगी। वैसे भी सर्वाङ्ग.पूर्ण रचना में आयीं अनेक समस्याओं का यदि समयानुरूप वर्णन किया जाये तो उस की सम्पूर्णता विद्यमान रहती है जो उस की प्रसिद्धि में सहायक सिद्ध होती है। ठीक ऐसा ही पाणिनीयव्याकरण के साथ हुआ है। रूपावतार की उत्पत्ति से व्याकरणपरम्परा में पुन: पाणिनीयव्याकरण की सम्पूर्णता का अवलोकन हुआ जिस कारण पाणिनीयव्याकरण की पुन: प्रतिष्ठा स्वभाविक थी। यद्यपि पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का रचनाक्रम रुका नहीं जबकि इस में बृद्धि होती गयी तथा प्रक्रियापद्धति में भी विकास होता गया। ठीक इसी तरह पाणिनीयव्याकरण में भी प्रक्रियाग्रन्थों का रचनाक्रम शुरू हुआ तथा इस में भी एक दूसरे प्रक्रियाग्रन्थ में पद्धति विकास शुरू हो गया। पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में तथा पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थों में एक दूसरे की अपेक्षा जो अगले ग्रन्थ रचे गये हैं वे अपनी - अपनी परम्परा में एक दूसरे के प्रति शोधक सिद्ध हुए हैं क्योंकि ये ग्रन्थ एक दूसरे की प्रतिस्पर्धा में रचे गये हैं इसलिए ये एक दूसरे के विकल्प हैं।

पाणिनीयपरम्परा में ''रुपावतार'' के उपरान्त कालक्रम से ''प्रक्रियारत्न'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा गया है। यह प्रक्रियाग्रन्थ सम्प्रति उपलब्ध नहीं है इस ग्रन्थ के होने के यत्र - तत्र प्रमाण प्राप्त होते हैं। इस में किस तरह का वर्णन है यह नहीं कहा जा सकता परन्तु परम्परानुसार इतना कहा जासकता है कि यह ग्रन्थ पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव को रोकने के लिए किसी विशिष्ट वर्णन से रचा गया होगा।

इस प्रक्रियाग्रन्थ के उपरान्त पाणिनीयप्रक्रियाग्रन्थों में ''रूपमाला'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना हुई है। इस के रचयिता विमल सरस्वती हैं। इस प्रक्रियाग्रन्थ में प्रक्रिया का उतना स्वरूप नहीं है जितना की ''रूपवतार'' में प्राप्त होता है। इतना जरूर है कि इस मे रूपवतार से संक्षिप्त एवम् रूचिकर वर्णन है।

रूपमाला का लोक में इतना प्रभाव नहीं पड़ सका। पाणिनीयेत्तरपरम्परा में से रचित सरस्वतीकण्ठाभरण, शब्दानुशासन, संक्षिप्तसार, सारस्वत व्याकरण, मुग्धबोध तथा सुपद्म आदि व्याकरणों के प्रभाव को परास्त करने में रूपमाला प्रक्रियाग्रन्थ असमर्थ रहा। अत: पाणिनीयपरम्परा में रामचन्द्राचार्य ने इन के विकल्प रूप में प्रक्रियाकौमुदी नामक प्रक्रियाग्रन्थ की रचना की। इस में पाणिनीयेत्तर व्याकरणों की अपेक्षा पद्धति विकास है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में आधुनिक विषयवार प्रकरण विभाजन द्वारा, सरल सूत्रवृत्ति के साथ तात्कालिक उदाहरणों का वर्णन किया गया है। इस के उपरान्त इस प्रक्रियाग्रन्थ की यह विशेषता है कि इस में पूर्ण प्रक्रिया के साथ उदाहरणों की जानकारी है। आवश्यकतानुसार सूत्रों को अनेक बार सूत्ररूप में उद्धृत किया है। यदि पाठक तत्क्षण सूत्र स्मरण न रख सकें तो उन्हें इस ग्रन्थ में वे सूत्र सम्बद्ध उदाहरणों में प्राप्त हो जाते हैं। इस ग्रन्थ में पूर्व प्रक्रियाग्रन्थों से प्रक्रिया का स्वरूप अधिक झलकता है।

इस प्रक्रियाग्रन्थ की अनेक विशेषताओं के कारण पाठकों और अध्यापकों का इस प्रक्रियाग्रन्थ की ओर आकर्षण हुआ। इस कारण अधिक लोक पाणिनीयपरम्परा से अध्ययन करने लगे। इस तरह कई दिनों तक प्रक्रियाकौमुदी से अध्ययन और अध्यापन होता रहा परन्तु कुछ समय बाद पाठक प्रक्रियाकौमुदी से भी अनेक समस्याओं का साम़ना करने लगे। इसलिए भट्टोजिदीक्षित ने समयानुकूल वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी

की रचना की। भट्टोजिदीक्षित ने जब यह जाना कि प्रक्रियाकौमुदी में समय के साथ अनेक त्रुटियां आ रही हैं जो पाठकों की अनेक इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर सकतीं। तो इन्होंने पाणिनीयपरम्परा और पाणिनीयेत्तरपरम्परा में पाणिनीयव्याकरण का स्थान स्थापित करने के लिए समस्त पाणिनीय सूत्रों को पूर्ण रूपरचना जानकारी के साथ प्रस्तुत किया। इस प्रक्रियाग्रन्थ का पाणिनीयपरम्परा में उतना ही महत्त्व है जितना की इस परम्परा में पाणिनीय पंञ्चाङ्गी व्याकरण का है।

इस प्रक्रियाग्रन्थ की अनेक विशेषताओं के कारण यह पूर्व और पर रचित प्रक्रियाग्रन्थों में शिरोमणि सिद्ध हुआ है। इसके उपरान्त इस प्रक्रियाग्रन्थ ने पाणिनीयेत्तरपरम्परा के कातन्त्र आदि व्याकरणों को अपनी अनेक विशेषताओं के कारण पूर्ण रूप से परास्त कर दिया। कातन्त्रादि व्याकरणों के प्रहार इस के आगे कुछ न कर सके। इन्होंने नतमस्तक होकर पाणिनीयपरम्परा के सामने घुटने टेक दिये। इस प्रक्रियाग्रन्थ के बाद भी पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का रचनाक्रम चलता रहा परन्तु वे सब व्याकरण इस प्रक्रियाग्रन्थ का विकल्प सिद्ध नहीं हो सके। अत: सिद्ध होता है कि इस ग्रन्थ की रचना से ही पाणिनीयव्याकरण की पुन: पूर्ण रूप से स्थापना हो सकी है। इस प्रक्रियाग्रन्थ के उपरान्त पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का सिर्फ व्याकरण साहित्य में नामोल्लेख प्राप्त होता है अध्ययन और अध्यापन समाप्त हो गया है।

पाणिनीयव्याकरण में भी इस प्रक्रियाग्रन्थ की उत्पत्ति के उपरान्त मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी एवम् सारसिद्धान्तकौमुदी आदि प्रक्रियाग्रन्थ रचे गये परन्तु वे इसी परम्परा के अनुयायी हैं तथा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तक पहुंचने के प्रवेशार्थी छात्रों को सिद्धि सोपान है।

पाणिनीयपरम्परा में ठीक वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी समकाल ''प्रक्रिसर्वस्व'' नामक प्रक्रियाग्रन्थ रचा गया। इस के रचयिता नारायण भट्ट हैं। नारायण भट्ट के पास भी वही समस्याएँ थी जो भट्टोजिदीक्षित के पास थी। प्रक्रियाकौमुदी के उपरान्त और पूर्व जो पाणिनीयेत्तर व्याकरणों में पद्धति विकास हुआ था उस के विकल्प में प्रक्रियाकौमुदी ठीक नहीं उतर रही थी। अत: नारायण भट्ट ने भी भट्टोजिदीक्षित के समान प्रयास किया है। नारायण भट्ट भी ''प्रक्रियासर्वस्व'' को प्रक्रिया पद्धति में शिरोमणि स्थान पर स्थापित करने के पक्षधर थे। प्रक्रियासर्वस्व नामकरण से ज्ञात होता है कि नारायण भट्ट प्रक्रियापद्धति में ''प्रक्रियासर्वस्व'' ही सब कुछ है इस संज्ञा की सार्थकता के इच्छुक थे। इन्होंने वैसा ही प्रयास किया है परन्तु ठीक उसी समय वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी भी व्याकरणपरम्परा में आयी जिसके विषयवार विभाजन, सरलसूत्रवृत्ति और आधुनिक उदाहरणों की पूर्ण रूपरचना जानकारी के साथ सरल वर्णन ने प्रक्रियासर्वस्व को नहीं पनपने दिया। इसके विपरीत नारायणभट्ट ने पाणिनीयेत्तर व्याकरणों के प्रभाव से कुछ भिन्न प्रकार का विषयवार प्रकरण विभाजन और प्रक्रियासर्वस्व वर्णन में भी पाणिनीयेत्तर व्याकरणों का उल्लेख पाणिनीय उल्लेख में मिश्रित रूप से वर्णित किया है।

नारायण भट्ट ने इस प्रकार के वर्णन से इस में शक्ति डालने का प्रयास किया था परन्तु यह वर्णन पाणिनीयपरम्परा में अस्वीकार किया गया तथा ठीक इसी समय ''वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी'' व्याकरणपरम्परा में आयी जिस में पाणिनीयपरम्परा के आचार्यो के मत्तों को ही महत्त्व दिया गया है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में ''प्रक्रियासर्वस्व'' की अपेक्षा अनेक विशेषताएँ प्राप्त हैं जिनके कारण व्याकरणपरम्परा में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी लोक प्रसिद्ध हुई। यद्यपि ''प्रक्रियासर्वस्व'' में वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के समान सभी पाणिनीय सूत्रों का वर्णन है तथा इस में उदाहरण भी अधिक है परन्तु इन उदाहरणों में अधिक उदाहरण ''चान्द्र'', ''सरस्वतीकण्ठाभरण'', ''मुग्धबोध'' आदि व्याकरणों के है इनकी रूपरचना भी इन व्याकरणों के सूत्रों से दर्शायी गयी है। इस कारण मिश्रित वर्णन के कारण न इसे पाणिनीयपरम्परा में स्वीकार किया गया और न ही पाणिनीयेतरपरम्परा में स्वीकार किया गया क्योंकि पाणिनीयेत्तर वर्णन पाणिनीयेत्तर परम्परा को हाजम नहीं हुआ। अत: यह प्रक्रियाग्रन्थ केवल नामोल्लेख से जाना जाता है।

वैयाकरणसिद्धसिद्धान्तकौमुदी और प्रक्रियासर्वस्व के उपरान्त वरदराज ने मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी एवम् सारसिद्धान्तकौमुदी की रचना की है। वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी और मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी एवम् सारसिद्धान्तकौमुदी के रचना काल में सिर्फ 25 - 30 वर्षो का ही अन्तराल है। भट्टोजिदीक्षित वरदराज के गुरु थे अत: मध्यसिद्धान्तकौमुदी, लघुसिद्धान्तकौमुदी एवम् सारसिद्धान्तकौमुदी की रचना वैयाकरणसिद्धानतकौमुदी के 25 - 30 वर्ष बाद होना न्याय संगत है। इतने कम अन्तराल में भाषा में तो कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ था जिस कारण वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के अति संक्षिप्त लघुद्धांतकौमुदी एवम् सार सिद्धान्तकौमुदी की रचना हुई है परन्तु इतना जरूर था कि व्याकरण प्रवेशार्थियों को एक दम वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का अध्ययन थोंपना गलत था। अत: वरदराज ने बालकों को आसानी से ज्ञान करवाने के लिए सारसिद्धान्तकौमुदी, पाणिनीयव्याकरण में प्रवेशार्थियों के लिए लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी ज्ञान प्राप्त छात्रों की ज्ञान वृद्धि के लिए मध्यसिद्धान्तकौमुदी की रचना की ताकि पाठक इस सोपान से क्रमपूर्वक चढ़कर वैयाकरणसिद्वान्तकौमुदी तक सरलता से पहुंच जायें और वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का ज्ञान सरलता से प्राप्त कर सकें। सारसिद्धान्त कौमुदी वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी का सार मात्र वर्णन करती है, लघुसिद्धान्तकौमुदी संक्षिप्तवर्णन करती है तथा तथा मध्यसिद्धान्तकौमुदी व्याकरणसिद्धान्तकौमुदी का सामान्य वर्णन करती है। सम्प्रति भारत में इसी ग्रन्थक्रम से प्रक्रियामूलकपद्धति का अध्ययन और अध्यापन होता है।

सारसिद्धकौमुदी के उपरान्त व्याकरणपरम्परा में वेदाङ्ग.प्रकाश की रचना हुई है। इस प्रक्रियाग्रन्थ के रचयिता स्वामी दयानन्द सरस्वती है। इस प्रक्रियाग्रन्थ में सूत्र और वार्तिकों को छोड़कर शेष वर्णन हिन्दी में है। सम्प्रति भारत में संस्कृत की बुरी दुर्दशा है। अब तो मात्र भाषा सिखने के लिए व्याकरण का नाम मात्र अध्ययन किया जाता है और वो भी मात्र कुछ लोगों द्वारा किया जाता है। आधुनिक युग की परिस्थिति जानकर मात्र कुछ जानकारी के लिए विश्वनाथ शास्त्री तथा गोपाल शास्त्री नेने ने क्रमश: ''प्रारम्भिक पाणिनीयम्'' (परमलघुसिद्धान्त कौमुदी) एवम् ''पाणिनीय प्रवोध:'' नामक अतिसंक्षिप्त एवम् उपयोगी

प्रक्रियाग्रन्थों की रचना की है। इन ग्रन्थों में आधुनिक उदाहरणों का पाणिनीय सूत्रों द्वारा प्रक्रियाक्रम से वर्णन किया गया है।

सूत्रमूलकपद्धति एवम् प्रक्रियामूलकपद्धति की पूर्ण जानकारी के लिए इन दोनों पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन जरूरी है जो इन पद्धतियों में प्राप्त गुण-दोष, सुगमता और कठिनता, पद्धति में अनेक सन्देह, पद्धति द्वारा सन्देह निवारण, पद्धति में अनेक समस्याएं एवम् पद्धति द्वारा समस्याओं का निवारण आदि छः विषयों में किया जा सकता है।

प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा सूत्रमूलकपद्धति में सूत्रार्थ जानकारी में आकांक्षा का अभाव, वास्तविक एवम् गहन जानकारी करवाना आदि गुणों के साथ रूपरचना जानकारी में अकांक्षा, प्रायोगिक वर्णन का अभाव तथा अधिक परिश्रम की आवश्यकता आदि दोष भी है। इसी तरह इस पद्धति में सूत्रार्थ जानकारी में सुगमता, वाञ्छित सूत्र ढूण्डने में सुगमता, सूत्राधिकार एवम् कार्यक्षेत्र स्पष्टीकरण में सुगमता के साथ रूपरचनार्थ सूत्र जुटाने में कठिनता, अनेक सूत्रों के अर्थ स्पष्टीकरण में कठिनता एवम् विशेष क्रम के अभाव में विभिन्न पदों के ज्ञानोपार्जन में कठिनता का सामना करना पड़ता है। सूत्रमूलकपद्धति में उदाहरणों में अग्रिम कार्यवाही पर सन्देह, शेष वर्णन के अभाव में पूर्व वर्णन में सन्देह तथा आश्रित सूत्रों की जानकारी विना अनेक सूत्रों के अर्थ स्पष्टीकरण में सन्देह प्राप्त होते हैं।

सूत्रमूलकपद्धति द्वारा सन्देह निवारण के लिए पद्धति अनुरूप वास्तविक अध्ययन एवम् समस्त सूत्रों की जानकारी से सन्देह निवारण अपेक्षित है अर्थात् यदि ग्रन्थ की मौलिकपद्धति अनुरूप अध्ययन में परिश्रम किया जाये तो सन्देह का प्रश्न ही नहीं। सूत्रमूलकपद्धति में प्रक्रियामूलकपद्धति की अपेक्षा रूपरचनार्थ सूत्रों में विखराव, अनेक सूत्रों की जानकारी हेतु अग्रिम सूत्रों पर आश्रित, समस्त सूत्र जानकारी आवश्यक एवम् विभिन्न पदों की जानकारी हेतु विशेष क्रम का अभाव आदि समस्याएँ हैं। यह ठीक है परन्तु इस पद्धति में समस्या निवारण हेतु समस्त सूत्र जानकारी का लक्ष्य रखना चाहिए तथा ग्रन्थ की मौलिक पद्धति के अनुरूप वास्तविक अध्ययन द्वारा परिश्रम करना चाहिए।

सूत्रमूलकपद्धति के समान प्रक्रियामूलकपद्धति में भी उदाहरणों की रूपरचना जानकारी, कम परिश्रम से अधिक लाभ, सव्याख्या सूत्र जानकारी आदि गुणों के साथ सूत्रवृत्ति रटने परविवश, सूत्रमूलकपद्धति पर आश्रित, वास्तविक एवम् गहन ज्ञान का अभाव आदि अनेक दोष हैं। इसी तरह इस पद्धति में रूपरचना जानकारी में सुगमता, विशेष क्रम के कारण विभिन्न पदों के ज्ञानोपर्जन में सुगमता के साथ, सूत्रार्थ जानकारी में कठिनता एवम् क्रमिक अध्ययन से सूत्र ढूण्डने में कठिनता भी है। प्रक्रियामूलकपद्धति में वास्तविक ज्ञान के अभाव में सूत्र प्रयोग, सूत्रकार्य तथा सूत्र वर्णन में सन्देह प्राप्त होता है।

इस पद्धति से सन्देह निवारण हेतु ग्रन्थ की मौलिक पद्धति अनुरूप सूत्रों का मार्मिक अध्ययन करना चाहिए। प्रक्रियामूलकपद्धति में सूत्र जानकारी स्मरण न रहना, वास्तविक, गहन एवम् व्याकरण की पूर्ण जानकारी का अभाव आदि अनेक समस्याएँ हैं। प्रक्रियामूलकपद्धति द्वारा इन समस्याओं के निवारण हेतु

ग्रन्थ की मौलिक पद्धति अनुरूप परिश्रम करना चाहिए, सूत्रों की व्याख्या सहित जानकारी प्राप्त करनी चाहिए तथा व्याकरण की पूर्ण जानकारी के लिए उन प्रक्रियाग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए जिन में पाणिनीय समस्त सूत्रों का वर्णन है। पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति एवम् प्रक्रियामूलक पद्धति के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि ये दोनों पद्धतियां एक दूसरी की अपेक्षा न्युनाधिक है तथा महत्त्वपूर्ण है।

पाणिनीयव्याकरण के प्रौढ़ ज्ञान के लिये सूत्रक्रमपाठात्मक विधि तथा प्रक्रियाक्रमविधि दोनों विधियां परस्पर सम्पूरक हैं। एक विषय बोध की दो शैलियां हैं। भूल से इन दोनों को परस्पर विरोधी या व्यतिरेकी मान लिया जाता है। संस्कृतभाषा बोध एवं उसके प्रयोग कौशल के लिये इन विधियों की परस्पर एक समन्वित शैली का उपयोग होना चाहिये। सूत्रार्थ बोध एवं पाणिनि के निहितार्थ बोध के लिये जहां सूत्रक्रमपाठ आवश्यक है वहीं आज की स्थिति में सूत्रों के कार्यविनियोग बोध के लिये प्रक्रियाक्रम आवश्यक है। जब व्याकरणपरम्परा में सूत्रमूलकपद्धति के समान प्रक्रियामूलकपद्धति भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है तो इस पद्धति के ग्रन्थों की पूर्ण वैशिष्ट्य का अध्ययन भी महत्त्वपूर्ण है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के ''पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा एवम् पाणिनीयव्याकरण का परिचय'' नामक प्रथम अध्याय में पाणिनि पूर्व व्याकरणपरम्परा का विवेचन, पाणिनि की अष्टाध्यायी कात्यायन के वार्तिक एवम् पतञ्जलि के महाभाष्य पर विचार किया गया है।

शोध प्रबन्ध के ''पाणिनीयव्याकरण की सूत्रमूलकपद्धति का विवेचन तथा प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव'' नामक द्वितीय अध्याय में पाणिनीयव्याकरण स्वरूपपरिचय, पाणिनीयव्याकरण की अध्ययन अध्यापन पद्धति, सूत्रमूलकपद्धति द्वारा प्राप्त समस्याओं का विवेचन, प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन, पाणिनीयव्याकरण में प्रक्रियामूलकपद्धति का उद्भव एवम् उसका विवेचन, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा पूर्ववर्ती प्रक्रिया विवरण एवम् वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा परवर्ती प्रक्रिया विवरण आदि विषयों पर क्रमपूर्वक वर्णन किया गया है।

शोध प्रबन्ध के ''पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ और ग्रन्थकार'' नामक तृतीय अध्याय में पाणिनीयव्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थों पर क्रमपूर्वक विस्तृत वर्णन किया गया है। शोध प्रबन्ध के ''सूत्रमूलकपद्धति के पारिप्रेक्ष्य में प्रक्रियामूलकपद्धति का समीक्षात्मक अध्ययन'' नामक चतुर्थ अध्याय में सूत्रमूलकपद्धति तथा प्रक्रियामूलकपद्धति की पूर्ण जानकारी के लिए इनका तुलनात्मक विवेचन किया गया है। अन्त में उपसंहार है। इस शोध प्रबन्ध में पाणिनीयपरम्परा के आचार्यों के मतों को ही प्रामाणिक माना गया है।

पाणिनीय व्याकरण के प्रक्रियाग्रन्थ : एक समीक्षात्मक अध्ययन

सहायक ग्रन्थावली

	पुस्तक का नाम	लेखक/सम्पादक	प्रकाशन स्थान	संस्करण
1.	अथर्ववेद संहिता	-	मुरादावाद संस्करण	प्र0सं0 1988
2.	अमरटीका सर्वस्व	गणपति शास्त्री	त्रिवेन्द्रम	-
3.	अष्टाध्यायी	पाणिनि	चौखम्बा सुरभारती प्रकाश वाराणसी	चतुर्थ सं. 1992
4.	उणादिसूत्र	पाणिनीयम्	मद्रास युनिवर्सिटी	प्र0सं0 1950 वि0
5.	त्रक्तन्त्रव्याकरण	शाकटायन	संस्कृत बुक डिपो सैदमीठा बाजार लौहार	प्र0सं0 1933
6.	ऋग्वेद प्रातिशाख्य	सूर्यकान्त	मूहरचन्द लक्ष्मणदास दिल्ली	प्र0सं0 1968
7.	ऋग्वेद संहिता	-	वैदिक संशोधन मण्डल पूना	प्र0सं0 1868 शक्
8.	ऐतरेय ब्राह्मण	-	आनन्दाश्रम ग्रन्थावली	1931
9.	कविकल्पद्रुम	आशुबोधविद्याभूषण	कलकत्ता	1904
10	कातन्त्रव्याकरण	शर्ववर्मा	भारतीय विद्याप्रकाशन दिल्ली	1987
11.	कातन्त्रव्याकरण विमर्शः	डॉ0 जानकीप्रसाद द्विवेदी	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी	2032
12.	गोपथ ब्राह्मण	-	एशियटिक सोसायटी बगाल	1872
13.	चरक संहिता	पतञ्जलि	चौ0 सं0 सि0 वनारस	प्र0सं0 1962
14.	चान्द्रव्याकरण	चन्द्रगोमी	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर	2024 वि0
15.	जैनेन्द्र व्याकरण	देवनन्दी	भारतीय ज्ञानपीठ काशी	1971
16.	तत्ववोधिनी	-	मोती लाल बनारसी दास वाराणसी	प्र0 सं0 1961
17.	तैत्तिरीय प्रतिशाख्य	-	कलकत्ता	प्र0सं0 1872
18.	तैत्तिरीय संहिता	-	बहालगढ सोनीपत हरियाणा	प्र0सं0 2012
19.	धातुपाठ	सायण	काशी संस्कृत सीरिज बनारस	1934
20.	निरूक्त	यास्क	मनसुखराय मारे कलाइव्रो कलकत्ता	प्र0सं0 1872
21.	न्यास	जिनेन्द्रबुद्धि	संस्कृत परिषद् उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदरावाद	प्र0सं0 1985
22.	पदमञ्जरी	हरदत्त	संस्कृत परिषद् उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदरावाद	प्र0सं0 1987

23.	पाणिनीय लिङ्गानुशासनम्	पाणिनि	कृष्णदास अकादमी वाराणसी	द्वि0सं0 2053 वि0
24.	पाणिनीय शब्दार्थ सम्बन्ध सिद्धान्त:	डॉ0 नरदेव शास्त्री	पिपठिषु-प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान मौजपुर दिल्ली	प्र0सं0 1987
25.	पाणिनीय शिक्षा	पाणिनि	कलकत्ता यूनिवर्सिटी	प्र0सं0 1934
26.	प्रक्रियाकौमुदी	रामचन्द्राचार्य	सम्पूर्णनन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी	प्र0सं0 2033 वि0
27.	प्रक्रियाकौमुदी विमर्श:	आद्यप्रसादमिश्र	वाराणसी	-
28.	प्रक्रियासर्वस्व	नारायण भट्ट	त्रिवेन्द्रम	1938
29.	प्रारम्भिक पाणिनीयम् (परमलघुसिद्धान्तकौमुदी)	विश्वनाथ शास्त्री	मोती लाल बनारसी दास दिल्ली-वाराणसी-पटना-बंगलौर-मद्रास	-
30.	प्रौढमनोरमा	भट्टोजिदीक्षित	मोती लाल बनारसी दास वाराणसी	-
31.	बालमनोरमा	-	चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी	अष्टम् सं02066वि0
32.	भाषावृत्ति	पुरूषोत्तम देव	कलकत्ता संस्कृत कॉलेज	1918
33.	मध्यसिद्धान्तकौमुदी	वरदराज	मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वाराणसी-पटना	पं0सं0 1975
34.	महाभारत	व्यास	गीता प्रैस गोरखपुर	-
35.	महाभाष्य	पतञ्जलि	हरियाणा साहित्य संस्थान रोहतक	प्र0सं0 1963
36.	महाभाष्य दीपिका	भर्तृहरि	रिसर्च इंस्टीच्युट पूना	1967
37.	महाभाष्य पस्पशाह्निकम्	पतञ्जलि	ईस्टर्न बुकलिंकर्स जवाहर नगर, दिल्ली	प्र0सं0 1982
38.	महाभाष्य प्रदीप	कैयट	गुरूकुल झज्जर	1962
39.	मुग्धबोध	शिरोमणि विश्वनारायण न्यायरत्न अजितनाथ	कलकत्ता	प्र0सं0 1911
40.	यजु: संहिता	-	गोबिन्द राम हासानन्द नई सड़क देहली	-
41.	रामायण	वालमीकि	गीता प्रैस गोरखपुर	प्र.सं.2017वि0
42.	रूपमाला	विमल सरस्वती	मोती लाल बनारंसी दास दिल्ली-वाराणसी-पटना	द्वि0सं0 1963
43.	रूपावतार	धर्मकीर्ति	मैसूर रोड बंगलौर	-
44.	लघुसिद्धान्तकौमुदी	वरदराज	मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली	-

45.	लौगाक्षिगृह्य भाष्य	देवपाल	कश्मीर संस्कृत ग्रन्थावली श्रीनगर	
46.	वाक्यपदीयम्	भर्तहरि	स्नात्तकोत्तरानुसन्धान संस्थान पूना	1966
47.	वाजसनेयी प्रतिशारव्य	विरेन्द्र कुमार वर्मा	ज्ञान प्रकाश प्रतिष्ठान वाराणसी	प्र0सं0 1975
48.	वायुपुराण	व्यास	आनन्दश्रम पूना	प्र0सं01887 शक्
49.	वेदाङ्ग	कुन्दनलाल शर्मा	विवेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर	1983
50.	वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी	भट्टोजिदीक्षित	चौखम्भ्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी	1982
51.	क्षीरतरङ्गिणी	क्षीरस्वामी	रामलाल कपूर ट्रस्ट अमृतसर	2024 वि0
52.	सरस्वतीकण्ठाभरण	भोजदेव	त्रिवेन्द्रम	प्र0सं0 1938
53.	संक्षिप्तसार	क्रमदीश्वर	कलकत्ता	–
54.	संस्कृत व्याकरण का उद्भव और विकास	सत्यकाम वर्मा	मोती लाल बनारसी दास दिल्ली-वाराणसी-पटना	1971
55.	संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास	युधिष्ठिर मीमांसक	रामलाल कपूर ट्रस्ट बहालगढ़ सोनीपत हरियाणा	प्र0सं02019वि0
56.	सामवेदसंहिता	–	स्वाध्याय मण्डल, औंध	सं 1996
67.	सारसिद्धान्तकौमुदी	वरदराज	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी	प्र.सं 1992
58.	सारस्वतव्याकरण	अनुभूतिस्वरूपाचार्य	चौ0 सं0 सि0 बनारस	प्र0सं0 1935
69.	सिद्धहेमशब्दानुशासनम्	हेमचन्द्र	धानजी स्ट्रीट मुंबई	–
60.	शब्दकौस्तुभ	भट्टोजिदीक्षित	चौ0 सं0 सीरिज ऑफिस बनारस	1985
61.	शब्दशक्ति प्रकाशिका	जगदीशतर्कालङ्कार	चौ0 सं0 सि0 बनारस	1934
62.	शाकटायनव्याकरण	विनायक गणेश आप्टे	आनन्दाश्रम पूना	प्र0सं0 1975